पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का जीवनचरित्र

सचित्र

हिन्दी संस्करण.

प्रयोजक.

जौहरी दुर्लभजी त्रीभुवन

मोरबी, जैपुर.

प्रबन्धकर्त्ता श्री दुर्गाप्रसाद के प्रबन्ध से श्रीसुखदेवसहाय जैन छापाखाना धानमण्डी, अजमेर में मुद्रित.
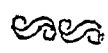
प्रथमावृत्ति.

वि० सं० १९८०] [वीर सं० २४४९

दुराग्रह, बेपरवाही व शिरजोरी के त्रि
समाज बीमार होरही है चिकित्सा करके औष
नहीं तो बीमारी असाध्य होजावेगी ॥

—लोकमान्य तिलक म.
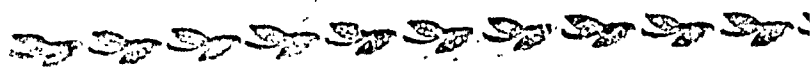
सन्तोष ही हमारा व्यापार है

ग्रन्थार्पण.

श्रीयुत् सेठजी वाहादूरमलजी वांठीया-भीनासरवाला
हींदी अनुवाद लेखक पाससे स्वीकारते हैं.

श्रीयुत सेठजी बहादुरमलजी बांठिया, भीनासर.
इस पुस्तक को लागत मात्र से कम मूल्य में देने
के लिये दो हजार रुपये देनेवाले दानी गृहस्थ.

सन्तोष ही हमारा व्यापार है

समर्पण ॥

श्री सेठजी बहादुरमलजी बांठिया,

भीनासर

चारित्र नायक महात्मा पूज्यश्री १००८श्री श्रीलालजी महाराज की आपने अनुकरणीय सेवा की थी। धर्मज्ञान की अभिवृद्धि के लिये आप आगम व पुस्तकोंकी प्रभावना विशाल हृदय से कर रहेहो, इस पुस्तककी लागत से बहुत कम में प्रचार करने के लिये आपने रु०२,०००) देनामांगे मेरे पास भेजकर मेरा उत्साह को प्रफुल्लित करवा है।

मै आपकी समाज सेवाओं के आंशिक स्मरण के उपलक्ष्य में यह हिन्दी संस्करण आपके करकमलों में सादर सप्रेम समर्पण कर कृतकार्य होता हूं।

श्रीसंघका सेवक

जौहरी दुर्लभजी

जेय कंते पिए भोए लद्धे विपिठि कुव्वई।
साहीणे चयई भोए से हु चाइत्ती वुच्चइ ॥

श्री दशवैकालिक सूत्र

यदि तुम अपना धन गुमा चुके हो तो तुम यह समझ लो कि, तुम्हारा कुछ भी गुमा नहीं, अगर तुम अपना स्वास्थ्य खो चुके हो तो तुम जानलो कि तुमरा कुछ खोगया है और कदाचित् तुमने अपना चारित्र नष्ट कर दिया है तो भ— भांति जान लो कि तुम अपना सर्वस्व नष्ट करम करचुके हो।

—एक विद्वान्

Lives of great men, all remind us,
We can make our lives sublime, !

—Long fellow

क्षान्त्यैवाक्षेपरूक्षा क्षरमुखरमुखान् दुर्मुखान् दपयन्त

सत्पुरुष तो निन्दा भरे कटुवचन बोलने वाले दुष्टों अपनी क्षमाद्वारा ही दूषित—दण्डित—लज्जित कर देते हैं। यह महात्माओं का व्रत है प्रत्येक सज्जन को होना चाहिये।

हिन्दी अनुवाद ।

विचार विवेचन अपनी निज की भाषा में अच्छी तरह हो सकता है। भाषान्तर करने से तो भाषा की असली खूबी में अंतर रह जाता है। गुजराती से इसका हिन्दी अनुवाद कराया गया है अगर हिन्दी में ही इसकी स्वतन्त्र रचना होती तो विशेष आकर्षक होती। मैं अपनी शक्ति अनुसार जैसा कर सका वैसा पाठकों के भेंट करता हुं। अनुवादक की त्रुटी के लिये मूल लेखक जिम्मेवार नहीं हो सकता।

ये अनुवाद अनुभवी श्रावकों के पास भेजा गया था, उन महानुभावों की सलाह अनुसार कम-ज्यादा किया गया है। उन महानुभावों का आभार मानते हुवे, सुज्ञ पाठकों की सेवा में नम्र अर्ज करता हुं कि, हिन्दी की दूसरी आवृत्ति शीघ्र ही निकालनी पड़ेगी, इसलिये इस अनुवाद में कम बेशी करने अथवा सुधारने के लिये जो सूचनाएं मिलेंगी उनका सादर स्वीकार किया जावेगा।

जिन महात्मा का यह जीवन चरित्र है उनका मुख्य आदर्श गुणग्राहकता था, पुस्तक पढने वाले सब गुणग्राहक बुद्धि से ग्रन्थ का अवलोकन करेंगे तो मेरा श्रम सार्थक होगा और लेखक का शुभ आशय समझ में आवेगा।

तन्दुरस्त मनुष्य शक्कर खाता है कोई नमकीन सोडा पीता है लेकिन बीमार को तो वैद्यराजजी कुनाइन जैसी कड़वी

देते हैं उससे उसका आशय केवल बीमारी को दूर करना होता
इस जीवन चरित्र में से अपनी २ प्रकृति अनुसार मिष्टान्न, नमकी
व कुनाइन लेने का अधिकार पाठकों को है । अमूल्य ओषधिय
का यह भंडार है, शारीरिक, मानसिक सब रोगों के लिये दव
मिलेगी, समभाव से, इर्षारहित दृष्टि से देखने से निर्मल चक्षु
को अद्भुत दृश्य मिलेगा।

संयम सरिता का वेग शिथिल होने से श्रद्धा में भी शिथिल
आजाती है, परिणाम में श्रावकों को उदासीनता होजाती है
चतुर्विध संघ का, भविष्य श्रेय के लिये इस जीवन चरित्र में संय
शुद्धि के लिये जोर दिया है और पुष्टि के लिये पवित्र सूत्रों
सिवाय अनुभवियों के विवेचन उद्धृत करके साधु जीवन
जड़ मजबूत की है। जिस महात्मा का जीवन ही चारित्र का आद
नमूना था, जिन्होंने चारित्र के लिये रात्रि दिवस उजागरा कि
था, जिनके रग २ में संयम शोणित वहता था, उनके जीवन चरि
में चारित्र के लिये जितना भी लिखा जावे उतना कम है,

मैं साफ दिल से जाहिर करता हुं कि चारित्र के लिये
लिखा है वो समुच्चय ही लिखा है किसी खास व्यक्ति व समाज
अपने ऊपर घटाने की संकोच वृत्ति नहीं रखना चाहिए, कान्फ
रन्स प्रकाश का ता० ३१ जुलाई का २० वें अंक में जाहिर क
चुका हुं कि "पूज्य श्री के जीवन चरित्र में किसी की निन्दा
आक्षेप कारक कुछ भी नहीं लिखा गया है. अजमेर वगैरह स्थान
की अन्य घटनायें भी मैंने शान्ति के लिये जीवन चरित्र में नहीं
है. सिर्फ चारित्र संरक्षण के लिए आगमोक्त आज्ञानुसार वे विचार

क वचनामृत उद्धृत किये हैं जो सब के लिये मान्य व हितकर है किसी खास व्यक्ति व समाज के लिए यह सामग्री नहीं है. गुण ग्राहक बुद्धि व कृतज्ञता की दृष्टि से शुभ व सत्य आशय समझ में आवेगा. निर्दोष केवलो हरिः " और फिर भी पाठकों से अर्ज करता हुं कि इतना खुलासा करने पर भी इस पुस्तक में कोइ भी विषय लेख, वाक्य, शब्द आदि अरुचि कर समझे तो उसकी सूचना अवश्य प्रदान करे। ताकि दूसरी आवृत्ति में उन सूचनाओं का अमल किया जावे।

पत्रकारों को बहकाने के लिये जो विज्ञापन छपवाकर भेजे गये हैं वो विज्ञापन के प्रत्युतर में मेरा ऊपर का खुलाशा काफी है। गलत अर्थ से असत्य भ्रम होता है लेकिन जो सत्य है वो आखिर तक सत्य ही रहेगा। परमात्मा सबको सन्मति दे।

जैपुर
आषाढ़ शुक्ला १५ सं० १९८०

श्रीसंघ का सेवक
जौहरी दुर्लभजी
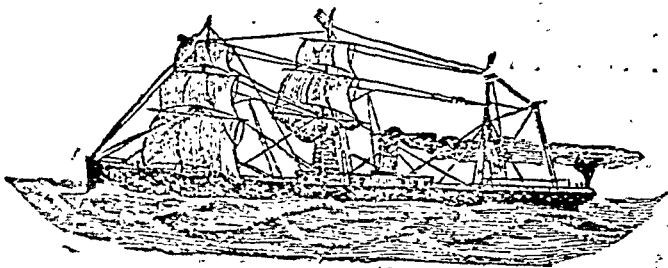
निवेदन ।

इस क्रान्तियुग में आर्यावर्त को ऊपर चढाने के लिए सच्चारित्र्य के सबल आलम्बन की अधिक आवश्यकता है। जडवाद के समय में उन्नति के शिखर तक नहीं पहुंचने के कारणों में भी चारित्र्य की शिथिलता ही प्रधान है, इस परिस्थिति में अनुभवी लोग यही राय देते हैं कि और सब उपायों को पीछे हटाकर सिर्फ प्रजा को चारित्र सम्पन्न बनाने की कोशिश को ही प्रधान मानना चाहिए। हरएक समय के महापुरुषों ने चारित्र्य सुधारणा ही अपना मुख्य जीवनोद्देश्य मानी है, उत्कृष्ट चारित्र्य वाले महात्मा ही जगत के लिए महान् आशीर्वाद रूप मानेजाते हैं, वे जब जीते रहते हैं तब उनका चारित्र्य ही जगत को कर्तव्य पाठ पढ़ाता है और प्रजा का नवीन उत्साह, नवजीवन, नवचेतन आदि उत्पन्न करता है, और उन महात्मा पुरुष की अनुपस्थिति में उनका जीवनचरित्र भी प्रजा में सात्विक प्राण का संचार करता है तथा प्रजा के उन्नति मार्ग में दौड़ाता है ।

वर्तमान काल में साहित्य के अन्दर गल्प, कादम्बरी, नाटक आदि की पुस्तक अधिक संख्या में निकल रही हैं, जिससे कि सत्पुरुषों का सच्चा जीवन वृत्तान्त बहुत कम प्रसिद्ध होता है, सच्चे जीवन वृत्तान्तों में कल्पनामय मनोरञ्जक वार्ता होती नहीं इसलिए

ज्प और कादम्बरी आदि के रसिकों में जीवनचरित्र का पूर्ण
ाकर्षण नहीं होता है, लेकिन तोभी गुणान्वेषी सत्पुरुष तो इन
ीवन चरित्रों के आनन्द से स्वागत करते हैं।

दूसरों का अनुकरण करना यह मनुष्यों का स्वभाव है इस-
ए प्रजा के सामने अगर आध्यात्मिक और पारमार्थिक जीवन
ताने वाले महापुरुषों का चरित्र रक्खा जाय तो इससे लाभ ही
सकता है, चरित्र नायक के गुण ग्रहण करने का जनता को
छा होती है और अपने गुणों के साथ तुलना करके अच्छा
ा समझ कर पाठक उत्तम होने की कोशिश करते हैं, इस रीति
जीवनचरित्र इसलोक से परलोक तक सुख के मार्ग दिखाने के
ए सच्चा शिक्षक का काम देता है। श्री महावीर के जीवन चरित्र
ने से आत्मिक शक्ति के विकाश होकर देहाभिमान कम होता है
ौर आत्मा की अनन्त शक्ति काभान होता है। श्रीरामचन्द्रजी के
ान्त बांचकर एक पत्नव्रत और एक रामराज्य क्योंकर होसकता
इसका खयाल होता है। भीष्म पितामह के वृत्तान्त से ब्रह्मचर्य
ी महिमा समझ में आती है, राणा प्रतापसिंह के जीवनचरित्र में
टूटल धैर्य और दृढ प्रतिज्ञा पालन की शिक्षा प्राप्त होती है

अपने जीवन काल में समय २ पर कुछ न कुछ [illegible]
रहता है, उस वक्त कईबार अपनी बुद्धि [illegible]

देती है, वह सहायता और वह बल उस संकष्ट को हटाने के
महापुरुषों के जीवनचरित्र देता है, उस जीवन चरित्र में उस
को हटाने के परिश्रम का, और वर्तन का दृष्टांन्त अपने को अ
तरह हिम्मत बंन्धाता है। इस संसार सागर में जीवन जहाज
किस रास्ते से लेजाने से ठोकर नहीं लगकर सही सलामत
पहुंच सकते हैं उस रास्ता को जीवनचरित्र बताता है। इस सं
रूपी वनमें से सही सलामत निकलने का मार्ग अनुकूल हो
है, तथा किस स्थल में चित्तको शान्ति देने वाला व अन्तः
को आनान्दित करने वाला आश्रम स्थान आवेगा इन सब बातें
बताने वाला जीवन चरित्र ही है।

सामाजिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिए
पुरुषों का जीवन चरित्र लिखने का प्रचार पूर्वापर से है, रामा
महाभारत पुराण आदि में लिखे हुए सच्चे अथवा कल्पित ज
चरित्र में अपने साहित्य प्रदेश में उच्च पदवी प्राप्त किया है।
गम में भी चरितानुयोग, कथानुयोग को भी इतना ही महत्व
आता है, जीवन चरित्र अर्थात् अमुक व्यक्ति की जिंदगी में
बनी हुई वार्ता अथवा संक्षेप में कहें तो अमुक व्यक्ति के हृदय
प्रतिबिम्ब यही है महान् पुरुष जगत् में स्थल स्थल पर
समय में प्रगट हो जाय, इसतरह पैदा नहीं होते हैं, जिनके मन
वचन शरीर में पुण्यरूपी अमृत भरा है और जिन्हों ने

कायिक, वाचिक, मानसिक पाप किया ही नहीं तथा जिन्होंने उपकार समूहों से संसार को उपकृत किया है, और जिन्हों ने अणुमात्र भी दूसरों के गुणको पर्वत के समान मानकर निरन्तर मनमें प्रसन्न रहते हैं ऐसे सत्पुरुष संसार में विरले ही होते हैं, ऐसे चारित्र्यवान मनुष्यों का जीवन, जीवनचरित्र तरीके लिखने का लायक है इस संसार में जन्म लेकर सिर्फ मौजमजा में, स्वार्थाधता में, आलस्य में और जीवनकलह में जिसने अपना जीवन बेताया है उसका जीवनचरित्र कभी भी नहीं लिखा जाता है, ज्ञान चारित्र और श्रेष्ठगुणों से संपादित हुआ और मनुष्यों से प्रशंसित जो क्षणभर भी जीया है उन्हीको विचारशील जन इस संसार में जीवित कहते हैं।

प्रबल वैराग्य, घोर तपश्चर्या, निश्चलमनोवृत्ति, अनुपम [illegible]-शीलता, इत्यादि उत्तमोत्तम सद्गुणों से जीवन को [illegible] रूप में परिणत कर भव्यजीवों के हृदयपट पर [illegible] असर उत्पन्न करनेवाले और अनेक राजा महाराजाओं को [illegible] उनके अनुयायी बनानेवाले धर्मवीर सत्पुरुष [illegible] श्रीलालजी महाराज जैसे उत्तम रीति की आध्यात्मिक [illegible] का जीवन [illegible] संसार के सामने शुद्ध स्वरूप में [illegible] [illegible] हुए [illegible] [illegible]ह्लाद होता है, श्री महावीर [illegible] की आज्ञा [illegible] ऊपर निश्चल लक्ष्य [illegible] पहुंचाने के [illegible]

जीवन प्रवाह सतत बहता था, आर्य प्रजा के आध्यात्मिक आ
पतन को देख कर इनकी आत्मा बहुत दुख पाती थी, आर्य प्र
के आध्यात्मिक जीवन को पुनरुज्जीवन करने के लिए पूज्यश्री दि
रात उद्यम में तत्पर रहते थे, उक्त पूज्यश्री ने अपनी पवित्र जीव
चर्या से जगत के उद्धार का मार्ग दिखाया है जैन अथवा जैनेत
समस्त प्रजा के ऊपर इनका समभाव था। और सभी के ऊ
उपदेश का समान ही प्रभाव पडता था बहुत से मुसलमान गृह
इनको पीर के समान मानते थे, बडे २ राजा महाराजा इनके चर
कमल पर शिर झुकाते थे, इसतरह के इस समय में एक आद
महा पुरुष की जीवन घटना हमें जिस प्रमाण में और जिस स्वरू
में मिली उसी प्रमाण में और उसी स्वरूप में हमने उस जीव
घटना को इस पुस्तक के अन्दर गूंथी है।

महात्मा गांधीजी के समकालीन पूज्यश्री १००८ श्रीलाल
महाराज साहब की समाज सेवा जैनप्रजा में जाहिर ही है, उ
पूज्य श्री का पवित्र नाम उच्च से उच्च माननीयों में भी मान्य शब
है, निर्मल चारित्र्य और अवर्णनीय गुण ग्राहक वुद्धि से पूज्यश्र
का विजय विजयी और निराभिमानी थे, शुद्ध संयम की आवश्य
कता वे श्वासोच्छ्वास के समान मानते थे।

सामान्य व्यापारी कुल में पैदा होकर न तो था विशेष वा
विलास और न तो था विशेष अभ्यास, तोभी आप दिग्विज

कर सके और राजा महाराजा भी आपके चरण कमल में शिर झुकाने में आनन्द मानने लगे। उन पूज्य श्री की गंभीरता, और वह विचारमय गहन मुखमुद्रा, अल्प किंतु मार्मिक वचन और विचार में सिद्धांत पर तथा कर्म क्षेत्र में साध्य सिद्धि पर, उनका अभेद्य, अखंड व अस्खलित प्रवाह और उनकी अपूर्व कार्यशक्ति, और उपद्रव से आए हुए असह्य दुःख में सन्तप्त होकर पार उतरा हुआ उनका विशुद्ध जीवन और उनका अगाध भक्तिभाव, तथा अपूर्व संघसेवा इन सब बातों का स्मरण जिन्हे पूरा २ होगा पूज्य श्री की जीवनी की भव्यता का यथार्थ ज्ञान उनकी ही समझ में आवेगा, समकालीन कार्य-क्षेत्र में अमुक मतभेद हो जाने पर भी अभी भी जैन जगत एक स्वर से पूज्यश्री का गुणानुवाद करता है, यही बात उनके सपूर्ण गौरव का साक्षी है, इनका आत्मगौरव और इनका आदर्श पहचानने लायक शक्ति अपने में नहीं थी, इनकी तेज प्रभा में खड़ा रहने लायक पवित्रता अपने में नहीं थी, इनकी तपस्या की कीमत अपने को नहीं थी, इन पूज्यश्री के परलोकवास पर आंसू बहाना अथवा देश के शिरोमणि को पहचानना इस बात में अपने को बाधा आती है यह अपना हतभाग्य ऊपर आंसू बहाना चाहिए।"

चारोंतरफ अविश्रान्त विहार कर और निराशाका निकन्दन कर उत्साह के संचार करने में पूज्यश्री ने कुछ बाकी नहीं रक्खी

थी। धार्मिक शिथिलता और अज्ञानता के बदले श्रद्धा और धार्मिक ज्ञान की उन्नति की व करवाई है। कायरता के बदले चैतन्य फैलाये, सम्प्रदाय के कल्याण करने में एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गमाये, शिथिलाचारियों को अपने उग्र आचार और संयमों से मौन उपदेश देकर चिताये, ऐसा महात्मा पुरुष के जीवन आदर्श पहचानने का अहोभाग्य प्राप्त हो इसको हमतो अपनी जिन्दगीमें एक अपूर्व लाभ समझते हैं।

चारित्र घटना के संग्रहार्थ मैंने खुद प्रवास किया है, इसके अलावा चारित्रनायक की जन्मभूमि तथा जहांजहां विशेष आवागमन रहा, वहां वहां मैंने अपने सहायकों को भेजे, सच्ची घटना समूहा को संगृह करने लायक श्रम उठाये इसी लिये पुस्तक को प्रसिद्ध होने में कल्पना से बाहर विलम्ब हुआ है। प्रिय रसियाटेकरी की मुलाकात हमारे आर्टिस्ट मित्र. मि. तलसानियांजीने करके छायाचित्र तैयार किया है, काल्पित कथा से तथा असत्य घटनाओं से दूर रहने की पूर्ण कौशीस की गई है, चारोंतरफ फिरकर देखा, समझा, सुना, खोजा उन्ही सभोंका यह संग्रह है, पाठक हंस चोंच के समान सार ग्रहण कर लेवेंगे।

व्यावर निवासी भाई मोतीलालजी रांकाने चरित्र लिखने का प्रयास शुरू किया, उनका विचार था कि जीवन चरित्र हिन्दीमें लिखें

...न इसी विषयमें वे हमारे प्रयास को देखकर वे भाई साहब ने
...ना संग्रह हमें देदिया और हमारे कार्य में सहानुभूति दिखाई,
...की इस सहृदयता ऊपर कृतज्ञता प्रगट करते हमें हर्ष होता है।

इस कार्यमें भाई श्री झवेरचन्द जादवजी कामदार की हमें
...ायता नहीं मिलती तो इस कार्य की सफलता शायदही होती,
...भाई शरीर तथा परिवार की परवाह नहीं करते हमें दी हुई सहा-
...की प्रतिज्ञा को पालने में और इस चरित्र को आकर्षक बनाने
... आत्मभोग दिये हैं उस आत्मभोग से हम उन्हें अपनी
...ञता में भागीदार तरीके जाहिर कर इस पुस्तक में उनके नाम
...ने में आनन्द मानते हैं।

पूज्य श्री के परम अनुरागी शतावधानी पण्डित महाराज श्री
...न्द्रजी स्वामी तथा और मुनि महाराजों ने पुस्तक को सुशो-
... करने में जो श्रम उठाये हैं उन मुनिराजों के तथा हमारे मुरब्बी
श्रीमान् कोठारीजी श्री बलवन्तसिंहजी साहब वगैरह शुभेच्छुको
उपयोगी सलाह देकर हमारा प्रयास सरल बनाये हैं उन सभों
...मेरे पर परम उपकार हैं।

...छात्रों में श्रेष्ठ शीघ्र कविवर श्रीयुत श्रीन्हानालालजी दलपतराम
... एम्. ए. ने इस पुस्तक का उपोद्घात लिखने की कृपाकर पुस्तक
...विशेष पवित्र बनाई है इस उपकार का नोंध लेते हमें परम
...होता है।

इस पवित्र पुस्तक के लिए कलम चलाने में बहुत साव
रखनी पडी है जो पवित्र पुरुष की जीवनी लिखने में योग्य
बाहर साहस स्वीकारा, इस गुण ग्राहक महात्मा के जीवन
लेखन में सहज भी किसी की जी दुखे ऐसा एक अक्षर भी
लानेका ध्यान रक्खा है इसी सबब से कितनी सच्ची घटना क
विवेचन छोडा गया है।

काठियावाड़ के दो चातुर्मास की वार्ता विस्तार पूर्वक
गई है। वह बहुतों को पक्षपात रूप दीख पडेगा, लेकिन सच्चा क
यह है कि, उन दोनों चातुर्मासों की सच्ची २ घटनाओं को अ
नजर से देखने का अवसर हमें मिला था, इसलिए दूसरे स्थल
लिए अन्याय नहीं होना चाहिए, अतवए दूसरी आवृत्ति और
अनुवाद में उन बातों को संक्षेप करने की सलाह हमें मिली है।

अमूल्य मनुष्य जन्म संयम सार्थक सम्बन्ध में सूत्र, मह
और अनुभवियों का वचनामृत उद्धृत करके जो विचार और वि
जाहिर किए गए हैं वे सबके समान समझने के लायक हैं, को
खास व्यक्ति अथवा किसी मण्डली के लिये समझ लेने का संकु
विचार न करते हुए विशाल और गुणग्राहक बुद्धि से पठन
के लिए सविनय प्रार्थना है।

निर्दोष केवलो हरिः

श्रीरामपुर
ज्ञानपंचमी सं० १९७९

श्रीसंघ सेवक
दुर्लभजी त्रि० जौहरी

उपोद्घात ।

बाल्यावस्था में जब कभी बर्षा आदि होने से न्हाने में आलस्य होता था तब एक वाक् सूत्र सुन पड़ता था, 'जाजा रोया ढूंढिया' उसवक्त यह स्वप्न में भी क्योंकर आता कि सं० १६३२ से सं० १६७८ तक देखगये साधु समूहों में पुण्य-निर्मल परम साधूराज ज्ञानियों में गुणसागर, परम ज्ञानवीर, सन्यासिओं में संन्यस्त भीष्म, परमसंन्यासी के ढूंढिया सम्प्रदाय में से दर्शन होगा ! लेकिन ऐसा ही हुआ, जो जिसको खोजे सो उसे मिलता है, नहीं खोजने वाले को मिलता नहीं, ढूंढने वाले सब ढूंढिया ही कहाते हैं, कलापी का प्रख्यात गजल का आध्यात्मिक अर्थ समझने वाला मनुष्य मात्र सिर्फ एक यही भावना पुकारते हैं ।

पैदा हुवा हूं ढूंढनें तुझको सनम !
वैष्णव भक्तराज सिर्फ यही गाते हैं कि
वनमें भूल रहा हूं कहो कहां गयो कान,

वेदान्तिओं की सूत्रावली में पहला सूत्र यही है कि—

" अथातो ब्रह्मजिज्ञासा "

बाईबल भी कहता है कि ढूंढो तो मिलेगा हरएक

मनुष्य को ढुंढिया शोधक-शाधक मुमुक्षु होना ही चाहिए अ
प्रभुको ही खोजना चाहिए।

भरतखण्ड की आर्यवाटिका में जल, जमीन, हवा मान
फलद्रुपता एक ही है, लेकिन महावन सरीखी इस आर्यवाटि
में उद्यान अथवा कुंज अनेक तथा जुदा २ हैं। इसमें चतुर मा
की बनाई हुई क्यारियां, लता मंडप, जल, फुवारा वगैरह तरह
के हैं, जिनमें कि सृष्टि सुन्दरी की चौखटधारीके अनेक रंग औ
अनेक तरह के दृश्य तथा तरह २ की लताओं से आच्छादित ल
मण्डप की अनेक पुष्प परिमल से शोभायमान घूंघट घटा के समा
भरतखण्ड की इस आर्यवाटिका में नानारंग वाली संसार रू
क्यारी के अनेक रंग वाला संस्कृति मण्डप है, श्री महावीर स्वाम
के रोपे हुए विकसित मञ्जरी युक्त विशालनी शाखा वाला जैन-ध
रूपी आम्रवृक्ष और उस आम्रवृक्ष की संस्कृति रूपी कुपल उ
में कवितारूप मंजरी, जिसमें धर्म ज्ञान, शील, तपस्यारूपी फल
से पृथ्वी यशस्वी हुई है धार्मिकता रूपी सरोवर से इस आर्यवा
टिका अजब तथा अनोखी होरही है संसार के शास्त्रियों को तथ
मानव संस्कृति के मीमांसकों को वह धर्म सहकार भूलने लायक
नहीं है।

१९ वीं सदी में महर्षि दयानन्द ने हिन्दू धर्म, हिन्दू शास्त्र
और हिन्दू संसार के लिए जो कुछ किया, उन सभी बातों को १५ वीं

सदी में जैन धर्म, जैन शास्त्र और जैन संसार के लिए लोकाशाह ने
थी ई० सं० १४६८ में गुरु नानक का जन्म हुआ और तुरंत
१५१७ ई० में धर्मवीर मार्टिन ल्यूथर ने केथोलीक सम्प्रदाय
जन्म लेकर अन्ध श्रद्धा का समूल नाश करने का प्रयत्न किया,
रोपीय उस इतिहास से करीब ५० वर्ष पहले अर्थात् १४५२ में
नधर्म के ल्यूथर रूपी सूर्य गुर्जरपाट नगरी में ऊगे, ई० सं० १४७४
लोंकागच्छ की स्थापना हुई, इस गच्छ के संस्थापक ने महर्षि
यानन्द और ल्यूथर के समान मूर्तिपूजा का निराकरण किया। मूर्ति-
ज़ा को धर्म विरुद्ध साबित की, शिथिलाचारी साधुओं का व्रत संयम
ढ किया, जादू टोना अध्यात्म मार्ग का अंग नहीं ऐसा समझाया,
र्म सूत्रों को अपने हाथ से लिखकर धर्माभिलाषियों को सम-
झाया, चतुर्विध संघकी धर्म विरोधी भावनाओं को सत् धर्म रूपमें
लाई, भेद इतना ही रहा कि महात्मा ल्यूथर पादरी थे, दयानन्द
स्वामी सन्यासी थे, और लोंकाशाह आर्य महा आदर्श दिखाने में
निपुण गृहस्थाश्रमी साधुराज थे, जनक विदेही के समान संसार
भार धुरन्धर संन्यासी थे। अदीक्षित किन्तु भाव दीक्षित थे, जैन
सन्त जिनप्रभुकी उपासना के लिए ४५ मन्यस्थ सुभटों को दीक्षा
दिलवाकर समस्थ आर्यावर्त में भ्रमणार्थ छोड़े, खिस्त धर्म सुधारक
जर्मन ल्यूथर के ५० वर्ष पहले अमदाबाद में यह घटना हुई
ल्यूथर के समस्त ख्रिस्ती जगत् को संभार रहा है लोंकाशाह के अमदा

बाद भी आज उतनाही सम्हार रहा है वो जैन प्रोटेस्टेंट सम्प्रदाय के साधुवर थे।

श्रीलालजी महाराज अर्थात् दर्शनप्रिय भव्यमूर्ति सिर्फ नेत्र को लोभाने वाले नहीं, किन्तु नेत्र में अद्भुत रस आंजने वाले, उनकी आत्मा के समानही उनके देह बल भी सुदृढ, बलवान् और ओजस्वी था, उनकी सामुद्रिक शास्त्रमें श्रद्धाथी, और उनकी आकृति ही उनके गुणों को साफ जाहिर करती थी, उनकी देह मुद्राई उनकी महानुभाविता जता रही थी, उनकी देहमुद्रा थी किसी सजावट से नटमुद्रा बताने वाली नहीं थी, किन्तु स्वभाविक मुद्रा थी सिर्फ दो श्वेत वस्त्र मात्र उनके देह ढाकने के लिए थे, ब्रह्मचर्य के सूचक शरीर सम्पत्ति से वे मनुष्यों में नर गजेन्द्र के समान शोभा· यमान थे। नगर के मुख्य दरवाजा के कपाट के अर्गल समान उनका भुजदण्ड था, देव दुर्ग के समान विस्तीर्ण वक्षस्थल था, कमल पुष्प के पत्र के समान पेरा वाला भव्य मुख मण्डल और आम्र के नवीन पल्लव समान भालपत्र था, साधुता का शिखर समान कुम्भस्थलसा गण्डस्थल कुसुमपल्लव के भार से झुकी हुई लतासी भरी व झुकी हुई भ्रूलता और उस भ्रूवल्ली के नीचे नगर द्वार अथवा राजद्वार लिखे हुए सूर्य चन्द्र के समान नयन मण्डल था, इन सब के ऊपर ध्वजासी फरकती मेघ के समान वर्ण वाली [illegible] रेखा मानो वैराग्य की कलगीसी उडरही थी, ज्ञान पाट के

ऊपर लगाया हुआ विशाल पद्मासन और हस्ताङ्गली की ज्ञान मुद्रा पेगम्बर भावना का पूर्ण अंश सूचित करती थी, श्रीलालजी महाराज का दर्शन होने पर सभी के मन में बुद्ध भगवान् की स्मृति जागृत होती थी, आठ २ दिन के उपवास करने पर भी दो २ हजार श्रोताओं में सिंह गर्जना के समान गर्जते हुए इस कालिकाल में श्री १००८ श्रीलालजी महाराज को ही देखे, व्याख्यान के बीच बीच में साधुपरिवार यह स्तोत्र गाते थे—

" चतुरां ! चेतजोरे।

ललना लेख जो रे ! के जोवन दो दिन रो झलकार।
अपने ही रंग में रंग दो
प्रभुजी ! मोको अपने ही रंग में रंग दो "

इस प्रकार के स्तोत्र जब २ उनके सन्त समूह उच्च स्वर में खींच कर ललकारते थे, तब २ राजगृही नगरी में नगर दरवाजा पर बुद्ध भिक्षुकों का नगर कीर्तन की भावना एक दम जागृत होती थी, कोई चतुर चित्रकार अगर बुद्ध भगवान की मूर्ति बनाने के लिये कोई मनुआदर्श (Model) खोजता हो तो श्रीलालजी महाराज की भव्याकृति से बढ़कर इस संसार में और कोई आकृति मिलना मुशकिल था, रतलाम में आचार्य श्री उदयसागरजी महाराज का कहा हुवा—" सागर वर गंभीरा " इस आशीर्वाद

भावना से श्रीलालजी महाराज साकार आत्मा की प्रतिमाही थे। इस प्रकार के साधुदेव के दर्शनार्थ वि० सं० १९९७ में चातुर्मास के अन्दर चोरवाड़ से पढीआरजी राजकोट पधारे थे।

श्रीलालजी महाराज साहब की व्याख्यान भाषा हिन्दी, मारवाड़ी, गुजराती इन तीनों का अजब संमिश्रण थी, जिसको सुन कर बड़े २ भाषा शास्त्रियों को अपने भाषा पांडित्य का गर्व निकल जाता था, यद्यपि उस भाषा की रचना व्याकरण नियमानुसार नहीं थी तथापि उस वाक्य रचना में क्या ज्ञान, व क्या वैराग्य, क्या तप और क्या संन्यास, ऐसे ही क्या इतिहास और क्या उदारता सभी विराजमान थे। उदारमत वादियों की अनुदारता तथा सांप्रदायिक छोटी २ बातों में तडफडाने वालों की युक्तिवाद बहुत सुना तथा देखा लेकिन उन सबों से हमारे पूज्य श्री की व्याख्यान शैली निराली ही थी, आधुनिक शिथिलाचारिओं से उलट साम्प्रदायिक आचारों से व्रत, नियम, संयम पलवाते हुए साम्प्रदायिक दृढ़व्रती महा तपस्वी इन सन्तदेव की हृदयहारिणी व्याख्यान वाणी की उदारता सीमाबंध नहीं थी, किन्तु सिंह के विचरने लायक वन की विस्तारता के समान निस्सिम थी। आकाश के समान विशाल थी। ....

गणित विषय में पाश्चात्य गणित के अंदर वीली अनट्रीलीअन से संख्या गणना की हद होती है, और आर्यगणित में परार्ध

ंख्या आखिरी मानी जाती है लेकिन श्रीलालजी महाराज के लिये ाराध संख्या अंकमाला की मेरू नहीं थी, किन्तु बीच का ही मणका थी, जिस वक्त आप संसार को आश्चर्यचकित करनेवाला राजस्थान के इतिहास से वीर दृष्टांत का वर्णन करने लगते थे उस वक्त सभा जनों में अद्भुतता छा जाती थी, यति मुनिओं की रासाओं से जिस वक्त काव्य दृष्टान्त कहते थे और घोर अंधेरी रात के मध्य भागमें हवेली के ऊपर से हाथी की सूंड़ ऊपर पैर रख कर शंकेत के स्थान में जाने वाली अभिसारिका का शाब्दिक चित्र खींचते थे, उस वक्त श्रोताओं को जितना ही काव्यश्रवण से आनन्द होता था उतना ही व्यभिचार के ऊपर विषाद भी होता था। साधु जीवन की तपश्चर्या-दिखाने वाले वे सनातन धर्म से भिन्न जैन संस्कृति खड़ा करनेवाले और सोने की खान के समान फीलसुफी की गहनता भरी ज्ञान गुफा दिखाने वाले ऐसे संसारिओं में महात्मा गांधी और संन्या-सिओं में पूज्य श्री १००८ श्रीलालजी महाराज ही दिख पड़े। संसारी की अपेक्षा संन्यासी में तप विशेष होना तो एक प्रकार का कुदरत का नियम ही है, जैसा ही देह रंग, वैसे ही इनका यम-संयम रूपी आत्मरंग भी घेरे हुए थे, देह और देही की खाल खींचे सिवाय ये दोनों भिन्न नहीं होते, वैराग्य तो नशों के अन्दर रक्त के समान और हृदय की धकधकी और साधुता तो जीवन का श्वासो-च्छ्वास ही समझता था। बहुतों को तो श्रीलालजी महाराज किसी

अन्य दुनियां के ही हैं ऐसे दिख पड़ते थे, इस संसार में तो—
" न त्वत्समोऽस्त्यप्यधिकः कुतोऽन्यः " आपका कोई समान भी
नहीं था, अधिक तो कहां से आवे ? ·········यह दुनियां तो
सदा ही सन्तों की भूखी ही रहती है।

वि० सं० १९६७ का चातुर्मास गुजरात, काठियावाड़ में
निष्फल हुआ था, श्रीलालजी महाराज ने श्रावकों में तथा श्रोताओं
में जो दया की झरणा जीतेजी बहागये वह झरणा आज भी
निर्विच्छिन्न वह रही है।

जैन संस्कार ने ही संसार को वीरत्वहीन किया, इसप्रकार
दोप लगाने वाले को अगर उदयपुर के पर्वतों में और जोधपुर-
बीकानेर की रणथली में तथा आरावली की भूलभुलैये में सिंह के
समान विचरने वाले श्रीलालजी महाराज के दर्शन होजाते तो
जरूर ही उनकी भूल लगजाती।

" पेट कटारीरे के पहेरी सन्मुख चाले "
हरिनो माग छे शूरानो, नहिं कायरने काम जोने।

स्वामी नारायण सम्प्रदाय के भक्ति वैराग्यों के इन कीर्तनों में
भरी हुई वैराग्य की वीरता कुछ जैन सम्प्रदाय में कम नहीं पड़ती
[illegible] देव के अथवा महावीर भगवान के अथवा उनकी साधु

ाधिवश्रों के आत्मशौर्य देखने के लिए भी आत्मशौर्य के मार्ग में
जाने वाले ही चाहिये । वैराग्य की वीरता देखने के लिए आंख से
स्थूल-वस्तु देखने वाले नहीं चाहिए, किन्तु सूक्ष्म पारखी की ही
जरूरी है, संसारिओं में सन्यस्थ शोधक और वैराग्य पारख आंखें
बहुतों की नहीं होती है।

श्रीलालजी महाराज साहब प्रभु नहीं थे, प्रभु के अवतार भी
हीं थे, धर्म संस्थापक भी नहीं थे, पेगम्बर भी नहीं थे, सिर्फ
ाधु थे, सन्त थे, आचार्य थे, ज्ञान भक्ति, शील, तप, वैराग्य की
ामृद्धि वाले आत्म समृद्ध धर्मवीर थे, जगत इतिहास के कोक वे
हीं थे, सिर्फ जगत कथाओं में से कुछ एक भाग वे थे, वे कुछ
व नहीं थे, सिर्फ साधु थे, संयम पालते और संयम पलवाते थे,
ाकिन पोने तीन लाख की अमदावाद की वस्ती में और १२ लाख
करीब बम्बई के मनुष्य समुद्र में तथा सत्तर लाख के लगभग लन्दन
ाहर के मानव महासागर में कितनेक सच्चे साधु साध्वी हैं ? अनु-
रवी कोई कहेगा ?

श्रीलालजी महाराज याने संतरूपी पर्वतों से घिरे हुए एक उच्च
शिखर, बचपन में ये डोगरों में खेलते घूमते और कुदरत की गोद
ें क्रीडा करते हुए कितनी अपूर्व अदृष्ट वस्तु को देखते हुए और
शून्य वन में विचरते हुए टेकरी के शिखर सिंहासन के रसिक ये
साधु शिरोमणि अद्भुत रस पीकर उछल पड़े और जगत की गोद

में अद्भुत बने ! इस वक्त इन्हें पर्वतों की तरफ से निमन्त्रण मिल
कि आप नगर के बाहिर और संसार से बाहिर आवें ! आबू पर्व
से पैदा हुई तथा आरावली से पाली गई बनास नदी के जलप्रवा
में नहाते नहाते बचपन में ही पानी की आवाज आपने सुनी थ
कि जैसे इस जलप्रवाह निर्विच्छिन्न वहारही है वैसे ही आप द
का प्रवाह समस्त संसार में वहाना, सिद्धार्थकुमार की यशोध
रानी साध्वी दीक्षा लेकर बुद्ध संघ में मिली । इस बात को इतिहा
में तथा काव्यों में बाचते हैं, स्वयं सन्यस्त दीक्षा लेने के बाद कु
दिन बीतगये वि० सं० १९५४ में अपनी पूर्वाश्रम की पत्नी
साध्वी दीक्षा लेने के लिए प्रेरणा, प्रोत्साहन, उद्बोधन देते हुए व
जय मिलाते हुए श्रीलालजी महाराज साहब को देखने वाले
कई एक विद्यमान है, श्रीलालजी महाराज साहब की जीवन वि
के प्रसंग का वर्णन उनके जीवन चरित्र लिखने वाले के शब्दों
ही लिखेंगे "पति के पीछे पत्नी" इस शीर्षक छोटासा नवमा प्रकर
अद्भुत रस से भरा हुआ आर्यावर्त के धार्मिक इतिहास में अद्या
कम नहीं है ।

" क्रम से मेवाड़ मालवा की भूमि को पावन करते हुए पू
श्री महाराज रतलाम पधारे, X X रतलाम के श्री संघ ने पर
उत्साह, अतिशय भक्ति तथा असीम आनन्द के साथ आप
सत्कार किया । करीब दो हजार मनुष्य आपके सामने गये । इस सम

आचार्य श्री १००८ उदयसागरजी महाराज ने शरीर के अन्दर
ाधि बढजाने से संथारा पचक लिये थे, यह समाचार फैलते ही
कड़ों हजारों लोग पूज्य श्री के दर्शनार्थ आने लगे । टोंक से
युत नाथूलालजी बंब, उनके सुपुत्र माणकलाल और श्रीमती मान
वर बाई श्रीजी की संसारावस्था की धर्मपत्नी ये सब भी आये।
तारों आदमी के बीच में सिंह गर्जना से धर्म घोषणा करने से व
लालजी महाराज साहब के प्रभावशाली व्याखयान श्रवण करने
मानकुंवर बाई को वैराग्य उत्पन्न हुआ। पति के पीछे चलकर
त्मोन्नति साधने की उत्कण्ठा प्रबल हो उठी, अर्धङ्गिनी की दावा
रने वाली को ऐसी ही सद्बुद्धि उपजती है, पूज्य श्री के पास
ानकुंवर बाई ने प्रतिज्ञा की कि हमें अब एकमास से अधिक
सार में रहना नहीं है, ऐसी प्रतिज्ञा करके मानकुंवारबाई आज्ञा
ने टोंक गई।

सं० १९५४ माघ शुक्ला १० के दिन आचार्य श्री उदय-
गरजी महाराज का स्वर्गवास हुआ।

सं० १९५४ फाल्गुण शुक्ला ५ के दिन श्रीमती मानकुंवरबाई
लाम शहर में दीक्षा ली, इस वक्त पूज्यश्री १००८ श्रीलालजी
हाराज भी रतलाम में ही विराजमान थे, एकही तिथि में तीन
क्षाएं थीं।

धार्मिक संसार की उन्नति करने वाला चमत्कार से मनुष्य संसार की जीवनवृत्ति को यह कथा साफतौर पर बोध देने वाली है।

ई० सं० १८९७ के इतिहास प्रसिद्ध यशस्वी वर्ष में भारत विद्वान्मुकुट वीरपुत्र तिलक महाराज को देवकी वसुदेव के सम कारागृहवास दिया गया, उसके बाद थोड़े ही मास में यह घट घटी, उनीसवीं सदी का अस्त और बीसवीं सदी का उदय ई० सं १८९८ के प्रभात में आर्यावर्त में से यह संसार जीवन चित्र औ यह धर्म जीवन चित्र, पाठक ! "भरतखण्ड में अद्भुतता तो इति हास में ही है, आज कुछ प्रगट होती नहीं, आर्यावर्त की आत्म लक्ष्मी निकल चुकी है, भारतीय प्रजा तो संस्कृती के नीचे दब कर बैठी है, ऐसे कहने वाले विदेशी लोगों का ज्ञान सीमा कित संकुचित है ? श्रीलालजी महाराज की तथा मानकुंवर बाई की संस जीवन कथा और धर्म जीवन वार्ता इतिहास प्रसिद्ध किसी संस्कृति की शोभा कारक ही है, दाम्पत्य जीवन तथा साधु जीव संसार के अथवा संस्कृति के दो हृदयों के समान ही है अन्य संस में अथवा संस्कृति में दाम्पत्य जीवन के लिए तथा साधु जीवन लिए उपदेशों की जरूरी होती है किन्तु आर्य संसार में अथ आर्य संस्कृति में उपदेश की जरूरी होती नहीं, अतएव और दे की आत्मा से आर्यावर्त की आत्मा अधिक सजीव है, आज बीसवीं सदी के भरतखण्ड अर्थात् महात्मा गांधीजी और कस्तू

क तथा श्रीलालजी महाराज साहब व मानकुंवर बाई के तपोमय जीवन के तपोवन।

राजमुकुट उतार कर भेख लेने के बाद उज्जयिनी में और गाड़ ट नगरी में पिंगला राणीजी अथवा मैनावती माताजी के समीप क्षा के लिए गये हुए भर्तृहरिजी को व गोपिचन्दजी को नाटकीय भूमि पर बहुतों ने देखे होंगे गृहस्थाश्रम के वेश में जो श्रीलालजी हाराज साहब जन्मभूमि में ठहरते नहीं थे और वनमें तथा वैरागिओं बारंबार भागजाते थे, वही श्रीलालजी महाराज साहब साधुवेश टोंक नगरी के अन्दर चातुर्मास करके उपदेश देते तथा गोचरी लिए फिरते थे, उनको वैसे करते हुए देखने वाले कितने ही आज मौजूद हैं, आयुष्यवय में तथा दीक्षा वय में छोटे किन्तु गुण डार में बड़े श्रीलालजी महाराज साहब को आचार्य पदपर स्थिर के "गुणाः पूजा स्थानं गुणिपु न च वयः" ऐसे सर्व शासनों प्रधान महा सूत्र को जैन शासन ने भी सिद्धकर रहा है, ऐसा रने वालों को दिखाया।

.........श्रीलालजी महाराज वर्तमान काल से अज्ञ सिर्फ त्र सम्पन्न साधु नहीं थे, किन्तु अनुभव विशारद थे, सिर्फ पण्डित नहीं थे, किन्तु सन्त थे।

युरोप में अद्वितीय सुभटनाथ नेपोलियन इटली के अन्दर ार्ग के लोह मुकुट अपने हाथ से अपने शिरपर रख लिया था।

श्रीलालजी महाराज और उनके बाल मित्र गुर्जरमलजी पोर
सं० १६४४ के मार्ग शीर्ष मास में खुद ही साधु दीक्षा धा
किये थे, सं० १६६६ के कार्तिक मास में श्रीलालजी महाराज
सगे सहोदर कुटुम्ब परिवार मिलकर श्रीलालजी महाराज के
करने के लिए टोंक से दुनी गांव पधारे थे, श्रीलालजी के धर्म
तपस्वीजी श्री पन्नालालजी महाराज तथा श्रीगंभीरमलजी महा
जैसे कि संसार में पड़ने रूप भूल से निकालने की चितावनी
के लिए पहले से ही दूनी में जाबिराजे थे, लग्नोत्सव के बा
वर्ष तक श्रीलालजी महाराज साहब की धर्मपत्नी मानकुंव
पीहर में ही रही, और सं० १६३६ टोंक आई, इस बी
श्रीलालजी ने अखण्ड ब्रह्मचर्य यही हमारी जीवन अभिल
ऐसी भीष्म प्रतिज्ञा करली थी, श्रीलालजी महाराज के, मा
बाई के भाग्य में देवने वैराग्य लिखा था उसको कौन मिटा
था, माता पिता, पत्नी, स्वजन सहोदर इन सबों का प्रयत्न नि
गया, पतिने दीक्षाली, पति गुरुदेव के समीप में ही बाद प
भी दीक्षाली, धर्म दीक्षिता होकर छः वर्षतक सुन्दर संयम पा
फिर पति के पहिले ही स्वर्गजाने की आर्य महिलाओं की इ
लापा के अनुसार मानकुंवर बाई ने भी महासौभाग्य प्राप्त कि

क्या संयम में और क्या संसार में श्रीलालजी महाराज
नष्ठिक ब्रह्मचारी ही रहे, और मानकुंवर बाई अखंड सौभाग्य

रही, संसार की और वैराग्य की सौभाग्य चुंदरी ओढ़कर ही
कुंवर बाई मृत्यु निद्रा में सोई, पत्नीभावना या पतिभावना
हताश हुए भए अथवा जीवन के विध्वंश से भग्नांश अपने
मानते हुए तथा नैसर्गिक दुर्बल स्वभाव से या इन्द्रियों की
रज्जु का रुदन से संसार को धुजाने वाले अपने नवीन संसार
कितनेक प्रेमयोगिओं को इन योगी योगिनिओं के दाम्पत्य योगों
से क्या २ सद्बोध लेने लायक नहीं है ? आर्य संसार का
फल दाम्पत्य यही है और आर्य सन्यास का सफल सन्यास
सीको कहते है । इन योगी-योगिन दोनों का यही परम
ंपत्य और दोनों के यही परम नैष्टिक ब्रह्मचर्य, ईश्वर का शुभा-
शीर्वाद उतरे इस आर्यदाम्पत्य पर ऊभीये युगमें स्थूल पूजा व
ूख पूजा का आज का नव जगत में दाम्पत्य जीवन कुं से गायत्री
श्वरी आशीर्वाद की अति आवश्यकता है ।

नवीन गुजरात के नवीन स्त्री पुरुष हमसे पूछते हैं कि अगर
कल्पना देश निवासी जय-जयन्त मानव जगत में तुम्हारे देखने में
ो तो दिखाओ, और तुरंत ही उत्तर दिया है कि " इस संसार में
ी दाम्पत्य भावना सफलकरना मुश्किल ही है " यह बात सच्ची
कि कल्पना देश के इन पुण्य निवासिओं को जगज्जीवन दाम्पत्य
ाचर्य में उतारना मुश्किल है । महात्मा गांधीजी का दाम्पत्य ब्रह्मचर्य
ाखिर समय का है, लेकिन पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज का और

श्री मानकुंवर बाई का नैष्ठिक ब्रह्मचर्य से परिपूर्ण पुण्य जी
साधु कथाओं से मैं आशा रखता हूं कि इन शंकाशील पूछने
का समाधान अवश्य हो जायगा। इस वक्त भी यह आर्य
सच्चे साधुओं से शून्य नहीं है आश्चर्य अभी भी मौजूद है Tr
stranger than fiction मानव सर्जीव कल्पना की सच्चाई से
प्रभु सर्जीत सच्चाई अजब है. प्रभु कल्पना से पर और ब
गुफाओं का विराट भंडार से भी न मिले वैसी कल्पना
से ऐसे नहीं होती। जहां पर अन्धकारों से अन्धकार
रहा है ऐसे आकाश में चमचमाती तेज पुंज तारागर
परम्परा का वाचकवृन्द जरूर देखेही होगें । पूर्वाकाश में
या बुद्ध क्षितिज के पीछे से उगे और आकाशके मध्यभागमें
चमकने लगे तथा गगनमंदाकिनी के समीप शनि अथवा गुरु
चमाते हो, और फिर वे धीरे २ पश्चिमाकाश में उतर पड़े
स्थिर होजाय, इसप्रकार तेजस्वी शनि की प्रकाशावली भर
उगती और चमकती हुई आप लोगों ने रात भर में देखी
उनमें मध्य रात्री बीतने पर अमृतनौका सम पूर्व क्षितिज में
और धीरे २ तारकवृन्द में जाता हुआ चन्द्रमा दीख पड़ा
हमारे जीवनकाल में भी ऐसा ही हुआ, साधु संगति की हमें
तीव्र अभिलाषा थी और आज भी थोड़ीसी वह है, चमकती
ताराओंमें छोटा बड़ा ग्रह उपग्रह जीवन भर देखें, अपने २

अन्धकारों को थोड़ा बहुत यह सब तारा समान सन्त हटाये और हटावेंगे, लेकिन उन सबों में इस आंख से चन्द्रमा तो फ एक ही देखा, इस्लामी पंक्ति को तथा पारसी अध्वर्युओं को विशेष नहीं देखा है लेकिन सनातनी ब्रह्मसमाजी, आर्यसमाजी थोसोफिष्ट, मुक्तिफौज, युनिटेरियन, प्रेसबिटेरिअन, इंग्लिशचर्च थोलिसिभमन साधु संन्यासी धर्मप्रचारक पादरियों का परिचय धिक किया है, वड़ोदा में सनातनियों का ज्ञानस्तम्भ रूप पंडित य छोटूमहाराज का भी परिचय है फिलोसफी की कठिनता को खवोक करके समझाते हुए नरहरि महाराज का प्रवचनभी सुना , मोरवी में, महामहोपाध्याय संस्कृत शीघ्रकवि शंकरलालजी का सत्संग था। जूनागढ में मूलशंकर व्यासजी व्यास वापा के स्पष्टोत्तर शत परायण का भी दर्शन किया था, अहमदाबाद में दर्वाजा पर विराजते हुए सर्यूदासजी के तथा चराचर की चा- त्रा में विचरने वाले जानकीदासजी के दर्शन से विमुख भी नहीं है, भजन की धुन में ही रमणेवाले मोहनदासजी के भजन भी रमन सुने, छोटी २ पुण्य कथा से सत्संग मंडलीको रिझानेवाले ीर रिझाकर एक कदम ऊपर चढानेवाले जादवजी महाराजको भी रंवार देखे, नर्मदातीर में गंगानाथ के केशवानन्दजी के साथ भी करात हमने विताई, करनाली के गोविन्दाश्रमजी और चांदोद के ग स्वामी का भी दर्शन किया है, गंगानाथ के ब्रह्मानं

बाघोड़िया के दादूरामजी और मालसर के माधवदासजी का द
शौभाग्य नहीं मिला, यह बात नहीं. वीसनगढ के शिवानंदजी
मानन्दजी की अश्विनीकुमार समान वैद्यता को भी जानता
पुष्कर वाले ब्रह्मानन्दजी के भजन व वचन सुना, ९५ वर्षके व
वृद्ध लटकती चमड़ी वाले भक्त कवि ऋषिराजजी के भजन
सुना है, अद्वैती वामदेवजी स्वामी व विशिष्टाद्वैती अ
प्रसादजी के प्रवचन और कीर्तन में बैठे हैं, नाटक
रंगभूमि पर भक्तराज नरसिंह मेहताको भी देखा है, इस जीव
सिन्ध ब्रह्मसमाज के यह दो साधुजन भक्तराज डा० एवेन के
प्रार्थना समाज में एकतारा की धुन में नृत्य भी देखा है,
समाज का 'Intellectual Gymnast' न्यायवाद का महा
आर्य फिलसुफ आत्मानंदजी का सहवास भी किया है, ब्रह्मस
के साधुजन प्रतापचन्द्र मजूमदार और बाबू विपिनचन्द्र पाल
धार्मिक व्याख्यान सुना है, मुक्ति फौज के सेनापति जनरल बूथ
ख्रिस्ताचार्य मुम्बई के बिशप के, डा० फेरवेर्न के डा० फारक
के, डा० सन्डरलैंड के व्याख्यान व धर्म प्रवचन एक २ दफा
हैं, हिमालय की कन्दरा में आसन लगा कर बैठे हुए स्वामीजी
श्रद्धानन्दजी को भी देखा है, करीब चार अंगुल चौड़ी सुन
किनारीदार साड़ी पहनी हुई और हाथ पर सोनेरी सांकल
पहिने वाला ७५ वर्ष की विधवा मिसेस बेसेन्ट के और

ाधु-वेष में विचरने वाले ब्रूकस के धर्म व्याख्यान में भी गये हैं, ंकराचार्य श्री माधवतीर्थजी, त्रिविक्रमतीर्थजी, श्री शान्त्यानंदजी, ग्रौर खिलाफत शंकराचार्य श्री भारती कृष्णतीर्थजी से भी हम अपरिचित नहीं हैं, ऐसे ही सफेद, पीला, भगवावाले को यथामति चीन्हे जाते हैं, नवीन प्राचीन अनेक संप्रदाय के साधु संत को देखे हैं, लेकिन जगत् की अंधेरी महारात्रि को देखने से ये सबही छोटे बड़े साधु तारा के सदृश जगमगाते हैं, इस संतरूपी तारकवृंद के मध्य में अमृत के निधान कलानिधि (चन्द्र) समान विचरने वाले पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज को ही देखे।

हे पाठक, आपकी अति तेजस्वी आंख से अगर साधुता का चन्द्रदेव किसी अन्य को ही देखे हो तो उसमें हमारी मनाई नहीं लेकिन वह साधुता के चन्द्रदेव आप अपने लिये ही देखे हों तो इतना हमारे लिये पर्याप्त है। पाठक! हम आपसे विनय पूर्वक इतना ही चाहता हूं क्योंकि पृथ्वी भर में संसार की रात अंधारी है; इसलिए संसार का मार्ग विकट तथा भयानक है।

न्हानालाल दलपतराम कवि

विषयानुक्रमणिका ।

आभार.

यह पुस्तक लागत मात्र से कम कीमत में बेचकर अधिक प्रचार कराने के उद्देश्य से नीचे लिखे महानुभावों ने आर्थिक सहायता दी अतः उसका उपकार मानता हुं।

२०००) शेठजी बहादुरमलजी बांठीया–भीनासर
५००) झवेरी अमृतलाल राइचंद–पालनपुर
२५०) झवेरी मोहनलाल रायचंद–पालनपुर.
१००) झवेरी माणेकचंद जकशी–पालनपुर
१००) महेताजी बुद्धसिंहजी वेद–बीकानेर.
१००) शेठजी जतनमलजी कोठारी–बीकानेर.
१००) झवेरी खूबचंदजी इंदरचंदजी–दिल्ली वगेरे.

नीचे के गृहस्थों ने अगाउ से संख्यावन्ध पुस्तकों के ग्राहक वनकर मेरा उत्साह को वढाया है इससे उनका उपकार मानता हुं।

कलो ५०० श्री उदयपुर श्रीसंघ.
" २०० रा. रा. हेमचन्द्र रामजीभाई–भावनगर
" २७५ रा. रा. देवजीभाई प्रागजी पारख–राजकोट.
" २५० शेठजी चंदनमलजी मोतीलालजी मुथा-सतारा.
" २५० शेठजी देवीदास लक्ष्मीचंद घेवरिया–पोरबंदर.
" २०० शेठजी हस्तीमलजी लक्ष्मीचंदजी --बीकानेर.
" १०० शेठजी गाढमलजी लोढा–अजमेर.
" १०१ श्रीमती नानुबाई देशाई–मोरवी.
" १०० शेठजी श्रीचंदजी अब्बाणी–ब्यावर
" १०० श्रीसघ हा. शेठ वरदभाणजी पीतलिया रतलाम.
" ७५ श्री स्था. जैन मित्र मंडल हा. शेठजी
कचराभाई लहेराभाई---अमदावाद वगेरे.

पूज्य प्रभावाष्टकानि ।

लेखक—शतावधानी पंडितरत्न
श्री रत्नचंद्रजी स्वामी ।

नमस्काराष्टकम् ।

वसंततिलकावृत्तम् ।

संशुद्धसंयमधरं सरलस्वभावम्
मोक्षार्थसाधनपरं प्रथितप्रभावम् ॥
तत्वप्रचारपरिशामितदुःखदावम्
श्रीलालजिद्गणिवरं नितरां नमामि ॥ १ ॥

भावार्थः—सम्यक् रीति से शुद्ध संयम के पालने वाले, स्वभाव से ही अत्यन्त सरल, मोक्ष रूपी उत्कृष्ट पुरुषार्थ साधने में सदा निमग्न, देश देशान्तरों में विस्तृत ख्याति-प्रभाव वाले ... तत्वों का प्रचार कर अनेक जीवों के दुःख दावानल को

वाले आचार्य अवतंस श्रीमत् श्रीलालजी महाराज को मैं मन, व
और काया की त्रिकरण शुद्धि से नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

दृष्टेः सदा स्रवति यस्य सुधासमूहो
यस्यार्द्रशुद्धहृदयात् करुणाप्रपूरः ॥
यस्यानने वहति सौम्यनदीप्रवाहः
श्रीलालजिन्मुनिवरं तमहं नमामि ॥ २ ॥

भावार्थः—जिनकी दृष्टि में से निरन्तर सुधा स्रावित हो
अर्थात् नेत्रों में अमृत भरा था जिससे हर ओर सुधा दृष्टि
[illegible] होता था; जिनके आर्द्र और पवित्र हृदय से दया
[illegible] बहा करता था जिनके मुख पर सौम्यता-नदी का प्र
[illegible] रहता था ऐसे श्री श्रीलालजी मुनिराज को मैं नमस्
[illegible] हूं ॥ २ ॥

विद्या विवादरहिता विनयेन युक्ता
चित्तं विरक्तमपि सर्वजनस्य रम्यम् ॥
मुद्रा तु यस्य निजशान्तिसमुद्रमग्ना
श्रीलालजित्कृतिवरं तमहं नमामि ॥ ३ ॥

भावार्थः—विनय से प्राप्त की हुई जिनकी विद्या [illegible]
[illegible] दूसरों को अपमानित करने की वृत्ति से रहित थी

थी, जिनका अंतःकरण वैराग्य रस से पूरित था, परन्तु [illegible]
था कि किसीको अरम्य हो, बल्कि सबको मनोहर लगता था,
नकी मुखमुद्रा आत्मिक शान्ति के समुद्र में मग्न रहती थी;
। विद्वानोंमें श्रेष्ठ श्रीलालजी महाराजको मैं नमस्कार करता हूं॥३॥

श्रीमज्जिनेन्द्रमतफुल्लसरोजभृङ्गम्
शास्त्रीयतत्वशुभमौक्तिकराजहंसम् ।
विस्तीर्णकीर्त्तिधवलीकृतदिग्विभागम् ।
श्रीलालजित्सुकृतिनं शिरसा नमामि ॥४॥

भावार्थः—जो सब दर्शन की ओर साम्य भाव रखते हुए
वीतरागमत—जैन दर्शनरूपी प्रफुल्लित कमल पर भृंग के सदृश
[illegible] थे, शास्त्रीय तत्वरूपी सरस मोती को चुगनेवाले राजहंस थे;
[illegible] विस्तीर्ण कीर्ति से दसों ही दिशाएं उज्वल थीं ऐसे सत्कृत्य
[illegible] श्रीलालजी महाराज को मैं सिर झुकाकर नमस्कार
[illegible] हूं ॥४॥

यस्यान्[illegible]
राकृष्यते मतिविशारदसज्जवर्गः ।
संरा[illegible] सुजनता गुणपुष्पवल्ली
श्रीलालजिद्यतिवरं मनसा नमामि ॥५॥

भावार्थः—स्वच्छ और दृढ़ लोह [illegible] में अधिक से
[illegible] भारी लोहे को भी खींचने की शक्ति रहती है इसी तरह

वाले आचार्य अवतंस श्रीमत् श्रीलालजी महाराज को मैं मन, वच
और काया की त्रिकरण शुद्धि से नमस्कार करता हूं ॥ १ ॥

दृष्टेः सदा स्रवति यस्य सुधासमूहो
यस्यार्द्रशुद्धहृदयात् करुणाप्रपूरः ॥
यस्यानने वहति सौम्यनदीप्रवाहः
श्रीलालजिन्मुनिवरं तमहं नमामि ॥ २ ॥

भावार्थः—जिनकी दृष्टि में से निरन्तर सुधा स्रवित हो
था अर्थात् नेत्रों में अमृत भरा था जिससे हर ओर सुधा दृष्टि
विलोकन होता था; जिनके आर्द्र और पवित्र हृदय से दया
स्रोत बहा करता था जिनके मुख पर सौम्यता—नदी का प्रव
प्रवाहित रहता था ऐसे श्री श्रीलालजी मुनिराज को मैं नमस्
करता हूं ॥ २ ॥

विद्या विवादरहिता विनयेन युक्ता
चित्तं विरक्तमपि सर्वजनस्य रम्यम् ॥
मुद्रा तु यस्य निजशान्तिसमुद्रमग्ना
श्रीलालजिन्कृतिवरं तमहं नमामि ॥ ३ ॥

भावार्थः—विनय से प्राप्त की हुई जिनकी प्रज्ञा वि
रहित थी, दूसरों को अपमानित करने की वृत्ति से तनिक भी दू

जिनके प्रताप-प्रभाव में उच्च पद प्राप्त मनुष्यों के खींचने की
थी इसी प्रताप द्वारा असाधारण विचारशील विद्वान राजा म
जिनकी ओर झुकते थे इतनाही नहीं परंतु वे उनके गुण
लतिका की महक से प्रसन्न हो मुक्तकंठ द्वारा श्लाघा—प्रशं
थे ऐसे यतिओंमें प्रधान श्रीलालजी महाराज को मैं श्र
पूर्वक नमस्कार करता हूं ॥५॥

दम्भोज्झितं निराभिमानिनमात्मलक्ष्यं
कंदर्पसर्पदशनोत्खनने समर्थम् ।
शांतं सदैव करुणावरुणालयं तं
श्रीलालजिद्गणिवरं प्रणमामि भक्त्या ॥६

भावार्थः—दंभ-मिथ्याडंबर जिन्हें लेशमात्र भी पर्श
आचार्य पदप्राप्त एवम् प्रतिष्ठाप्राप्त सरदारों के पूजनीय
जिन्हें अभिमान छुआ भी न था परंतु सिर्फ आत्माही
जिनका लक्ष्य था, कंदर्प-कामदेवरूपी विषारी सर्प की ब
हने में जो विजयी हुए थे, जिनके चहुं ओर शांति स्थाि
दया के तो जो सागर थे उन आचार्य शिरोमणि श्रीलाल
हाज को मैं आंतरिक भक्ति से नमस्कार करता हूं ॥६॥

पाषाणतुल्यहृदया अपिकेचनार्या
नीताः स्वधर्मपदवी कुशलेन येन ।

दृष्टांतयुक्तिरसगर्भित वाधशैल्या
श्रीलालजिद्गणिवरं गुरुकल्पमीडे ॥७॥

भावार्थः—कितनेही आर्यभूमि और आर्यकुल में उत्पन्न होते भी संस्कार हीन होने से पत्थर से हृदय वाले बन गए थे उनको जिन कुशल पुरुष ने दृष्टांत और युक्ति पूर्वक रस गर्भित उपदेश की रीति से उपदेश दे समझा निजधर्म की राह पर लगाके, परायण बनाये, ऐसे आचार्य शिरोमणि बृहस्पति समान लालजी महाराज की मैं मुक्त कंठ से स्तुति करता हूं ॥७॥

रोगेण पीडिततनावपि यस्तपस्या
मुग्रां समाचरितवान्मनसोजसा च ॥
मान्द्यं महत्तपसि नापि समाश्रयद्यो
बोधादिनित्यनियमे तमहं नमामि ॥ ८ ॥

भावार्थ :— पैरों में वात रोग और देहमें दूसरे आमवात रोग अधिक समय उत्पन्न हो जाते थे तोभी वे दुःख और निर्बलता को न गिनते, सिर्फ मनोबल द्वारा चार २ आठ २ एकदम कर लेते थे जिसमें भी तुर्रा यह था कि ऐसी दशा में भी हररोज व्याख्यानादि नित्य नियमों में तनिक — शिथिलता न होती थी ऐसे दृढ़ मनोबल वाले समर्थ श्रीलालजी महाराज को मैं बार २ नमस्कार करता हूं।

प्रतापसौभाग्य–वर्णनाष्टकम् ।

वसन्ततिलका वृत्तम् ।

सद्यस्त्वमेव पृथिवीप्रवरप्रदीपो
हर्तान्धकारपटलस्य हृदि स्थितस्य ॥
अन्येऽपरः प्रकटितस्तरणिर्नवीनो ।
धृत्वा तनुं शुभतरां चितिपादचारी ॥ १ ॥

भावार्थः—हे मुनिवर ! तीर्थंकर केवली प्रभृतिकी अनुप
तिमें वर्तमान समयमें जैन समाजके हृदयके तमको नाश करने
आप स्वतः ही पृथ्वी के श्रेष्ठ सूर्य (दीपक) हैं । मेरी मान्य
कि मानुषिक देह धारण कर, आप पृथ्वी पर पादविहारी वि
नवीन सूर्य प्रकट हुए हैं । आकाशमें भ्रमण करनेवाला एक
और पृथ्वी पर विचरने वाले आप दूसरे सूर्य हैं ॥ १ ॥

सूर्योदयस्य वैशिष्ठ्यम् ।

बाह्यं स्तमस्ततिमलं प्रतिहन्ति भानु
र्नाभ्यन्तरां हृदयभूमिनतां नितान्तम् ॥
त्वं तु प्रबोधकजिनोक्तवचोवितानै
र्जाड्यं द्वयं हरसि भूमिरवे जनानाम् ॥ २ ॥

भावार्थः—आकाशग सूर्य तो बाह्य [illegible] का नाश करता है परन्तु मनुष्यों के हृदयभूमि पर [illegible] अज्ञानांधकार को नहीं हटा सका, परन्तु हे मौनिकसूर्य! पादविहारी [illegible] मुनिवर ! आप तो तात्विक शिक्षा देने वाले वीतराग के वचन द्वारा जनसमाजकी बाह्य और आंतरिक दोनों तरहकी जड़ता [illegible] यह विशेषता है ॥ २ ॥

पुनर्वैशिष्ठ्यम्

साम्राज्यमस्ति दिवसे दिवसेश्वरस्य
सायं पुनर्भुवि तदस्तमुपैति नित्यम् ।
वृद्धिङ्गता निशिदिनं तरुणस्त्वदीयो
नव्यः प्रताप इह भाति विलक्षणो वै ॥ ३ ॥

भावार्थ :—आकाश विहारी सूर्य की महिमा सिर्फ दिन में [illegible]ती है। प्रातः काल उदय होता है। मध्यान्ह में तरुण रहता [illegible] संध्या होते ही सूर्य का साम्राज्य विलीन हो इस पृथ्वी पर [illegible]य हो जाता है परंतु आपका प्रताप तो रातदिन उच्च शिखर [illegible]ा हुआ सदैव युवानहीं युवान रह कर प्रतिक्षण सुकीर्ति [illegible] कला में जाता प्रतीत होता है। सूर्य के साम्राज्यसे आपके [illegible] यही विलक्षणता है ॥ ३ ॥

विजय लक्ष्मीः

संघाटके मुनिषु सत्सु महत्सु चान्ये
ष्वाचार्यपूज्यपदवीपदमाश्रिता ते ॥
अन्ये प्रतापतपनं ह्युदितं तवैव
दृष्ट्वा प्रसत्तिमभजत्त्वयि सा जयश्रीः ॥ ४ ॥

भावार्थः—स्वर्गीय पूज्य श्री —चौथमलजी महाराज अवसान समय पर आचार्य और पूज्य पदवी का प्रश्न उपरि हुआ उस समय आपकी सम्प्रदाय में आपसे अधिक वयो और संयम में बड़े मुनिवर विद्यमान थे तोभी आचार्य पदवी आपके चरण को ही वरी, इसका कारण मुझे तो यह प्रत होता है कि आपका प्रताप-सूर्य प्रकट होगया था उसे देखकर विजय लक्ष्मी आप पर मोहित होगई ॥ ४ ॥

साम्राज्यतारुण्यप्रदर्शनम् ।

वैज्ञानिकाः पदविभूषितपण्डिताश्च
लभ्याः पुरातनजनाः क्षितिपा महान्तः ॥
सन्मानयन्ति दृढभक्तिपुरःसरं त्वां
मध्याह्नकालमहिमैव धरारवेस्ते ॥ ५ ॥

भावार्थः—नई रोशनी वाले विद्वान् और आचार्य आदि पदवी से मंडित पंडित नये जमाने के सुसंस्कार वाले युवा और प्राचीन पद्धति को मान देने वाले वृद्ध एवम् प्रतिष्ठित नरेश एक सी समानता से दृढ़भक्ति पूर्वक आपका सन्मान करते हैं और श्रद्धापूर्वक आपकी सेवा शुश्रूषा बजाते हैं यही आपसे भौमिक दिनकर के मध्याह्न कालकी महिमा है ॥ ५ ॥

सौराष्ट्रिका निजमताग्रहिणोऽपि सन्तो
भूत्वा तवाङ्घ्रिकजचुम्बनचञ्चरीकाः ॥
त्वां भेजिरेऽतिशायिनं प्रबलप्रतापं
मध्याह्नकालमहिमैष धरारवेस्ते ॥ ६ ॥

भावार्थः—जब आपका काठियावाड़ में पदार्पण हुआ तब भिन्न २ सम्प्रदाय वाले साधु साध्वियों में से कई तो एक वक्त के समागम से ही आपकी विद्वत्ता और आपके चारित्र्य का पूर्ण मान करने लगे परन्तु जो कोई मताग्रही थे वे भी आपके थोड़ेसे सहवास और परिचय के पश्चात् मताग्रह त्याग आचार्य के अतिशय सहित और प्रौढ़ प्रबल प्रताप वाले आपके चरण कमल को चुम्बन करने में भृंग से बन आपकी सेवा में प्रस्तुत होगए, यह भी पृथ्वी विहारी सूर्यरूप आपके मध्याह्न काल की महिमा का ही प्रताप है ॥ ६ ॥

यत्रागमस्तव महत्स्वपरेषु तत्र
विद्वत्सु सत्स्वपि च तावकमेव बोधम् ॥
श्रोतुं रता मुनिजना गृहिणश्च सर्वे
मध्याह्नकालमहिमैष धरारवेस्ते ॥ ७ ॥

भावार्थः—आपके प्रतापकी वास्तविक खूबी तो यह थी कि इस भूमि—काठियावाड़ी भूमि में जहां २ आपने पदार्पण किया उस ग्राम में आपसे दीक्षा में और उम्र में बड़े एवम् विद्वान् मुनि विराजमान थे, परन्तु कोई व्याख्यान न देते सिर्फ आपके सामने एक ही सभा में सब साधु, श्रावक और अन्य मतावलम्बी लोग आपके व्याख्यान सुनने को उत्सुक रहते और आपके पास से ही व्याख्यान दिलाते थे और किसी मुनिके दिलमें लेशमात्र भी यह विचार नहीं आता था कि हमारे भक्त हमसे आपको अधिक मान क्यों देते हैं ? यह भी क्षितिविहारी सुसूर्य रूप आपके मध्याह्न काल की महिमा ही है ॥ ७ ॥

येनैकदापि तव वाक्श्रवणीकृता वा
दृष्टं सकृत्तव सुभव्यमुखारविन्दम् ॥
आजीवनं मनसि तस्य छविस्त्वदीया
लग्ना विभाति महिमैष तवैव भूतेः ॥ ८ ॥

भावार्थः—जिस मनुष्य ने एक समय भी आपके व्याख्यान सुने हैं या आपके रमणीक मुखारविंद के दर्शन किये हैं उस मनुष्य के मनरूपी लेट पर आपके चेहरे का मानो अक्स फोटो खिंच गया है और वह जीवन तक न बिगड़ते हमेशा ज्यों का त्यों प्रस्तुत रहता है। लेखक को अनुभव है कि एक समय परिचित हुआ मनुष्य आपको पुनः २ याद करता है और दर्शन करने को आतुर रहता है यह सब आपकी विभूति—चारित्रसम्पत्ति की अलौकिक महिमा है ॥ ८ ॥

अस्मदीयरत्नम् ।

विरहाष्टकम्

उपजाति वृत्तम् ॥

चिंतामणिर्यत्तुलनां न धत्ते
यन्मूल्यकं पार्श्वमणिर्न दत्ते ॥
एतादृशं जङ्गमरत्नमेकं
प्रसिद्धिमाप्तं मरुसाधुवर्गे ॥ १ ॥

भावार्थः—चिंतामणि रत्न जिसकी तुलना नहीं कर सका । र पार्श्वमणिभी मूल्य में जिसकी समानता नहीं कर सकता । जंगम अर्थात् चलता फिरता रत्न हमारे मारवाड़ की ओरके धु समुदाय में से प्रसिद्ध प्रख्यात हुआ ॥ १ ॥

श्रीलालजित्तस्य च नामधेयं
दृष्टं मया प्राक् पुरवक्कनेरे ॥
तद्दर्शनं तत्र च पत्रमात्रं
लब्धं महाभाग्यवशेन नूनम् ॥ २ ॥

भावार्थः—उन नररत्न–उन मुनिरत्न का नाम ... गुप्त नहीं है तो भी कहना होगा कि उनका नाम ... श्रीलालजित् था। इस लेखकको सिर्फ उनके नामसे ही परिचय ... है, परन्तु संवत् १९६९ के प्रथम आषाढ मासमें बांकानेर ... में साक्षात् दर्शनसे भी परिचय हुआ था जोकि उनका दर्शन सि... पक्ष भर ही वहां पर मिला था उतने समय की दर्शनकी प्राप्ति ... महाभाग्य के उदयका फल है ॥ २ ॥

तृप्तिर्न या वर्षशतेन जन्या
तत्रास्ति पक्षः किमलं प्रपाणाम् ।
तथाप्यभून्मेऽत्रभविष्यदाशा
हताधुना हा विगता वृथा सा ॥ ३ ॥

भावार्थः—जिनके दर्शन सौ वर्ष तक होते रहें तो भी तृप्ति न हो, तो विचारा एक पक्ष किस गिनतीमें है? एक पक्ष साथ रह... से दोनों के मनमें सम्पूर्ण चातुर्मास साथ रहने की प्रबल उत्क... हुई थी, परन्तु एकका मोरवी और दूसरेका भोराजी चातु... र्मास नियत होजाने से अनाशा हुई, तो भी चातुर्मास में हेर... फेर करने का प्रयत्न जारी रहा परन्तु संयोग न होने से परिणाम... निराशा में परिणत हुआ। चातुर्मास पश्चात् संगम होने की आशा... थी परंतु चातुर्मास के पूर्ण होते ही अकस्मात् माद...

वाड़ की ओर के विहार से वह आशा विलुप्त प्रायः हुई परन्तु हा ! खेद तो यह है कि अंतिम दुःखदाई समाचार इस आशा को बडा भारी धक्का लगा । अरे ! अब तो वह संभावना बिल्कुलही निष्फल होगई ॥ ३ ॥

विलुप्तं रत्नम् ॥

वंशस्थवृत्तम् ॥

हा हा ! ! हृतं केन समाजभूषणम्
किंचिन्न यत्रास्ति विकारदूषणम् ॥
अलंकृता येन विराजते मही
रत्नं विलुप्तं तदिहोत्तमोत्तमम् ॥ ४ ॥

भावार्थ —: अरेरे ! जिनकी प्रकृति में कोई विकार जिनके चारित्र में कुछ भी दूषण नहीं, ऐसा हमारा एक जंगम कि जो जैन समाज का देदीप्यमान भूषण था उसे किसने लिया ? अरे ! जिनसे सम्पूर्ण विश्व अलंकृत था ऐसा हमारा उत्तमोत्तम रत्न इस पृथ्वी पर से कहां गुम होगया ? ॥ ४ ॥

उपजातिवृत्तम्

भ्रान्त्वार्यभूमानवलोकयामः
[illegible]

न दृश्यते क्वापि तदस्मदीयं
न चापि तत्तुल्यमथापरं हा ! ॥ ५ ॥

भावार्थः— आर्यावर्त के देश देश ग्राम २ और नगर २ घूम २ कर इस अमूल्य रत्न की प्राप्ति के लिये लोग फिरते हैं, छानबीन कर ढूंढते हैं परंतु वह अमूल्य जवाहिर कहीं भी नहीं दिखता। खेद है कि उसकी समानता वाला रत्न भी कहीं दृष्टिगत नहीं होता ॥ ५ ॥

कस्मात्तत्तुल्यमपरं न ?।

अलौकिकं सुन्दरमद्वितीय
मलूनकं कान्ततरं विशुद्धम् ॥
आनन्ददानन्दपदं विपद्धं
पुण्योपलभ्यं हि तदस्मदीयम् ॥ ६ ॥

भावार्थः—वह हमारा जवाहिर लौकिक नहीं परंतु लोकोत्तर था। रमणीय से रमणीय और बिना जोड़ी का अर्थात् जिसकी समानता कोई न कर सके ऐसा एक ही था-जिसमें कुछ भी न्यूनता न थी। अतिशय मनोहर और दूषण रहित विशुद्ध था, जिसकी ज्योति कभी मंद न होती थी सबको आनंददाई था, विपत्ति... ई रत्न सचमुच समाज के पुण्योदय से ही यह प्राप्त हुआ।

स्थातुं न योग्यः किमु मर्त्यलोकः
स्वर्गेऽथवावश्यकतास्य जाता ॥
क्लेशः स्वपक्षेऽरुचिकारणं किं
कस्मादगतं स्वर्वसुधां विहाय ! ॥ ७ ॥

भावार्थः—क्या उस जवाहिर के रहने के लिये यह मृत्युलो
मनुष्य लोक उचित न था ? या स्वर्गलोक में उसकी विशेष आ
वश्यकता होने से कोई उसे वहां ले गया ? या वर्तमान प्रबा
सांप्रदायिक क्लेश के कारण यहां रहने से उसे अरुचि हुई ? इ
लिये वह इस पृथ्वी पर कहीं न रहते स्वर्गलोक में
गया ? ॥७॥

हृतं न केनापि वृथाऽत्र शोधः
प्राप्तुं न शक्यं पृथिवीतलेऽस्मिन् ॥
गतं स्वयं तत्खलु दिव्यलोकं
प्रयोजनं किं तदहं न जाने ॥८॥

भावार्थः—हे मानवो ! तुम्हारा वह अमूल्य रत्न इस
पर किसीने नहीं चुराया, इसलिये उसे ढूंढना वृथा-निष्फल
इस पृथ्वी की समभूमि पर चाहे जितनी तलाश करो तोभी
कहीं न मिलेगा, वह स्वतः दिव्यलोक-स्वर्ग की ओर प्रयाण
गया है । "किस लिये" यह प्रश्न करोगे तो मैं इस का प्रत्युत्तर
में असमर्थ हूं कारण मैं इस विषय से विशेष विज्ञ नहीं हूं

प्राचीन इतिहास और गुर्वावली।

ज्ञानियों का कथन है कि मनुष्यत्व ही ईश्वरता प्राप्तिका मूल
मत है। क्योंकि वह ज्ञानी एवम् विचारवान है इसलिये सारासार,
सत्य, धर्माधर्म और आत्मअनात्म तत्वों का निर्णय कर सकता
उन्नति के आकाशमें मनुष्य कितनी ऊंचाई तक प्रवेश कर सका
यह कोई नहीं बता सका, स्वर्ग और मोक्ष के द्वार खोलने
सामर्थ्य मनुष्य ही रखता है, प्रभु के गुण वह अपनी आत्मामें
श कर प्रभुता प्राप्त कर सक्ता है। समस्त बंधनोंसे मुक्त होना
सच्ची और सर्वकाल व्यापिनी स्वतंत्रता प्राप्त करना, सर्व-
ों से मुक्त हो शाश्वत शांति प्राप्त करना यही उन्नतिका शिरो-
है इसीको परमपद—परमात्मपद या मोक्ष कहते हैं, इस पद
र करने की सामर्थ्य मनुष्य के सिवाय अन्य प्राणी में नहीं

परन्तु जबतक मनुष्य जन्मका उद्देश्य न समझ सके, स्व स्वरूप
न न होसके, जगत् जिस रूपमें है उसी रूपमें उसे न पहि-
सके और मोक्षका यथार्थ मार्ग न ज्ञात कर सके तबतक म-
जन्म सार्थक नहीं। इसलिए प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि
मार्ग ग्रहण कर उस मार्ग पर आगे बढ़े जिससे जन्म, जरा,

मृत्यु और रोग शोकादि दुःखोंकी निवृत्ति हो। परन्तु जिस किसी वन में भटकते हुए मनुष्य को राह दिखाकर बाहर निकालने वाले पथदर्शक की आवश्यकता है इसी तरह इस संसार विकट वन से पार हो मोक्ष नगर पहुंचाने के लिये भी सन्मार्गदर्शक पथिक की आवश्यकता है। इसलिये जो महापुरुष इसके ज्ञाता हैं उनका अवलंबन करना उनकी आज्ञा मानना और उनका अनुकरण करना सर्वोच्च उपाय है।

ऐसे महात्मा प्रत्येक युग में उत्पन्न होते हैं, अनादि से ऐसी विश्व व्यवस्था है कि जब २ इन आत्माओंकी आवश्यकता होती है तब २ उनका प्रादुर्भाव होता है, ये सांसारिक वासनाएं त्याग संसार को अपने जन्म समय की स्थिति से अधिक उच्चतर स्थिति में लाने का निष्काम वृत्ति से प्रयत्न करते हैं इनका समस्त ऐश्वर्य परोपकारार्थ लगता है। संसार के कल्याणार्थ अपनी आत्मा समर्पण करते भी वे सदा तत्पर रहते हैं और कर्तव्य पालन करते हुए अपने प्राणों की परवाह भी नहीं करते, उनके आचार विचार, नीति रीति, जीवन के छोटे से छोटे साधारण काम ध्रुव की तरह संसार सागर में अपनी जीवन नौका चलाने के लिये दिशा दिखाने को अटल बने रहते हैं।

उपरोक्त महात्माओं में भी जो रागद्वेष से सर्वथा मुक्त

त्मा के मूल गुणों में बाधक मोह ममत्व के पर्दे और आत्मा ज्ञानावरणीयादि चार घन घाती कर्म को समूल नष्ट कर आत्मा न्तर्गत स्थित अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र और नंत वीर्य (शक्ति) उपार्जन करते हैं। परमात्मा के नाम से बोधित होते हैं। वे राग द्वेष को जीतने वाले होने से जिन और साधु साध्वी श्रावक श्राविका चार तीर्थ के स्थापक होने से तीर्थंकर कहे जाते हैं।

अनंत करुणा के सागर सर्वज्ञ और सर्वदर्शी जिनेश्वर जगत उद्धार के निमित्त जो मार्ग दर्शाते हैं। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के अनुसार जो २ नियम योजित करते हैं और जो २ आज्ञाएं फरमाते हैं उन्हें धर्म अथवा शासन ऐसी संज्ञा देते हैं। जिनेश्वर देव पंच महा विदेह क्षेत्र में सर्वदा विद्यमान हैं, परंतु भरत और इरवत क्षेत्र में नहीं। यहां जो कालचक्र घूमा करता है जैसे समुद्र का पानी छः घंटों तक ऊंचा चढ़ता और छः घंटों तक नीचे उतरता है सूर्य छः माह उत्तर में और छः माह दक्षिण में प्रयाण किया करता है, इसी अनुसार नियमित घूमते फिरते कालचक्र में भी धर्म, अधर्म और सुख, दुःख फिरा करते हैं; न्यूनाधिक हुआ करते हैं। वीस कोड़ाकोड़ी सागरोपम के कालचक्र के उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी ये दो विभाग करके छः छः आरे कल्पित किये हैं, इन छः आराओं

तीसरे और चौथे आराओं में तीर्थंकरों का अस्तित्व रहता है
चढ़ती उत्सर्पिणी काल में २४ और उतरती अवसर्पिणी काल
२४ तीर्थंकर होते हैं। प्रत्येक काल चक्र में दो चौबीसी होती हैं
अनंत कालचक्र फिर गए और अनंत तीर्थंकर हो गए हैं

अपने इस भरत क्षेत्र में वर्तमान अवसर्पिणी के चौथे आ
में ऋषभदेव से महावीर स्वामी तक २४ तीर्थंकर हुए। इनमें च
तीर्थंकर श्री महावीर प्रभुका वर्तमान में शासन प्रचलित है।

श्री महावीर स्वामी का जन्म आज से २५२० वर्ष
(ई० सन् ५६६ वर्ष पूर्व) पूर्वस्थित विहार के कुंडपुर नगर के
क्षत्रिय कुल भूषण, ज्ञातवंशी, काश्यप गोत्री सिद्धार्थ राजा के
हुआ था। उनकी माता का नाम † त्रिशला देवी था। प्रभु गर्भ
थे तबही से राजा सिद्धार्थ के राज्य विस्तार में तथा धन धान्य

※ सब तीर्थंकर क्षत्रिय कुल में ही जन्म लेते हैं और राज्य वैभ
त्याग जगदुद्धार करने के लिये संयम लेते हैं। † त्रिशलादेवी सिंध दे
के महाराजा चेटक (चेड़ा) की ज्येष्ठ पुत्री थीं। उनका दूसरा ना
प्रियकारिणी था। उनकी बहिन चेलणा मगध देश के अधिप
राजगृही नगरी के महाराजा श्रेणिक जो भारतीय इतिहास
बिम्बसार के नाम से प्रसिद्ध हैं उनकी पटरानी थी।

भंडार में अति अभिवृद्धि हुई इससे पुत्र का नाम, जन्म होते
र वर्द्धमान दिया गया था। पश्चात् अपने अद्भुत पराक्रम के कारण
हावीर के नाम से विश्व में विख्यात हुए। अनंत पुण्योदय से तीर्थं-
र-पद प्राप्त होता है पुण्य अर्थात् शुभ कर्म के पुद्गलों में शुभ
ण्यों को आकर्षित करने का अतुल सामर्थ्य है जिनसे तीर्थंकरों
की शरीर सम्पदा, वाणीविभव, और मनोबल आदि असाधारण
ते हैं।

यौवनावस्था प्राप्त होने पर यशोमती नाम की एक सद्गुण-
ती और स्वरूपवाली राजकन्या के साथ महावीर का विवाह किया
या, जिससे प्रियदर्शना नामक एक पुत्री हुई। संसार में रहते भी
महावीर का चित्त संसार से जलकमलवत् विरक्त था,
र चिन्तन में जिनके समय का सद्व्यय होता था। दुःखी दुनिया
:ख दूर करने, दुनिया में शांति प्रसारित करने, यज्ञयागादि
निमित्त होते असंख्य पशुओं के वध को रोक सर्वत्र अहिंसा
विजयपताका फहराने, विषय कषायादि की ज्वाला से जलते
बचाने और प्राणीमात्र को हितकर हो ऐसा कर्तव्य मार्ग
को दिखाने के लिये गृहवास त्याग संयम लेने की बाल्य-
हीं उनकी प्रबल अभिलाषा थी। तीस वर्ष की भर युवा-
उन्होंने राज्य- वैभव, विषय सुख और कुटुम्ब परिवार का
कर दीक्षा ली। घोर तपश्चर्या कर, कर्म जला, केवलज्ञान

प्राप्त करने को उद्यत हुए। राजमहल में रहने वाले सुकुमार रा
सिंह, व्याघ्रादि, हिंसक पशुओं के निवास स्थान भयानक अ
में अनेक उपसर्ग सहन करते विचरने लगे। अन्य परिग्रहों
परित्याग करने के साथ २ ही देह ममत्व रूप परिग्रह का भी उ
सर्वथा परित्याग किया था इसलिये शिशिर ऋतु की कलक
ठंड में उत्तर हिन्द में जहां हिम पड़ता और शीत वायु बहत
वहां वे वस्त्र रहित समस्त रात्रि ध्यानावस्था में विताते थे।
जब कायोत्सर्ग ध्यान में स्थित रहते थे तब कई समय ग्वाल
निर्दयता से उन्हें पीटते थे। एक समय एक निर्दय ग्वालने प्र
कान में खीले ठोक दिये, दूसरे ग्वाल ने उनके दोनों पैर के
की पोलाई में अग्नि जला उस पर खीर पकाई, तो भी प्रभु ध्य
विचलित नहीं हुए। इसके सिवाय चंडकौशिक नाग, शूलपाणि
संगम देवता प्रभृति की ओर से प्राप्त परिसह तथा अनार्य
के विहार समय अनार्य लोगों के किये उपसर्गों का वर्णन सु
रोमांच हो आता है।

परंतु क्षमा के सागर श्री महावीर स्वामी ऐसे विषम सम
को भी कर्मक्षय का कारण समझ आनंदपूर्वक सहन कर लेते
उपसर्ग करने वालों का भी श्रेय चाहते अथवा श्रेय मार्ग की
उन्हें लगा देते थे। गोशालाने उनपर तेजोलेश्या छोड़ी तोभी

समझा जाता है, स्व और पर द्रव्यकी पहिचान होती है। प
अर्थात् पुद्‌गल से ममत्व दूर हो, आत्मभावमें स्थिरता हो
आत्माके अनंत ज्ञान और अनंत सामर्थ्य का भान होता है अ
कालसे अविनाशी आत्मा विनाशक पौद्‌गलिक दशा में अहं
धारण कर राग द्वेष के बंधनसे बंधा हुआ है और उससे ही
गति संसार के अनंत दुःख सहन करने पडते हैं। उसकी स
प्रमाणित होती है, देहादिक परवस्तु में ममत्व न रहने से दुः
नहीं सक्ता, शाश्वत सुख का अखूट भंडार तो अपनी आत्मा है
ऐसा उसे साक्षात्कार होता है सब आत्मा समान हैं ऐसा भान
ही सर्वात्म पर समदृष्टि होती है सब जीवों को अपने समान सम
लगता है जिससे वैर विरोध और लोभ क्रोधादि दुर्गुण एवम् तज्ज
दुःखों का सदंतर अभाव हो जाता है। जगत् के छोटे बड़े समस्त प्राणी
के सुख की ही सतत् स्पृहा रहती है, सुख सबको सर्वदा प्रिय हो
है, ऐसा समझकर वह सबको सुखी करने के लिये प्रेरित होता
इससे ज्ञानी पुरुष मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ भावना
भी मोक्ष की कुञ्जी प्राप्त कर लेते हैं; मैं अजर अमर अविनाशी
देह के नाश से मेरा नाश नहीं, ऐसा समझ कर वह भय का नाम
निशान मिटा देता है और मृत्यु से नहीं डरता है। जो मृत्यु से
नहीं डरता वह क्या नहीं कर सक्ता? अर्थात् सब सिद्धियां प्राप्त क
सक्ते हैं इसलिये ज्ञानको मोक्षकी प्रथम पंक्ति का स्थान दे प्रभु फरमाते

कि "जे आया से विन्नाया जे विन्नाया से आया, जेण विजाणइ से आया" अर्थात जो आत्मा है वही ज्ञान है और जो ज्ञान है वही आत्मा है और जिससे बोध हो सका है वही आत्मा है। श्री आचारांग—सूत्र में प्रभु ने ज्ञान का अपार महत्व दिखाया है, ज्ञान से ही वीतरागता प्राप्त होती है और वीतराग दशाही सब सुखोंका आश्रय स्थान है।

दर्शन—ज्ञान द्वारा जो सूझा है उस पर श्रद्धा करना दर्शन कहलाता है। कई मनुष्य शास्त्र श्रवण या सद्गुरु के उपदेश से धर्मका स्वरूप समझते हैं परन्तु जबतक उसपर अटल विश्वास न हो तबतक उसी अनुसार व्यवहार होना अशक्य है, इसलिये सम्यग्दर्शन अथवा सच्ची श्रद्धा की पूर्ण आवश्यकता है।

चारित्र—मोक्ष मार्ग की तीसरी सीढ़ी चारित्र्य है, ज्ञान से मार्ग सूझा और श्रद्धा से उसे सत्य माना भी परन्तु जबतक उस मार्ग पर न चला जाय तबतक नियत स्थान पर पहुंचना असंभव है इसलिये ज्ञानानुसार व्यवहार होना उचित है। ज्ञानका फल ही चारित्र है "ज्ञानस्य फलम् विरतिः" चारित्र विना ज्ञान निष्फल है।

प्राणातिपात अर्थात् हिंसा, असत्य आदि अठारह पा

करना, पंचमहाव्रत, तीन गुप्ति और पांचसमृति धारण करा
चारित्र है।

तप:—मोक्षकी चतुर्थ सीढ़ी तप है। उसके छः अभ
और छः बाह्य, वं बारह भेद हैं। चारित्र से नये कर्मकी आमद
ती है और तपसे पूर्वकृत कर्म क्षय कर सके हैं। सिर्फ भूखे र
ही प्रभुने तप नहीं फरमाया, पापका प्रायश्चित्त करना, बड़
विनय करना, वैयावृत्य अर्थात् सबकी सेवा करना, स्वाध्य
करना, ध्यान धरना, और कायोत्सर्ग करना येभी तप के भेद
इस तप को उत्तम अभ्यन्तर तप कहते हैं। उपवास करना, उण
नरी अर्थात् कम खाना, वृत्ति संक्षेप अर्थात् इच्छाओंका निरो
करना, रस परित्याग करना, देहका दमन करना, इन्द्रियों को व
करना ये छः प्रकारका बाह्य तप है।

आत्मा और कर्म के पृथक् करने के उपरोक्त चार प्रयोग
प्रभुने फरमाये हैं। अनन्त ज्ञानी श्री वीर प्रभु की वाणी का सा
लिखना दोनों भुजाओं द्वारा महासागर तिरने के समान उपहास
मात्र साहस है तोभी प्रवचन सागर में से बिंदुरूप दर्शाने का
सिर्फ यही आशय है कि जैनधर्मकी भावना कितनी सर्वोत्कृष्ट है,
ऐसी उदार और पवित्र भावनाओंका विश्वमें प्रचार करनेके समान
परमावश्यक और पारमार्थिक कार्य दूसरा क्या है?

श्री महावीर स्वामी को कैवल्य ज्ञान उपार्जन होनेके पश्चात्
श्री गौतम स्वामी आदि ग्यारह विद्वान् ब्राह्मण धर्मगुरु अपनी
शंकाओं का समाधान करने के लिये प्रभु के पास आये, उनकी
शंका निवृत्त हुई और तत्त्वावबोध होने से वे प्रभु के शिष्य बन
गए, प्रभुने उनको चारित्र मुकुट पहिनाया, त्रिपदी दिया शिक्षा
और गणधर पद अर्पण किया, ये ग्यारह ब्राह्मण धर्माचार्योंके साथ
उनके ४४०० शिष्योंने श्रीप्रभु के पास दीक्षा ली, श्री महावीर
स्वामी ने साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका इन चार तीर्थों की स्थापना
की। देशदेश में विचर कर, धर्मोपदेश द्वारा कई जीवों को प्रतिबोध
दिया, अनेक राजा महाराजाओं को प्रभुने शिष्य बनाया। मगध
देशका राजा श्रेणिक तथा उसका पुत्र कौणिक ये महावीर प्रभुके
परम भक्त हुए, इनके सिवाय चेटक, चन्द्रप्रद्योत, उदायन, नंदीवर्धन
दशार्णभद्र * जितशत्रु, श्वेतराजा, विजय राजा, तथा पावापुरी का
हस्तिपाल नामक राजा प्रभृति अनेक राजा महाराजाओं ने श्री वीर
प्रभुकी वाणी सुनकर जैनधर्म अंगीकृत किया था। प्रभु तीस वर्ष
तक केवलपन से पृथ्वी को पावन करते विचरते अनेक जीवों को
तारते रहे और चरम चौमास पावापुरी नगरी में किया। वहां
हस्तीपाल राजा की प्राचीन राजसभा में दो दिन का अनशनव्रत

* नोट— जितशत्रु ये कलिंगदेश के यादव वंशी महाराजा थे
जिन के साथ महाराजा सिद्धार्थ की बहिन का ब्याह किया

धारण कर प्रभु उत्तराध्ययन सूत्र फरमाते थे १८ देश के रा
भी छठ पौषध कर प्रभु की वाणी श्रवण करते थे, इस स्थिति
कार्तिक माह की अमावस्या की रात्रि को पिछले प्रहर चार
का क्षय कर ७२ वर्ष का पूर्ण आयुष्य भोग प्रभु निर्वाण-
पधारे-शाश्वत सिद्ध पद को प्राप्त हुए।

श्री वीर प्रभु के पवित्र शासन को विजयवंत चलाने वाले
शासन रूपी आकाश में उदय हो, सूर्यवत् प्रकाश करने
अथवा वीर प्रभु के लगाये हुए कल्पवृक्ष को जल सींचन
नवपल्लवित रखने वाले जो २ महात्मा उनके शासन में हुए उ
कुछ इतिहास अब देखते हैं।

श्री महावीर स्वामी के निर्वाण समय श्रीगौतम स्वामी
श्री सुधर्मा स्वामी ये दो गणधर विद्यमान थे। शेष नौ गण
प्रभु के प्रथम ही मोक्ष पधार गए थे, जिस रात्रि को महावीर
मोक्ष पधारे उसी रात को भगवान् पर से मोह दूर होने पर गौ
स्वामी केवलज्ञानी हुए। केवली को आचार्य पद नहीं मिलता
लिये श्री सुधर्मा स्वामी श्री महावीर स्वामी के आसन पर विराजे
गौतम स्वामी १२ वर्ष तक कैवल्य प्रव्रज्या पाल ९२ वर्ष
अवस्था में मोक्ष पधारे।

१ सुधर्मास्वामी:—एक समय राजगृही नगरी में पधारे। व

ऋषभदत्त नामक एक धनाढ्य श्रावक तथा उनका पुत्र जम्बूकुमार
थे जिनका आठ स्वरूपवती कन्याओं के साथ सम्बन्ध हुआ था,
उपदेश श्रवण करने आये। अपूर्व उपदेश कर्णगोचर होते ही जम्बू
स्वामी की आत्मा मोह निद्रा से जागृत होगई। उन्हें वैराग्य स्फुरित
हुआ। संसार की अनित्यता का भान होते ही शाश्वत शांति की
प्राप्ति के लिये उनका मन ललचाया। घर आ माता पिता से दीक्षार्थ
आज्ञा चाही, अतिआग्रह के कारण माता पिता ने जम्बू स्वामी से
आठों कन्याओं के साथ विवाह करने पश्चात् दीक्षा लेने का अनुरोध
किया, जम्बूस्वामीने मंजूर किया, लग्न हुए, आठों तत्काल व्याही
हुई स्त्रियों से जम्बू स्वामीने प्रथम रात को ही दीक्षा लेने का
अभिप्राय दर्शाया. पति पत्नियों में वैराग्य और शृंगार विषय का बहुत
समय संवाद शुरु हुआ, इतने में प्रभवा नामक एक राजपुत्र जो
अपनी राजगादी न मिलने से लूट खसोट का धंधा करता था ५००
चोर सहित जम्बू स्वामी के घर में घुसा। चोरी का पाप कृत्य करते
वैराग्य रस पूरित वचनामृत उसके कर्णपट पर पड़े, पड़ते ही उसे
अपने अपकृत्यों का पश्चात्ताप होने लगा और वैराग्य उत्पन्न हुआ.
आठ स्त्रियां भी संवाद में पतिसे पराजित हो वैराग्य रस में लीन
होगईं। उन्होंने तथा प्रभवादिक ५०० चोरों ने संसार परित्याग कर
सुधर्मा स्वामी के पास दीक्षा ली। उस समय जम्बू की उम्र सिर्फ
१६ वर्ष की थी।

जम्बूस्वामी को तत्वावबोध होने के लिये श्री मह स्वामी की अर्थ रूप प्रकाशी हुई। अनंत भाव भेद मय वाणीमें से सु स्वामी ने द्वादश अंग और उपांग की योजना की। वर्तमान में आचारंगादि जो जिनागम हैं वे गणधर श्री सुधर्मा स्व के ग्रथित किये हुए हैं प्रभु के निर्वाण के पश्चात् १२ वें वर्ष सु स्वामी को केवल ज्ञान उपार्जित हुआ और २० वें वर्ष १०० की आयु भोगने पर मोक्ष पद प्राप्त हुआ।

२ जम्बू स्वामीः—श्री सुधर्मा के पश्चात् श्री जम्बूस्वामी पर विराजे। श्री वीर स्वामी के २० वर्ष पश्चात् उन्हें कैवल्य ज्ञ प्राप्त हुआ और ६४ वें वर्ष ८० वर्ष की आयु भोग मोक्ष पधा श्री जम्बूस्वामी के पश्चात् भरत क्षेत्र से दस वस्तुएं विच्छेद होग १ कैवल्य ज्ञान २ मनःपर्यव ज्ञान ३ परमावधि ज्ञान ४ पुलाक लब्ि ५ औदारिक शरीर ६ क्षपक श्रेणी ७ उपशम श्रेणी ८ परिहारविश सूक्ष्म संपराय और यथाख्यात ये तीन चारित्र ९ जिनकल्पी साधु और १० क्षायिक सम्यक्त्व।

३ प्रभवा स्वामी—श्री जम्बूस्वामी के पश्चात् श्री प्रभव स्वामी पाट पर विराजे, उन्होंने ज्ञानोपयोग द्वारा राजगृहीके वास शय्यंभवभट्ट को आचार्य पद योग्य समझ उपदेश दिया और उन्हों दीक्षा ली. ८५ वर्ष की आयुष्य भोग कर वीर निर्वाण से ७ वर्ष बाद श्री प्रभवास्वामी मोक्ष पधारे।

४—श्री शय्यंभव स्वामी—उनके पश्चात श्री शय्यंभव
मी आचार्य हुए उन्होंने दीक्षा ली उस समय उनकी स्त्री गर्भवती
उससे। मनक नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। मनक ने नवें वर्ष
पिता के पास दीक्षा ली. परंतु पिताने उसकी आयु अल्प समझ
अल्प समय में श्रुतज्ञानी बनाने के आशय से पूर्व में से दशवै-
लिक सूत्र का उद्धार कर मनक मुनि को अध्ययन कराया।
णगार धर्म आराधकर दीक्षा लिये पश्चात् छः महीने में ही मनक
नि स्वर्ग पधार गए और शय्यंभव स्वामी भी वीर निर्वाण संवत्
८ में स्वर्ग पधारे।

५ श्री यशोभद्र स्वामी—श्री शय्यंभव स्वामी के बाद य
शोभद्र स्वामी विराजे—वे वीर प्रभु पश्चात् १४८ में स्वर्ग
धारे।

६ श्री संभूति विजय स्वामी—यशोभद्र स्वामी के पश्चात् श्री
भूति विजय स्वामी आचार्य हुए वे वीर संवत् १५६ में स्वर्ग
धारे।

आचार्य हुए। वराहमिहिर को इनसे ईर्षा हुई और जैन दीक्षा
ज्योतिष विद्या के बल से लोगों में प्रसिद्ध हुए। उन्होंने वराह सं
नामक एक ज्योतिष शास्त्र बनाया है ऐसी कथा प्रचलित है कि
तापस बन अज्ञान तप से तप्त हो मरकर व्यंतर देव हुए और
को उपद्रव ग्रसित रखने के लिये महामारी रोग फैलाया, उस उप
की शांति के लिये भद्रबाहु स्वामीने 'उवसग्गहर' स्तोत्र
और उसके प्रभाव से उपद्रव शांत होगया। इतिहास प्रसिद्ध मौ
वंशीय * चंद्रगुप्त राजा भद्रबाहु स्वामी का परम भक्त हुआ।

---

* श्रेणिक राजा का पौत्र उदाई अपुत्र मरने के पश्चात् पाट
पुत्र की गादी एक नाई (हजाम) के नंद नामक पुत्र को प्रा
हुई, इस राजा का कल्पक नामक मंत्री था। अनुक्रम से नंद वंश
नौ राजा हुए और उसके प्रधान भी कल्पक वंशी हुए।
चाणक्य नामक ब्राह्मणकी सहायता से चंद्रगुप्तने
पराजित किया जिससे वह पाटलीपुत्र का राजा हुआ। नंद के
वंशजों ने १५५ वर्ष तक राज्य किया था, चंद्रगुप्त राजा जैनी था
इसलिये धर्म द्वेष के कारण मुद्रा राक्षस आदि पुस्तकों में वर्ण
शूद्र जातिका कहा है परन्तु क्षत्रिय उपकारिणी महासभाने अनेक
[illegible] प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध किया है कि चंद्रगुप्त शुद्ध
मौर्यवंशी क्षत्रिय था।

ग्रीस का राजा महान् सिकंदर (Alexander the great.) गुप्त के समय भारत पर चढ़ आया था. (ई० सन् पूर्व से ३२३ ग्रीक लेखक के कथनानुसार चन्द्रगुप्त के पास हजार घुड़ सवार, २ लाख सैनिक, २ हजार रथ तथा ४ हजार थे, सिकंदर के सेनापति सिल्युकस को चन्द्रगुप्त राजा ने युद्ध पराजित कर भगा दिया था ।

वीर-निर्वाण के पश्चात् १७० वें वर्ष श्री भद्रबाहु स्वामी स्वर्ग उनके पश्चात् चौदह पूर्वधारी साधु भरतक्षेत्र में नहीं हुए.

८ स्थूलिभद्र स्वामी—नवें नंद राजा का कल्पक वंशीय शकडाल क मंत्री था. उसके स्थूलिभद्र और श्रीयक नामक दो पुत्र थे. पाटली में कोशा नामक एक अतिरूप वाली वेश्या रहती थी । प्रधान स्थूलिभद्र उसके प्रेमपाश में फंस गया और हमेशा वहीं रहने गा. शकडाल के पश्चात् श्रीयक को प्रधान पद देने लगे परन्तु श्रीयक कहा कि मेरे ज्येष्ठ भ्राता स्थूलिभद्रजी १२ वर्ष से कोशा वेश्या के में रहते हैं उन्हें बुलाकर मंत्री पद दीजिये. राजाने स्थूलीभद्र को लाकर मन्त्रीपद लेने को निमन्त्रित किया. लज्जावश स्थूलिभद्र राज्य भा में नीची दृष्टिसे देखता रहा और विचारकर उत्तर देने की प्रार्थना . गहन विचार करते राज्य-खटपट में पड़ना उन्हें योग्य न जचा, सार भी उन्हें अनित्य मालूम हुआ । वे वैराग्य उत्पन्न होने पर

साधुवेष पहिन राजसभा में आये और कहा कि राजन्! मैंने
ऐसा विचार किया है, फिर उन्होंने संभूतिविजय स्वामी के पास से दी
ली. चातुर्मास समीप समझ उन्होंने कोशा वेश्या के यहां चातुर्
ग्निर्गमन करने की गुरु से आज्ञा मांगी. गुरुने श्रेयस्कर समझ आ
देदी. उसी समय तीन दूसरे मुनि भी सिंह की गुफा में, सर्प के
में और कुएं के रहँट समीप चातुर्मास करने की आ
ले निकले।

स्थूलिभद्र स्वामी कोशा के घर गए, उन्हें आते देख कर वेश
ने सोचा ऐसे सुकोमल देहवाले से इतने कठिन महाव्रतों का पाल
किस रीती से होगा? मेरा प्रेम अभी उनके दिल से नहीं हटा
स्थूलिभद्र को समीप आते ही वेश्याने विशेष आदर सन्मान दे क
स्वामिन्! इस दासी पर महत् कृपा की जो आज्ञा हो वह सुख
फर्माइये. निर्मोही निर्विकारी मुनि बोले, मुझे तुम्हारी चित्रशाला
चातुर्मास व्यतीत करना है. वेश्याने चित्रशाला सुपुर्द कर दी। पश्च
स्वादिष्ट भोजन वहिराये फिर उत्तम शृंगार कर उनके सामने आ ख
हुई। पूर्वप्रेम का स्मरणकर, पूर्व भोगे हुए भोगों को याद कर
वेश्या अत्यन्त हाव भाव दिखाने लगी। परन्तु मुनिराज तो मेरुके स
अटल रहे। मनमें लेश मात्र भी विकार उत्पन्न न हुआ; वरम् उस वेश
को भी उपदेश दे श्राविका बना लिया, चातुर्मास पूर्ण हुआ. वे गु
के पास आये, वहांतक सिंह गुफा वासी आदि तीनों मुनिवर

ा पहुंचे थे। सब से अधिक सन्मान गुरुजी ने स्थूलिभद्रका किया, ाससे अन्य शिष्यों को ईर्षा हुई और द्वितीय चातुर्मास लगते ही ा ने भी कोशा वेश्या के यहां चातुर्मास करने की आज्ञा चाही। के इन्कार करने पर भी वे कोशा वेश्याके यहां गये, एकांत में शा का अद्भुत रूप देखकर ही मुनिवरोंका मन चलायमान होगया, तु कोशा श्राविका ने उन्हें युक्ति से उपदेश दे गुरुके पास वापिस ाया।

श्री भद्रबाहु स्वामी नैपाल देशमें विचरते थे. उनके पास जाकर लिभद्र मुनि ने १० पूर्व का अभ्यास किया और भद्रबाहुस्वामी पश्चात् उन्होंने ही आचार्यपद दिपाया, श्रीवीरनिर्वाण के पश्चात् १५ वें वर्ष स्थूलिभद्रजी स्वर्ग पधारे।

९ श्री आर्यमहागिरि—श्री स्थूलिभद्रजीके आसनपर आर्य-हागिरि तथा आर्य सुहस्ति स्वामी पधारे. इनके समय बड़ा भारी ष्काल पड़ा तो भी अन्न की स्पृहा न करने वाले जैन मुनियों को ग भाव से आहार वहराते थे. एक समय एक क्षुधा पीडित भि-क्षु गोचरी से वापिस आते समय मुनियों के पीछे २ अन्न के ये घबराता हुआ उपाश्रय में आया, आर्यसुहस्तिजी ने कहा कि धु के सिवाय हमारा आहार पाने का हकदार कोई नहीं हो सका. त्काल उसने दीक्षा ली और अधिक दिन से क्षुधापीडित हो से

इतना अधिक आहार किया कि वह मरणांतिक कष्ट पाने लगा उस समय बड़े २ साहूकारों ने उस नवदीक्षित मुनि की औषधोपचार आदि से उचित वैयावृत्य की. सिर्फ जैन-मुनिका वेष पहिनने से ही अपनी स्थिति में जमीन आसमान जैसा महान् अंतर हुआ देख वह बहुत आनन्दित और आश्चर्यान्वित हुआ और समभाव से वेदना सह मरकर पाटली पुत्र के राजा चंद्रगुप्त का पुत्र बिंदुसार बिंदुसार का पुत्र अशोक और अशोक का पुत्र कुणाल, कुणाल के साम्प्रति नामक पुत्र हुआ।

साम्प्रति राजा को आर्य सुहस्ति महाराज के समागम से जाति स्मरण ज्ञान होगया उन्होंने श्रावक के बारह व्रत अंगीकार किये और देश देशान्तरों में उपदेशक भेज जैन धर्म की पवित्र भावनाओं का प्रचार किया, अपने राज्य में अमरपटहा (ढिंढोरा) बजवाया अनार्य देशों में भी गृहस्थ उपदेशक भेजकर उन्हें अहिंसा धर्म के प्रेमी बनाये:—

एक वक्त आर्य सुहस्तिजी उज्जैन पधारे और भद्रा सेठानी की अश्वशाला में उतरे भद्रा का अवंती सुकुमार नामक एक तेजस्वी पुत्र था—वह अपनी स्त्रियों के साथ महल में देव तुल्य सुख भोगता था। एक समय आचार्य महाराज पांचवें देवलोक के नलिनी गुल्म विमान का अधिकार पढ़ रहे थे, वह सुनकर

कुमार ने सोचा कि पूर्व में ऐसी रचना मैंने कहीं साक्षात् देखी विचार करने पर उन्हें जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न होगया, माता आज्ञा ले आचार्य के समीप दीक्षा ली. अधिक समय तक साधु घोर कष्ट सहन करते रहना उन्हें योग्य न जंचा जिससे गुरु अर्ज की कि आपकी आज्ञा हो तो अनशन कर जहां से आया हूं हां शीघ्र जाऊं।

गुरु की आज्ञा पाते ही स्मशान में जा कायोत्सर्ग ध्यान में स्थित हुए राह में कंकर कांटे लगने से सुकुमार मुनि के पैरों से रक्त धारा बहने लगी थी उस रक्त को चूंसती चाटती हुई एक सियालनी मय बच्चों के ध्यानस्थ मुनि समीप आई और उनके शरीर को भक्ष्य बनाया आत्मभाव में स्थित मुनि तनिक भी न डिगे समाधि पूर्वक काल कर नलिनी गुल्म विमान में देवता हुए दृढ़ मनो बल द्वारा मनुष्य क्या नहीं कर सकता ? एक प्रहर में पांचवें देवलोक की समृद्धि प्राप्त करने वाले कुमार ! धन्य है आपके धैर्य को ! वीर-निर्वाण के पश्चात् २४५ वें वर्ष आर्य महागिरी और २६५ वें वर्ष आर्य सुहस्ति स्वामी स्वर्ग पधारे।

१० बलिसिंहजी (बालीसिंहजी) आर्य महागिरि के पाट पर उनके शिष्य बलसिंहजी पधारे, उनके शिष्य उमास्वामी और उमास्वामी के शिष्य श्यामाचार्य हुए. इन्हीं श्यामाचार्य ने श्री पन्नापना सूत्र को उधृत किया, उनके पश्चात् अनुक्रम से ११ सोवन स्वामी

वीरस्वामी १३ स्थंडिल स्वामी १४ जीवधर स्वामी १५ आ
समेद स्वामी १६ नंदील स्वामी १७ नागहस्ति स्वामी १८ सां
स्वामी १९ सिंहगणिजी २० थंडिलाचार्य २१ हेमवंत स्वामी २
नागजित स्वामी २३ गोविन्द स्वामी २४ भूतदीन स्वामी २
छोहगणिजी २६ दुःसहगणिजी और २७ देवार्धिगणिजी क
श्रमण हुए।

श्री वीर निर्वाण से ९८०वें वर्ष अर्थात् विक्रम संवत् ५१०
समर्थ आठ आचार्यों ने समय सूचकता समझ वर्तमान प्रचलि
अपने साधन संग्रह करने का योग्य विचार किया। वल्लभीपुर (काठिय
वाड़ में भावनगर के पास वला स्टेट है) में टाडकृत राजस्थान
लिखे अनुसार जैनियों की घनी बस्ती थी और राज्य शासन शिला
के हाथ में था जैन धर्म की विजय ध्वजा फहराने वाले इस प्रा
शहर पर वि० सं० ५२५ में पार्थियन, गेट और हूण लोग
हमला किया, जिससे तीस हजार जैन कुटुम्बी वह शहर त्याग मार
में जा बसे. इस भगाभगी दुष्काल के कारण लिखा हुआ पूर्ण
नहीं हुआ जिससे सूत्रों की शृंखला छिन्नभिन्न होगई फिर
लोगों ने भी जैनधर्म के प्रतिस्पर्धी व प्रतिपक्षी बन जैन शासन
समुच्छेद उखाड़ डालने का प्रयत्न किया, ऐसे अनेक कारणों से
भद्रबाहु स्वामी के पश्चात् विक्रम संवत् आठसौ तक अनेक जै
विद्वान् हुए तो भी उनकी कीर्ति हाथ नहीं लगती.

गया त्यों २ बाह्याडम्बर की वृद्धि होने लगी, वे तुच्छ-२ मत भेदों को
बड़ा २ स्वरूप दे नये २ गच्छ उत्पन्न करने लगे, जिससे जैन संघ में
छिन्नभिन्नता हो एकता नष्ट होने लगी। अपना पक्ष प्रबल और दूसरों को
अबल करने के लिए परस्पर निन्दा और मिथ्या आक्षेप लगाते
हीं उनका समय और शक्ति का अपव्यय होने लगा, इससे जैन-ध
के अन्य सिद्धान्तों पर ही जैन साधुनामधराने वालों के हाथ
ही बार २ कुठार प्रहार होने लगा, साधुओं में शिथिलाचार बढ़ गया
कई तो महावलम्बी और परिग्रहधारी होगए यति का नाम जो
अति पवित्र गिना जाता था, उस शब्द की महत्ता में हानि पहुंच
श्रावकों को अपने पक्ष में लेने के लिये मंत्र, जंत्र और वैदिक आदि ध
चढ़ने लगे तथा हिंसादि निषिद्ध कार्य करने पर तत्पर हुए मन, वचन
काया के योग से भी हिंसा नहीं करना, नहीं कराना और करने
को ठीक नहीं समझना इस अणगार धर्म की मर्यादा का प्र
उल्लंघन होने लगा अन्य मतावलंबियों की प्रवृत्ति का अनुकरण
स्थान २ पर देवालय और प्रतिमाएं स्थापन कीं, अपने २ पक्ष के यति
लिये उपाय बंधवाये. वर घोड़े चढ़ना, उत्सव करना, नाच नच
इत्यादि प्रवृत्तियों के प्रेरक और नायक होना यति अपना कर्तव्य सम
लगे, सारांश यह है कि उस समय साधुवर्ग से चारित्रधर्म लोप होने
था और श्रावक समुदाय कर्त्तव्य से पदच्युत हो उनके पीछे २ च

... चलता था. ज्ञानजी ऋषि के समय जैन धर्म की परिस्थिति
...रोक्त थी।

ऐसा होते भी वीर-शासन साधु विहीन नहीं हुआ। अनु-
...ायियों की अल्प संख्या होते भी अल्प संख्या में साधु सर्व काल
...द्यमान थे. जब २ घोर तिमिर बढ़ जाता तब २ कोई न कोई
...पुरुष उत्पन्न होता और जैन प्रजा को सन्मार्गादर्श करता था।
जैन-शासन की मंद हुई ज्योति को विशेष ज्योत करने वाले
नव युग प्रवर्तक समर्थ महात्मा इन दो हजार वर्षों में उत्पन्न
... थे.

ज्ञानजी ऋषि के समय में भी ऐसे एक धर्म सुधारक महा
... की अत्यंत आवश्यकता उपस्थित हुई कि जो साधुवर्ग से
...क ऐबों को दूर कर सत्य का प्रकाश फैलावे और जैन-समाज में
...ए संदेह और मिथ्या मान्यता को नष्ट करे. इतिहास साक्षी है
... २ अंधाधुन्धी बढ़जाती है तब २ कोई न कोई वीर नर
... प्रकट हो पुनरुद्धार करता है, इसी नियमानुसार ...
...वत् में ऐसा एक महान् धर्म सुधारक गुजरात के ...
...द शहर में ओसवाल (क्षत्रिय) ज्ञाति में उत्पन्न हुआ.
... लौंकाशाह था, वे सराफी का धंधा करते थे. ...
...नका अधिक मान था, हस्ताक्षर उनके ...

बुद्धि तीव्र एवम् निर्मल थी. जैन धर्म पर उनका अप्रतिम प्रे
एक समय वे ज्ञानजी ऋषि के समीप उपाश्रय में आये
समय ज्ञानजी ऋषि धर्म शास्त्र संभालने और उन्हें योग्य व्यवस्
रखने में लगे हुए थे. उनके एक शिष्य ने सूत्र की प्राचीन
प्रतियां देखकर शाहजी से कहा, " आपके सुंदर हस्ताक्षर
पुस्तकों का पुनरुद्धार करने में उपयोगी नहीं होसके ? शाह
अत्यंत आनंद के साथ सूत्र की जीर्ण प्रतियों की प्रति लिपि
का कार्य स्वीकार किया (विक्रम संवत् १५०६ ई० सन् १४
अपने लिये भी उन्होंने सूत्र की प्रतियां लिख लीं लिख
उन्हें विस्तीर्ण सूत्र ज्ञान होगया उनकी निर्मल और कुशाग्र
वीरस्वामी के पवित्र आशय को समझ गई. उनको ज्ञानचक्षु
जाने से वीर भाषित अणगार धर्म और वर्तमान में विचरने
साधुओं की प्रवृति में जमीन आसमान का सा अंतर दिखा. साधु
की उत्सूत्र प्ररूपना उनसे असह्य होगई जैन समाज की गति उल
दिशा में देखकर उन्हें बहुत बुरा जंचा और सत्य का याथात
प्रकाश करने की उनके मानस मंदिर में प्रबल स्फुरणा हुई। प्रति प
दल अत्यंत बढ़ा और शक्ति तथा साधन सम्पन्न था तो
निर्भयता से वे जाहिर व्याख्यान — उपदेश देने लगे और
में व्याख्यान प्राकृतिक अद्भुत आकर्षण शक्ति के प्रभाव से
श्रोतृ समुदाय की संख्या प्रतिदिन बढ़ने लगी. भिन्न २ देशों

त अग्रगण्य श्रावक वृहत् संख्या में उनके अनुयायी हुए. केवल
क ही नहीं परंतु कितने ही यति भी उनके सदुपदेश के अनुसार
ास्त्रानुसार अणगार धर्म आराधने तत्पर हुए, लौंकाशाह स्वयम्
होने से दीक्षित न होसके परंतु भाणाजी आदि ४५ भव्य जीवों
उन्होंने दीक्षा दिला उनकी सहायता से आप जैन शासन सुधारने
आपने इस पवित्र कार्य में महान् विजय प्राप्त की और अल्प
मय में ही हिन्दुस्थान के एक छोर से दूसरे छोर तक लाखों जैनी
नके अनुयायी बने, जिस समय यूरोप में धर्म सुधारक मार्टिन
ुथर हुआ और प्युरिटन ढंग से ख्रिस्ती धर्म को जागृत किया.
सी समय या उसी साल अकस्मात् जैन धर्म सुधारक
ीमान् लौंकाशाह का समय मिलता है *

लौंकाशाह के उपदेश से ४५ मनुष्य दीक्षित हुए उन्होंने अपने
ाच्छका लोकागच्छ नाम रक्खा. वीर संवत् १५३१.

---

* About A. D. 1452 the Lonka sect arose and
was followed by the sthanakwasi sect these which
coincile strickingly with the Lutheran and puritan
movements in Europe.

Heart of jainism

समय २ पर धर्मगुरु जन्म लेते हैं, होते हैं और अपने
समाज पर पवित्र और स्थिर छाप लगाने का सौभाग्य

ज्ञानजी ऋषि के पश्चात् आज तक गादी नशीन आचा नामावली निम्न लिखित है.

६२ भाणजी ऋषि ६३ रूपजी ऋषि ६४ जीवराजजी ६५ तेजराजजी ६६ कुंवरजी स्वामी ६७ हर्ष ऋषिजी ६८ जी स्वामी ६९ परशुरामजी स्वामी ७० लोकपालजी स्वामी महाराजजी स्वामी ७२ दौलतरामजी स्वामी ७३ लालचंदजी ७४ गोविंदरामजी स्वामी हुकमीचंदजी स्वामी ७५ शिव स्वामी ७६ उदयचंद्रजी स्वामी ७७ चौथमलजी स्वामी ७ लालजी स्वामी (चरित नायक) ७९ श्री जवाहिरलालजी (वर्त्तमान आचार्य) ※

ज्ञानजी ऋषि से आजतक ४५० वर्ष का कुछ इतिहा वर्णन करते हैं ।

को प्राप्त होता है. खिस्ती धर्म में मानसिक दासत्व दूर क जितना कार्य मार्टिन ल्यूथर ने किया वैसा ही कार्य श्रीमान शाह ने भी, जैनधर्म में क्रियोद्धार के लिये किया.

※ पूज्य श्री हुकमीचंद्रजी महाराज की सम्प्रदाय की पाटा अनुसार उनके सम्प्रदाय के उत्तरोत्तर प्राप्त हुए; आचार्य पद नामावली यहां दिखाई है।

श्री महावीर की वाणी का अवलम्बन ले धर्मोद्धार को श्रीमान्
शाह ने जो शुद्ध मार्ग प्रवर्त्ताया उस मार्गगामी साधु शास्त्र
नानुसार संयम पालते, निर्वद्य उपदेश देते, निरपरिग्रही रहकर
ानुग्राम अप्रतिबद्ध विहारकर, पवित्र जैन शासन का उद्योत
ा थे, भाणाजी ऋषि साधसखाजी, रूपजी ऋषि तथा जीव-
ा ऋषिजी प्रभृति ने लाखों की सम्पत्ति त्याग दीक्षा ली थी,
ब्राजी तो बादशाह अकबर के मंत्री मंडल में से एक थे. बाद-
ह की इन्कारी होनेपर भी पांच करोड़की सम्पत्ति त्याग उन्होंने
क्षा ली थी।

प्राय: सौ वर्ष तक तो लौंका गच्छीय साधुओं का व्यवहार
क रहा परन्तु पीछे से उनमें भी धीरे २ आचारशिथिलता और
धाधुन्धी बढ़ने लगी।

पूर्ववत् अन्धकार फैलाने वाले बादल फिर चढ़ आये,
धु पंच महाव्रतों को त्याग मठावलम्बी और परिग्रहधारी होने
गे, तथा सावद्य भाषा और सावद्य क्रिया में प्रवृत्त होने लगे,
रंतु उस समय भी कई अपरिग्रही और आत्मार्थी साधु विशुद्ध
ंयम पालते, काठियावाड़ मारवाड़ पंजाब में विचरते थे और वे इन
ादलों के असर से मुक्त रहे थे, मालवा मारवाड़ आदि में विचरते
ूज्य श्री हुकमीचंद्रजी महाराज का सम्प्रदाय ऐसे ही आ
साधुओं में से एक के पाट एक होने से हुआ है।

लौंकाशाह के पश्चात् फिर से जब ये मेघ*चढ़ आये तब उन्हें नष्ट करने के लिये गुजरात में किसी समर्थ महापुरुष के प्रादुर्भाव होने की आवश्यकता हुई उस समय प्राकृतिक नियमानुसार धर्मसिंहजी लवजी ऋषि और श्री धर्मदासजी अणगार एक के पश्चात् एक यों तीन महा व्यक्ति उत्पन्न हुए. उन्होंने अद्भुत पराक्रम दिखा लौंकाशाह के उपदेश का पुनरुद्धार किया. बल्कि शास्त्र सुधारने का जो कार्य उन्होंने अपूर्ण छोड़ा था उसे इस त्रिपुटी ने पूर्ण किया. उन्होंने महावीर की आज्ञानुसार अणगार धर्म की अराधना प्रारंभ की. उनके विशुद्ध ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप के प्रभाव से तथा शास्त्रानुकूल और समयानुकूल सदुपदेश से लाखों

---

* एक अंग्रेज बानू मिसीस स्टीवन्सन् कि जो राज कोट में रहती थी अपनी Heart of jainism (नाम पुस्तक में इस समय का उल्लेख यों करती हैं।

Firmly rooted amongst the laiter, they were able once hurricane was past to reappear oncemore and begin to throw out fresh branches...many from the Lonka seeb. Joined this reformer and they took the name of Sthanakwasi, whilst their enemics called them Dhundhia Searchers. This tille has grown to be quite an honourable one.

नुष्य उनके भक्त होगए। इस समय से इन्होंने जैन शासन का
पूर्व उद्योत किया, तब से लौंका गच्छ यति वर्ग और पंच महाव्रत
री साधु ऐसे दो विभागों में जैन श्वे० पंथ बँट गया. लौंका
छीय तथा अन्य गच्छीय जो श्रावक पंच महाव्रतधारी साधुओं
मानने वाले तथा उनके दिखाये हुए मार्ग पर चलने वाले
ए वे साधुमार्गी नाम से प्रख्यात हुए यह मार्ग कुछ नया न था
नके प्रवर्तकों नें कुछ नये धर्म शास्त्र नहीं बनाये थे. सिर्फ शास्त्र
द्ध चलती प्रणाली को रोक शास्त्र की आज्ञा ही वे पालने लगे,
ाड़ की सम्प्रदाय भी इसी मार्ग का अनुसरण करने वाली
से वे भी साधुमार्गी नाम से पहिचाने जाते हैं। यहां इस
ाय के प्रभावशाली पुरुषरत्नों में से थोड़े से मुख्य २
यों का कुछ इतिहास अवलोकन करना अप्रासंगिक नहीं
ा।

श्रीः धर्मसिंहजीः — ये जामनगर काठियावाड़ के दशा
ली वैश्य थे इनके पिता का नाम जिनदास और माता का
ावा था, लौंकागच्छ के आचार्य रत्नसिंहजी के शिष्य देवजी
के व्याख्यान से १५ वर्ष की उम्र में धर्मसिंहजी को
उत्पन्न हुआ और पिता पुत्र दोनों ने दीक्षा ली. विनय द्वारा
सम्पादन कर ज्ञान ग्रहण करने के लिये प्रबल वैराग
मुनि सतत सदुद्योग करने लगे. ३२ सूत्रोंके उपरांत ए

न्याय प्रभृति में भी वे पारंगत विद्वान् हुए. उनकी स्मरण
अत्यंत तीव्र थी. वे अष्टावधान करते थे, शीघ्र काव्य रचते
दोनों हाथ तथा दोनों पैर से कलम पकड़ कर लिख सके थे।
सूत्री होने के पश्चात् एक दिन धर्मसिंहजी अणगार सोचने लगे
सूत्र में कहे अनुसार साधु धर्म तो हम नहीं पालते तो
चिंतामणि समान इस मानव जन्म की सार्थकता कैसे सिद्ध हो
उन्होंने शुद्ध संयम पालने का निश्चय किया और गुरु से
कायरता त्याग कटिबद्ध होने का आग्रह किया गुरुजी पूज्य प
मोह न त्याग सके

अंतमें उनकी आज्ञा और आशीर्वाद भी आत्मार्थी और सहाध्य
यतियों के साथ उन्होंने पुनः शुद्ध दीक्षाली (विक्रम सं. १६८
धर्मसिंहजी अणगार ने २७ सूत्रों पर (टब्बा) टिप्पणी लिखी
टिप्पणियां सूत्ररहस्य सरलता पूर्वक समझाने को अति उपय
हैं। विक्रम सं. १७२८ में उनका स्वर्गवास हुआ, उनका सम्प्र
दरियापुरी के नामसे प्रख्यात है।

श्रीलवजी ऋषिः—सूरत में वीरजी वहोरा नामक एक द
श्रीमाली साहूकार रहता था. उनकी लड़की फूलबाई से लवजी
नामक पुत्र हुआ. लौंकागच्छ के यति वजरंगजी के पास उनने शास्त्रा
ध्ययन किया और दीक्षा ली. यतियों की आचार शिथिलता देखकर

वर्ष बाद उन से पृथक् हो उनने विक्रम संवत् १६८२ में
यमेव दीक्षा ली। अनेक परिषह सहन किये और शुद्ध चारित्र पाल,
त धर्म दिपा स्वर्ग पधारे। मुनि श्री दौलतऋषिजी तथा श्रीमऋषिजी
ति उनकी सम्प्रदाय में हैं।

श्रीधर्मदासजी अणगार—ये अहमदाबाद के समीप सरखेज
ा के निवासी भावसार ज्ञाति के थे। उनके पिता का नाम
न कालिदास था। विक्रम संवत् १७१६ में इन्होंने प्रबल वैराग्य
दीक्षा ली और उसी दिन गोचरी जाते एक कुम्हारिन ने, राख
राई। वह थोड़ीसी पात्र में गिरी और थोड़ी हवा में बिखर गई।
वृत्तांत इन्होंने धर्मसिंहजी से कहा।

इसका उत्तर धर्मसिंहजी ने फर्माया कि, जैसे छार बिन कोई
खाली नहीं रहता उसी तरह प्रायः तुम्हारे शिष्यों के बिना
ग्राम खाली न रहेगा और छार हवा में फैल गई इसी तरह
शिष्य चारों ओर धर्म का प्रचार करेंगे। धर्मदासजी के ९९
ए। जिन्होंने देश देशान्तरों में [illegible]
यों में से ९८ तो मालवा, [illegible]
धर्म की ध्वजा [illegible]
रहे उन्होंने [illegible]
[illegible]

१ गुलाबचंद्रजी २ पंचाणजी ३ बनाजी ४ इन्द्रजी ५ बना
६ विट्ठलजी और ७ भूषणजी इनके शिष्यों ने काठिया
में १ लींबड़ी २ गोंडल ३ बरवाला ४ आठ कोटी कच्छी
चूड़ा ६ ध्रांगध्रा ७ सायला ऐसे ७ संघाड़े स्थापित किये।

गुलाबचंद्रजी के शिष्य बालजी स्वामी, बालजी स्वामी के शि
हीराजी स्वामी, हीराजी स्वामी के शिष्य कानजी स्वामी औ
कानजी स्वामीके सिष्य अजरामरजी स्वामी हुए। ये अजरामर
महाप्रतापी और पंडित पुरुष हुए। उनके नाम से वर्तमान में लीं
संप्रदाय (संघाड़ा) प्रख्यात है।

श्री दौलतरामजी तथा श्री अजरामरजी—थे। दो
महात्मा समकालीन थे। दौलतरामजी ने सं। १८१५ में और अजा
मरजी ने १८१६ में दीक्षा ली थी। श्री दौलतरामजी महाराज प
हुकमीचन्द्रजी महाराज के गुरु के गुरु थे, वे अति समर्थ विद्व
और सूत्र सिद्धान्त के पारगामी थे. मालवा, मारवाड़, में ये वि
रते और इसी प्रदेश को पावन करते थे, उनके असाधारण ज्ञा
सम्पत्ति की प्रशंसा श्री अजरामरजी स्वामी ने सुनी। अजरामर
स्वामी का ज्ञान भी बढ़ा चढ़ा था तो भी सूत्र ज्ञान में अधि
उन्नति करने के लिये श्री दौलतरामजी महाराज के पास अभ्या
करने की उनकी इच्छा हुई। इस पर मे लींबड़ी संघ ने एक श्रा

...नुष्य के साथ दौलतरामजी महाराज की सेवा में प्रार्थना पत्र
... भेजा आचार्य प्रवर श्री दौलतरामजी महाराज उस समय बूंदी कोटे
... विराजते थे। उन्होंने इस विज्ञप्ति को सहर्ष स्वीकृत कर काठियावाड़
...की ओर विहार किया। वह भेजा हुआ मनुष्य भी अहमदाबाद तक
...ज्य श्री के साथ ही था परंतु वहां से वह पृथक हो लींबड़ी संघ को पूज्य
... के पधारने की बधाई देने आया। उस समय लींबड़ी संघ के आनंद
...पार न रहा, लींबड़ी संघने उस मनुष्य को रु० १२५०) बधाई
...नट दिये। पूज्य श्री दौलतरामजी लींबड़ी पधारे तब वहां के संघ
...। उनका अत्यन्त आदर सत्कार किया।

लींबड़ी संघ की अनुपम गुरुभक्ति देखकर दौलतरामजी महा-
...ज श्री भी सानंदाश्चर्य हुए। पंडित श्री अजरामरजी स्वामी पूज्यश्री
...दौलतरामजी महाराज से सूत्र सिद्धांत का रहस्य समझने लगे.
...समकित सार के कर्ता पं० मुनि श्री जेठमलजी महाराज इस समय
...नपुर विराजते थे वे भी शास्त्राध्ययन करने के लिये लींबड़ी पधारे
...वे भी ज्ञान गोष्ठी के अपूर्व आनंद का अनुभव करने लगे। भिन्न २
...य के साधुओं में परस्पर उस समय कितना प्रेमभाव था
...साधुओं में ज्ञान पिपासा कितनी तीव्र थी यह इस पर
...सिद्ध है। पं० श्री० दौलतरामजी महाराज के ...
... समय तक विचर कर पं० श्री अजरामरजी ...
...में अपरिमित अभिवृद्धि की और पूज्य श्री दौ...

महाराज के आग्रह से पूज्य श्री अजरामरजी महाराजने ज
में एक चातुर्मास भी उनके साथ किया था ।

पूज्य श्री हुकमीचन्दजी स्वामी—पूज्य दौलतराम महा
के पश्चात् श्रीलालचंद्रजी महाराज आचार्य हुए, और उनके
पर परम प्रतापी पूज्य श्री हुकमचंद्रजी महाराज हुए टोडा (राय
के) ग्राम के रहने वाले वे ओसवाल गृहस्थ थे उनका गोत्र चप
था. बूंदी शहर में सं० १८७६ में मार्गशीर्ष मास में पूज्य श्री
चंद्रजी स्वामी के पास उन्होंने प्रबल वैराग्य से दीक्षा ली । २१
तक उन्होंने बेले २ तप किया चाहे जितने कड़क शीत में भी
सिर्फ एक ही चादर ओढ़ते थे, शिष्य बनाने का उनके स
त्याग था, उसने सब मिठाई भी खाना त्याग दी थी । सिर्फ
द्रव्य रखकर बाकी के सब द्रव्यों का यावज्जीव पर्यंत त्याग
था वे बिल्कुल कम निद्रा लेते और रात दिन स्वाध्याय
ध्यानादि प्रवृत्ति में ही लीन रहते थे. नित्य २०० नमोत्थुणं
थे, आप समर्थ विद्वान् होते भी निरभिमानी थे. कोई चर्चा
आता तो अपने आज्ञावर्ती साधु श्रीशिवलालजी महाराज के
भेज देते, अपने गुरु पूज्य श्री लालचंद्रजी महाराज शास्त्रानु
सख्त आचार पालने के लिये बार बार विनय करते रहते प
अपनी विनय अस्वीकृत होने से पृथक् विहरने लगे और
संयमादि में वृद्धि करने लगे, इससे गुरुजी उनको अति

करने लगे. किसीने उनको आहार पानी देना नहीं, उपदेश सुनना नहीं तथा उतरने के लिये स्थान भी नहीं देना ऐसे उपदेश देने लगे. क्षमा के सागर श्री हुकमीचंद्रजी महाराज ने इस पर तनिक भी लक्ष नहीं दिया वे तो गुरू के गुणानुवाद ही करते और कहते थे कि मेरे तो वे परम उपकारी पुरुष हैं महाभाग्यवान् हैं मेरी आत्मा ही भारी कर्मी है। इस तरह वे गुरु प्रशंसा और आत्मनिंदा करते थे तो भी गुरुजी की ओर ओर से वाक्वाण के प्रहार होते ही रहे यों करते २ चार वर्ष बीत गए. परंतु वे गुरु के विरुद्ध कदापि एक शब्द भी न बोले। चार वर्ष बाद गुरु को आप ही आप पश्चात्ताप होने लगा और वे भी निंदा के बदले स्तुति करने लगे। अंत में व्याख्यान में प्रकट तौर पर फरमाने लगे कि हुकमचंद्रजी तो चौथे आरे के नमूने हैं वे पवित्रात्मा और उत्तम साधु हैं वे अद्भुत क्षमा के भंडार हैं। मैंने चार वर्ष तक उनके अवगुण गाने में त्रुटि न रक्खी परंतु उसके बदले उन्होंने मेरे गुण ग्राम करने में कमी नहीं की। धन्य हैं ऐसे सत्पुरुष को! श्रीमान् हुकमीचंद्रजी महाराज का गुण समूहरूप सूर्य स्वतः प्रकाशित था, जिससे लोगों की पहले से ही उनपरपूज्य भाक्ति तो थी ही फिर आचार्य श्री के उद्गारों का अनुमोदन मिलते ही उनकी यशदुंदुभी दशाही। गूजने लग गई। उन्होंने अपनी सम्प्रदाय में क्रियो

तब से यह सम्प्रदाय उनके नाम से प्रसिद्ध हुई और पहिचाने जाने लगी। उनके अक्षर मोती के दाने जैसे थे. उनकी हस्तलिखि १६ सूत्रों की प्रतियां इस सम्प्रदाय में अब भी वर्तमान हैं। सं १६१७ के वैशाख शुद्ध ५ मंगलवार को जावद ग्राम में देहोत्स कर ये पवित्रात्मा स्वर्ग पधारे।

श्रीयुत ग्योइट सत्य फरमाते हैं कि, " काल से भी अविच्छि हो ऐसा कोई प्रतापी और प्रौढ स्मारक मृत्युबाद छोड़ जाना उचि है कि जिससे देह नश्वर होने से नाश होजाय तो भी उस स्मार के कारण हमेशा जीवित रहे और वही वास्तविक कीर्त्ति का फ है ऐसे महाराज--महापुरुष विरले ही जन्म लेते हैं।

पूज्य शिवलालजी स्वामी—श्री हुकमचंद्रजी महाराज पाट पर शिवलालजी महाराज बिराजे उन्होंने सं० १८९१ में दीक्षा ली थी, वे भी महा प्रतापी थे. उन्होंने ३३ वर्ष तक लगातार अखण्ड एकांतर की. वे सिर्फ तपस्वी ही नहीं थे, परंतु पूर्ण विद्वान् भी थे, स्व परमत के ज्ञाता और समर्थ उपदेशक थे उन्होंने भी जैन शासन का अच्छा उद्योत किया और श्री हुकमीचंद्रजी महाराज की सम्प्रदाय की कीर्ति बढ़ाई सं० १९३३ पोप शुक्ल ६ के रोज उनका स्वर्गवास हुआ।

पूज्य श्री उदयसागरजी स्वामी—इन महात्मा का जन्म जोधपुर निवासी ओसवाल गृहस्थ सेठ नथमलजी की पतिव्रत

में थी अपना प्रभाव दिखाया था, कई राजाओं को सदुपदेश शिकार और मांस मदिरा छुड़ाई और अहिंसा धर्म की वि ध्वजा फहराई थी।

पूज्य श्री के आचार विचारः— पूज्य श्री के हृदय प्रतिच्छाया वर्तमान के उनके साधु हैं 'छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति मोह, या प्यार में जो लेश मात्र स्वतंत्रता दीजाती है वही स्वतंत्र फिर स्वच्छंदता के स्वरूप में परिणित होजाती है और जिस फल भयंकर असह्य और अक्षम्यदोष उत्पन्न करता है. ये का प्रत्यक्ष रखकर किसीभी शिष्य को स्वच्छंदी बनने न देते.

भिन्न २ प्रकृति के साधु एकत्रित हो उस सम्प्रदाय को शु समय की सीमा में रखना सरल कार्य नहीं है। अनंतानुबंधी क चौकड़ी के बंधन में फंसते हुए मुनि को मुक्त करने के लिये वे खुल प्रयास करते थे। सूत्रों के रहस्य को न्यायपूर्वक यों समझा थे कि:--

* असंवुडेणं भंते! अणगारे, सिज्झई, बुज्झइ, मुच्चइ, परिनि- व्वायइ, सव्वदुक्खाणमंतं करेइ गोयमा! नो इणट्ठे समट्ठे से केणट्ठेणं भंते! जाव अनंत करेइ गोयमा! असंवुडे अणगारे आउयवज्जाओ

* भावार्थः—गृह भारका त्याग किया परंतु आंतरिक आश्रव द्वार जिसने नहीं रोके ऐसे पाखंड सेवी साधु भवनीजरूर कर्म

सत्तकम्म पयडिओ सिढिलबंधणबद्धाओ घणियबंधण बद्धा करेइ रहस्सकालठिईआओ, दीहकालठीईआओ पकरेइ मंदाणु भावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसगाओ बहुपएसगाओ करेइ........ श्री भगवती श० १ उ० १ इसके अनुसंधान में श्री उत्तराध्ययन से अ १ गाथा ६ वीं कहकर भावार्थ गले उतारते थे कि गुरु की हितशिक्षा प्रत्येक शिष्य को सम्पूर्ण ध्यान से सुनना, विचार करना, मन में ठसाना और उसी अनुसार वर्ताव करना चाहिये. शिष्य के दुर्घृष्ट हृदय की गंभीर भूलों को क्षार करने के लिये कदाचित् कठिन प्रहार युक्त हित शिक्षा हो तो भी विनीत शिष्य को अपना श्रेय समझ कर वह शांति से श्रवण करना, परंतु तनिक भी कोप या शोक न करना और शुभ विचारों से मन को समझा कर क्षमा धारण करनी चाहिये। व्यवहार और मन से क्षुद्र मनुष्यों का तनिक भी संसर्ग न करना और हास्य क्रीडा आदि प्रसंग से दूर रहना चाहिये।

परंतु सम्प्रदाय में थोड़े शिथिलाचारियों का समूह घुसा हुआ ...ली दृष्टि से देख कर मन में सोचने लगे कि, साधु के नाम

... स्थिति, रस घटाने के बदले अधिक बढ़ाते हैं चीकने कर्म हैं इसलिये अंतरिक रिपुओं से जय प्राप्त करना यही बाह्य ... मुख्य लक्ष होना चाहिये।

में भी अपना प्रभाव दिखाया था. कई राजाओं को सदुपदेश
शिकार और मांस मदिरा छुड़ाई और अहिंसा धर्म की वि
ध्वजा फहराई थी ।

पूज्य श्री के आचार विचारः— पूज्य श्री के हृदय
प्रतिच्छाया वर्तमान के उनके साधु हैं 'छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति
मोह, या प्यार में जो लेश मात्र स्वतंत्रता दीजाती है वही स्वतंत्र
फिर स्वच्छंदता के स्वरूप में परिणित होजाती है और जिस
फल भयंकर असह्य और अक्षम्यदोष उत्पन्न करता है. ये कार
प्रत्यक्ष रखकर किसीभी शिष्य को स्वच्छंदी बनने न देते.

भिन्न २ प्रकृति के साधु एकत्रित हो उस सम्प्रदाय को शु
समय की सीमा में रखना सरल कार्य नहीं है । अनंतानुबंधी व
चौकड़ी के बंधन में फंसते हुए मुनि को मुक्त करने के लिये वे स्तुत
प्रयास करते थे। सूत्रों के रहस्य को न्यायपूर्वक यों समझा
थे किः--

* असंवुडेणं भंते! अणगारे, सिज्झई, बुज्झइ, मुच्चइ, परिनि
व्वायइ, सव्वदुक्खाणमंतं करेइ गोयमा! नो इणट्ठे समट्ठे से केणट्ठेण
भंते! जाव अनंत करेइ गोयमा! असंवुडे अणगारे आउयवज्जाओ

* भावार्थः—गृह भारका त्याग किया परंतु आंतरिक आश्रव
द्वार जिसने नहीं रोके ऐसे पाखंड सेवी साधु भवबीजरूप कर्म

कम्म पयडिओ सिढिलबंधणबद्धाओ धणियबंधण बद्धाओ करेइ रहस्सकालठिईआओ, दीहकालठिईआओ पकरेइ मंदाणुभावाओ तिव्वाणुभावाओ पकरेइ अप्पपएसग्गाओ बहुपएसग्गाओ करेइ....... श्री भगवती श० १ उ० ९ इसके अनुसार में

। उत्तराध्ययन से अ १ गाथा ९ वीं कहकर भावार्थ यह समझाने कि गुरु की हितशिक्षा प्रत्येक शिष्य को सम्पूर्ण ध्यान से सुनना, विचार करना, मन में ठसाना और उसी अनुसार वर्ताव करना चाहिये. शिष्य के दुर्घृष्ट हृदय की गंभीर भूलों को साफ करने के लिये कदाचित् कठिन प्रहार युक्त हित शिक्षा दे तो भी विनीत शिष्य को अपना श्रेय समझ कर वह शांति से श्रवण करना, परंतु कोई भी कोप या शोक न करना और शुभ विचारों से मन को समझा कर क्षमा धारण करनी चाहिये। व्यवहार और मन से क्षुद्र मनुष्यों का तनिक भी संसर्ग न करना और हास्य क्रीडा आदि प्रसंग से दूर रहना चाहिये।

परंतु सम्प्रदाय में थोड़े शिथिलाचारियों का समूह घुसा हुआ पतली दृष्टि से देख कर मन में सोचने लगे कि, साधु के नाम

प्रकृति, स्थित, रस घटाने के बदले अधिक बढ़ाते हैं चीकने कर्म बांधते हैं इसलिये अंतरिक रिपुओं से जय प्राप्त करना यही बाह्य त्याग का मुख्य लक्ष होना चाहिये।

से लोगों को ठगना या ठगाने देना या फंसाने देना यह मह
अधर्म और निर्बलता है। सम्प्रदाय की यह बेपरवाही आगे
और भयंकर परिणाम पैदा करेगी.

शास्त्र सत्य कहते हैं कि, इंद्रिय और मनको वश रखना
आत्मा की पहिचान का सरल और उत्तम उपाय है। मानसिक
से पापपुंज नहीं बढ़ता मन विकारी होकर दूषित हुआ कि, मा
पाप हो चुका इसलिये साधुधर्म के संरक्षणार्थ नियमित संयम के
योजित किये हैं इस अंकुश को दुःखरूप समझने वालों का दुः
हालत से हाल हवाल हो जाते हैं अनेक आकर्षणों में फं
के भव हार जाते हैं निरंकुश स्वतंत्रता से साधुओं में स्वच्छं
कलह और दुःख सिवाय दूसरे परिणाम भाग्य से ही
होते हैं।

ऐसे सबल कारणों का दीर्घ दृष्टि से विचारकर पूज्य श्री
सम्प्रदाय के कितने एक साधुओं के साथ आहार पानी का सम्
तोड़ा था। जिसका चेप अभी तक वर्तमान है। चरित्र शिथिलता
चेप का फैलाव रोकने के लिए ऐसे रोगियों के ढूंढ चिकित्सा
समें रास्ते लगाने का पूज्य श्री का प्रयास कटु काढ़े के सदृश ह
से छूट छाट मांगने वाले मुनि नामधारी पूज्य श्री के वैयावृत्यसे
वंचित होने लगे।

सं० १९५४ के आसोज शुक्ला १५ के व्याख्यान में रतलाम
स्थान पर पूज्य श्री उदयसागर जी महाराज ने युवा चार्य पद
श्री चौथमलजी महाराज को देना जाहिर किया। श्री संघ ने
हर्ष स्वीकार किया. श्री चौथमलजी महाराज का चातुर्मास जावद
। इस लिये चातुर्मास पश्चात् रतलाम से महाराज श्री मोरचंदजी
और महाराज श्री इन्द्रचंदजी प्रभृति चादर लेकर जावद पधारे.
सं० १९५४ के मंगसर शुक्ला १३ को जावद में महाराज श्री
चौथमलजी को चादर धारण कराई। उस समय महाराज श्री
लालजी वगैरह २१ मुनिराज भी जावद बिराजते थे.

सं० १९५४ के महा शुक्ला १० के रोज रतलाम में पूज्य श्री
उदयसागरजी महाराज का स्वर्गवास हुआ. पूज्य श्री का निर्वाण
महोत्सव अत्यंत चित्ताकर्षक और चिरस्मरणीय विधि से हुआ था।

पूज्य श्री चौथमलजी स्वामी:— सं० १९५५ के फाल्गुन
वद ४ के रोज रतलाम पधार कर सम्प्रदाय की बागडोर अपने
अपने हाथ में ली। पूज्य श्रीने सं० १९०९ चैत्र शुदी १२ को दीक्षा
ली थी पूज्य श्री महाक्रियापात्र और पवित्र साधु थे।
उनकी नेत्रशक्ति क्षीण होगई थी और वृद्धावस्था भी थी।
शरीर की अशक्ति का तनिक भी विचार न कर विहार करते
थे. बेजड़ कारण दिया आजकी तरह आग्रपति न

साधुतो फिरतेही अच्छे इस वाक्य को सत्य साबित कर दिखाते थे पूज्य श्री का सूत्र ज्ञान बढ़ाचढ़ा था। मुंहसे ही व्याख्यान फरमा थे, क्रिया की ओर भी पूर्ण लक्ष्य था, रातको एक दो दफे उठ शिष्यों की सार संभाल लेते थे. सम्प्रदाय से अलग हुए साधु का अबतक सुधरने की ओर लक्ष्य न देखा तो उनसे आहारपा का व्यवहार रक्खा ही नहीं।

उपदेशकों के चरित्र और आचरण का प्रभाव समाज पड़ता ही है. इस लिये वे भी श्रेष्ठ आचार वाले होने चाहिये व्याख्यान देनेसे ही उपदेशकों का कर्तव्य इतिश्री तक पहुंच गया ऐ समझना भूल है। सब दिन भर के उनके आचार विचार और उच्च में गंभीरता, पापभीरुता, पवित्रता और प्रसन्नता झलकनी चाहिये

कायदे या नियम कागज पर नहीं परंतु व्यवहार में भी ला चाहिये प्रतिक्षण पापसे बचने की जिज्ञासा जागृत रहे तभी असं आकर्षणों से आत्मा बच सकती है। महात्मा कह गए हैं कि:—

उपदेशकों के भक्तिभाव, श्रद्धा, सत्यप्रवचन, और फकीरी वृत्ति से ही शिष्यों की धार्मिक वृत्तियाँ खिलती हैं। धार्मिक रिवा और संस्कार का जितना विशेष ज्ञान हो उतना ही अच्छा है चाहे जैसा संकट आजाय, चाहे जैसा लालच अपने पास हो,

ो अपने से धर्म न त्यागा जाय, यह ख्याल और विचार सम्पूर्ण
तिसे पैठ जाय तभी सफलता समझनी चाहिये ।

धर्म कुछ पांडित्य का विषय नहीं । धर्म बुद्धि ग्राह्य भी भले
हो परंतु वह हृदयग्राह्य है, क्योंकि यह श्रद्धा का विषय है ।
धर्म विहीन नीति शिक्षण भी श्रद्धा के अभाव से पूर्ण असर नहीं
कर सका ।

सब मनुष्यों को धर्म की ओर अत्यंत उदार व्यापक और सार्वभौम
शुद्ध ख्याल लगाना हो तो धर्म द्वारा ही लगा सकते हैं, क्योंकि इच्छा
स्वतः प्रकटित होनी चाहिये । दूसरों के डर या अंकुश का असर
कुछ ही समय तक टिक सकता है । आत्मविश्वास के बिना प्रतिज्ञा
नहीं निभ सकती आकस्मिक भूलोंका परिणाम को प्रायश्चित द्वारा
नरम कर सकते हैं जो स्वेच्छा से शुद्धभाव द्वारा प्रायश्चित्त हो गया
अल्पश्रम और अल्प त्याग से ही निवृत्ति हो सकती है । अगर ऐसा नहीं
किया गया तो आगे क्या २ करना पड़ेगा इसकी कल्पना हृदय में
लाते ही देह कंपने लगता है ।

अपने शास्त्रों में हजारों वर्ष पहिले कहा गया है उसी अनुसार
महात्मा गांधीजी अभी प्रेम और तपश्चर्या से ही दूसरों पर प्रभाव
डाल रहे हैं ।

एक ने दूसरे पर मिथ्या कलंक लगाना, अनर्थ दण्ड सेवन करना यह जैन नाम को लजाता है, महात्मा गांधीजी की सलाह तो है कि; प्रेम से मनाओ, भूलें बताओ, खड्डे खोखलों से बचाओ और उन खड्डों में गिरने वालों का हाथ पकड़ो, दलील से समझाओ ममत्व का नशा उतारकर बात गले उतारो, सत्यमत की प्रबलता से उस वेग को रोको परंतु बलात्कार मत करो।

समाज की सुव्यवस्था यह साधुओं की पहरेदारी का ही प्रता परिणाम है। समाज के नेता मुनिराज को निष्पक्षपात से उपरो सलाह देते रहने से ही साधुसमाज की कीर्ति ध्वजा पहरात रहेगी।

खुशामद यह गुप्त विष है। मनुष्य मात्र भूल का पात्र है भूल करने वाला फिर से ऐसी भूल न करे ऐसे समझाने वाले ए कर्तव्य अदा करने वाले को अपना शुभेच्छुक समझना चाहिये पर पक्षांध हो, की हुई भूल को छुपा गुन्हगारों को मदद करना गु बढ़ाने जैसा महापाप है. यह प्रवृत्ति तो अपराध करने वाले उत्तेजना के समान है। यह पक्षपात मोह श्रेष्ठ से श्रेष्ठ और सम मनुष्यों में भी गुप्त विष फैलाकर गिराकर कितना मत भेद उत्प करता है जिसके शोचनीय दृष्टांत अपनी आंखों आगे मौजूद हैं

रोगी को विश्वास दे पाल पपोल कर मर्म अंश प्रकट करे

शतावधानी पंडित श्री रत्नचन्द्रजी महाराज—मानिक-हीरा, पन्ना, परखने वाले जौहरी का मन कीमती रत्नों पर आकर्षित होता है उतना सूर्य के प्रकाशमें प्रकाशित काच के (या इमिटेशन जो सच्चे से भी बाह्य दिखावट में दि दिखते हैं) के तरफ नहीं आकर्षित होता।

टोंक में मिलाकर छोटी बड़ी १४ दुकानें थीं । जिसका किराया आता था तथा सरकार में तथा सरकारी फौज में लेनदेन का धंधा था चुन्नीलालजी सेठ प्रमाणिक और धर्मपरायण थे। एक सद्गृहस्थ के समस्त योग्य गुणों से अलंकृत थे।

लेख लगाया है और उसी भीम के पुत्र ने मारवाड़ में बहुत से नगर बसाये और उसीके उत्तराधिकारी जैन क्षत्रिय ओसवाल कहलाये हैं।

नोट नं० ५—मालवे के महाराज अवंति या उज्जैन अधीश्वर राजा भीम की बहुत सी प्रशंसा का वर्णन जैन ग्रन्थों पाया जाता है। उनके ही एक पुत्र ने मारवाड़ राज्य के अने स्थानों में नगर स्थापन किये और लूनी नदी से अरवली शिख तक स्थल के अनेक स्थानों में उनके द्वारा अनेक नगर स्थापि हुए। किन्तु उन नगरवासियों में से सब ही जैन धर्म में दीक्षि हुए। उनके उत्तराधिकारी लोग इस समय सब में अधिक धा शाली और वाणिज्य व्यवसायी महाजन नाम से विख्यात हैं। राजपूत-रक्तधारी होने से सर्वत्र गर्व करते हैं और उनको कि राजकीय पद पर नियुक्त करने पर वे लोग लेखिनी चलाने समान स्वच्छंदता से तलवार चलाने में भी समर्थ हैं। भाग पहि हिन्दी अनुवाद पृष्ठ ११३७-३७।

चुन्नीलाल सेठ की धर्मपत्नी का नाम चांदकुंवर बाई था । स चरित्र घटना के संप्रदार्थ पांच दिन तक टोंक में रह उस समय इन बाई के यशोगान इनके परिचित व्यक्तियों के मुख से सुने उतने विस्तार भय से यहां नहीं लिख सकते । ये बाई परि-

---

२—रामसिंह जैनधर्मावलम्बी और 'ओस' जाति के हैं । इस ओस जाति की संख्या सब रजवाड़ों में लगभग एक लाख के होगी और सबही अग्निकुल राजपूत वंश में उत्पन्न हुए हैं । इन्होंने बहुत काल पहिले जैन धर्मावलम्बन और मारवाड़ के अन्तर्गत ओसा नामक स्थान में रहना आरम्भ किया था तथा उस स्थान के नामानुसार ही ओसवाल नाम से विख्यात हुए ।

अग्निकुल के प्रमार व सोलंकी राजपूतशाखा के लोग ही सबसे पहिले जैनधर्म में दीक्षित हुए थे । भाग पहिला द्वि० खंड अध्याय २६ पृष्ठ ७२४–३५ ।

भारतवर्ष के ८४ जाति के व्यवसायिओं में ओसवाल गिनती से बहुत ज्यादह तथा विशेष द्रव्यवान हैं । वे प्रायः १ लाख हैं । ये ओसवाल इसलिये कहे जाते हैं कि इनके रहने का पूर्व स्थान ओसिया था । ये सर्व विशुद्ध राजपूत हैं इनमें एक ही समुदाय के नहीं हैं । परन्तु पंवार, सोलंकी, भाटी इत्यादि सब समुदाय हैं ।

व्रता और पतिव्रता की साक्षात् मुर्त्ति थी। उनका धार्मिक ज्ञान जितना बढ़ा चढ़ा था उतना ही उनका चरित्र भी अत्यन्त विशुद्ध था। इनका पिअर माधवपुर (जयपुर स्टेट) में था। इनके पिता सूरजमलजी और काका * देववक्षजी देश विख्यात श्रावक थे। देववक्षजी को २८ सूत्रों का अभ्यास था और सूरजमलजी भी शास्त्र के अच्छे ज्ञाता विवेकी और कर्त्तव्य निष्ठ थे। उन्हीं के ये गुण उनकी पुत्री को प्राप्त थे। दिन में दो वक्त सामायिक प्रतिक्रमण करना, गरीबों को गुप्त दान देना, तपश्चर्या करना, ज्ञानाभ्यास बढ़ाना आदि सत्प्रवृत्तियों से तथा शान्त स्वभाव, चतुराई, विवेक आदि सद्गुणों से चांदकुंवर बाई के प्रति सब का आदर भाव था। चुन्नीलालजी सेठ के बड़े भाई हीरालालजी वम्ब... वक्त कहते थे कि इनके पुण्य से ही हमारे कुटुम्ब चन्द्र की कला दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी है और इनके इस घर में पांव रखते ही ऋद्धि सिद्धि की भी वृद्धि हुई है।

चांदकुंवर बाई ने सामायिक प्रतिक्रमण तथा कितने ही थोकड़े को लगन के होने पहिले ही सीख लिये थे। लगन होने के पश्चात्

---

* देववक्षजी के पौत्र लक्ष्मीचन्दजी कि जो वर्तमान में विद्यमान हैं उनने श्रीलालजी को दीक्षा की आज्ञा के निमित्त आ... [illegible]

र्यजी के सहवास से उनने धार्मिक-ज्ञान में वृद्धि की। उनके प्रत्याख्यान चारों स्कन्ध उनकी जिन्दगी के अन्तिम समय तक रहे। साधु साध्वियों के प्रति उनका अनुपम पूज्य भाव था। आहार पानी वहराने के समय कदाचित् कुछ असूझता हो जाता तो वे उस दिन आहार न करती थीं सारांश इन सती साध्वी का चरित्र अतिशय स्तुतिपात्र था, स्तुतिपात्र ही नहीं परन्तु भक्तिपात्र भी था।

इन निर्मलहृदय रत्नप्रसूता स्त्री के उदर से गंगाबाई नामक पुत्री और नाथूलालजी नामक एक पुत्र का प्रसव होने के पश्चात् विक्रम सं० १९२६ के आषाढ मास वद्य १२ को एक पुत्र का जन्म हुआ। जगत् में पुत्र जन्म का सरीखा आनन्द तो सभी माताओं को प्राप्त होता है परन्तु वही माता आनन्द सफल समझती है कि जिसका पुत्र उसके दूध को दिपाता है और कुल को प्रकाशित करता है।

श्रीमती चांदकुंवर बाई ने * शुभ स्वप्न सूचित एक ऐसे पुत्रका प्रसव किया कि जो पवित्रात्मा, धर्मात्मा, महात्मा और वीरात्मा के

---

* श्रीलालजी को माता के गर्भ में उत्पन्न हुए तीन चार महीने बीते थे कि एक समय माजी साहिबा चांदनी में सोई थीं।

सदृश विश्व में प्रख्यात हुआ। जबतक जीवित रहे इस पृथ्वी
चन्द्र की तरह अमृत बर्षाते रहे, शीतलता प्रवाहित करते रहे
अनेक भव्यात्माओं के हृदय-कमल को विकसित करते र
जिनका नाम श्रीलाल रक्खा गया। पुत्र के लक्षण पालने में दिख
सूर्य के प्रकट होते ही उसकी सुनहरी किरणें ऊंचे से ऊंचे
के मस्तक पर जा बैठती हैं इसी तरह इस बालक की प्रतिभ
आप्त जनों के अन्तःकरण में उच्च स्थान प्राप्त किया था। इ
तेजस्विता, मनोहर वदन, शरीर की भव्याकृति, विशाल
प्रकाशित नेत्र इत्यादि लक्षण स्वाभाविक रीति से ऐसी सूचना
थे कि यह बालक आगे जाकर कोई महान् पुरुष निकलेगा।

सूर्यास्त हुए थोड़ा ही समय बीता था। उस समय उन्हें स्वप्नाव
में एक देदीप्यमान कांतिवाला गोला दूर से अपनी ओर
हुआ दिखाई दिया। थोड़े ही समय में वह बिल्कुल समीप
पहुंचा। ज्यों २ वह समीप आता गया त्यों २ उसका प्रकाश
बढ़ता गया। माजी आश्चर्य चकित हो गई प्रकाश के मध्य
कोई मूर्त्ति मानो कुछ कह रही हो ऐसा भास हुआ परन्तु अस
रण प्रकाश से उनके हृदय पर इतना अधिक क्षोभ हुआ कि
ने क्या कहा उसकी स्मृति न रही धड़कती छाती से वे जग
और पति के पास जाकर सब हकीकत निवेदन की।

श्रीलालजी बालक थे तब उनकी माता उन्हें साथ लेकर
ानक में श्रीमेताजी तथा गेंदाजी नामक विदुषी और निर्मल
ारित्र वाली सतियों के पास शास्त्राध्ययन करने के लिये निरन्तर
ाया करती थीं। उनके पवित्र संवाद का पवित्र असर उनके हृदय
र बाल्यावस्था से ही गिरने लग गया था। उस समय टोंक में
ूज्य श्री हुक्मचन्द्रजी महाराज की सम्प्रदाय के सुसाधु तपस्वीजी
ीपन्नालालजी (पूज्य श्रीचौथमलजी के गुरु भाई) तथा गंभीर-
लजी महाराज विराजते थे। अपने पिता के साथ उनके पास भी
ाने का अवसर श्रीलालजी को कभी २ मिलता था। पन्नालालजी
हाराज बड़े आत्मार्थी, सुपात्र, समय के ज्ञाता और विद्वान् साधु
। एक से लगाकर ६१ उपवास तक के थोक उन्होंने किये थे।
न दोनों सत्पुरुषों का सत्समागम श्री श्रीलालजी के जीवन को
उत्कर्षाभिमुख करने में महान् आधार भूत हुआ।

बाल्यावस्था से ही साधु और आर्याजी की ओर अप्रतिम
ेमभाव और अनुपम भक्तिभाव था। जब वे पांच वर्ष के थे तब
और बालकों की रम्मत की तरह श्रीलालजी भी ऐसी रम्मत करते
थे कि कपड़े की झोली बनाते, मिट्टी की कुलड़ियों के पात्र बनाते,
मुंह पर वस्त्र बांधते, हाथ में शास्त्र के बदले कागज लेते और
व्याख्यान बांचते ऐसा दृश्य दिखाते थे। इस स्थिति में उन्हें देख-

कर कोई प्रश्न करता कि श्रीजी ! लाडी परणोगा के दीक्षा लोगा तो प्रत्युत्तर में वे कहते कि " मैं तो दीक्षा लऊंगा शा ! " पूर्व जन्म के संस्कार बिना लघुवय से ही ऐसे सुविचारों की स्फुरण होना अशक्य है। यह खबर उनके पिताजी को मालूम होते ही उन्होंने ऐसा खेल न खेलने को फरमाया और विनीत पुत्र ने फिर से वैसा करना थोड़े वर्षों के लिये परित्याग किया।

छठे वर्ष के प्रारम्भ में श्रीलालजी को व्यवहारिक शिक्षा देना प्रारम्भ किया गया परन्तु धार्मिक शिक्षा का प्रारम्भ तो पहिले से ही उनकी सुशिक्षिता और कर्त्तव्यपरायण माता की ओर से हो चुका था। छः वर्ष इतनी कम उम्र में उन्होंने माता के पास से सामायिक प्रतिक्रमण सम्पूर्ण सीख लिया था सिर्फ श्रीलालजी को ही नहीं अपनी तीनों * सन्तानों को इसी तरह धार्मिक अभ्यास

---

* श्रीजी के ज्येष्ट भ्राता श्रीयुत नाथूलालजी बम्ब अभी वर्तमान हैं। उनके कुटुम्ब में आज भी कितना धर्मानुराग है उसका किंचित् परिचय देना आवश्यक है। सं० १६७७ के द्वितीय श्रावण वद्य ११ के रोज स्व० पूज्य श्रीजी की जीवन घटना के संग्रहार्थ हम टोंक गये थे और श्रीयुत नाथूलालजी बम्ब के यहां पांच दिन तक रहे थे। वे रात दिन हमारे पास बैठकर सोच २ कर हमें

... होने के पश्चात् नीति अर्थात् सामान्य धर्म की उच्च शिक्षा ...
...ई ने दी थी। " एक अच्छी माता सौ शिक्षकों की आवश्यकता ...
...ती है "। इस कहावत को उन्होंने चरितार्थ कर दिया था।
...आर्यावर्त ऐसी माताओं के पदरज से सदा पवित्र बना रहे इसी
...री भावना है।

टोंक में सरकारी एवं खानगी दोनों प्रकार के स्कूल थे परन्तु
...नगी स्कूलों की शिक्षा विशेष व्यवहारोपयोगी समझ श्रीलालजी
...में विगत लिखाते थे। उनके पास भी कई मुख्य २ बातें विगतवार
...खी थीं।

श्रीयुत नाथूलालजी एक आदर्श श्रावक हैं। उन्होंने चारों ...
...ये हैं तथा और भी कई व्रत प्रत्याख्यान लिये हैं। रोज तीन
...मायिक करने का उनके नियम है। वे विवेकी, धर्मप्रेमी और मुला-
(मृदु) स्वभाव वाले हैं। ५७ वर्ष की उम्र होते भी वे एक
...की तरह कार्य करते हैं। उनके चार पुत्र हैं, बड़े पुत्र माणिक-
...ी भी वैसे ही सुयोग्य हैं। श्रीयुत नाथूलालजी के पुत्र पौत्रों
...सारे कुटुम्ब का धर्मानुराग प्रशंसनीय है। टोंक में उनकी
...ी दूकान बहुत अच्छी चलती है तो भी सेठ नाथूलालजी
...पार से धर्म व्यापार में विशेष लक्ष देते हैं।

को हिन्दी सिखाने के लिये पंडित मूलचन्दजी नामक एक अध्यापक के स्कूल में रक्खा और उर्दू शिक्षार्थ हाजी अब्दुल के स्कूल में भेजना प्रारम्भ किया। विद्याभ्यास की ओर स्वाभाविक अभिरुचि बालवय से ही थी। इससे अपने सा यियों की स्पर्धा में श्रीलालजी ने आगे नम्बर मिला, अपने का प्रेम सम्पादन किया। उनकी स्मरणशक्ति इतनी तीव्र थ उनके शिक्षकों को बड़ा आश्चर्य होता था।

स्कूल में सत्यवक्ता, सरल स्वभावी और प्रामाणिक वि की तरह इनकी कीर्त्ति थी। विद्यागुरुओं के वे प्रीतिपात्र विश्वासी थे। श्रीलालजी के उच्च गुणों से मुग्ध हुए सहा उनसे पुर्ण प्रेम रखते थे और सम्मान देते थे। इतना ही परन्तु उनके नाना गुणों की सब कोई विशुद्धभाव से श्लाघा थे। अपने विद्यागुरु की ओर श्रीलालजी का प्रेमभाव भी प्र पात्र था और शाला छोड़ने के पश्चात् भी वैसा ही प्रेम कायम इसका एक उदाहरण यहां देते हैं।

सं० १९४४ में अपनी अठारह वर्ष की अवस्था में उन्होंने अपने मित्र गुजरमलजी पोरवाल के साथ स्वयं अंगीकृत की तब उन्हें प्रायः सात तोले की एक सोने की अध्यापक महाशय को इनायत की थी।

श्रीलालजी स्कूल में हिन्दी तथा उर्दू अभ्यास करते थे और
...का धार्मिक अभ्यास भी शुरू ही था तो भी आश्चर्य यह था
... वे स्कूल में हमेशा उच्च नम्बर रखते थे और अभ्यास में भी
...से आगे रहते थे। तपस्वीजी श्रीपन्नालालजी तथा गम्भीरमलजी
...राज के पास निवृत्ति के समय वे जाते और पच्चीस बोल,
...तत्व, लघुदंड, गतागत, गुणस्थान, क्रमारोह आदि अनेक विषय
...था साधु का प्रतिक्रमण प्रभृति कंठस्थ करते थे। धार्मिक अभ्यास
...ने में उनके एक मित्र वच्छराजजी पोरवाल कि जो अभी विद्य-
...न हैं उनके सहाध्यायी थे। दोनों साथ २ अभ्यास करते थे।
...युत वच्छराजजी कहते हैं कि जब हम साधु का प्रतिक्रमण
...खते थे तब महाराज मुझे जो पाठ देते उसे सिर्फ सुनकर ही
...लालजी कंठस्थ कर लेते थे और मुझे वही पाठ बारंबार रटना
...ड़ता था इतनी अधिक उनकी स्मरणशक्ति तीव्र थी।

श्रीलालजी का शरीर नीरोगी और सुदृढ था। जन्म से ही वे
...नके दूसरे भाइयों से अधिक मजबूत थे। सहन शीलता, निर्भयता
...हसिकवृत्ति दृढनिश्चय किया हुआ कार्य पूर्ण करने की उत्कंठा
...साह और सत्याग्रह इत्यादि गुण बाल्यावस्था से ही उनमें प्रका-
...त थे, शुक्ल पक्ष के चंद्रकी तरह उनकी बुद्धि के साथ उपर्युक्त
...ों का प्रकाश भी बढ़ता गया जिसके अनेकानेक

उदाहरण इन महापुरुष के जीवनचरित्र में स्थान स्थान दृश्यमान हैं।

श्रीलालजी का स्वभाव बहुतही कोमल और प्रेम पूर्ण है उनके बालस्नेहियों की संख्या भी अधिक थी। उनके साथ इ वर्ताव बड़ाही उदार था। श्रीलालजी के उत्तम गुणोंकी छाप मित्र पर जादूसा असर करती थी वच्छराजजी और गुजरमलजी पो ये दोनों उनके खास मित्र थे। श्रीलालजी के वैराग्यसे इन मित्रों के हृदय पट पर गहरी छाप लगी थी. और इसीसे उन्हों उनके साथ संसार परित्याग कर आत्मोन्नति साधन करने का संकल्प किया था. परन्तु पीछे से वच्छराजजी को आज्ञा न मिल इसी तरह संयोगों की प्रतिकूलता होने से दीक्षा न ले सके। गुजरमलजी ने श्रीलालजी के साथ ही दीक्षा ली। श्रीलालजी के इनका अत्यन्त पूज्यभाव था।

स्कूल के श्रीलालजी के सहाध्यायी उन्हें इतना चाहते थे जब वे स्कूल छोड़कर अलग हुए तब आंखों में अश्रु लाकर रु करने लगे थे. उनके मित्र उनका वियोग सहन नहीं कर सके उनकी सत्यनिष्ठा, कर्तव्यपरायणता, और प्रेम मय स्वभाव से उन मित्रों का हृदय द्रवीभूत होता था। परन्तु उन्हें विशेषतः वशीभू करने वाला कारण उनका समागम था. श्रीलालजीका हृदय इन

...ाधिक कोमल था कि, वे किसीका दिल दुखे ऐसा एक शब्द भी ...हते डरते थे और कचित् उनके कोई शब्द या किसी प्रवृत्ति से ...सरों का दिल दुख गया ऐसा भाव होते ही तत्काल आकर ...क्षमा प्रार्थी होते थे, ये श्लाघ्य सद्गुण उनकी धीर माता की तरफ ...से उन्हें प्राप्त हुए थे। श्रीलालजी की किसी के साथ वैर भाव न था, शत्रुता थी तो सिर्फ मनुष्य के ...शरीरमें मित्रकी तरह रहते हुए शत्रुका काम करने वाले आत्म-...शत्रु से थी—श्रीलालजी का क्षमागुण उनकी महत्ता बढ़ाता था, ...इतनाही नहीं किंतु ऊपर कहे अनुसार वशीकरण मंत्रकी आवश्य-...कता भी पूरता था। इस उत्तम गुण द्वारा वे परिचित व्यक्तियों पर ...विजय प्राप्त कर सकते थे। (क्षमावशीकृते लोके, क्षमया किं न ...सेध्यति!) अर्थात् यह संसार क्षमा द्वारा वशी है अतः क्षमा ...द्वारा क्या सिद्ध नहीं हो सकता? अर्थात् सब मनःकामना सिद्ध ...होती है।

सं. १९३२ के भाद्र शुक्ल ५ के रोज जयपुर अंतर्गत दुनी ...क ग्राम निवासी बालावक्षजी नाम के सुश्रावक की पुत्री, मान-...बाई के साथ श्रीलालजी का सम्बन्ध किया गया। उस समय ...जी की उम्र ६ वर्ष की और मानकुंवर बाई की उम्र ४ ...थी।

अध्याय २रा

विवाह और विरक्तता

सं १९३५ में श्रीलालजी ने शाला छोडी और अब ...
ज्ञान की अभिवृद्धि के लिए अधिक उद्यम करने लगे। इ
वर्ष अर्थात् सं १९३६ के आषाढ़ माह में इनके पिता
चुन्नीलालजी स्वर्ग पधारे। पिताजी के स्वर्गवास के पांच मास प
सं १९३६ के मार्गशीर्ष बद २ को श्रीलालजी का व्याह हुआ
उस समय इनकी उम्र १० वर्ष की पूरी होकर ११ वां वर्ष
था और इनकी भार्याको ९ वां वर्ष लगा था। राजपूतानेमें बाललग्न
अत्यन्त हानिकारक रिवाज आज से भी उस समय अधि
प्रचलित था इस प्रथा को मिटाने के लिए श्रीलालजी ने दीक्षि
हुए पश्चात् सतत उपदेश दिया। जिसका कुछ ही परिणाम
जैनियों में दृष्टिगोचर होता है।

श्रीलालजी की बरात टोंक से टुनी आई। उस समय प्राकृ
किसी अदृश्य अकल आकर्षण के प्रभाव से उनके परमोप
धर्मगुरु तपस्वीजी श्रीपन्नालालजी तथा गंभीरमलजी मह
भी इधर उधर से विहार करते २ टुनी पधार गए। ये शुभ स

नते ही वरराज के रोमांच विकसित होगये और अति आतुरता
साथ गुरुश्री के दर्शनार्थ उपाश्रय गए।

मारवाड़ में वरराजा के हाथ मदनफल के साथ दूसरी भी चीजें
क वस्त्र में लपेट कर बांधने की प्रथा प्रचलित है इसमें राई के
ने भी होते हैं राई सचेत होने से साधु मुनिराजों का सचेत
स्तु सहित संघट्टा नहीं कर सकते तो भी भक्ति के आवेश में आये
ए श्रीलालजी का हृदय गुरु के चरण स्पर्श करने का विवेक न
ाग सका। वरराज ने सचेत वस्तु सहित अपने गुरु के चरण
मल का स्पर्श किया इस अपराध (!) के कारण साथ वाले
वक भाई एक के पश्चात् एक इन्हें उपालंभ देने लगे, तब तपस्वीजी
हाराज ने कहा कि आप इनके भक्तिभाव, धर्मप्रेम और उत्साह
ी ओर तनिक ध्यान देओ और वरराज को बिल्कुल घबरा ही
त डालो। इस प्रकार लोगों को उपदेश दे शांत किये और वरराज
ो सम्बोधन कर कुछ बोधप्रद वचन कहे। इन वचनों ने श्रीजी
हृदय पट पर जादू सा असर उत्पन्न किया।

श्रीलालजी के लग्न समय चुन्नीलालजी के ज्येष्ठ भ्राता हीरा-
लजी तथा श्रीलालजी के ज्येष्ठ बन्धु नाथूलालजी प्रभृति कुटुम्बी-
न आनन्दोत्सव में लीन थे। उनके हृदय आनन्द में मग्न थे,
र श्रीलालजी के हृदयकमल पर उदासीनता छा रही थी। पूर्व

जन्म के शुभ संस्कारों के प्रभाव से बालवय में ही वैराग्य बीज अंकुरित हुए थे और जिन वाणीरूपी अमृ[illegible] जल का बा[illegible] सींचन होने से अब वह वैराग्य वृक्ष विशेष पल्लवित हो बढ़ [illegible] और उसका मूल भी गहरा पैठ गया था तो भी अनिच्छा से [illegible] की आज्ञा चुप रह कर शिरोधार्य करते रहे। उनकी यह प्र[illegible] शायद पाठकों को अरुचि कर होगी और यही प्रश्न मन में उठे[illegible] कि ब्याह न करना ही क्या बुरा था? परन्तु कर्म के अचल का[illegible] के आगे सबको सिर झुकाना पड़ता है और प्राकृतिक सर्व कृ[illegible] सर्वदा हेतुयुक्त ही होती हैं। श्रीमती मानकुंवर बाई के श्रेयस[illegible] मार्ग भी इसी प्रकार प्रकट होना विधि ने निर्माण किया हो[illegible] श्रीमती को श्रीमती चांदकुंवर बाई जैसी सुशिक्षिता सास के [illegible] से उत्तम उपदेश (शिक्षा) सम्पादन करने का सुयोग प्रा[illegible] और पवित्र जीवन व्यतीत कर दीक्षिता हो छः वर्ष तक सं[illegible] पाल पति से पहिले स्वर्ग में पधारने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, [illegible] भी इसी प्रवृत्ति से परिणाम हुआ ऐसा अनुमान करना अनुचित [illegible] ऐसा कोई कह सकेगा? हां! श्रीलालजी का हृदय उस सम[illegible] रंग से रंगा हुआ था और ज्ञानाभ्यास की उन्हें अपरिमित पिपास[illegible] थी यह बात निर्विवाद है परन्तु दीक्षा लेने का दृढ़ निश्चय [illegible] समय था या नहीं यह निश्चयात्मक रीति से नहीं कह सकते।

लग्न के समय मानकुंवर बाई की वय बहुत छोटी अर्थात्
आठ नौं वर्ष की थी। इसलिये वे उसी समय पिअर गई और
वर्ष तक वे पिअर में ही रहीं। मारवाड़ में प्रथा है कि योग्य
होने के पश्चात् गोना देते हैं परन्तु जो लग्नादि कोई प्रसंग
ह में हो तो थोड़े दिन के लिये नववधू को बुला लेते हैं। परन्तु
श्रीलालजी के लग्न हुए पश्चात् ऐसा कोई खास अवसर न आया
जिससे मानकुंवर बाई तीन वर्ष पितृगृह में ही रहीं।

इधर श्रीलालजी का वैराग्य बढ़ता ही गया। संसार पर
अरुचि हुई। व्यापारादि में उनका चित्त न लगता। ज्ञानाध्ययन
सत्समागम में और धर्मध्यान करने में ही वे निरन्तर दत्तचित्त
रहने लगे। तपस्वीजी पन्नालालजी तथा गम्भीरमलजी के सत्संग
और सदुपदेश का इनके चित्त पर भारी प्रभाव गिरा। उनके पास
ज्ञानाध्ययन करने में ही वे अपने समय का सदुपयोग करते थे।

श्रीजी बारह वर्ष के थे तब एक दिन वे सामायिक व्रत कर
श्रीगंभीरमलजी का व्याख्यान प्रेमपूर्वक सुन रहे थे इतने
र निवासी श्रीयुत चुन्नीलालजी द्वारा कि, जो रतलाम
मचन्दजी दीपचन्दजी की टोंक की दुकान पर मुनीम थे,
न में आये। चुन्नीलालजी शास्त्र के ज्ञाता, श्रीमान्, वृद्ध
न् और वयोवृद्ध श्रावक थे। सामुद्रिक और ज्योतिष

शास्त्र में भी उनका ज्ञान प्रशंसनीय था। वे भी श्रीजी की
में ही सामायिक करके बैठे थे। अकस्मात् उनकी दृष्टि श्रीला
पर पड़ी। श्रीजी के शारीरिक लक्षण को बार २ निरखने लगे।
व्याख्यान पूर्ण होने पश्चात् अपनी कोठी पर गए और भोजन
से निवृत्त हो दुकान पर आये। थोड़े समय पश्चात् हीरालाल
जी भी कार्यवशात् चुन्नीलालजी डागा की दुकान पर गए,
चुन्नीलालजी डागा हीरालालजी से कहने लगे कि "श्री
आज प्रातःकाल व्याख्यान में मेरे पास ही बैठा था। उसके शारी
रिक लक्षण मैंने तपास कर देखे। मुझे आश्चर्य होता है कि
तुम्हारे घर में गोदड़ी में गोरख क्यों? यह कोई साधारण मनुष्य
नहीं। परन्तु बड़ा संस्कारी जीव है। सामुद्रिक शास्त्र सच्चा है
और मेरे गुरु की ओर से मिली हुई प्रसादी सच्ची हो तो मैं
छाती ठोककर कहता हूं कि यह तुम्हारा भतीजा आगे जाकर
कोई महान् पुरुष निकलेगा। जहां तक मेरी बुद्धि पहुंच सकी वहां
तक मैंने गहन विचार किया तो मैंने यही सार निकाला कि यह
रकम तुम्हारे घर में रहना मुश्किल है।" श्रीयुत हीरालालजी तो
ये शब्द सुनकर स्तब्ध ही हो गए।

कई समय श्रीजी शहर के बाहर निकलकर पास के पर्वतों
पर चले जाते और वहां घंटों ठहरते। वहां के नैसर्गिक दृश्य और

मेवाड़ के नामदार महाराणा श्री के मुख्य सलाहकार और पूज्यश्री का परम भक्त श्रीमान् कोठारीजी श्री बलवंत-सिंहजी साहिब, श्री उदयपुर.

टोंकनी रसीया टेकरीपर संसारी श्रीलालजी.

परिचय-प्रकरण-२-३

ाकृतिक अपार लीला देखते २ मस्तिष्क में एक के पश्चात् एक
ये २ विचार तरंगें लाते। वहां पर कोई २ समय तो तत्व
ंतन में ऐसे निमग्न हो जाते कि कितना समय हुआ यह भान
ो नहीं रहता। श्रीजी कहा करते कि पर्वत पर का निवास मुझे
ड़ा भला लगता था। घर में भी वे अपनी तीन मंजिल वाली
ंची हवेली में ※ चांदनी पर विशेषतः अपनी बैठक रखते।
ाहर के बिल्कुल समीप नेत्रों को परमोत्साह देने वाली पर्वतश्रेणियां
हां से भी दृष्टिगोचर होती थीं। टोंक के समीप की ऊंची
ेतिहासिक रसिया की टेकरी मानो तत्ववेत्ताओं का सिंहासन हो
सा आभास दिखाती और अपनी पीठ पर आराम लेने के वास्ते
ीजी को पुनः २ आमन्त्रित करती हुई मालूम होती थी। श्रीजी
ो इस आमन्त्रण को पुनः २ स्वीकारते और उत्साह से उसके
तुंग शृंग पर चढ़ते। आसपास का अनुपम सृष्टिसौंदर्य उनके
्त मस्तिष्क को शांति देता। विशाल वृक्षों के पल्लव पंखे का
ाम कर आतिथ्य धर्म बजाते, कोयलों की मीठी कुहुक और मयूरों
ा माधुर्य केकारव रूपी संगीत आगत मिहमान का मनोरंजन
रते, परिमल फैलाता हुआ ठंडा स्वच्छ समीर चारों ओर फैली
२ अपूर्व शान्ति और प्राकृतिक अद्भुत कलाओं का प्रदर्शन

※ देखो इनके मकान का चित्र।

अमित मगज़ को तर कर देने में परस्पर स्पर्द्धा करते थे। आबू उत्पन्न और अरवली तथा उदयपुर ✽ के तालाब का पानी पी पुष्ट हुआ बनास नामक विशाल सरित्प्रवाह अनेक आश्रितों शान्ति देता। अपने उभय तट पर खड़े आम्रादि वृक्षों को पोष और परोपकार परायण जीवन बिताने का अमूल्य बोधप सिखाता, धामी गति से बहता था। आम्रवृक्ष फल आने पर आधि नीचे झुक विनय का पाठ सिखाते और अपने मिष्ट फलों द्वा दुनियां में परमार्थ बुद्धि की प्रभावना करने को ही उत्पन्न हुए हों ऐसी प्रतीति दिलाते थे। एक बाजू पर लगे हुए बट वृक्ष पर दृष्टि गिर ही यह सूचना मिलती थी कि राई जैसे बीज से ऐसी बड़ी वस्तु हो जाती है। संसार में जरा फंसे तो अंगुली पकड़ते पहुंच पकड़ेंगे।

संसार में फंसते हुए को बचाने का उपदेश देने वाले बट का आभार मानते। श्रीजी के तात्विक विचार भावी जीवन इमारत की नींव दृढ करते थे। कठिन पत्थरों से टकरा कर आव करने वाली सरिता के तट पर रसेन्द्रिय की लोलुपता के कारण

✽ उदयपुर के सरोवर से निकली हुई बड़च नदी बनास ना मिलती है।

...ो भोग दी हुई तड़फती मछलियां कदाचित् उनके दृष्टिगत होती ...व इन्द्रियों के वश न करने वाले विचारों को पुष्टि मिलती थी ...ता।

सूर्यास्त पहिले पहुंचने की तेजी में नीचे उतरते सामने ही ...ल झाड़ दिखते, फैला हुआ पराग मगज को तर करना, परन्तु ...टे हुए अंकुर, खिली हुई कलियां, फूले हुए फूल और नीचे गिर ...ए, मिट्टी में मिले कुम्हलाये हुए पुष्प जीवन की बाल, युवा, ...ढा और वृद्धावस्था तथा जीवन मृत्यु का प्रत्यक्ष चित्र खड़ा करते ...ौर श्रीजी प्रकृति की समस्त कलाएं देखते, पास के पत्थर पर बैठ ...ते थे। प्रत्येक पत्थर, प्रत्येक पान और भूविहारी प्रत्येक पक्षी, ...नो स्वार्थमय और परिवर्तनशील संसार का नाटक करते हों ऐसा ...लूम होता था। समीप में बहते हुए झरने को मानो जीभ आई ...े उस तरह पत्थर के साथ का विवाद इस नाटक में संगीत का ...कार्यकर्त्ता था "जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि" इस नैसर्गिक नियमानुस... ...ीं सब दृश्य और सब घटनाएं श्रीजी को वैराग्य की ही शि... ...ती थीं।

प्रकृति की रचनाओं ने मस्तिष्क के परमाणुओं पर इतनी ...ल सत्ता जमा ली थी कि राह में भी वे ही विचार स्फुरित रहते थे।

"सुशोभित ने सुगंधी छे छतां कांटा गुलाबे के,
पूरा प्रेमी पपैयाने, तृषातुर केम राखे छे
मनोहर कंठनी कोयल करी कां तेहने काली ?
हलाहल झेर छे जेमां सफेदी सामले मूकी
रूडो रजनी तणो राजा, कलंकित चन्द्र कां कीधो,
बनाल्यो केम क्षयरोगी ? अरे अपवाद कां दीधो

— मणिकांत

प्रकृति की अमूल्य शिक्षा से श्रीजी के हृदय में वृद्धि हुआ वैराग्य भाव उनकी कोमलता और सत्यप्रियता के ... बचन और व्यवहार में भी व्यक्त होने लगा। केवल मित्रों से ... नहीं परन्तु अब तो माता और भ्राता के समक्ष भी मानवजीव... की दुर्लभता, संसार की असारता और साधु जीवन की श्रेष्ठता इस ... आशय के वाक्य श्रीजी के मुखारबिंद से पुनः २ निकलने लगे। गृहकार्य में तनिक भी ध्यान न देते केवल सत्समागम ... ध्ययन और एकान्तवास में ही वे समय बिताने लगे।

श्रीलालजी की यह सब प्रवृत्ति और संसार की ओर से उ... सीन वृत्ति देख उनकी माता प्रभृति सम्बन्धीजन के चित्त खिन्न हुए। जो माता अपने पुत्र का धर्म पर अति अनुराग देख...

म आल्हादित होती थी, वही माता पुत्र के वैराग्यमय वचनामृत आज सुनना नहीं चाहती। उसका धर्ममय व्यवहार उन्हें अति अरुचिकर—अस्वस्थकर मालूम होने लगा। साधु साध्वी की सेवा शुश्रूषा तथा उनकी सत्संगति में रहना ही जिसने अपना कर्त्तव्य बना लिया है वही साध्वी भी सांसारिक मोह के कारण अपने पुत्र का साधुओं के सत्संग में रहना नहीं देख सकती। उनका अन्तःकरण उनका सत्संग छुड़ाना चाहता है। सांसारिक प्रेम गांठ उनके मन में घोटाला किया करती है परन्तु वे अपने अभिप्रायों को स्पष्ट शब्दों में पुत्र के सामने व्यक्त नहीं कर सकती थीं। अहा! यह संसार के राग का कितना अधिक प्राबल्य है।

अध्यापक गेटसे के किये हुए प्रयोगों से सिद्ध हुआ है कि:—
[illegible]री वृत्तियां पुष्टिकारक रासायनिकतत्व उत्पन्न करती हैं। शरीर [illegible] परमाणुओं को शक्ति उत्पन्न करने के लिये उत्तेजित करती [illegible]हती है। क्रोध, घृणा और दूसरी दुर्वृत्तियां शरीर में हानिकारक [illegible]श्रण बनावट उत्पन्न करती हैं जिसमें से कितने ही अत्यन्त [illegible]हरीले होते हैं। प्रत्येक दुर्वृत्ति शरीर में रासायनिक हेरफेर करती [illegible]। मन में उत्पन्न हर एक विचार मस्तिष्क के परमाणुओं की [illegible]चना में हेरफेर करते हैं और यह परिवर्तन कुछ न कुछ अंश में [illegible]स्थित ही रहता है।

माता और भ्राता इत्यादि कुटुम्बी जनों को इस समय सि
एक ही विचार आश्वासन देता था । वे ऐसा मानते थे कि, इन
बहु के यहां आने पर इनके विचारों में परिवर्तन हो जायगा
इसी आशा में वे योंही दिन बिताने लगे ।

आशा यही रागपाश में फंसे हुए प्राणियों की प्राणदायिनी
बूटी है । यह मनुष्य के मानसिक प्रदेश में प्रविष्ट हो भविष्य के
लिये नई २ रम्य इमारतें चुनती है और आश्रितों को आश्वासन
देती रहती है ।

सं० १९३९ में श्रीजी की धर्मपत्नी मानकुंवर बाई को द
से गोना ले टोंक ले आये, उस समय उनकी उम्र १२-१३ व
की थी । पुत्रवधू के आगमन से सास का हृदय आनन्द से उभ
गया और उन्हें उनके विनयादि गुण और योग्यता देखकर
अपनी आशा सफल होने के संकेत मालूम हुए । श्रीजी के स
ध्यायी मित्र भी उसकी परीक्षा करना चाहते थे कि, श्रीजी का वैरा
पतंग के रंग जैसा क्षणिक है या मजीठ के रंग जैसा है ।
परीक्षा का क्या परिणाम होता है तथा श्रीजी के कुटुम्बादिक
की आशा कितने अंश तक सफल होती है यह अब देखना है

श्रीजी ने कई वचनामृत जेब में रखने की छोटी पुस्तिका

...तार लिये थे उनमें से नीचे के वचनामृत का ... ...
...या करते थे।

प्रियास्नेहो यस्मिन्निगडसदृशो यामिकभटा
यमः स्वीयो वर्गो धनमभिनवं बन्धनमिव।
सदाऽमेध्यापूर्णं व्यसनविलसंसर्गविषमं
भवः कारागेहं तदिह न रतिः क्वापि विदुषाम्।

भावार्थ—संसार में स्त्रियों का स्नेह ... ...
भटकते हुए गोधे जैसा है। अपना कुटुम्ब ... ...
न, लक्ष्मी नई जात की बेड़ी के समान है ... ...
वस्तुओं से लीन दुःखदाई दोनों के ... ... है।
सार यह सचमुच कारागृह ही है और ... ...
ति इसके किसी स्थल पर भी नहीं ... ...

अध्याय ३ रा।

भीषण प्रतिज्ञा।

श्रीजी नित्य की तरह अपने परोपकारी गुरुवर्य का व्याख्यान आज भी प्रेमपूर्वक सुन रहे हैं। वीर प्रभु की अमृत मय वाणी के पान से श्रोताजनों के हृदय भी आनंद से झलकने लगते हैं। व्याख्यान में आज ब्रह्मचर्य का विषय है। ब्रह्मचर्य सब सद्गुणों का नायक है, ब्रह्मचर्य स्वर्ग मोक्ष का दायक है, ब्रह्मचारी भगवान के समान है, देव, दानव, गंधर्व, यक्ष, राक्षस, किन्नर और बड़े २ चक्रवर्ती राजा भी ब्रह्मचारी के चरण कमल में सिर झुकाते हैं और उनकी पूजा करते हैं इत्यादि सार से भरी हुई सूत्र की गाथाएँ एकके पश्चात् एक पढ़ी जाती है और रहस्य समझाया जाता है। बीच २ में नेमनाथ, राजेमती, जम्बू कुंवार विजय सेठ, विजयारानी इत्यादि आदर्श ब्रह्मचारियों के दृष्टान्त भी दिये जाते हैं और उनके यशोगान गाये जाते हैं।

एक ब्रह्मचारी पूज्य पुरुष के मुखारविन्द से ब्रह्मचर्य धर्म की इस प्रकार अपार महिमा सुन श्रीजी के हृदय सागर में इच्छाओं की तरंगें उठने लगीं, तरंगों से क्षुभित महासागर की तरह उन

न्तःकरण विचारतरंगों से भर गया और व्याख्यान पूर्ण होते ही
ानपान की परवाह त्याग अपनी पूर्व परिचित-प्रिय टेकरी की ओर
याण किया, वहां एकांत में एक शिला पट पर बैठ कर वे
चार करने लगे " एक छोटी बाल वय की सुकुमार कन्या का
थ पकड़कर मैं यहां ले आया हूं. मुझे समझाते हैं कि उनका मन
ाड़ना महापाप है तो जम्बूकुमार का मोक्ष होना असंभव है
र्थंकर पद प्राप्त श्रीनेमनाथ भगवान् ने भी ऐसा क्यों किया ?
हृदय में उस पर दया है, अनुकम्पा है। मेरे संसार त्यागने से
हें कितना महान् कष्ट होगा यह सब मैं जानता हूं, परन्तु एक ही
क्ति की दया के कारण अनंत पुण्योदय से प्राप्त और अनंत
ों की भ्रमणता से मुक्त करने की सामर्थ रखने वाला यह मनुष्य
न्म कि जो देवों को भी दुर्लभ है मुझे हार जाना चाहिये क्या?
ुभ भोग रूपी कीच में इसे नष्ट भ्रष्ट कर डालना मेरु जैसी भूल
होना है। जिंदगी का पल भर भी विश्वास नहीं और यौवन तो
ार दिन की चांदनी है यह विद्युत् के चमत्कार की नांई क्षणिक
क्षण भर चमक लुप्त हो जायगा, एक पुल पर से वेग से जाने
ी ट्रेन को जाते हुए देर नहीं लगती, इसीतरह इस युवावस्था
निकलते देर न लगेगी काल की अनंतता का विचार करते
सौ वर्ष का आयुष्य भी विद्युत् के चमत्कार जैसा ही है। इतने से
प समय के लिये मेरे या उनके क्षणिक सुख दुःख का मुझे

क्यों विचार करना चाहिये ? हाड, मांस, चर्म और रक्त से बने इस क्षणभंगुर शरीर पर के मोह भाव ही बंधन और दुःख कारण हैं जैसे कमल पत्र पर पड़ा हुआ तुषार बिंदु थोड़े समय तक मोती माफिक शोभा दे अदृश्य हो जाता है इसीतरह यह शरीर यौवन, स्त्री और संसार के सर्व वैभव भी अवश्य अदृश्य हो जायं इन सब के लिये मैं अपनी अविनाशी आत्मा का हित न बिगाड़ दूं। यह समस्त संसार स्वार्थी है, जबतक वृक्ष पर फल होते हैं तब तक ही सब पक्षी आकर इसका आश्रय लेते हैं और फल नहीं होते ही उसको त्याग सब चले जाते हैं. अगर मैं विषयों को त्यागूं तो भी यौवन वय का अन्त आते ही इन्द्रियों का बल क्षीण हो जायगा और ये विषय भोग भी मुझे छोड़ चले जायगे और मेरी आत्मा को अधोगति की गहरी खाई में ढकेलते जायगे, इस लिये इन विष सरीखे विषयों का मुझे अभी से ही त्याग क्यों न करना चाहिये ? इन विचारों के परिणाम से श्रीजी यही निश्चय कर सके कि बस ! मैं तो अब विषयों का परित्याग कर ब्रह्मचर्य की ही सेवा ग्रहण करूंगा।

इस समय ऊपर की वृक्ष-लताओं में से सुंदर सुगंधित पुष्प श्रीजी के शरीर पर गिर पड़े, वृक्षों परके पक्षी मानो श्रीजी की दृढ़ता की तारीफ करते हों और प्रतिज्ञा अटल पालने का आग्रह करते

सा मधुर संगीत अलाप आलापने लगे। सूर्य नारायण की किरणें ट वृक्षों को भेद श्रीजी के मस्तक पर विजय ताज पहिनाती हों सा भास होने लगा, सृष्टि देवी ने श्रीजी के साथ सहानुभूति खाने के लिये ही यह व्यवस्था क्यों न रची हो ?

अहा ! कैसा मांगलिक शब्द ! कैसा अपूर्व मत ! कैसी दिव्य विना ! कैसा विशुद्ध जीवन ! बस बस मैं ऐसे ही पवित्र जीवन ताऊंगा. यही कल्याणप्रद मार्ग ग्रहण करूंगा और जन समाज भी इसी मार्ग पर खींचूंगा जिसके लिये मेरा हृदय चिंतातुर रहा है उसके लिये भी यही निर्भय और कल्याणकारी मार्ग लूंगा। अखंड ब्रह्मचर्य, यही मेरे जीवन की अभिलाषा हो। यजनित सुखों की अब मुझे तनिक भी इच्छा नहीं, इंद्रिय लास का विचार भी अब मुझे विष सम दुखदाई ला है. मैं अब इंद्रियों का दमन तप आद... ीकार करूंगा ब्रह्मचारियों का गुण कीर्त्तन करूंगा... गा और प्रभु के ज्ञानादि गुण अपनी आत्मा में... जगमगाती ज्योतिर्मय रत्नशाला को मैं... जगत् में ब्रह्मचर्य का दिव्य प्रका... प्रचंड और धकधकती लोह... ां और मन को परिवद्ध...

का विनाश होता हो तो बेशक हो "नत्थि जीवस्स नासो
इस वीरवाक्य पर मुझे पूर्ण श्रद्धा है इसलिये मैं किसी
का स्पर्श तक नहीं करूंगा। अपने मन से प्रभु की साक्षी
श्रीजी ने ऐसे विशुद्ध ब्रह्मचर्य धर्म आदरने की भीषण प्रति
और वे अपनी आत्मा में नया उत्साह नया सतेज प्रकटा
तरफ फिरे। जुवानी में ऐसे विचार आना भी पूर्व पुण्यो
ही फल है।

जरा जन जालवी लेजे, अरे झेरी जुवानी छे
कलंकित कीर्त्ति ने करशे, खरे! वैरी जुवानी छे
अभिमाने करे अंधा करावे नीच ना धन्धा
विचारो फरवे सन्धा जुवानीतो गुमानी छे
बनाव्या कैकने कैदी, नखाव्या शीष कैक छेदी
जुवानी शत्रु छे भेदी न मानो के मजानी छे.
विकारो ने वलगनारी, बतावे पापनी बारी
उजाडे बुद्धि ना सारी, पीडा कारक पीछानी छे
समझ संसार ना प्राणी जुवानी मान मस्तानी।
अरे पण चार दोडांनी जुवानी जाण फानी छे॥
ये शंकर झुठी काया झुठी संसार की माया।
जुवानीनी झुठी छाया जुठी आ जिन्दगानी छे॥

पुज्यश्रीना वडील बंधु शेठजी नाथुलालजी वंब–टोंक.

परोपकारी पारेख श्रीभोवनदास प्रागजी–राजकोट.

जे अगाशीमां श्रीलालजी बेसी वांचता ने
ज्यांथी कूदी पड्या.

उपरनी अगाशीमांथी जे अगासीमां
पड्या ते.

परिचय—प्रकरण ३.

मानकुंवर बाई को घर आये थोड़े ही दिन हुए । इनके विन-
[illegible]दि उत्तम गुण तथा कर्त्तव्य परायणता ने घर के सब मनुष्यों
[illegible] मन हर लिये । सब कोई बहु की मुक्तकंठ से प्रशंसा करता था
[illegible]रन्तु इससे मानकुंवर बाई को कुछ भी आनन्द न मिलता था ।
अपने पति की वैराग्यवृत्ति उनके हृदय को नोच खाती थी । जब २
वे अकेली रहतीं तब २ विचारमाला में गुंथाती और पति का मन
किस तरह प्रसन्न करना तथा किन २ युक्ति प्रयुक्तियों द्वारा उनका
प्रीतिपात्र बनना ये उपाय सोचने में ही प्रायः वे अपना सब समय
व्यतीत करती थीं । " विनय यही महा वशीकरण है " यह महा-
मंत्र आते ही सास ने इन्हें सिखा दिया था, इसीलिये वे हर तरह
विनय, भक्ति द्वारा पति का मन प्रसन्न करने का प्रयत्न करती थीं
परन्तु श्रीजी तो प्रायः इनसे दूर ही रहना पसन्द करते थे ।

विशेष कर वे पृथक् हवेली के पृथक् स्थान पर ही सोते, कचित्
वार्तालाप करते और अधिक समय पढ़ने लिखने या धर्मानुष्ठान में
ही व्यतीत करते थे । ऐसा होते भी उनकी पत्नी को यह मान्यता
थी कि धीरे २ पति की मति को ठिकाने ला सकूंगी । उनके सासुजी
भी प्रायः यही आश्वासन देते रहते थे. परन्तु आज का व्याख्यान
सुनने के पश्चात् पर्वत पर की हुई प्रतिज्ञा के कारण श्रीजी के विचार,
वाणी और व्यवहार में एकाएक बहुत परिवर्तन होगया । पत्नी के
साथ एकान्तवास और वार्तालाप आज से हमेशा के लिये बन्द

होगया । इससे मानकुंवर बाई के हृदय में प्रज्वलित चिन्ताग्नि घी होमा गया परन्तु वे बिल्कुल निराश न हुईं अपनी प्राणाधिक प्रिय सखी आशा का उनने सर्वथा परित्याग न किया।

पति की सेवा करने तथा अपने हृदय के उभार पति से हृदय का भार हलका करने की तीव्र अभिलाषा होते भी मान बाई कितने ही दिनों तक ऐसा अवसर न मिलने से सिर्फ अश्रु द्वारा ही हृदय का भार कम करती रहीं, कारण यह एक ही रा इनके लिये खुला था । रातको तो श्रीजी उपाश्रय में या अ दूसरी हवेली में संवर करके सोते । दिन में बहुत कम समय रहते । कुटुम्ब अधिक होने से दिन में एकान्त में वार्तालाप का का समय मिलना दुर्लभ था और फिर श्रीजी भी दूर २ भागते इसलिये मानकुंवर बाई के मन की सब आशाएं मन में ही र जाती । श्रीजी के माताजी तथा उनके मित्र इत्यादि उन्हें बार निवेदन कर कहते परन्तु श्रीजी के मन पर उसका कुछ असर होता था ।

एक दिन श्रीजी अपनी तीन मंजिली ऊंची हवेली की चांद में बैठे थे और जयपुर निवासी स्वर्गस्थ कवि जौहरी जेठमल चोरड़िया विरचित पद्यात्मक जम्बू चरित्र पढ़ने तथा उसकी का[illegible] [illegible] में लीन थे इस समय अवसर देखकर धीरे पांव

ानिकुंवर बाई पति के पास आ खड़ी हुई और नम्र भावयुत ... ाणी से, हाथ पकड़कर लाई हुई अबला की ओर अभि... खने की प्रार्थना करने लगी। परन्तु काम को किम्पाक फल समान ... ाले और प्राण की आहुति देकर भी शियल व्रत के संरक्षण ... ातिज्ञा लेने वाले दृढव्रतधारी महानुभाव श्रीलालजी ने नीचे नयन ... ख मौनधारण कर लिया। युवती के सौजन्य, सौंदर्य, वाक्चातुर्य ... और हावभाव उनके हृदय पर एकान्त होते भी कुछ असर पैदा न ... र सके। एकान्त में स्त्री के साथ रहना, वार्तालाप करना, उसके ... करुण वचन सुनना, उसके हावभाव या अंगोपांग देखना प्रभृति ... ब्रह्मचारियों के लिये अनिष्टकर और अकल्पनीय है ऐसा सोचकर ... ीजी ने त्वरा से निकल भागने का निश्चय किया और उठ खड़े ... ए, परन्तु नीचे उतरने की पत्थर की सीढ़ियों की राह रोककर ... ानकुंवर बाई खड़ी थी, इसलिये श्रीजी सीढ़ी के दूसरी ओर ... चांदनी के दूसरे खंड में जल्द २ जाने लगे।

हृदय का भार कम करने के लिये प्राप्त अवसर से लाभ उठाने और उन्हें भग न जाने देने का निश्चय कर युवती उनके पीछे २ कोमल पांव से चली और श्रीजी का हाथ पकड़ने के लिये अपना कोमल करपल्लव बढ़ाया। अपना वही हाथ जो पिता ने पति को ...लेवे के समय हाथ में सौंपा था। वही हाथ पति को ... कड़ने का विनय करने पर अबला की ओर अवाच्य...

" नजर से निरखो नाथ " इस गूंगी अर्ज का दिव्यनाद श्रीजी के श्रवणयुगल में गिरने ही न पाया---किसी भी स्त्री का स्पर्श न करना। इस प्रतिज्ञा का कहीं भंग हो जायगा इस डर से और अन्य राह न मिलने से तत्काल श्रीजी यहां से उत्तर की ओर इस तीन मंजिल की हवेली के बराबर वाली पश्चिमी द्वार की अपर दूसरी दो मंजिल वाली हवेली की चांदनी पर कूद पड़े * अपने इस व्यवहार पर पश्चात्ताप करती भय से धूजती मानकुंवर बाई एकदम सीढ़ियां उतर नीचे आई और यह क्या शब्दारव हुआ ऐसे सासुजी के प्रश्न का अश्रुपूर्ण नयन से खुलासा किया। तुरन्त माजी नीचे उतर दूसरी हवेली के मंजिल चढ़ पुत्र के पास दौड़ कर पहुंचीं। खबर होते ही नाथूलालजी भी आये।

चांदनी की समतल भूमि छोबंध होने से श्रीजी के एक पांव में सख्त चोट लगी, नस पर नस चढ़ गई। यह देखकर माजी की आंख से अश्रु बहने लगे। वे बोलीं बेटा! ऐसा न किया कर, अब तू बालक नहीं है। इतनी ऊंचाई से कूदने पर कभी जीव की जोखम रहती है। उत्तर में श्रीजी ने कहा। माजी! संसार की ज्वाला में जलने की अपेक्षा मैं मरना अधिक पसन्द करता हूं। उस समय हकीमजी को बुलाने के लिये नाथूलालजी चले गये और

---

* देखो मकान का चित्र।

...कीमें तथा डाक्टर का इलाज कराने से थोड़े दिनों पश्चात
...अच्छा हो गया। परन्तु सर्वथा आराम न हुआ। यह तकलीफ
...तमाम जिन्दगी पर्यन्त रही। यह घटना सं० १६४० में घटी।
...उस समय श्रीजी की उम्र १५ वर्ष की थी परन्तु शरीर का सं-
...ठीक होने से वे १८ वर्ष के हों ऐसे दिखते थे।

भोग की लालसा को हृदय-देश में से हमेशा के लिये देश
निकाला देने की हिम्मत करना, सुकुलवती और सुरूपवाली स्त्री का
भर यौवन में परित्याग करना कुछ नन्हीं सी बात नहीं है। श्रीवीर
...प्रभु का उपदेश जिनके रग २ में रंगा हुआ है ऐसे आदर्श ब्रह्म-
...चारी श्रीलालजी ने यह उत्साह दिखाया। यह सचमुच प्रशंसनीय,
...वन्दनीय और आश्चर्य उत्पादक तथा सामान्य मनुष्यों की शक्ति के
...बाहर का है। जो कार्य संसार त्यागने पर भी कितने ही व्यक्तियों
...से न बन सका वह कार्य श्रीजी ने संसार में रहकर कर दिखाया।
...काजल की कोठरी में रहने पर भी कपड़े पर रेख न लगने देना
...दुष्कर कार्य है। श्री वीर प्रभु की आज्ञा को श्रीजी प्राणों से
...अधिक मानते थे। चांदनी पर से कूद श्रीजी ने वीर प्रभु की
...का अनुकरण कर सच्ची वीरता दिखाई है। श्रीउत्तरा...
...कहा है कि :—

जहा बिराला वसहस्स मूले न मूसगाणं वसही पसत्था।
एमेव इत्थीनिलयस्स मज्झे न बंभयारिस्स खमो निवासो॥

अर्थ—जहां बिल्ली रहती हो वहां चूहे का रहना ठीक न
इसी तरह जहां स्त्री का निवास हो वहां ब्रह्मचारी का रहना
कारी नहीं।

श्री दशवै कालिक सूत्र में कहा है कि :—

हत्थपायपडिच्छिन्नं कन्नं नासं विकप्पियं।
अविवाससयं नारिं बंभयारी विवज्जए॥

अर्थ—जिसके हाथ पांव छिन्न भिन्न हैं कान और नाक
कटे हैं और सौ वर्ष की बुढ़िया है ऐसी स्त्री का भी ब्रह्मचारी
सहवास न करना चाहिये।

जहा कुक्कुटपोयस्स निच्चं कुललओ भयं।
एवं खु बंभयारिस्स, इत्थिविग्गहो भयं॥

अर्थ—जैसे कुक्कुट के बच्चे को हमेशा बिल्ली का भय र
है तैसे ही ब्रह्मचारी को स्त्री की देह से भय उत्पन्न होता है।

श्री वीर प्रभु ने पवित्र जिनागम में ब्रह्मचर्य की भूरि
प्रशंसा की है और ब्रह्मचर्य के भंग करने की अपेक्षा मरना भ

ईसा साधुओं को सम्बोधन दे कहा है। श्रीजी भी गृहस्थ के वेश में साधु ही थे।

कामान्ध और विषयलुब्ध मनुष्यों को यह वृत्तान्त पढ़कर सोचना चाहिये, पश्चात्ताप करना चाहिये और अपनी आत्मा के हितार्थ इन महात्मा की सत्प्रवृत्ति का अनुकरण कर साफल्य जीवन करना चाहिये! विषयों के गुलाम न बन मन इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना सीखना चाहिये और ऐसा करने के लिये अनेक प्रकार के नियम निश्चय आदर कर जीव की जोखम में भी वे पालने चाहिये।

अनादिकाल के अभ्यास से मन और इन्द्रिय स्वभाव से ही शब्द स्पर्शादि विषयों की ओर खिंचाकर वैषयिक सुखों में ही सर्वथा लीन रहती हैं और यही कारण है कि आत्मा की अनन्त शक्ति का भान नहीं रहता। मन बन्दर की तरह अति चंचल है। बन्दर जैसे वृक्षों पर कूदता फिरता है वैसे ही मनुष्य का मन भी नानाप्रकार के विषयों में वेग से दौड़ता रहता है। सर्व ... के त्तय और परमानन्द की प्राप्ति के लिये मन की ऐसी चंचलता और क्लेशप्रद स्वभाव के ध्वंस करने की खास जरूरत है। कोई एक महाभाग विरले पुरुष ही ऐसा कर सकते हैं। श्रीमा बालवय से ही वैषयिक सुखों को परित्याग करने में

काम दिखाया। इससे उनका चरित्र प्रत्येक मनुष्य के मनन क
योग्य, अनुकरण करने योग्य और स्मरण में रखने योग्य है।

दीक्षा लेने के पश्चात् श्रीजी के उपदेश में ब्रह्मचर्य के लि
हमेशा बहुत जोर रहता था। ब्रह्मचर्य के निर्वाहार्थ शिष्यों
आहार विहार की तरफ भी वे बहुत ध्यान देते थे और यही कारण
कि इनकी सम्प्रदाय में ढीला पोला साधु न टिक सकता था।
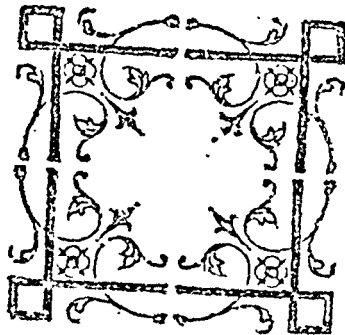
अध्याय ४ था

वैराग्य का वेग।

उपर्युक्त घटना के बीतने के थोड़े दिन पश्चात् श्रीजी ने अपनी माता के पास से विनयपूर्वक दीक्षा के लिये अनुमति मांगी। माजी के कोमल हृदय पर ये शब्द वज्राघात जैसे प्रहारी हुए तो भी इनने धैर्य धारण किया कारण ऐसे ही मतलब वाले शब्द वे आज से पहिले कई समय पुत्र के मुख से सुन चुकी थीं इस समय इनने इतना ही उत्तर दिया कि " संसार में रहकर भी धर्म, ध्यान क्या नहीं हो सकता ? हमारी दया न आती हो तो कुछ नहीं परन्तु इस विचारी के ऊपर तो तुझे कुछ दया लानी चाहिये ! इसका जन्म बिगाड़कर जाना यह महा अन्याय है। फिर भी अगर तुझे दीक्षा लेना है तो मेरा वचन मानकर थोड़े वर्ष संसार में बिता। " इतना कहते २ उनका हृदय भर गया और आंखों में से आंसू गिरने लगे। श्रीजी नें अपना दृढ निश्चय दिखाते हुए कहा कि " माजी ! आप कोटि उपाय करो तो भी मैं अब संसार में रहने वाला नहीं हूं। मुझे अब आज्ञा देओ तो संयम आराधन कर अपनी आत्मा का कल्याण करूं। आयुष्य का क्षण भर का भी विश्वास नहीं है। "

भाजी के कहने से इस बात की खबर नाथूलालजी को और फिर सेठ हीरालालजी को हुई। सेठ हीरालालजी ने श्रीलालजी को बुलाकर कहा कि, खबरदार ! दीक्षा का किसी दिन नाम भी लिया तो ! आज से तूने साधु के पास भी किसी दिन नहीं जाना। साधु तो निठल्ले बैठे २ लड़कों को चढ़ा मारते हैं। " इन शब्दों से श्रीलालजी के हृदय में बहुत दुःख हुआ। इन्होंने बोलने का प्रयत्न तो किया, परन्तु कुछ बोल न सके। अपने पिता के बड़े भाई हीरालालजी की आज्ञा का उनने कभी उल्लंघन नहीं किया था। उनके सामने बोलना भी उन्हें दुःसाध्य था। सेठ हीरालालजी ने नाथूलालजी से भी कहा कि " इसकी बहुत संभाल रखना और साधु के पास इसे बिल्कुल मत जाने देना "।

हीरालालजी सेठ की सख्त मनाई होने पर भी श्रीलालजी गुप्तरीति से अपने गुरु के पास जाने लगे। सद्गुरु का वियोग वे न सह सके। सत्संग में कोई अनोखी आकर्षण शक्ति रहती है। श्रीजी की उत्तम ज्ञानाभिलाषा और सत्संग के आकर्षण के समीप सेठ हीरालालजी की ओर का भय कुछ गिनती में न था।

एक दिन श्रीजी ने परमप्रतापी पूज्य श्री उदयसागरजी *

---

* इन महापुरुष का जीवन-चरित्र गुर्वावली में दिया है।

हाराज के दर्शन करने का अपने मन में निश्चय किया और इन्हों
ो विनय-पूर्वक अपना अभिप्राय दर्शाया । परन्तु उन्होंने जाने की
आज्ञा न दी । उस समय पूज्य श्री रतलाम शहर में विराजते थे ।
गाड़ी में बैठने के लिये टोंक से ६० मील दूर जयपुर स्टेशन पर
उस समय जाना पड़ता था । श्रीजी ने एक दिन मौका देख घर के
मनुष्यों से बिना कहे टोंक से जयपुर तक का २० रुपये किराया
ठहरा दूसरे मनुष्य को न बिठाने की शर्त से तांगा किराये किया और
जयपुर मे ट्रेन में बैठ सीधे रतलाम पहुंचे । पूज्य श्री के दर्शन कर
नेत्र पवित्र किये और उनकी अमृत समान मिष्ट वाणी श्रवण कर
कान पवित्र किये । यहां सेठ नाथूलालजी वगैरह को यह हकीकत
मालूम हुई तो वे बड़े चिन्ताग्रस्त हुए । सेठ हीरालालजी घर आ
श्रीजी की माता चांदकुंवर बाई को उपालंभ देने लगे कि " तुमने
छोटी वय से अपने पुत्र को धर्म का रंग जोरशोर से लगाया इसीका
यह नतीजा तुम देख रही हो ! " सारांश श्रीलालजी को छोटी उम्र
से ही धर्म में लगाया जिसका यह दारुण परिणाम तुम्हारे आंखों के
सामने है ।

दूसरे दिन नाथूलालजी टोंक से रवाना हो जयपुर होक
रतलाम पहुंचे । वहां पूज्य श्री को बन्दना कर बैठ गये । तब पूज्य
श्री ने पूछा 'कहां रहते हो' नाथूलालजी ने कहा 'टोंक रहता
महाराज ?' तब पूज्य श्री ने कहा 'कल ही टोंक से एक भा

श्रीघर भी आया है विशेषता में पूज्य श्री ने फरमाया कि उस नाम तो श्रीलाल है परन्तु उसके गुणों की ओर ध्यान देते श्री कहना मुझे बड़ा अच्छा लगता है' अपने छोटे भाई की ऐसे मह पुरुष के मुंह से प्रशंसा सुनकर नाथूलालजी को कुछ आनन्द हु परन्तु पूज्य श्री के मुंह से ऐसे शब्द सुनकर उन्हें यह भी भा हुआ कि श्रीजी अब अपने घर में रहेंगे यह होना अशक्य है!

थोड़े ही समय में श्रीजी आकर अपने भाई से मिले औ मिलते ही प्रश्न किया कि " भाई! क्या आज ही तुम्हारे सा मुझे पीछा घर जाना पड़ेगा ? मुझे यहां थोड़े दिन पूज्य श्री की सेवा का लाभ नहीं लेने दोगे ? नाथूलालजी ने कहा 'बड़े स्थानक पूज्य श्री धर्मदासजी महाराज की सम्प्रदाय के मोखमसिंहजी मह राज विराजते हैं उनके दर्शन कर रवाना होना है। उस समय कुछ आनाकानी न कर अपने बड़े भाई के साथ वे चल पड़े, यह उनके हृदय की मृदुता और विनय गुण की पराकाष्टा की सूचना है। चलते समय उन्होंने बड़े भाई से एक वचन मांग लिया था कि, मैं घर तो आता हूं परन्तु जिस हवेली में आप सब रहते हो उसमें मैं नहीं रहूंगा। बाहर की हवेली में अकेला ही रहूंगा। भाई ने उनकी यह बात मंजूर की।

रतलाम से रवाना हो वे जावरे आये। वहां मुनि श्री राज-

कस्तूरचन्दजी तथा मगनलालजी महाराज विराजते थे
र्शन किये मुनि श्री मगनलालजी महाराज कि जो विराजमान
श्री जवाहिरलालजी महाराज के गुरु थे इनको सज्झाय
की अनुपम और अति आकर्षकशैली * देख श्रीनाथजी
ाश्चर्य हुए और इनकी सेवा में थोड़े दिन रहना मिले, तो
अच्छा हो ! ऐसा सोचने लगे, परन्तु भाई की इच्छा से
ा वे दूसरे दिन जावद आये। वहां श्री तेजसिंहजी महाराज
ते मुनिराज विराजते थे, उनके दर्शन किये और फिर दोनों
टोंक आये। नाथूलालजी का अपने छोटे भाई (श्रीजी) पर
त प्रेम था। उन्हें हरतरह खुश रखना ऐसी उनकी खास इच्छा
। इसीलिये राह में श्रीजी की मर्जी सम्पादन करने के लिये वे
नको महन्त पुरुषों के दर्शन तथा उनकी वाणी श्रवण करने कराने
तरते थे। उस समय नाथूलालजी की और २० श्रीजी की १५ वर्ष
ही उम्र थी।

टोंक आये पश्चात् श्रीजी बाहर की हवेली में अकेले रहते
और पठन पाठन तथा धर्मानुष्ठान से जीवन सार्थक करते थे। उन
संसार कारागृह लगता था। दीक्षा ले आत्महित साधने की उनकी प्रब

---

* सज्झाय करने की ऐसी ही शैली श्रीजी महाराज की भी प्र
हो गई थी और यह प्रसादी मगनलालजी महाराज की ओर से
मिली हुई है ऐसा वे कहा करते थे।

उत्कंठा थी। इसके विरुद्ध उनके कुटुम्बीजनों की इच्छा किसी तरह किसी भी युक्ति प्रयुक्ति से या अन्तमें बलात्कारसे भी संसारमें रख की थी। जैनशास्त्र का ऐसा क़ायदा है कि जबतक बड़ों की आ न मिले तबतक दीक्षित न हो सके। श्रीजी ने बहुत २ प्रय किये, परन्तु आज्ञा नहीं मिली। इससे श्रीजी को बहुत दुः हुआ और ऐसा निश्चय किया कि अब तो किसी दूर देश में जा सन्त महन्त की सेवा कर जैन सूत्रों का अभ्यास कर आत्महि साधना चाहिये।

ऐसा विचार कर एक समय वे गुपचुप घर से निकले जयपुर आ रेल में बैठ गुजरात काठियावाड़ की ओर चले गए वहां कई साधु महात्माओं से समागम हुआ। श्रीजी का विनय ज्ञानवृद्धि के लिये आधारभूत हुआ। काठियावाड़ से कच्छ की तरफ हो रण रस्ते थराद होकर वे फिर गुजरात में आये वहां से मुनि श्री चौथमलजी महाराज मेवाड़ में विचरते हैं ऐसी खब पा ज्ञानाभ्यास की तीव्र जिज्ञासा से मेवाड़ तरफ गए और नाथद्वा में मुनि श्री चौथमलजी महाराज की सेवा में रह ज्ञानाभ्यास कर लगे। वहां से किसी ने यह खबर टोंक पहुंचाई।

श्रीजी ने टोंक छोड़ी तब से आजतक टोंक पत्र न लिखा [illegible] किसी साधन द्वारा भी कुटुम्बियों को इनका पता न मिला थ

सलिये इनके प्रवास समय में इनके कुटुम्बीजनों ने ऐसी चिन्ता-
स्त स्थिति में अपने दिन निर्गमन किये, यह आगे देखिये।

श्रीजी टोंक से रवाना हुए उसके दूसरे ही दिन इनके भाई
ाथूलालजी उनकी तलाश में निकले और जयपुर स्टेशन आये
रन्तु अब किधर जाऊं यह राह उन्हें नहीं सूझी। बहुत सोच
बेचार के पश्चात् उन्होंने निश्चय किया कि जहां २ विद्वान्
ुनिराज विराजते होंगे वहां जाकर तपास करना चाहिए। ऐसा
ोच वे अजमेर, नयेशहर, रतलाम बीकानेर, नागोर, जोधपुर,
ल्ली, आगरा आदि २ कई शहरों में घूमे, परन्तु किसी भी स्थान
र भाई का पता न मालूम हुआ। फिर निराश हो घर आये। माजी
भूति को भी श्रीलालजी का पता न मिलने के समाचारों से बड़ा
ुःख हुवा नाथूलालजी ने रोज चारों ओर पत्र लिखना प्रारंभ
किये यों दो एक महीने बीते पश्चात् एक समय माजी ने सजल
ायनों से नाथूलालजी को कहा।

श्रीलाल का कहीं पता न लगा ऐसा कह कर तू चुपचाप
र में बैठा रहता है यह ठीक नहीं यह सुनकर नाथूलालजी का
ृदय भर आया। मातु श्रीकी ओर उनका अतुलित पूज्य भाव थ
ानका दिल किसी भी तरह से न दुखाना यह [illegible]
ा इसलिये मातु श्री के ये शब्द कर्णपट पर लिखे

ढूंढने निकले दूसरे ही दिन रवाना होकर कई शहर और ग्र
में होते हुए नागोर आये। नागोर में उन्हें एक चिट्ठी मिली
जो टोंक से सेठ हीरालालजी के पुत्र लक्ष्मीचंदजी की लिखी
थी। उसमें लिखा था कि नाथद्वारा में मुनि श्री चौथमलजी
राज विराजते हैं वहां श्रीजी है। इसलिये तुम वहां से नाथ
जाओ। इस पत्र के पाते ही नाथूलालजी नाथद्वारा की ओर
हुए। राह में कपासन मुकाम पर पं० मुनि श्री चौथमलजी
राज के दर्शन हुए और कपासन में तपास करने से मालूम
कि टोंक से लक्ष्मीचन्दजी नाथद्वारा आये थे और श्रीलाल
बुला ले गए हैं। यह खबर सुनकर नाथूलालजी भी वहां से
टोंक आये।

उस समय भी श्रीजी बाहर की हवेली में अकेले रहते थे
वे कहीं भग न जांय, इसलिये उनके पास खास मनुष्य रख
थे। उनके लिये भोजन भी वहीं पहुंचाया जाता था। श्रा
रसोई में भोजन करने जाना उनने हमेशा के लिये बन्द कर
था। एक साधारण क़ैदी की तरह उनकी स्थिति थी।

जब २ अवसर मिलता तब २ वे अपनी मातुश्री और भा
को दीक्षा की आज्ञा देने के लिये प्रार्थना करते थे। आपस में
समय अधिक रसमय कुलस्वाद भी होता था। श्रीजी की मान्

ाने के लिये चाहे जैसी सचोट युक्तियां भिड़ाई जातीं तो भी का प्रत्युत्तर श्रीजी बहुत उत्तम रीति से देते थे। मोह की मन्दता और उत्कृष्ट वैराग्य आत्मा में स्थित प्रज्ञापना प्रकटाता है। मोही पुरुषों के सामने प्रकृति हमेशा नानावस्था में ही रहती है। सत्य उन्हें कहीं ढूंढने नहीं जाना पड़ता। वे स्वतः सत्य की साक्षात् मूर्त्ति रहते हैं। श्रीजी महाराज ने मोह–रिपु को ई अंश से पराजित किया था, इसलिये उनकी मति अति निर्मल गई थी और यही कारण था कि, श्रीजी के उपदेशात्मक और मिक शब्द प्रहारों से माजी के मन पर गहन असर होता था; न्तु सेठ हीरालालजी की इच्छा के प्रतिकूल वे निश्चयात्मक रीति कुछ भी कहने की हिम्मत न कर सकती थीं।

अध्याय ५ वाँ.

विघ्न पर विघ्न ।

ऐसी संकटमयी हालत में दो एक वर्ष व्यतीत होगए। ... की उमर १७ वर्ष की हुई । आज्ञा के लिये उनके सफल निष्फल गए और दिन पर दिन अधिक सख्ती होने लगी मुनिराजों के दर्शन, शास्त्र श्रवण और पठन पाठन में उनके जनों की ओर से होते हुए विघ्न उन्हें अतिशय असह्य विन अपराध कैद में डाल रखना यह बड़ों का अन्याय अ किसी तरह सहन न हो सका । अपनी स्वतंत्रता अपहर देख श्रीजी के दिल में अधिक चोट लगी । सत्य कहा है कि प्राणी को उन्नति के लिये बाहर निकलने के प्रथम अपनी दशा को उन्नत बनाना चाहिये "।

एक दिन सुबह शौचकर्म से निवृत्त होने के मिस वे ऊप से नीचे आये । उस समय सख्त ठंड पड़ रही थी । तो कपड़े लत्ते न लिये फकत एक चादर डाल ली और इस में वे टोंक त्याग रवाना हुए । एक दिन में २२ कोस क मंजिल पार कर शाहपुरा के समीप कादेड़ा ग्राम पहुंचे । भ

और ठंड से उनके शरीर में व्याधि उत्पन्न हो गई। और एक
भी आगे चलने की शक्ति न रही। पास में एक पाई भी न
तथा वहां कोई पहिचान वाला भी न था। समभाव से वेदना
ठंड से थर २ धूजते वे खादेड़ा ग्राम में आये। दुःख, भय
चिन्ता के विचार ही मनुष्य की शक्ति को शिथिल करते हैं।
मत और श्रद्धा से कार्य करने वाले को प्राकृतिक सहायता
ाती रहती है। ऐसी दुःखितावस्था में यहां उनकी सार संभाल
ने वाला कौन था? परन्तु पुण्य प्रसाद से नाथूलालजी के श्वसुर
दासजी ऋणवाल (घटयाली निवासी) किसी कार्य से खादेड़ा
ये थे। उन्होंने श्रीलालजी को राह चलते देख लिया और
ला २ जहां आप ठहरे थे वहां लेगए। वहां खानपान शयनादि की
व्यवस्था करने के पश्चात् औषधोपचार द्वारा शान्ति होने के अनेक
यत्न किये। प्रकृति की गति कृति भिन्न है। पवित्र वृत्ति वाले
ुण्यशाली पुरुषों को अनुकूल संयोग अकस्मात् मिल ही जाते हैं।
र्तृहरि यथार्थ कहते हैं कि:—

वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये, महार्णवे पर्वतमस्तके वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा, रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि॥

सब स्थान पर अपने पूर्व कर्म ही रक्षा करते हैं। जबतक
कसौटी का प्रसंग नहीं आता तबतक किसी मनुष्य की सहज करे
है।

की शक्ति का नाप नहीं हो सकता। आवश्यकता उपस्थित हो
तब ही प्राकृतिक अकलकला के प्रदर्शन निरखने का मौका
है। शिवदासजी ऋणावाल श्रीलालजी तथा उनके कुटुम्बी
पूर्णतया परिचित होने से सब हाल जानते थे। इ
उन्होंने दूसरे दिन एक ऊंट किराये कर श्रीजी को
सुभा टोंक की तरफ रवाना किया और जबतक तबीयत नादु
तबतक टोंक में रहने की ही हिदायत की। तथा ऊंटवाले
खानगी रीति से कहा कि तुम इन्हें टोंक पहुंचाकर चिट्ठी
तभी भाड़ा मिलेगा। उसी दिन शाम को श्रीजी टोंक पहुंचे।

श्रीजी—एक कपड़े से भगे उसकी खबर नाथूलाल
मिलते ही वे तुरंत उन्हें ढूंढने निकले। वे कपासन, निम्बाहे
खबर मिलते ही पीछे टोंक आये। उस समय श्रीजी भी
आ पहुंचे थे। नाथूलालजी ने श्रीजी से यह गद्गद कंठ से कहा "
तुम इस तरह घड़ी २ चले जाते हो इसीलिये हमें बहुत हैरान
पड़ता है और तुम भी तकलीफ पाते हो,,

श्रीजी—यह तकलीफ दूर करना तो आपके ही हाथ है दीक्ष
आज्ञा दो कि, सब तकलीफ मिट जाय माजी (वहां हाजर थे) बोल
" दीक्षा लेनी थी तो ब्याह क्यों किया? तेरे गए बाद इस
का रक्षक कौन होगा?,,

श्रीजी—क्षमा करना माजी ! आठ दस वर्ष के लड़के को बिना
ा अभिप्राय लिये माता पिता ब्याह देते हैं उसे ब्याह क्यों किया ?
कहने का हक तो होता ही नहीं मेरे ब्याह की (ब्हावा होने की)
ो उतावल न की होती तो यह परिणाम भाग्य से ही आता सो
मैं आपका दोष नहीं मानता । सब उसके कर्मानुसार ही हुआ
ा है फिर मैं किसीके रक्षक होने का दावा भी नहीं करता ।
ण करना न करना उससे शुभ कर्म का ही कारण है । काटेदां
ी मेरी रक्षा पसीने की थी ।

माजी—मैं बैठी हूं तबतक तूं संसार में रह और बाद में सुख
ंगम लेना । महावीर स्वामी ने भी माताजी को दुःखी न करने
िये वे जोवित रहे वहां तक सयंम न लिया था भगवान् जैसों
ी माता की इच्छा रक्खी थी ।

नाथूलालजी—(बीच में ही बोल उठे) और भगवान् ने बड़े भाई
च्छा भी क्या नहीं रक्खी थी ? माता के लिये २८ वर्ष रहे तो बड़े
(नंदीवर्द्धन) के लिये दो वर्ष भी रहे ।

श्रीजी—महावीर प्रभु तो तीन ज्ञान के स्वामी थे और मुझे
एक पल पश्चात् क्या होने वाला है उसकी भी खबर नहीं ।
वीर ही कह गए हैं कि, समयमात्र का प्रमाद नहीं करना
हिये ।

माजी—परंतु पुत्र ! मैं एक दिन भी तुझे नहीं देखती मेरा आधा रुधिर औटा जाता है मुझे तेरी बहुत फिकर रहा है। तुझे तो अपने देह की तनिक भी परवाह नहीं। ऐसी कड़कड़ाती पड़ती है उसमें एकही कपड़े से भूखा प्यासा २२ कोस तक गया और इतना दुःख उठाया (माजी की आंख में भर आये)

श्रीजी—एक ही बच्चा हो, मां को प्राण से भी अधि प्यारा हो। उसके सिवाय उसे दूसरा कोई आधार न हो तो निर्दय काल उसे भी उठा ले जाता है ऐसे अनेक उदाहरण आ सामने प्रत्यक्ष हैं। यह शरीर छोड़ कर पुत्र चला जाता है दुःख भी माता को सहन करना पड़ता है। मैं तो घर ही कर जाता हूं यहां आप मेरी सार संभाल करते हो वहां मेरे मेरी सार संभाल लेंगे आप मेरे शरीर की ही चिंता करते हो तो मेरे शरीर की मन की और मेरी अविनाशी आत्मा की संभाल लेंगे। इसलिये आपको दुखित होने का कोई कारण न राजी होकर मुझे आज्ञा दो, आपके आशीर्वाद से मैं सु ही होऊंगा।

माजी—मैं प्रसन्न होकर किसी को अपने नयन निकाल लें की आज्ञा दे सकूं तो तुझे राजी खुशी से दीक्षा की आज्ञा दे सकूं

चतुर है इसीसे समझ ले। और मेरी दया आती हो तो मेरी खों के सामने रहकर चाहे जितना धर्म ध्यान कर। तुझे मैं ाने को नहीं कहती। प्रभु की दया है और भाई जैसा भाई है झे कुछ दुःख नहीं देगा।

श्रीजी—माजी ! आगे पीछे मुझे यह घर छोड़ना पड़ेगा ौर लम्बे पांव पसार कर परवश दूसरों के कन्धों पर चढ़ हवेली से निकलना तो पड़ेगा ही। तो अभी ही खड़े पांव से ेव मुझे इस बंदीखाने में से छूटने दो और सिंह की तरह त्र विचरने दो तो क्या बुरा है ?।

श्री मृगापुत्र ने अपनी माता से कहा है कि:—

जहा किंपागफलाणं परिणामो न सुंदरो।
एवं भुत्ताण भोगाणं परिणामो न सुंदरो॥

श्री उत्तराध्ययन सूत्र, १९ अ०।

किंपाक वृक्ष के फल देखने में बड़े सुन्दर हैं परन्तु परिणाम यंकर है उसी तरह संसार के सुख देखने में [illegible] हैं परंतु रिणाम भयंकर दुर्गति में लेजाने वाला है। श्री [illegible] मुनि ने ी अपने संसार पक्ष के [illegible] को [illegible]

संसार का सार समझा उसका जन्म सार्थक किया था, जिससे
श्रेय हो उसमें माता को अंतराय न देना चाहिये।

माताजी कुछ बोल न सके उनका हृदय भर आया, आं
अश्रु प्रवाह प्रारंभ हुआ। नाथूलालजी की चकोर चक्षुओं
माताजी का अनुकरण किया इस करुणा रसपूरित नाटक के
श्रीजी के हृदयसागर में तो ऐसी ही तरंगे उठ रहीं थीं कि

अनित्यानि शरीराणि, विभवो नैव शाश्वतः।
नित्यं सन्निहितो मृत्युस्तस्माद्धर्मं च साधयेत्॥

श्रीजी बाहर की हवेली में जाने के लिये उठ खड़े हुए।
मातु श्री को आश्वासन देते बोले— " मातु श्री ! आपके सं
मोह के अश्रु आपकी मस्तिष्क की गर्मी को शांत करते हैं
भी उन्हें देखकर मुझे दुःख होता है।

परन्तु मातु श्री ! आप क्या नहीं जानते की बार २ होते
जन्म, जरा और मृत्यु के अनंत दुःखों के सामने यह दुःख
गिनती में है। आपको दुःख हुआ इसीलिये क्षमाता हूं। माजी
यह तो आपका अनुभव किया हुआ आप भूल जाते हैं कि—

" नो मे मित्रकलत्रपुत्रनिकरा नो मे शरीरं त्विदम् "
मित्र, कलत्र, पुत्र, शरीर आदि में से कोई भी अपना नहीं

" सम्बन्धी जन स्वार्थी अर्थी सघला अंत रहे वेगला "

" व्याघ्रीव तिष्ठति जरा परितर्जयन्ती
रोगाश्च शत्रव इव प्रहरन्ति देहम् ।
आयु परिस्रवति भिन्न घटादिवाम्भो
लोकस्तथाप्यहितमाचरतीति चित्रम् " ॥

जरा बाघनी और रोग शत्रुओं के सदा प्रहार होते भी स्वार्थान्ध
ख गफलत में पड़े रहते हैं, परिणाम यह होता है कि, छिद्र वाले
के जल की तरह यह पुण्यायु कम होता जाता है और मनकी मन में
रह जाती है ।

माजी ! सत्य मानिये कि, मेरा वैराग्य मेण, लाख या काष्ठ के
ला जैसा नहीं है। परन्तु मट्टी के गोला जैसा है। उपसर्ग की अग्नि
वह अधिकाधिक परिपक्व होगा। इसलिये अब भी जो परिसह प्राप्त
गे वे हँसमुख से सहन करूंगा यह दृढ समझिये ! ऐसा कह
जी चले गए।

इन शब्दों ने माजी और भाई के मन पर बिजली जैसा असर
केया उसके परिणाम में उन्हें उपाश्रय जाने की परवानगी मिली
और किसी प्रकार का परिसह न देना देना निश्चय किया ।

एक समय बातचीत में श्रीजी ने दर्शाया था कि:—

" लक्ष्मी तणो आ वास, ऐवी राज्य गादी ने तजी
आवे थकी भिक्षुक थई, भागी गया कां भरत जी ?

अपन तो किस गिनती में हैं। अपने भगवान्‌का
उपदेश है कि, क्षण मात्र भी प्रमाद मत करो कारण कि:—

इंद्रिय सर्व अखंडित छे, तन साव निरोगी अने बल पूरुं।
बुद्धि विचार, विवेक, सहायक, साधन, अन्य न कोई अधुरुं।
उठ अरे ? अभिमान तजी कर उद्यम केम रह्यो करजोड़ी।
वेश घणा धरवा तुजने पण पाछल रात रही बहु थोड़ी।
सुंदर आ तन ते क्षण भंगुर भाई ! अचानक छे पड़वातुं।
'केशव' आलस आज करो पण पाछल थी नहिं कोई थवातुं।

उनके श्वसुर पक्ष के तथा माता पिता के पक्ष के कितने
सम्बधी उन्हें संसार में रहने के लिये शरमाते और समय २
दबाते थे परंतु श्रीजी इन भयों से डरने वाले नहीं थे।

शांति से सब को प्रसन्न करने वाले प्रत्युत्तर दे देते थे। उन
कितने ही मित्र अपने मां बाप की आज्ञा पालन करने के लिये
से आग्रह करते तब वे उनकी ओर बहुमान प्रदर्शित कर
निश्चय पर ध्यान दिलाते थे। उनके उत्तर एक साक्षर के शब्दों
एहं तो " मैं जानता हूं कि, माता पिता की आज्ञा पालना मेरा

कारण कि वे ही मेरे जन्मदाता और पालन कर्त्ता हैं। पिता की गोद में रमा हूं, माता के दूध से पला हूं उनके इशारे से विष तक का प्याला पी सकता हूं। तलवार की धार पर चल सकता हूं और अग्नि में कूद सकता हूं, परन्तु उनका दुराग्रह मेरे श्रेय कार्य में बाधक है इसलिये लाचार हूं.,,

लोकमान्य तिलक के लिये कहे हुए शब्द यहां स्मरण हो आते हैं " नर रंक के पुत्र रत्नों को निराश होना योग्य नहीं ज्वलंत धर्माभिमान, अचूक सावधानता, अचल श्रद्धा, अडग धैर्य, अखण्ड शौर्य और अनन्य भक्ति हो तो बाकी सब सरल है...... पास खड़े रहने वाले न थे, सहायता करने वाले कम थे ऐसे संयोगों में भी वह भारत तिलक निराश नहीं हुआ, श्रमित नहीं हुआ, विश्राम लेने नहीं ठहरा, अनेक संकट सहे, अनेक यातनाएं सहन कीं परन्तु अपना मंत्र जप तप तो प्रारंभ ही रक्खा काल उनके घाव भर देगा। दुःख की रात व्यतीत हो कर प्रातःकाल भी होगा "।

उस समय (सं० १६४३) में पूज्य श्री छगनलालजी महाराज टोंक में विराजते थे। उनके पास श्रीजी शास्त्राध्ययन करने लगे परन्तु दीक्षा की आज्ञा न मिली और आज्ञा न मिले वहांतक श्रीजी से कुछ बन सके ऐसा न था।

एक दिन श्रीजी हवेली में आकर अपनी पूज्य मातुश्री

धांव लगे। माजी उस समय मानिकलाल को रमाती हुई खड़ी
श्रीजी ने उस छः माह के बालक (मानिकलाल) को प्रेम पू
माता के पास से ले लिया और अपनी गोद में बिठाया। थोड़े स
तक उसे रमाया और फिर माजी के हाथ में देकर श्रीजी बोले "इस
अच्छी तरह रखना" माजी बोले "बेटा! इसकी और हमारी सं
लेने का काम तो तुम्हारा है" श्रीजी मौन रहे। वैराग्य के वि
स्फुरित होने लगे।

प्रियवाचक! हम लोग भी एक तत्ववेत्ता के विचारों का म
करें "इच्छुक हृदय नहीं बोल सकते, अगर बोल सकते हैं तो उन्हें
नहीं सुन सकता। किसी को प्रवाह भी नहीं, शोक पूर्ण नयन दर्द
रो सकते" अगर रोते हैं तो लोग हंसी करते हैं......

"आवाज और गति" की यह दुनिया तथा 'शान्ति और एका
का यह जगत् भिन्न २ होने पर भी बहुत समीप २ है.......गुप्त जि
की कई इच्छाएं, हृदय के कई उभरते आंसू, बुद्धि की कितनी
प्रबल तरंगें हमें निष्फल होती मालूम पड़ती हैं। जिन इच्छाओं
परिपक्व होने के लिये संसार में स्थान नहीं, अश्रु के प्रवाह
रोकने के लिये जगत् की सहायता की आवश्यकता नहीं, तरंगों को मू
मान बनाने के लिये दुनियां अनुकूल नहीं।

—:o:○:o:—

अध्याय ६ ठा

साधु वेष और सत्याग्रह।

"कितनी उन्नति करने के लिये हम जन्मे हैं ? कितनी उन्नति हमसे आशा कीगई है ? और हम प्राय: कितने अंश तक अपनी के स्वामी बन सकेंगे ? यह हम नहीं जान सकते। अगर हम चाहें अपने स्वत: के भाग्य पर सम्पूर्ण अधिकार जमा सकते हैं, जो २ ये योग्य हों अपनी आत्मा से करा सकते हैं और हम जैसे होना हें वैसे ही हो सक्ते हैं"।

ओ. स्वे. मार्डन

श्रीजी के वैराग्य का वेग बढ़ता जाता था और शास्त्राभ्यास से अनुमोदन भी मिलता था। प्रथम तो एक वीर योद्धा के समान उनका विचार था कि न 'दैन्यं न पलायनम्' परन्तु जब निराशा के प्रवाह में सब प्रयास अदृश्य होने लगे तब इस महासागर में नाव की अपेक्षा एक पटिया के आधार से ही प्रवाह उतरने तक ग्रहण करने का निश्चय किया। अनेक आघात और घाव सहन करते अपने निश्चय को दृढ बनाते रहे। दृढ निश्चय आत्मविश्वास यह एक अलौकिक रसायन है। इस रसायन के सहारे जाने वालों ने ही सं

वीर-बच्चे नायक का नाम पाया है चक्रवर्ती के समान सब देश
किये और श्री चतुर्विध-संघ ने प्रीति कलश से प्रक्षालन का
ताज पहिराया।

अंतिम निश्चय कर अपने मित्र गुज्जरमलजी पोरवाड़ के
श्रीजी एक दिन टोंक से गुप चुप निकल गये और अपनी
परिचित प्रिय रसिक पहाड़ी को देख उसके समझाये अमूल्य
को याद कर दीक्षा लिये विना टोंक में पग देना ही नहीं यह नि
किया। यह गूंगा निश्चय वृक्षों को समझा यह संदेशा प्राकृतिक
लनों द्वारा अपने कुटुम्बियों को पहुंचाने को कह कर वे रानी
(बूंदी स्टेट) की तरफ चले गए। खबर मिलते ही नाथूला
लस्म उनकी माता गुजरमलजी की मां तथा गुजरमलजी की बहू
पीछे पीछे रानीपुर गए। वहां पूज्य छगनलालजी महाराज वि
थे। पूछ ताछ करने पर विदित हुआ कि, वे दोनों यहां आ
परंतु एक रात रहकर चले गए हैं। यह समाचार सुन सब
रवाना हुए। राह में खबर मिली कि, एक नाले के नीचे दोनों
ने स्वयं साधु के वेष पहिने हैं और साधु के भंडोपकरण ले
की तरफ गए हैं। यह घटना सं० १९४४ में मगसर वद में

फिर श्रीजी की मातु श्री प्रभृति सब कोटे आये वहां भ
न चला। फिर निराश हो सब टोंक आये चारों ओर पत्र

रु किया तब खबर मिली कि, रामपुरा (भानपुरा) में मुनिश्री केशनलालजी विसनलालजी और बलदेवजी महाराज विराजते हैं उनके पास वे अभ्यास करते हैं।

यह खबर पढ़कर नाथूलालजी तथा गुजरमलजी के भाई इरदेवजी ये दोनों जने उन्हें लिवा लाने को रामपुरा गए परन्तु वे वहां न थे खबर मिलने से वे सुनहेल (इन्दौर स्टेट) गए वहां एक कुनबी के मकान में दोनों साधु के वेष में नजर आये। उस समय श्रीजी सदुपदेश सुना रहे थे श्रोताओं की संख्या १००से१५० मनुष्य के करीब थी। सदुपदेश पूर्ण होने तक दोनों आगन्तुक चुप बैठे रहे। व्याख्यान समाप्त होने पर उन्होंने कहा।

"हमारी बिना आज्ञा के तुमने यह वेष पहिन लिया, सो ठीक नहीं किया, अब हमारे साथ टोंक चलो" उत्तर में उन्होंने कहा "अब पीछे तो आवेंगे नहीं। कृपाकर आज्ञा दो तो हम संतों की सेवा में रह सकेंगे और हमारे ज्ञानाभ्यास में भी वृद्धि हो सकेगी। चाहे जितना मथो मक्खन निकलने की आशा नहीं है, व्यर्थ मोह के वश हो अन्तराय कर्म क्यों बांधते हो।

नाथूलालजी ने कहा "आप एक समय टोंक आवें आप कहेंगे वैसा करेंगे"। यहां बहुत कहा सुनी हुई। श्रीजी तथा गुजरमलजी ने आज्ञा देने के लिये आग्रह किया और उनके भाइयों ने इन्कार किया और दोनों को टोंक ले जाना निश्चित किया।

नाथूलालजी तथा हरदेवजी जब टोंक से रवाना हुए थे। टोंक रियासत से दोनों को पकड़ लाने के लिये वारंट निकला था। वे वारंट के साथ सुन्हेल के सूबा साहिब को मिले। साहिब ने कहा तुम फिर से एक वक्त और समझाकर कहो कि, साहब का हुक्म है इसलिये चल पड़ो। अगर न माने तो मुझे कहो।

उन्होंने आकर वैसा ही किया परन्तु श्रीजी न माने। इसलिये फिर सूबा साहिब से मिले। उन्होंने श्रीलालजी और गुजरमल को कचहरी में बुलाया। सुनेल के बहुत से श्रावक भी उनके साथ थे। स्वाभाविक रीति से उन श्रावकों का श्रीजी पर पूज्यभाव बढ़ रहा था। अल्प परिचय से तथा अल्प वय में ऐसी असरकारक सदुपदेश शैली से श्रीजी ने उनके मन जीत लिये थे। विषय मलिनता से निर्मल होकर निकले हुए शान्ति के प्रभावशाली पु... की और सहवास में रहने वालों की अंतरात्मा में गहनभक्ति पू... से भर रही थी।

प्राकृतिक नियम है कि मानव जाति के सहायक शुभे... और उपदेशक होना चाहते हों उन्हें याद रखना चाहिये कि, ... अनुभव पूर्वादि महात्माओं की तरह— क्राइस्ट के क्रोस की संकटों की शूली पर ही प्राप्त होने वाला है। जीवन का ...

हृदय का सच्चा तत्व इनकी आत्मत्याग की वेदी पर मौत की सार्थकता सिद्ध होती है ॥ महात्मा गान्धी इसी अभिप्राय को बोधक देते हैं—फतह जब बिल्कुल समीप आकर खड़ी रहती तब उसी राह से संकट भी सब से अधिक आते हैं। इस दुनिया में आजतक किसीको महान् फतह प्रारंभिक अनेक प्रयत्नों और कष्टों को पीछे हटाने वाली एक अंतिम असाधारण कोशिश किये बिना नहीं मिली। प्राकृतिक चरम से चरम कसौटी बड़ी कठिन से कठिन होती है ॥ शैतान का अंतिम से अंतिम लालच सबसे अधिक लुभाने वाला होता है। जो स्वतंत्रता अपने को प्यारी हो तो इस प्राकृतिक कसौटी में से अपने बिल्कुल शुद्ध पार उतरना चाहिये, शैतान के अंतिम लालच के लोभ से हर तरह अलग रहना चाहिये ॥

श्रावक समुदाय सहित श्रीजी तथा गुजरमलजी सूबा साहिब के आफिस के चौक में खड़े रहे। उन्हें देखकर सूबा साहिब ने आज्ञा की कि तुम दोनों इनके साथ टौंक जाओ इनके पास टौंक स्टेट का वारंट है तुम नहीं जाओगे तो कायदे से गिरफ्तार कर तुम्हें टौंक भेजा जायगा ॥

यह सुन किसीसे न डरने वाले सत्याग्रही श्रीलालजी पग पर पग चढ़ा एक पांव से खड़े होगये और सूबा साहिब से बोले कि:—

"मैं यहां खड़ा हूं टोंक भेजना तो दूर रहा परंतु मुझे इस स्थान से भी हटाना दुष्कर है हम साधु हैं, बुलाने से नहीं आते। भेजने से नहीं जाते, बैठते हैं तो लोहे की कील की तरह और चलते हैं तो पवन के वेग की तरह। आप राजा के अमलदार हैं परंतु साधुओं को सताने का अधिकार आपको भी नहीं होसकता"।

एक विद्वान् के विचार सत्य हैं कि " किसी आपत्ति से तुम अपनी श्रद्धा कभी मत छिनने दो, जब तक तुम्हारी अपनी आत्मा पर दृढ़ आत्म श्रद्धा होगी, तबतक हमेशा तुम्हारे लिये आशा है। जो तुमने आत्म श्रद्धा नहीं खोई और आगे बढ़ते ही रहे तो संसार आगे पीछे कभी न कभी तुम्हारे लिये मार्ग देगा ही। श्रद्धा श्रद्धा को जन्म देती है, मनुष्य चारित्रबल से और अपने मास्तिष्क की शक्ति से अत्यंत प्रतिकूल संयोगों में भी सफलता सिद्ध करते हैं। श्रद्धा मानसिक सेना का महावीर है। यह दूसरी अनेक शक्तियों को दुगुना तिगुना बल अर्पण करती है जब तक श्रद्धा नेता है तब तक समग्र मानसिक सैन्य स्थित है, प्रत्येक व्यक्ति में गुप्त बल अविनाशी शक्ति गर्भित है"।

भाग्यदेवी के लाड़ले पुत्र की दृढता और हिम्मत से उच्चारित किये हुए वचन सुनकर सूबा साहिब दिग्मूढ बन गए और 'राजाका हुक्म तुम्हें सिर चढ़ाना ही पड़ेगा' इतने शब्द कह भय से धूजते वे कमरे

के मकान में चले गए प्रायः एक प्रहर तक श्रीजी एक पाँव से खड़े रहे, अंत में नाथूलालजी को ऊपर बुलाकर सूबा साहिब ने कहा, "भाई! इस मनुष्य को हम टोंक नहीं पहुंचा सकते, इन्होंने चोरी का ऐसा कोई गुन्हा किया होता तो हम चाहे जैसा कर सकते थे, परंतु साधु का वेष पहिनना कुछ गुन्हा नहीं इस लिये तुम्हें योग्य लगे वैसा करके ले जाओ और हमें इस फंद से अलग रक्खो।

नाथूलालजी निराश हो श्रीजी के पास आये और घर आने के लिये नम्रता से प्रार्थना की तब श्रीजी ने कहा "आप मोहनीय कर्म को हटाओ कि, जिससे यह सब संताप मिट जाय।

अपने भाई को बहुत समय तक एक पाँव से खड़े देखकर नाथूलालजी गद्गद् होगए और कहा कि, आप अपने स्थान पर पधारो और आहार पानी करो फिर हम वार्तालाप करेंगे पश्चात् श्री जी वगैरह वहां से रवाना हो उस कुनबी के घर पर जहां पहले से ठहरे हुए थे आये। धोवण पानी तथा गौचरी लाये आहार पानी किये पश्चात् नाथूलालजी ने श्रीजी से कहा कि, अभी टोंक से चिट्ठी आई है उसमें लिखते हैं कि, चि. कुंवरीलालजी का ब्याह रुकगया है इस लिये आप श्रीजी को लेकर जल्द आओ।

श्रीजी ने कहा "अभी टोंक आने की इच्छा नहीं, आप आज्ञा देंगे तो ठीक है नहीं तो ऐसी ही स्थिति में हम विचरते रहेंगे, परंतु

बिना संयम लिये टोंक में पाँव भी न दूंगे" ।

अंत में निराश हो नाथूलालजी तथा हरदेवजी टोंक की तरफ रवाना हुए परन्तु जाते समय टोंक निवासी बालजी नाम के ब्राह्मण को वहीं रखगए और उसे कह गए कि, जहां २ श्रीजी विचरें वहां २ तू इनके साथ जाना इनकी सार संभाल लेना और इनके कुशल वर्तमान से हमें रोज २ स्थान २ सहित टोंक लिखते रहना ।

नाथूलालजी ने टोंक आकर माजी प्रभृति से सब समाचार कहे और कहा कि, संसार में रहने की उनकी बिल्कुल इच्छा नहीं है। माजी ने कहा कि, मुझे यह बात नई नहीं मालूम होती अब उसे अधिक सताना मुझे ठीक नहीं जँचता ।

श्रीजी तथा गुजरमलजी साधू के वेष में विचरने लगे, मुकाम पर किशनलालजी बिसनलालजी महाराज (पूज्यश्री श्रीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के) से समागम हुआ और उनके पास से शास्त्राभ्यास करना प्रारंभ किया। वहां से पाचों ठाणों साथ २ विहार कर रामपुरा (हो. स्टे.) में चातुर्मास किया संवत् १९४४ ।

रामपुरा में केशरीमलजी नाम के श्रावक सूत्र के जानकार और विद्वान् थे उनके परिचय से श्रीजी के सूत्र ज्ञान में अधिक वृद्धि

। उनके साथ के ज्ञान संवाद में श्रीजी को अपार आनंद आता
ार अधिक ज्ञान सम्पादन होता था ॥

रामपुरा का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् झालावाड़ कोटा प्रभृति
की ओर हो पांचों महात्मा पुरुष माधोपुर पधारे। पाठकों को विदित
होगा कि, माधोपुर में श्रीजी का मौसाल था । और इनके मौसाल
पक्ष का धर्मानुराग अधिक प्रशंसनीय था। श्रीजी को कैसे २ परि-
सह सहन करने पड़े यह सब वे जानते थे।श्रीजी के मामा के पुत्र
लक्ष्मीचंदजी (देवचन्दजी के पौत्र) माधोपुर निवासी, सायाचंदजी
पोरवाड़ प्रभृति श्रीजी तथा गुजरमलजीकी आज्ञा के लिये कोशीश की
टोंक आकर इनके कुटम्बियों को नाना विधि से समझा दीक्षा की
आज्ञा देने बाबत कहा।

प्रथम श्रीजी की मातु श्री चांदकुंवर बाई को अरज करने पर
उन्होंने कहा कि, बहू को (श्रीजी की अर्धांगिनी) पूछने दो ।
उनकी ओर से क्या उत्तर मिलता है ।

माजी ने फिर पुत्र वधू को बुलाकर पूछा कि, दीक्षा की आज्ञा देने
में तुम्हारी क्या राय है ? मानकुंवर बाई ने विनय तथा धैर्यपूर्वक
उत्तर दिया "आपने संसार में रहने के लिये जितने प्रयत्न
सके किये परन्तु सब निष्फल गए। अब तो आपको और
सबको तकलीफ होती है इसलिये आप जो फरमायेंगे मैं

कहूंगी "। अपने पति को अपने समीप से टलने की आज्ञा नहीं देने वाली मोह फांस में पति को फांसकर रखने वाली वर्तमानकाल की अर्द्ध दग्ध अर्धांगनाओं को यह अवसर सोचना चाहिये।

यह उत्तर सुनकर माजी का हृदय भर गया। आंखों से दड़ अश्रुपात होने लगा। थोड़े समय तक विचार निमग्न रहे औ फिर लक्ष्मीचन्दजी तथा नाथूलालजी से कहा कि, चि. मानिकलाल (नाथूलालजी का पुत्र) को श्रीलालजी के नाम पर रक्खो " नाथूलालजी ने माजी की यह आज्ञा शिरोधार्य की, फिर माजी ने कहा" "सुख से तुम आज्ञा देने जाओ। मेरा आशीर्वाद है कि श्रीजी सुन्दर रीति से संयम पालें, आत्मा का कल्याण करें और जैन मार्ग दिपावें "। धन्य है ऐसी उत्कृष्ट इच्छा वाली माताओं को ! *
इसी तरह गुजरमलजी पोरवाड़ की माता तथा उनकी स्त्री तथा उनके भाई मांगीलालजी को समझा उनकी दीक्षा की आज्ञा भी प्राप्त की। पहिले से ही साधु का वेष पहिन लिया होने से किसी

---

* माता के सम्बन्ध में एक कथा पूज्य श्री कहते कि पांच त्र वाली एक माता के एक पुत्र की इच्छा दीक्षा लेने की होने गुरु श्री ने माता को सदुपदेश दे अपने पुत्र की भिक्षा देने कहा स माता ने अपने अहोभाग्य समझ एक के बदले दो पुत्रों को र्जी के शिष्य बनाये।

गुजरमलजी:— (सबके संमुख बोले) मैं सर्वदा आपकी आज्ञा में ही विचरूंगा।

श्रीजी:—बस, तो अभी ही मेरी आज्ञा है कि, आप मैं बलदेवजी महाराज की नेश्राय में रहें ॥

गुजरमलजी ने यह आज्ञा शिर चढ़ाई और दोनों को बलदेव मुनि (किसनदासजी महाराज के शिष्य) के शिष्य बनाये। श्री की इच्छा न होते भी किशनलालजी महाराज बोले कि, हम तो गुजरमलजी को आपकी नेश्राय में समझते हैं यह सुनकर गुजरमल को अपार आनंद हुआ और वे बोले कि, मुझे सम्यक्त्व रत्न प्रीति कराने वाले धर्म के मार्ग पर लगाने वाले सच्चे उपकारी गु तो श्रीजी महाराज ही हैं ॥

यद्यपि श्रीजी की इच्छा पूज्य श्री हुकमीचन्दजी महाराज सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध विद्वान मुनि श्री चौथमलजी महाराज के पा दीक्षा लेने की थी, तो भी उनके माता पिता के आग्रह से अपने गु आमनाय की सम्प्रदायमें अर्थात् कोटे वाले की सम्प्रदाय में दीक्ष देने की थी और इसी शर्त से आज्ञा मिली थी। इसलिये कोटा सम्प्रदाय में उन्होंने दीक्षा ली दीक्षा लेने के पहिले ही आचार सम्बन्धी कठिन शर्तें उनके गुरु से श्रीजी ने मंजूर करवाली थीं।

श्रीजी को दीक्षित हुए पश्चात् श्री किशनलालजी महाराज से
[illegible]लालजी ने विनय की, कि आप श्रीजी के साथ टोंक पधार कर
[illegible]ही मातुश्री के दर्शन की अभिलाषा पूर्ण करें। महाराजने
[illegible] जैसा अवसर ॥

तत्पश्चात् महाराज साहिब टोंक पधारे और वहां एक ही रात
दर्शन दे हाड़ोती की ओर विहार किया और वहां से झालरा-
[illegible] पधारे ॥

संवत् १९४६ का चातुर्मास झालरापाटन किया। वहां धर्म का
उद्योत हुआ, परन्तु श्रीजी महाराज के गुरु के भी गुरु श्रीकिशन-
जी महाराज कि, जो उनके ज्ञानादि गुणों की अभिवृद्धि करने
आलंबन भूत थे उनका इस चातुर्मास में स्वर्गवास होगया।
कारण श्रीजी को बहुत दुःख हुआ। परन्तु जिंदगी की अस्थिरता
का संसार असारपना समझने वाले तुरन्त उसे सहन करने के
कटिबद्ध होगए और वीर वाक्यों की मलहम पट्टी से इस
को भरने लगे ॥
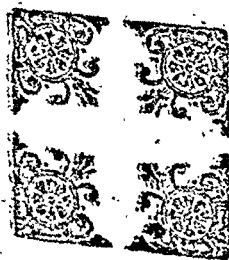
अध्याय ७ वाँ।

सरिता का सागर में प्रवेश।

पूर्व अध्याय में आपन पढ़ चुके हैं कि, श्रीजी की आ
अभिलाषा ज्ञान वृद्धि और चारित्र विशुद्धि विषय में अपनी इ
सिद्धि साधनार्थ श्रीमान् हुकमीचंदजी महाराज की सम्प्रदाय
सम्मिलित होने की थी, चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् अपना मनो
खुले दिल से गुरु की सेवा में निवेदन किया। मुनिश्री विश्वनला
तथा बलदेवजी ने कहा एकतो गुरु वियोग से हमारा हृदय
होरहा है और तुम भी हम से अलग होकर जले पर नमक छिड़
चाहते हो।

उत्तर में श्रीजी महाराज ने विनय पूर्वक कहा कि, जिस
से मैंने घर द्वार और कुटुम्ब परिवार त्यागा है उस हेतु को पू
से सिद्ध करना ही मेरा परम ध्येय है।

श्रीजी महाराज अपने उच्चाशय से न डिगे और अपने
निश्चय को सिद्ध करने के लिये गुरुजी की शुभाशीष पाकर रा
...। वहां सुयोग्य सुश्रावक केसरीमलजी सुराना का राम

यन में अत्यन्त उपयोगी हुआ। श्रीजी अविरत रीति से
यन करने लगे। ज्ञानमें अधिक उन्नति की। इनकी व्याख्यान
उत्तम और आकर्षक होने से श्रावकों में भी ज्ञानरुचि
ई भावना बढ़ने लगी।

ातुर्मास पूर्ण हुए बाद रामपुरा से विहार कर श्रीकानोड़
पर पंडित मुनि श्री चौथमलजी महाराज विराजते थे वहां
और अपना अभिप्राय कहा। टोंक श्रीयुत नाथूलालजी वम्ब
यह खबर मिलते ही वेभी कानोड़ आये और श्रीजी महाराज
ज्ञानुसार उन्हें अपनी नेश्राय में लेने के लिये श्रीमान् चौथमलजी
जी को आज्ञापत्र लिखा दिया, तब उन्होंने अपने बड़े शिष्य
ाजी महाराज के शिष्य बनाकर श्रीजी महाराज को अपनी
ाय में ले लिया। यह घटना डुंगरा (मेवाड़) मुकामपर संवत्
१ के मगसर शुक्ला १ शनिवार को हुई। तत्पश्चात् वे श्रीमान
ाजी महाराजकी आज्ञामें विचरने लगे। यहां उनकी आत्मिक
ाि अधिक विकाश हुआ। ज्ञानी गुरुके समागम से सूत्र ज्ञा
ातीत उन्नति की, निरतिचार चारित्र पालन से वे शुक्
न होकर लोगों में पूजनीय और कीर्ति के [illegible]
। " सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम् ?"

सं. १९४९ का चातुर्मास सद्गुरुवर्य श्रीचौथमलजी महा
कानोड़ में किया।

यहां विशेषतया व्याख्यान श्रीजी महाराज फरमाते थे।
जैसे हृदय को पिघलादे ऐसा उपदेश और उसका अद्भुत
देख सब को बडा आनंदाश्चर्य होता और श्रोतृगण पर अ
उपकार होता था।

इस चातुर्मास में वे जिस मकान में ठहरे थे वहां ए
विकराल सर्प रहता था। एक दिन भी ऐसा भाग्य से ही होता
जिस दिन सर्प देखने में न आता हो। आहार पानी के
वह कई समय गरल डालता था। रात के समय रास्ते में पग देते
डालने जाते तो रजोहरण के साथ ठुकराता। तब दूसरी राह
फूंकार मारता और सामने होता था। तथा कचित् समय
प्रहार करता था। दिन में भी वह निडर हो उस मकान में
था। सांप साधुजी से निर्भय था। उसी तरह साधु भी सांप
भय थे। श्रावकोंने मकान बदलने के लिये महाराज से
बहुत विनय की, परन्तु यह निष्फल गई। महाराज कहते थे
ले के मुनि सिंहकी गुफा, सर्प के बिल और घोर श्मशान
स्वेच्छापूर्वक जाकर उपसर्गों को निमंत्रित करते थे। यह सर्प
कसौटी के लिये बिना आमंत्रित किये यहां आया है सो
हमारे सत्संग का लाभ उठा पवित्र जिनवाणी का श्रवण
रहे। पूर्ण चातुर्मास इसी स्थान पर सांप के साथ रहकर
किया परन्तु पुण्यप्रसाद से तथा तपचारित्र के प्रभाव से

उपसर्ग न कर सका और साधुओं के धैर्य तथा निर्भयता की का यह समय निर्विघ्न समाप्त हुआ। इस युगमें भी चारित्र गना प्रभाव तिर्यंचों पर दिखा सकता है, जिसके अनेक ण पूज्य श्री के जीवन में मिलेंगे।

संवत् १९५० का चातुर्मास श्रीमान् चौथमलजी महाराज के कमल के समीप रहकर जावदमें किया। श्रीजी के समागम सद्बोध से जैन अजैन इत्यादि लोग हर्षित हुए और ज्ञानवृद्धि र्तव्यपरायण बनें।

संवत् १९५१ का चातुर्मास निम्बाहेड़ा (मालवा) संवत् १९५२ टी सादड़ी (मेवाड़) और सं० १९५३ का चातुर्मास में किया। श्री जी महाराज चातुर्मास या शेषकाल जहां २ ते थे वहां वहां के लोग उनके अपरिमित ज्ञान निर्मल चारित्र टुता इत्यादि असाधारण गुणों से मुग्ध बनकर श्रीजी की मुक्त प्रशंसा करते थे। दिन पर दिन उनका विमल यश देश देशान्तरों स्तारित होने लगा।

सागर वर गंभीरा।

संवत् १९५३ में तपस्वीजी श्री हजारीमलजी महाराज के साथ महाराज ठाणा २ रामपुरा पधारे। वहां ऐसे समाचार

मिले कि, आचार्य महोदय श्री उदयसागरजी महाराज का स्वा
ठीक नहीं, आचार्य श्री की ओर श्रीजी का अनुपम भक्ति भा
गृहस्थाश्रम में थे तब ही से था उपरोक्त समाचार मिलते ही ब्रह्म
न्तातुर हृदय और दर्शनातुर नेत्रों ने शीघ्र विहार करने की
प्रेरणा की और थोड़े ही दिनों में परम प्रतापी महान् आचार्य
उदयसागरजी महाराजकी सेवा में रतलाम पधारे।

श्रीलालजी महाराज का ज्ञानाभ्यास की ओर विशेष लक्ष्य
तदनुसार उत्तम आचार विचार देख आचार्यजी महाराज
प्रसन्न हुए और श्रीजी से पूछा कि अब कौन से सूत्र का
करते हो ? श्रीजी ने विनयपूर्वक उत्तर दिया:—" कृपा
अभी मैं श्री ठाणांगजी सूत्र का अभ्यास करता हूं " यह
कर श्रीमान् आचार्य श्री के मुख कमल से सहज ही ऐसे
निकल पड़े कि, ठाणांग समवायंग सूत्र का अभ्यास करने से
वर गंभीरा ' होओगे। इस आशीर्वचन को महाराज श्री
आदर पूर्वक शिरसावंद्य कर कहा, कि कल्पवृक्ष की सेवा में
इच्छित वस्तु की प्राप्ति हो उसमें आश्चर्य क्या ?

पाठक पहिले पढ़ चुके हैं कि, जब श्रीजी गृहवास में
उन्हें श्रीधर नाम देने वाले भी यही महापुरुष थे। ज्ञान और
रूपी श्री (लक्ष्मी) को धारण कर सचमुच श्रीधर बन

महापुरुष की सेवा में उपस्थित हुए तो उन्हें 'सागर समान होओगे' ऐसी शुभाशिष दी और वह थोड़े बहुत समय में भी हुई। सतत् सत्य का सेवन करने वाले महापुरुषों वन कदापि निष्फल नहीं जाते। योग दर्शन के प्रणेता पतञ्जलि (जिन्हों ने हरिभद्र सूरी को मार्गानुसारी कहा है) कहते हैं—

"सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रयत्वम्"

सूत्रार्थः—(साधक योगी के चित्त में) सत्य की स्थिरता होने क्रिया तथा फल की स्वाधीनता (होती है)

अर्थात् अपनी इच्छानुसार अन्य को धर्माधर्म तथा स्वर्ग नर-दि प्राप्त करा देने का उस योगी की वाणी में सामर्थ्य है। सत्य से सिद्ध हो गया है ऐसे योगी की वाणी अमोघ, प्रतिहत होती है। इसलिये ऐसा योगी किसी को कहे कि, धार्मिक होजा तो उनके वचनमात्र से ही वह पापी हो तो भी धार्मिक हो जाता है, किसीको कहदें कि तू स्वर्ग प्राप्त कर, तो उनके वचनमात्र से ही वह अधार्मिक हो तो भी स्वर्ग नहीं देने वाले संस्कारोंको दूर कर स्वर्ग प्राप्त कर लेता है (पातंजल योगद

आचार्य श्री के शरीर में व्याधि बढ़ती देख शरीरका भंगुर स्वभाव समझ उन्होंने सम्प्रदाय की रक्षा और उन्नति के श्रीमान् चौथमलजी महाराज को युवाचार्य पद पर नियुक्त कि (संवत् १९५२) तत्पश्चात् वेदनीय कर्म के क्षयोपशम से पूज को कुछ आराम होने पर उनकी आज्ञा ले श्रीजी ने रतलाम से किया और संवत् १९५३ का चातुर्मास युवाचार्यजी महाराज साथ जावद में किया ।

अध्याय ८ वाँ।
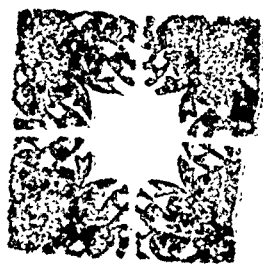
मेवाड़ के मुख्य प्रधान को प्रतिबोध।

श्रीजी की अपूर्व ख्याति सुन मेवाड़ के * पायतख्त उदयपुर श्री संघ ने उनका उदयपुर चातुर्मास होने के लिये आग्रह पूर्वक की। इसलिये सं० १९५३ का चातुर्मास उदयपुर में हुआ। यहां व्यान में हिन्दू मुसलमान हजारों लोग आने लगे। कई मंदिर-

---

*मेवाड़ की प्रसिद्धि में अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं अपनी टेक कायम ने के लिये राणा प्रताप ने हजारों संकट सहन किये थे समस्त हिंद दयपुर के राजपूत अग्र स्थान पाते हैं मुसलमानों ने चित्तौड़ को माल किये बाद उदयपुर को राजधानी बनाया। पुरुषों ने अपना कायम रखने और स्त्रियोंने अपना सतीत्व कायम रखने के प्राणों की भी परवाह न की थी। उनके स्मारक अभी चित्तौड़ में कायम हैं। भारत के इतिहास में मेवाड़ की कीर्ति सुवर्णा से अंकित है. इतनाही नहीं आज भी अपने उस आन के लिये गर्व है, सम्राट् जार्ज के दिल्ली दरबार के समय भी हिन्द महान् राज्यों से भी इनके लिये खास व्यवस्था हुई

आगीं आई भी नित्य प्रति व्याख्यान श्रवण का लाभ लेने लगे उनमें से कितने ही ने श्रीजी से सम्यक्त्व भी ग्रहण की श्रीजी राज के अनुपम गुणों में सब लोग मुग्ध होते और कहते सचमुच उस महात्मा का अस्तित्व जैन—शासन के पुनरुत्थान लिये ही है।

अभी भी उदयपुर राज्य अपने सिक्के में 'दोस्त लंडन' लिख चारों ओर की उच्च पहाड़ियां प्राकृतिक कोट के रूप में विद्य हैं। यहां की जमीन ऊंची होने से कई जगह यह पानी जाता है परन्तु कहीं से भी उदयपुर में पानी नहीं आ मेवाड़ की भूमि भी पवित्र गिनी जाती है। जैनियों के श्री ऋषभ ना श्रीकेशरियाजी, वैष्णवों के श्रीनाथजी और शैवों के श्री एकलिं इन तीनों धामों का राज्य की तरफ से पूर्ण मान सन्मान जाता है। श्री ऋषभदेव स्वामी के पाटवी खानदान में होने से तक ये "धर्मरक्षक" के समान अपना धर्म अदा करते हैं। राज्य का मूल सिद्धान्त है कि, "जो दृढ राखे धर्म को तिह राखे करता चक्रवर्ती राजाओं की सेवा में सोलह हजार और बत्तीस हजार रा रहते थे वैसा ही हाल श्री उदयपुर के महाराणा साहब का है भी अपने सोलह और बत्तीस उमरावों में सूर्य के समान शोभा निकलते हैं। कचहरी सवारी तथा राज्य की दूसरी रीति रिवाज

इस चातुर्मास में उदयपुर में संवर और तपश्चरण इतना धेक हुआ कि, पहिले कभी भी न हुआ था। स्कंध त्याग प्रत्याख्यान गादि इतने अधिक हुए कि, जिनकी कदाचित् नामवार तफसील जाय तो एक पुस्तक भर जाय।

कई श्रावक श्राविकाओं ने बारह व्रत अङ्गीकार किये-शारीरिक चना, वैद्यक, नीति करकसर इत्यादि सिद्धान्तों से ांस खाना हानिकारक समझ कई मांसाहारी लोगों ने मांस भक्षण रने का त्याग किया कईयों ने मदिरापान त्याग और कईयोंने शि-ार खेलना छोड़ा। कसाइयों को मुंह मांगे दाम देकर छुड़ाने की पेक्षा मांसाहारियों को समझाने में विशेष लाभ है। शहर में बड़े दीसा ओसवाल) के मालिकत एक पंचायती हवेली है जिसे

भी शास्त्रानुसार ही होते रहते हैं-जगन्माता गाय को मेवाड़ की सीमा के बाहर कोई नहीं लेजा सकता, बैल, भैंस, पाड़े इत्यादि जानवर भी अजान आदमी या कसाई के हाथ बेचने की सख्त नहै है, मोर, कबूतर, मच्छी, मारनेकी भी मनाई है। वृद्ध जान-वरों को नीलाम नहीं करने देते और न कसाई के हाथ ही बेचने देते। राज्य की तरफ से सरकारी पशुशाला में उनका पालन किया जाता है वर्ष के कई महीनों कसाई कंदोई तेली कुम्हार इत्यादिकों से अगते पलाये जाते हैं।

औहरा भी कहते हैं इसी बड़ी विशाल जगह में साधु मुनिरा चातुर्मास करते हैं वहां हमेशा २०० से ३०० मनुष्य श्रीजी व्याख्यान में एकत्रित होते थे। दोनों बड़ी २ धर्मशालाएं भर ज पर तीसरी भोजनशाला है वहां बैठना पड़ता था। श्रीजी की आव इतनी बुलंद थी कि सब श्रोतृसमुदाय बराबर श्रवण सकता था।

चातुर्मास में आमेट के रावतजी साहिब पंचायती नोहरे पधारे थे श्रीजी महाराज के सदुपदेश से उन्हें बहुत ही आनंद अहिंसा धर्म की रुचि हुई व्याख्यान के पश्चात् खड़े हो श्रीजी महा के पास उन्होंने ऐसी प्रतिज्ञा की कि, नवरात्रों में बलिदान होत उसमें से दो पाड़े और चार बकरे हमेशा के लिये कम करता इसी तरह कोठारिया के रावतजी साहिब ने भी दो पाड़े और बकरे नवरात्रों के बलिदान में से हमेशा के लिये कम करते महाराज के पास प्रतिज्ञा ली थी, इनके सिवाय दूसरे भी कई जागीर दारों ने तथा राज्यकर्मचारियों ने श्रीजी के अनुपम सद्बोध से नाना विधि की प्रतिज्ञाएं ली थीं।

चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् कार्तिक वद्य १ के रोज विहार कर आहड़ ग्राम कि जो उदयपुर से १॥ माइल दूर प्राचीन स्थान है वहां श्रीजी महाराज पधारे वहां श्रीमान

सिंहजी साहिब कोठारी * उनकी अद्भुत प्रशंसा सुन
ार्थ पधारे दर्शन कर बार्तालाप किया । कितनी ही शंकाएं
जिनके निराकरणार्थ विविध प्रश्न किये । उनको महाराज
की तरफ से ऐसे संतोष कारक उत्तर मिले कि उनका मन
हुत ही प्रफुल्लित हुआ ।

फिर दूसरे दिन दीवान साहिब आहेड़ पधारे उनके साथ श्री-
ान् महेताजी गोविन्दसिंहजी साहिब भी पधारे दर्शन कर एकान्त
थानमें पूज्यश्री के पास बैठ अनेक बातें बहुत समय तक करते
रहे और उसी दिन से श्रीमान् कोठारीजी साहिब के हृदय पर
हाराज श्री के वचनामृतों का इतना अधिक प्रभाव गिरा कि जैन

---

* श्रीमान् कोठारीजी साहिब उस समय उदयपुर के मुख्य
ीवान थे। साथ के पृष्ठ पर उनका फोटू दिया गया है। वे विद्वान्
ुद्धिमान्, सत्यवक्ता, विचक्षण और सब धर्मों पर एकसा भाव रखते
ीमान् मेवाड़ाधीश हिंदवा सूर्य महाराणा साहिब की वे अंतःकरण
ूर्वक प्रशंनीय सेवा बजाते हैं। उनकी अनुकरणीय राज्यभक्ति के
कारण महाराज श्री के प्रीतिपात्र और विश्वासपात्र हो गए हैं। अभी
ी राज्य में उनकी मानमर्यादा अधिक है। पाव मे सुवर्ण बक्षा है
और वंश परम्परा की जागीर मिली है।

धर्म पर उनकी दृढ श्रद्धा हो गई और श्रीजी महाराज के वे अ
न्य भक्त बन गए. तत् पश्चात् वहां से विहार कर मेवाड़ के प्रा
में विचरते समय लोगों ने उनसे हजारों स्कंध, तपश्चर्या तथा
प्रत्याख्यान किये ।

अध्याय ९ वाँ।

पति की राह पर पत्नी।

क्रमशः मेवाड़ मालवा को भूमि पावन करते श्रीजी महाराज तलाम पधारे। श्रीमान् युवाचार्यजी महाराज भी जावद से विहार र रतलाम पधार गए थे। रतलाम श्री संघने अत्यंत उत्साह भक्ति ौर हर्ष पूर्वक उनका स्वागत किया। प्रायः दो हजार मनुष्य, उन्हें ाने के लिये सामने गए थे। उस समय आचार्य श्री-उदयसागरजी महाराज की तकलीफ के समाचार देशान्तरों में फैलते ही हजारों लोग पूज्य-श्री के दर्शनार्थ आने लगे। टोंक से श्रीयुत नाथूलालजी नम्र उनके पुत्र मानिकलाल और श्रीमती मान-कुंवर बाई (श्रीजी की संसारावस्था की धर्मपत्नी) भी आई। उस समय हजारों मनुष्यों के बीच [illegible] से [illegible] घोषणा करते श्रीलालजी महाराज की [illegible] वाणी [illegible] कुंवरबाई को वैराग्य उत्पन्न हुआ। पति की राह [illegible] साधने की उत्कंठा हुई [illegible] को ऐसी सद्बुद्धि [illegible] होती ही है इससे [illegible] भी [illegible] श्रीमान् आचार्यजी महाराज के पास ऐसी [illegible]

मास से अधिक समय तक संसार में रहने के प्रत्याख्यान हैं। रोक प्रतिज्ञा ले मानकुंवरबाई सबकी आज्ञा लेने टोंक गई।

सं० १९५४ माघ शुक्ला १० मी के दिन आचार्य उदय सागरजी महाराज का स्वर्गवास हुआ उनकी अ देहिक क्रिया रतलाम के श्री संघ ने बहुत ही उदारता पूर्व समारंभ से की।

पश्चात् सं० १९५४ के फाल्गुन शुक्ला ५ मी के रो श्रीमती मान कुंवर बाई ने रतलाम स्थान पर श्रीमती रंगु महासतीजी की सम्प्रदायकी सतीजी श्री राजाजी के पास दी अंगीकार की उस समय श्रीजी महाराज भी रतलाम विरा थे एक ही मिति को तीन दीक्षाएं हुई। दीक्षा उत्सव भी ब ही धूम धाम से किया गया रतलाम संघ संत महंत की से और धर्मोन्नति के कार्य में समय २ पर अतुलित द्रव्य व्य कर जिनमत को दिपाते हैं तथा कर्तव्य पालन करते हैं य अत्यंत ही प्रशंसनीय है।

श्रीमान् चौथमलजी महाराज आचार्यपदारूढ़ हुए औ सम्प्रदाय की सब तरह सार संभाल करने लगे परंतु स वयोवृद्ध होने से तथा नेत्रशक्ति भी क्षीण हो जाने से उनं विहार होना अशक्य था इसलिये वे भी रतलाम में ही स्थि

मास रहे और श्रीजी महाराज को आज्ञा की कि, तुम शेषकाल
कटवर्ती ग्रामों में विहार करते हुए चातुर्मास रतलाममें ही करो अपने
पात् अगर सम्प्रदाय का भार उठा सके इतने गुण वाले व योग्यता
के साधु कोई थे वो ये श्रीलालजी ही थे । और इसी लिये
न्हें अपने पास रख शिक्षित करने की उनकी इच्छा थी। इस लिये
। १९५५-५६-५७ ये तीनों चातुर्मास पूज्य श्री की सेवा में रह
तलाम किये । पवित्र पुरुष जिस स्थान को अपने कारण से
वित्र बना रहे हों वही स्थान तीर्थभूमि कहलाता है। उस समय
तलाम शहर सचमुच तीर्थक्षेत्र था । श्रीजी महाराज के सद्बोधामृत
विपुल प्रवाह रतलामवासीयों के अंतःकरण की मैल धो उन्हें
त करता था । तीन वर्ष के बीच जो २ महान् उपकार हुए वे अव-
य हैं। देशान्तरों से भी बहुत लोग दर्शनार्थ रतलाम आते और
महाराज के व्याख्यान से बहुत २ संतुष्ट होते थे। इससे
महाराज की कीर्त्तिदुंदभी दशों दिशाओं में बजने लगी ॥

अध्याय १० वाँ
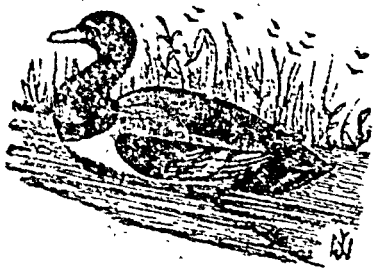
आचार्यपदारोहण।
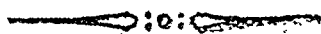
श्रीमान् आचार्य महोदय श्री चौथमलजी महाराज की सेवा
श्रीजी विराजते और अपने अमूल्य वचनामृतों द्वारा जनसमूह
अपार उपकार कर रहे थे इतने ही में सं० १९५७ के कार्तिक मास
आचार्य श्री चौथमलजी महाराज के शरीर में व्याधि उत्पन्न हुई
क्षमासागर उसे समभाव से सहन करते थे। कार्तिक शुक्ला ।
रोज रात को १०-११ बजे व्याधि बढ़ने लगी। श्रीजी महाराज
पूज्य श्रीकी सेवामें तन मन, अपर्ण किया था। उनके हाथ में आ
न आने से ये बाहर आये। और श्री ऋषभदासजी श्री
जो संवर कर वहीं पर सोए थे उन्हें यह हकीकत कही तुरं
श्रीसंघ के अग्रगण्य सेठ अमरचंदजी साहिब पीतलिया तथा
तेजपालजी सचेती इत्यादि को यह खबर दे आये। इसपरसे वे
तथा और कितने ही श्रावक पूज्य श्रीकी सेवामें आये। सेठ अ
चंदजी साहिब ने नाड़ी देखी और पूज्यश्री को आवाज
संचेतन किया तुरन्त सचेतन हो उन्होंने उपस्थित साधु आ
के समक्ष प्रकट आलोयना निंदना की पुनः महाव्रत आरो

शुद्ध हुए। उस समय सेठजी श्री अमरचंदजी पीतलिया तेजपालजी इत्यादि श्रावकों ने अरज की कि " श्रीमान् ! आपने आलोयनादि करके शुद्धि करली है परंतु अब हमें और चतुर्विध को किस का आधार है। उत्तर में पूज्य महाराज ने फरमाया " मेरे पश्चात् सम्प्रदाय की सार संभाल श्रीलालजी करें " श्रीजी महाराज के अनुपम गुणों से श्रावक लोग परिचित थे और इसीलिये आचार्यपद को श्रीजी महाराज दिपावें ऐसा वे पहिले से ही चाहते थे अब उनने पूज्य श्री की उपर्युक्त आज्ञाको अत्यानंद पूर्वक शिरोधार्य किया।

दूसरे दिन कार्तिक शुक्ला २ के रोज दोपहर को चतुर्विध संघ एकत्रित हुआ और श्रीमान् सेठ अमरचंदजी साहिब पीतलिया ने आचार्यश्री की सेवा में पुनः चतुर्विध संघके समक्ष अर्ज की कि " जैनशासनरूप आकाश में आप सूर्यवत् प्रकाश कर रहे हैं यह सूर्य चिरकाल तक प्रकाशित रह हमारे हृदय में व्याप्त अज्ञानान्धिकार को दूर करता रहे यह हमारी हार्दिक भावना है। परंतु आपके शरीर में व्याधि है इसीलिये सम्प्रदाय में जो मुनिराज आपको योग्य जंचते हों उन्हें युवाचार्य पद प्रदान करने की कृपा करें ऐसी मैं श्रीसंघ की तरफ से नम्र प्रार्थना करता हूं " इसपर से आचार्य श्री ने पुण्यपुंज सर्वदा सुयोग्य मुनिश्री श्रीलालजी महाराज को युवाचार्यपद प्रदान करने का हुक्म फरमाया तब श्रीलालजी महाराज

ने अति नम्रभाव से आचार्यश्री की सेवा में सबके सामने यही की कि "सम्प्रदाय में कई मुनिराज मुझ से दीक्षा में वय में ज्ञान गुणों में अधिक हैं इसीलिये मुझपर यह भार न रक्खा जाय मेरी अंतःकरण पूर्वक प्रार्थना है।

यह सुन श्रीजी महाराज के गुरु और आचार्य श्री के शिष्य श्री वृद्धिचंद्रजी महाराज कि, जो वहां विराजमान थे वे से यों बोले कि "श्रीलालजी ! तुम्हें आनाकानी न करना श्रीमान् आचार्यजी महाराज बहुत ही दीर्घदर्शी, पवित्रात्मा, के ज्ञाता और चतुर्विध संघ के परमहितैषी हैं उनकी शिरसा वंद्य कर श्रीसंघ की सेवा बजाओ और जैन-शासन दिपाओ."। इन वचनों को चतुर्विध संघ ने बहुत २ किया तब श्रीलालजी महाराज दोनों हाथ जोड़ सिर नमा मौन पश्चात् आचार्यजी महाराज ने श्री चतुर्विध संघ की सम्मति युवाचार्य पद प्रदान किया और चतुर्विध संघ को उनकी पालन करने का हुक्म फरमाया, तब चतुर्विध संघ ने हर्ष के साथ खड़े हो अत्यंत भक्तिभाव सहित नवयुवाचार्यजी महारा समामें वंदना की।

श्रीमान् आचार्य श्री चौथमलजी महाराजने अपना अव काल समीप समझ संथारा किया संथारे की खबर बिजली की तरह

फैलगई. संख्याबद्ध श्रावक श्राविकाएं बाहर ग्रामों से पूज्य श्री
दर्शनार्थ आने लगीं. नित्य चढ़ते परिणाम से कार्तिक शुक्ला ८
रात्र को पूज्य श्री चौथमलजी महाराज शांतिपूर्वक औदारिक
को त्याग स्वर्ग सिधारे।

दूसरे दिन अर्थात् सं० १९५७ के कार्तिक शुक्ला ९ के दिन
रतलाम संघ आचार्यश्री का निर्वाण महोत्सव करने को एकत्रित
दर्शनार्थ आये हुए अन्य ग्रामों के श्रावक बड़ी संख्या में वहां
स्थित थे। इस समय चतुर्विध संघ ने श्रीमान् युवाचार्यजी
राज को आचार्यपदारूढ़ करने के लिये उनके गुरु श्री ऋद्धि
जी महाराज से विज्ञप्ति की।

आचार्य श्री के मृतदेह को विमान में पधराया. पश्चात्
ध संघ की विनय परसे उनके पाट पर श्रीमान् श्रीलालजी
ज को बिठाये और उनके गुरु श्रीऋद्धिचंदजी महाराज ने
श्री की पछेवड़ी धारण कराई और चतुर्विध संघ अत्यन्त
और भक्तिभाव सहित आचार्य श्री को वंदना कर जय
ब्दों से वधाने लगा शास्त्र और सम्प्रदाय की रीति के ज्ञाता
ठ अमरचंदजी साहिब ने खड़े होकर बुलंद आवाज से
आजसे श्रीमान् श्रीलालजी महाराज आचार्यपदारूढ़
लिये अब सब छोटे बड़े संतों को, आर्याओं को इसी
त श्रावक श्राविकाओं को उनकी आज्ञा का पालन

करना चाहिये और सम्प्रदाय की रीत्यानुसार दीक्षा में बड़े मुनि
को वे वंदना करेंगे और छोटे मुनिराज उन्हें वंदना करेंगे परंतु
को उनकी आज्ञा में चलना चाहिये " ये शब्द सुनकर सब
एक ही आवाज से पूज्य श्री को विश्वास दिलाया कि आजसे
की आज्ञा को प्रभु आज्ञा समान समझ हम आपकी आज्ञा
विचरेंगे ।

पश्चात् सद्गत आचार्य श्री के मृत देह को हजारों मनुष्य
समूह में मनोहर बिमान में पधरा बड़े धूमधाम से जय २
जय २ भद्रा के शब्दों से आकाश को गुंजाते शहर के मध्य हो श
भूमि में ले गए वहां चंदन, काष्ट घृतादि से अग्निसंस्कार कि

आचार्य श्री चौथमलजी महाराज अंतिम तीन वर्षों से र
में स्थिरवास थे. कारण कि उनकी नेत्र शक्ति क्षीण हो गई
इस कारण से और वृद्धावस्था होने से साधुओं की बहुत
वाली एक बड़ी सम्प्रदाय की भली भांति संभाल करने का
आचार्य श्री चौथमलजी महाराज को मुश्किल मालूम हो
सम्प्रदाय की सम्यक् रीति से सार संभाल और उन्नति हो
लिये उन्होंने अपनी आज्ञा में विचरते साधुओं में से चार सा
को प्रवर्तक की तरह मुकर्रर कर सब अधिकार उन्हें सौंप दिये
चार प्रवर्तकों के नाम निम्नांकित हैं ।

कि चाहे जो मनुष्य चाहे जैसे विकट प्रश्न करता उसे वे ऐसी स
और खूबी तथा संतोष कारक उत्तर देते कि, प्रश्नकर्ता को पुनः
उठाने की प्रायः आवश्यकता न रहती थी, इस प्रकार जैन शा
का उद्योत करता हुआ भव्यजनों के हृदयरूप कमल वन को वि
सित करता हुआ, पूज्यश्रीरूपपाद विहारी सूर्य भूमंडल में विचरते

रतलाम का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् पूज्य श्री श्रीला
महाराज वहां से विहार कर मालवा और मेवाड़ की भूमि को
करते २ अपने पूर्व पुण्य का प्रकाश फैलाते तथा श्री हुक्मी
महाराज की सम्प्रदाय का गौरव बढ़ाते अनुक्रम से उदयपुर
काल पधारे उस समय उदयपुर के मुख्य दीवान श्रीमान् को
साहिब व्याख्यान का लाभ लेते थे वे पूज्य श्री से व्याख्यान
में ही खड़े होकर सं० १९५८ का चातुर्मास उदयपुर करने
प्रार्थना करने लगे इसके उत्तर में पूज्य श्री ने फरमाया कि इस
तो यहां चातुर्मास करने की अनुकूलता नहीं है परंतु तुम्हारे
जवाहिर (जवाहरात) की पेटी समान श्री जवाहिरलालजी मह
को उदयपुर चातुर्मास करने भेज दूंगा और उनके चातुर्मा
आनंद मंगल होता रहेगा तदनुसार सं० १९५८में श्रीमान् ज
लालजी महाराज को उदयपुर चातुर्मास करने को भेजा वहां
उपदेश से बड़ा उपकार हुआ कई कसाइयों ने जीवहिंसा
तथा मांस भक्षण करने का त्याग किया इस वर्ष मोतीला

स्वीजी महाराज ने ४५ उपवास किये थे उस मौकेपर श्रावण वद
से भाद्रपद वद ७ तक कसाई खाने बंद रहे हजारों जीवों
अभयदान दिया गया, कई जीव सुलभ बोधी हुए। महाराज श्री
व्याख्यान की अद्भुत छटा से जैन अजैन श्रोतृगण पर अपूर्व
भाव पड़ता था। उदयपुर का श्रावक समुदाय चातुर्मास के दरम्यान
ज्य श्री के वचनों को पुनः २ याद कर उनका उपकार मानता
और कहता था कि, सचमुच जवाहिर की पेटी ही हमारे लिये
ज्यश्री ने भेजी है ये जवाहिरलालजी महाराज वेही हैं जो अभी
आचार्य पद दिपा रहे हैं आपने दक्षिण के प्रवास में संस्कृत का
हुत अच्छा अभ्यास किया है।
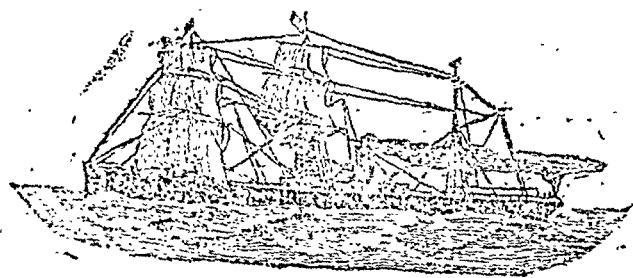
अध्याय ११ वाँ

सदुपदेश-प्रभाव ।

भीलवाड़ा—पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज उदयपुर भीलवाड़े पधारे शेषकाल कल्पते दिन ठहरे । भीलवाड़ा के हा महताजी श्री गोविंदसिंहजी साहिब ने श्रीमान् के सदुपदेश से स कत्व रत्न प्राप्त किया । वे व्याख्यान में पधारते थे, जैनधर्म उनकी हड्डी २ की मींजी में रम गया था, वे पूज्य श्री के भक्त बन गए । उपरोक्त हाकिम साहिब ने जीवदया के अनेक कार्य किये हैं और जैनधर्म का बहुत उद्योत किया है ।

श्रीयुत करोड़ीमलजी सुराणा कि, जो भीलवाड़े के एक सद्गृहस्थ थे उन्हें पूज्य श्री के सदुपदेश से वैराग्य उत्पन्न उन्होंने धन, माल, जमीन इत्यादि त्याग कर सं० १६५८ वैशाख वद्य १ के रोज बड़े ठाठ (धूमधाम) से दीक्षा ली ।

श्रीजी के व्याख्यान में स्वमती अन्यमती, हिन्दू मुस लमान आते थे, डाक्टर हसमत अलीजी श्रीजी के पास आते थे उनका जीवदया की ओर पूर्ण प्रेम होगया था ।

भीलवाड़े से क्रमशः विहार करते २ नागोर से पूज्य
…ड़ पधारे वहां के ठाकुर साहिब कालूसिंहजी राठोड़ पूज्य श्री
…व्याख्यान में आते पूज्य श्री की प्रभावशाली वाणी सुन उन्हें
…रिमित आनंद होता था। उन्होंने दारू, मांस हमेशा के लिये
…ग दिया था, रात्रिभोजन का त्याग किया, उनका जैनधर्म पर
…त प्रेम होगया था। उनकी नवकार महामंत्र पर अतुल श्रद्धा
…र गई थी ये ठाकुर साहिब प्रति दिन छः सामायिक करते और
…ने के छः पौषध करते थे यह सब प्रताप पार्श्वमणि—समान
…पी पूज्य श्री के सत्संग और सद्बोध का था।

जोधपुर (चातुर्मास) सं० १९५७ का चातुर्मास जोधपुर में
…या इस चातुर्मास में पूज्य श्री की अमृतधारा वाणी से अनहद
…कार हुआ। वैष्णव धर्मानुयायी प्रायः ४०—५० घर पूज्य श्री
…अपूर्व उपदेशामृत का पान कर जैनधर्मानुयायी बने जिनमें
…स कर श्रीयुत गुलाबदासजी अग्रवाल तो व्रतधारी श्रावक हो
…ते।

जावद:— जोधपुर से विहार कर सं० १९५८ के मगसर
…ने में श्रीमान् वृद्धिचंदजी महाराज के साथ पूज्य श्री जावद
…ारे। वहां पूज्य श्री के उपदेशामृत का पान करते २ वैराग्य
…ा को प्राप्त हुए भाई मोड़ीलालजी और गब्बूलालजी का दीक्षा
…त्सव मगसर वद १० के रोज हुआ।

बीकानेरः (चातुर्मास) सं० १६५८ का चातुर्मास पूज्य
ने बीकानेर किया वहां धर्म का अपूर्व उद्योत हुआ। यहां के
स्वधर्म परायण भाईयोंने अभयदान, ज्ञानदान, आतिथ्य-सत्
इत्यादि पारमार्थिक कार्यों में पुष्कल द्रव्य व्यय किया पूज्य श्री
कीर्त्ति दशों दिशाओं में विस्तृत होने से दूर २ देशावरों के
पूज्य श्री के दर्शनार्थ संख्याबद्ध आते, उनका स्वागत बीकाने
संघ बहुत उत्कंठा और उदारता पूर्वक करता था। साधु सा
के तपश्चर्या की तथा ज्ञानध्यान की खूब धूम मच रही थी।
श्रावक और श्राविकाएं भी व्रत, प्रत्याख्यान, दया, पौषध,
वंगी इत्यादि से अपनी आत्मा का कल्याण करने लगीं। व्या
में स्वमती अन्यमतियों की भारी भीड़ होने लगी। इस चातु
में हजारों पशुओं को अभय दान मिला था।

कितने अन्य मतावलंबियों ने जैन-धर्म अंगीकार किय
सिद्ध सुश्रावक गणेशीलालजी मालू कि, जो साधुमार्गी जैन
कट्टर विरोधी थे पूज्य श्री के परिचय और सदुपदेश से दृढ
बन गए और चातुर्मास में श्रीजी के दर्शनार्थ आये हुए
श्रावक श्राविकाओं के आगत स्वागत तथा भोजन इत्यादि का
प्रबंध उन्होंने अपने खर्च से किया था। इतनाही नहीं परं
धर्म के उद्योत के लिये तथा जनसमूह के हितार्थ परमार्थ
उन्होंने लाखों रुपयों का सद्व्यय किया और वर्तमान में

क पुत्र को भी द्रव्य के हक के साथ न इस सद्गुण का भी हक़ ा हुआ है।

इस चातुर्मास के दरम्यान एक बख्तावर नाम की वेश्या ने ा श्री के सदुपदेश से वेश्यावृत्ति का बिल्कुल त्याग किया था ा वह श्राविकावृत्ति धारण कर पवित्र और धर्ममय जीवन तीत करने लगी थी कि, जो अभी भी विद्यामान है।

बीकानेर के चातुर्मास के पश्चात् पूज्य श्री ने जोधपुर की तरफ विहार ा। वहां श्री मुन्नालालजी महाराज का समागम हुआ परंतु किसी ार्य श्री की इच्छा के विरुद्ध वे पृथक् विचरने लगे। इस कारण ीमान् के हृदय में जावरे वाले संतो को अपने साथ शामिल ा की प्रेरणा हुई। फिर वहां से वे क्रमशः विहार कर मेवाड़ में रे उदयपुर संघ की कई वर्षों से चातुर्मास के लिये विनन्ती थी लेये सं० १६५६ का चातुर्मास उदयपुर में किया।
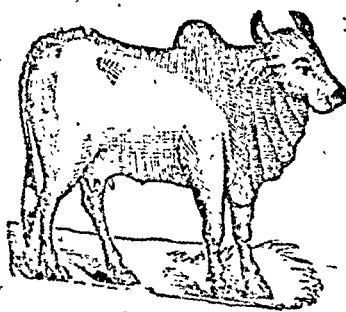
अध्यया १२ वाँ

अपूर्व—उद्योत।

पूज्य श्री का चातुर्मास होने के कारण उदयपुर संघ मे अ
न्दोत्सव छा गया पहिले कभी किसी स्थान पर पच्चीसरंगी
यिक होने का वृत्तान्त नहीं सुना था। वह पच्चीसरंगी यहाँ
इस संवर-करणी में ६२५ पुरुषों की उपस्थिति की आवश्य
होती है। लोगों का उत्साह इतना अधिक बढ़ा था कि, वि
निवासी सोड़सिंहजी सुराना ने एक ही आसन पर एक साथ
सामायिक किये। एवं दिन रात खड़े रहकर सामायिक का
व्यतीत किया। इसी भांति घेरीलालजी महता ने १३१, तथा
यालालजी भंडारी ने १३१ सामायिक खड़े रहकर किये
अति उत्साह-पूर्वक पच्चीसरंगी के ऊपर सामायिक की पचरंगी
नवरंगी की। इस चौमासे में १०८ अठाइयाँ हुई थीं।
सिवाय सैकड़ों स्कंध तथा अन्य प्रकार की भी बहुतसी त
हुई थी।

कई खटीकों (कसाइयों) ने हमेशा के लिये जी
करने का त्याग किया। इस प्रकार त्याग करने वाले खटीकों

शोर, गोकल वरधा, और नन्दा ये चारों भाई तथा दूसरे भी
ई खटीक और उनकी स्त्रियाँ, साधु मुनिराजों के पास उनके
ाख्यान (उपदेश) सुनने आती थीं। पूज्य श्री के उपदेश से कसाई
े का धन्दा छोड़ने के पश्चात् किशोर आदि की आर्थिक- स्थिति
च्छी होने से बहुत सुखी हो गये थे। वर्तमान समय में भी व्याज
टा तथा हुंडी पत्री का धन्दा करते हैं, और बाजार में उनकी
ाख (पेठ) इतनी बढ़ गई है कि, उनकी हजारों रुपयों की हुंडियाँ
िक जाती हैं। इनके सिवाय दूसरे भी कई नीच (शूद्र) लोगों
आजीवन मांस, मदिरा का उपयोग करना छोड़ दिया और कितने
अन्यमतावलम्बी जैन-धर्मावलम्बी हो गये।

गोचरी करने के हेतु पूज्य श्री स्वयं जाते और सामुदायि
री करते थे। अन्य धर्म (जैनेतर) तथा दीनावस्था वाले
यों के यहाँ जाकर मक्की तथा जौकी रोटी (वेहर) लाते थे।
ों में जिन जिन जातियों के यहाँ का आहार ग्रहण करने की
है उन उन के यहाँ से आहार ले आने में पूज्य श्री अपने
जरा भी संकोच नहीं करते थे।

वर्ष भी बाहर से सैकड़ों लोग पूज्य श्री के दर्शनार्थ आते
सबों के भोजन आदि का प्रबन्ध संघ की ओर से भली
ी थी।

अमीर, उमराव, आफिसर और राज्य-कर्मचारी गण आदि बहु संख्यक लोग व्याख्यान से लाभ उठाते थे, और उनमें से कई जैन धर्म के प्रेमी भी हो गये थे। उन सबों में श्रीमान् महाराणाजी साहिब के ज्यूडिशियल सेक्रेटरी लाला केशरीलालजी साहिब का नाम उल्लेखनीय है। पूज्य श्री के सदुपदेश से उन्होंने जैन-धर्म को स्वीकार किया, इतना ही नहीं किन्तु उन्होंने जैनशास्त्र का उच्च कोटी का ज्ञान सम्पादन करके, जो एक उत्तम श्रावक को शोभा दे उस प्रकार का अनुकरणीय पारमार्थिक जीवन व्यतीत किया है, और हजारों पशुओं को अभय-दान दिया है। लाला साहिब अब भी विद्यमान हैं। कुछ महीने पहिले (संवत्) १९७७ के अधिक श्रावण की ३ के दिनका मुकाम बीकानेर सभा में हमारे जाने से उनकी भेट का हमें लाभ प्राप्त हुआ था। वर्तमान आचार्य महाराज श्रीमान् जवाहिरलालजी महाराज का चातुर्मास उस समय बीकानेर में था अतः उनके सत्संग का लाभ उठाने के लिये ही बीकानेर में आकर रहे थे। इन महानुभाव का संक्षिप्त जीवन-चरित्र उनके ही मुंह से श्रवण करने की हम को अभिलाषा होने से उन्होंने निम्न लिखित जीवन-परिचय दिया था।

मेरा नाम केशरीलाल है और मेरी जाति कायस्थ माथुर है मेरा निवास स्थान (वतन) उदयपुर है। मैंने ५० वर्ष तक उदयपुर दरबार की नौकरी की है। जिनमें से २४ वर्ष तक ज्यु

ायल सेक्रेटरी के पदपर रहकर स्वयं महाराणा साहिब श्री फते-
हजी बहादुर के समक्ष मुकद्दमों की पेशी की है, और अब ३
र्ष से श्री पूज्य १००८ पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के १६
र्ष के सत्संग और सदुपदेश से निवृत्तिपरायण-जीवन व्यतीत
रता हूं।

किशनगढ़ महाराज के सम्बन्धी (कुटुम्बी) सरदारासिंहजी
ामक एक राठोड़ राजपूत जो कि, वैष्णवधर्मावलम्बी थे और
रक्त दशा में रहते थे। वे योग विद्या के पूर्ण अभ्यासी थे।
उनके पास उदयपुर मुकाम पर, योगाभ्यास करने के हेतु
वत् १९५२ में जाता था एक दिन उनने मुझे सामने के बगीचे
से मेंहदी के झाड़ का फूल तोड़कर ले जाते देखा। उसी
मय तुरंत ही आवाज देकर मुझे बुलाया और कहा कि
तुमने डाली के ऊपर से यह फूल किस लिये तोड़ा? यदि कोई
म्हारी अंगुली काटकर लेजाय तो तुम्हें कितना दर्द हो? क्या
म नहीं जानते कि, जिस प्रकार तुम्हारे शरीर में दर्द होता है,
सी प्रकार वृक्ष में भी जीव होने से उसको दर्द होता है?" इसके
लाय उन्होंने फूल में के त्रसजीव (चलते फिरते) भी प्रत्यक्ष
प से मुझे बतलाये और कहा कि "मुझे मालूम होता है कि, तुमने
कसी जैन साधु महात्मा की संगति नहीं की होगी इसी कारण से
मूर्ख के समान इन जीवों को कष्ट पहुंचाते हो"। मैंने यह सुन

आश्चर्यान्वित (विस्मित) हो अपने योगी गुरु से प्रार्थना की कि हम वैष्णव धर्मी हैं, हमको जैन साधु महात्माओं का सत्संग करने की क्या आवश्यकता ?" इसके सिवाय मैंने यह भी सुना है कि "हस्तिना ताड्यमानोऽपि न गच्छेज्जैनमन्दिरम्" ।

यह सुनकर उन योगी ने उत्तर दिया कि "यह वचन किसी मूर्ख का है अब तुम अवश्य किसी जैन साधु महात्मा की संगति करो" । उन्हीं महात्मा की कही हुई बात है कि "तीर्थंकर सब से बड़े हैं और उन्होंने जो वाणी फरमाई है वह सत्य ही सत्य कही है क्योंकि, वे सर्वज्ञानी और सर्वदर्शी हुए और इस बात का मुझको पूर्ण विश्वास दिलाने के लिये जैनकी कई एक धर्मकथा दृष्टान्तरूप से अवसर २ पर फरमाते रहे, मुझे उनकी कृपा से योगाभ्यास में अत्यन्त लाभ हुआ था, और उनके वचनों पर मेरी पूर्ण श्रद्धा जम गई थी, उनकी प्रत्येक बात को मैं अन्तःकरण पूर्वक सत्य मानता था । इस कारण उसी दिन से जैन साधु महात्माओं के दर्शन और सत्संग की उत्कट अभिलाषा हो गई ।

इस अरसे में एक दिन एक मनुष्य गोभी का फूल ले जाता था उसके पास से मेरे योगी गुरु ने गोभी मंगाई और थरिया (थाली) में खखेरी तो उसमें से बहुत त्रस जीव निकले वे प्रत्यक्ष बताये और गोभी खाने की मुझे शपथ (सौगंध) भी दिलाई ।

उपरोक्त कथनानुसार जैन साधुओं के दर्शन के लिये मेरी अभि-
लाषा दिनो दिन विशेष बलवती होती गई, और सौभाग्य से संवत्
१९५९ में श्रीमान् पूज्यश्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज का
चातुर्मास्य उदयपुर होने से उनका पधारना हुआ। यह खबर मिलते
ही मैंने उनके चरणकमलों में जाकर वन्दना की और व्याख्यान
भी सुना। पूज्यश्री पूर्ण दयादृष्टि से मेरे समान अन्य धर्मी अजान
को प्रत्येक बात व्याख्यान द्वारा पूर्ण प्रेम के साथ स्पष्टीकरण करके
समझाने लगे। पूज्य श्री ने मेरे मन को जीत लिया और उसी दिन
मैंने अपने पहिले योगी महात्मा को यह सब वृत्तान्त निवेदन किया,
तो उन्होंने अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक फरमाया कि, तुम प्रति दिन व्या-
ख्यान सुनते रहो और जो सुनो वह मुझे भी यहां आकर कहते रहो।
चौमासे के चार महीनों में प्रायः सदैव मैंने व्याख्यान सुना, तब से
आज तक लगभग १७ वर्ष हुए, पूज्य महाराज तथा अन्य मुनिरा-
जों का जबजब उदयपुर में पधारना होता रहा, तब तब मैं बराबर
उनकी सेवा करता रहा हूं तथा व्याख्यान सुनता रहा हूं। और खास
करके पूज्य महाराज जहां विराजते हों वहां देश परदेश में रहकर
उनकी वाणी श्रवण करने का लाभ लेता रहा हूं। उनकी कृपा से
मुझे अलभ्य लाभ होने लगा है।"

प्रिय पाठक! उक्त शब्द स्वयं लालाजी के ही कहे
उनकी आयु (उमर) इस समय ६८ वर्ष की है, तो

(जुवान) के समान काम कर सकते हैं। धर्मोन्नति के काम ...
अग्रगण्य रहते हैं, वे एक ही बार भोजन करते हैं, और ७ ...
पदार्थों के सिवाय सब पदार्थों का उन्होंने त्याग कर दिया है। मूंग
की दाल, रोटी, दूध, चावल, जल, एक शाक यह उनकी खुराक
है। सब प्रकार की मिठाई खाना भी आपने छोड़ दिया है।

संवत् १९६३ में वर्तमान आचार्य महोदय श्रीमान् जवाहिर
लालजी महाराज का चातुर्मास था। उस समय उनके सदुपदेश से
लालाजी ने अपनी पत्नी के सहित (जोड़ी से) ब्रह्मचर्यव्रत अंगी
कार किया है।

लालाजी को अंग्रेजी, फारसी तथा कायदे कानून का उच्च ज्ञान
है। उनकी बुद्धि अत्यन्त निर्मल है। उनका जैनशास्त्र का ज्ञान
प्रशंसनीय है। वे उत्तम वर्ग के श्रोता हैं। प्रति वर्ष वे सैकड़ों ह
पशुओं को अभयदान देने आदि धार्मिक कार्यों में व्यय करते
और गत तीन वर्षों से उन्होंने अपना जीवन पारमार्थिक कार्य
के हेतु ही अर्पण कर दिया है। वे पूज्य श्री के अनन्य भक्त हैं।

संवत् १९६० के उदयपुर के चातुर्मास में उपरोक्त लिखे अ
नुसार, लालाजी केशरीलालजी जैन-धर्म के पूरे अनुरागी हुए। इसी
प्रकार उदयपुर के एक बड़े वकील श्रीयुत हीरालालजी ताकड़िया
जिनके पास हजारों रुपयों की स्थावर तथा जंगम स्टेट (मिल्कियत

ी उनको पूज्य श्री के उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हो गया; इस कारण
ने तथा जावरे वाले एक गृहस्थ श्रीयुत हीराचन्दजी ने पूज्य श्री
पास ' दीक्षा ' लेने का निश्चय किया।

चातुर्मास पूर्ण होते ही संवत् १९६० की मंगसर वदि ३ के
न उन दोनों को कविराज श्री शामलदासजी की वाड़ी में बड़ी
म धाम के साथ दीक्षा देने में आई। इस प्रकार का दीक्षामहो-
त्सव इससे प्रथम उदयपुर में कभी नहीं हुआ था।

श्रीवकील हीरालालजी पूज्य श्री के पास दीक्षा लेते हैं, ऐसी खबर
लते ही श्रीमान् हिन्दवां सूर्य महाराणा साहिब ने कृपा पूर्वक एक
थी दीक्षा लेने वाले को बैठने के लिये, तथा एक हाथी आगे रख-
के लिये, तथा सरकारी बाजे इत्यादि सरकार में से भेज दिये
था नवदीक्षित को पछेवड़ी ओढ़ाने के लिये [illegible] दो थान मल मल
भेज दिये।

श्रीयुत हीरालालजी वाकड़िया हाथी पर बैठे और दूसरे दीक्षा-
र्थी जावरे वाले पालकी में बैठे। एक हाथी निशान समेत आगे
लता था। हजारों मनुष्यों की भीड़ लगी हुई थी। श्रीयुत हीरा-
लजी वाकड़िया ने रुपयों की एक थैली अपने पास रख ली थी।
उसमें से मुट्ठी भरभर कर भीड़ में फेंकते जाते थे।
नुष्य इस प्रकार के पैसों को पवित्र मान कर [illegible]।

दीक्षा का वरघोड़ा बाजार के बीच में होकर, घंटाघर के पास हो
हुआ हाथीपोल (दरवाजा) के बाहर की कविराजजी की बाड़ी में
पहुंचा और वहां पर पूज्य श्री ने दोनों महानुभावों को विधिपू
दीक्षा दी। पूज्य श्री को शिष्य करने का त्याग होने के कारण
ने दोनों मुनि श्रीडालचन्दजी महाराज के नेश्राय में कर दिये।

तत्पश्चात् पूज्य श्री उदयपुर से विहार करके 'कणपुर' हो
उदयपुर से १० कोस 'ऊंटाला' नामक ग्राम की ओर पधारते
रास्ते में ऊंटाला की हद में एक कसाई ८० बकरों सहित
मिला। यह खटीक—कसाई ग्राम 'कपासन' में से बकरे खरीद क
उदयपुर के कसाइयों के हाथ बेचने के लिये ले जाता था।
श्री की दृष्टि उन बकरों पर पड़ी और कारुण्य भाव की छाया
के मुखकमल पर छा गई। 'ऊंटाला' के लोगों ने इसी समय
खटीक को १७५ रुपये देने का ठहराकर, ८० बकरों को अभय
दिया और उनको उदयपुर के नगरसेठ के पास भिजवा दे
प्रबन्ध किया। खटीक के हृदय में स्वाभाविक रीति से ही,
श्री पर अतुलनीय पूज्य भाव प्रकट हुआ और वह पूज्य श्री के
में पड़कर पुनः २ अपने अपराध की क्षमा मांगने लगा। पूज्य
ने समयानुसार उनको अत्यन्त प्रभावोत्पादक और उपदेशप्रद
के वचन कहे। इसका 'निशाने' के समान ऐसा प्रभाव पड़ा
उसने स्वयं महाराज श्री के पास आकर इस प्रकार प्रतिज्ञा की

महाराज ! मैं आसपास के गामों में से बकरे खरीद करके, उ-
यपुर के खटीकों के हाथ बेचता हूं, मेरा यही धन्दा है; किन्तु
राज से मैं जीऊंगा वहां तक यह धन्दा नहीं करूंगा" । ❀

वहां से पूज्य श्री कानोड़ पधारे । कानोड़ के रावजी साहिब
। कानोड़ पट्टे के गामों में जहां जहां नदी, नाले और तालाब हो
हां और उसी प्रकार उनका खालसा गाम 'कुणनी' के पास जो
दी है वहां मच्छी मारने की हमेशा के लिये मनाही कर दी उस
ाज्ञा की आज तक पालना होती है । इसके सिवाय पूज्य श्री के
पदेश से कानोड़ में ५० के लगभग 'स्कंध' हुए ।
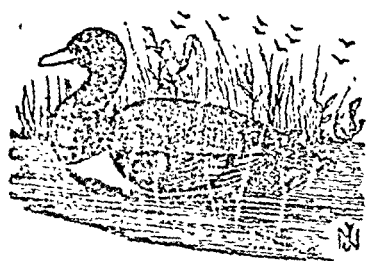
❀कुछ मास पहिले उदयपुर वाले जीतमलजी भटा थी [illegible]
थे कि, उपरोक्त खटीक ने यह धंदा बिल्कुल छोड़ दिया

अध्याय १२ वाँ

उपसर्ग को निमंत्रण।

कानोड़ से क्रमशः विहार करते हुए आचार्य श्री चित्तौड़ हुए 'सांडलगढ़, पधारे और वहां से कोटे की ओर विहार कोटे जाने के दो रास्ते हैं। एक मार्ग जंगल में होकर जाता है महाभयंकर है। दूसरा-रास्ता जंगल को चक्कर देकर जाता पूज्य श्री ने सीधा जाने वाला (पहिला) रास्ता पसन्द किया। सांडलगढ़ से विहार करके सिंगोली पधारे। वहाँ के लोगों ने श्री से प्रार्थना की कि " इस रास्ते यदि आप न पधारो तो क्योंकि, यह रास्ता भूल भूलावणी वाला ' याने इस रास्ते में भूल जाने का डर है) और लगभग १०, १२ कोस का ज और इसमें सिंह, चीते, रीछ आदि मनुष्य को फाड़ कर खा वाले हिंसक पशु बहुतायत से बसते हैं। दूसरे रास्ते होकर आप कोटे पधारेंगे, तो केवल १५ कोस आपको अधिक पड़ेगा किन्तु इस रास्ते में किसी प्रकार का भय नहीं है। शरीर की पर्वाह नहीं करने वाले, और आपत्तियों को पूर्वक आमंत्रण देने वाले पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज ने लोगों

ना पर ध्यान नहीं दिया और सीधा मार्ग पकड़ा। यह दुराग्रह किन्तु आत्म श्रद्धा का दृष्टान्त है पूज्य श्री के साथ आठ साधु उनमें से अधिकांश साधुओं को उस दिन उपवास था। ी किसी ने केवल छाछ (मही) पीने का आगार (छूट) था। थोड़ा मार्ग व्यतीक्रम करते ही पहाड़ों में रास्ता भूल गये र दूसरी पगडंडी से चढ़ गये। ज्यों ज्यों आगे बढ़ते गये त्यों त्यों ी ही भयावना और घना जङ्गल आने लगा। हिंसक पशुओं पादपंक्तियें (पैरों के चिन्ह) दृष्टिगोचर होने लगीं, बाघ इत्यादि के गगन भेदी शब्द श्रुतगोचर (सुनाई देना) लगे, इस कारण एक साधुने पूज्य श्री से अर्ज की कि "महा- यह जङ्गल सचमुच ही महाभयङ्कर है।" महाराज ने कहा अपन साधुओं को किस बात का डर है? भय तो उसे चाहिये जो मृत्यु को अपने जीवन का अन्त समझता हो, के विनाश के साथ में अपना नाश मानता हो अथवा मृत्यु गत् के जीवन को भय और आपदा का स्थान मानता हो। गुरु के प्रताप से जिनवाणी का ठीक ठीक रहस्य समझता जिसको जीवन और मरण में कुछ भी न्यूनाधिकता नहीं समझना चाहिये। जीने की आशा और मरने का भय इन दोनों को जला करके विचरने में ही अपने संयम–जीवन की सच्ची कसौटी माया ममता को हवा में फैंक दो और दृढ़ता धारण करो"।

इतने में एक अन्य साधुने कहा "महाराज ! दूसरा तो कुछ न
किन्तु रास्ता भूल गये हैं इससे बहुत ही हैरान होना पड़ेगा
श्रीजी महाराज ने फर्माया "कुछ पर्वाह नहीं, यकीन रक्खो
श्री नवकार मंत्र का ध्यान धरो,, सबों ने आगे चलना शुरु कि
डाबी फलका से रास्ता भूले थे लेकिन पूज्य श्री ने जो दिशा ब
थी उसको वे चूके नहीं थे उससे छः कोस दूर वड़दा नामक गा
वहां पर सब पहुँचे। वहाँ से छाछ मिली और सब कोई आगे
पैर थक गये थे तो भी आशा उत्साह नहीं थका था। आशा
को नया बल देती जाती थी। उस दिन कम से कम १२
की यात्रा हुई होगी।

मनुष्य स्वभाव का पृथक्करण करने वाले एक अनुभवी के
मान सत्य हैं कि: "जिस मनुष्य की वाणी, व्यवहार, चाल
(दिखावा) विजय का विश्वास बँधाने वाले होते हैं वही
विजय के विश्वास का प्रचार कर सकता है और स्वतः के
किये हुए कार्य को पूर्ण करने में सामर्थ्यवान् है, इस प्रक
श्रद्धा भी उत्पन्न कर सकता है। जो मनुष्य आत्म-श्रद्धा
निश्चयी एवं आशावादी है वह अपना कार्य सफलता मि
प्रतीति सहित प्रारम्भ करता है वह महान् आकर्षण शक्ति भी
है। शिथिल महत्वाकांक्षा अथवा अपूर्ण उद्योग से कभी भी
कार्य सिद्ध नहीं हुआ। अपनी आशा, श्रद्धा, निश्चय और उद्योग

क्ति) होना चाहिये। अपने कार्य को सिद्ध करने वाली शक्ति सहित निश्चय करना चाहिये।

मट्टी के बर्तनों को पक्के करने के लिये सुवर्ण को शुद्ध कुन्दन के लिये, और धातुओं को आकृति के रूप में आने के लिये न की आँच सहकर उसमें से निकालना पड़ता है। इस दृष्टान्त अनेकों विषय की बातें विचार सकते हैं। साधुलोग आत्म-श्रद्धा और मन को दृढ़ रखने वाले हों तो विचारा हुआ कार्य पूर्ण सकते हैं। आधि, व्याधि और उपाधि के दास बने हुए हर साधुओं को बिल्कुल समीप दिखाते हुए गांवों के बीच में, के दिन में विहार करते हुए भी, साथ में मनुष्य रखना पड़ता ह निर्बलता का नमूना है।

विशुद्ध संयम के प्रभाव के अदृश्य-आन्दोलनों द्वारा प्रकृति भी इतना अधिक असर पड़ता था कि, सूर्य की ऊष्णता से रण करने के लिये बादलों में भी स्पर्धा (ईर्षा) उत्पन्न होगई (याने आसमान में बादलों के आवागमन का क्रम नहीं टूटता और छाया बनी रहती थी) ठीक दुपहरी (मध्यान्ह के समय) शीतल वायु का अनुभव होता था और जंगली जानवर छिप छुप कर महात्माओं के दर्शन से कृतार्थ होते थे। बहुरत्ना ंधरा ! श्री तीर्थंकरों के समोसरण में बाघ, सिंह, बकरे, भैंस

एक साथ बैठकर क्रीड़ा करते, उन्हीं तीर्थंकरों के वारिसों (इकरारों
में फूल (पुष्प) नहीं तो फूल की पांखड़ीरूप यह अद्भुत शक्ति
हो तो उसमें आश्चर्य करने का कोई कारण नहीं है। योगी साधुओं की
अपार लीला है। दूसरे प्राचीन समय में सब प्रकार की सुविधा होते हुए
भी संयमी मुनिराज घोर श्मशान, सर्प की बांबी (बिल, दर) और सिंह
की गुफाओं के पास चातुर्मास करते थे। यह सब कुछ पोथियों
बाँध, पिटारे में पूर अपने मनचाहे (इच्छानुसार) स्थान पर
विराजना और परिसह—कसौटी का अवसर ही न आने देना
एक प्रकार की काल दोष की भीरुता ही है।

अध्याय १४ वाँ
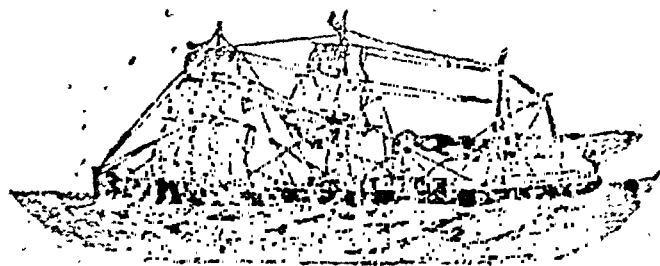
जन्मभूमि में धर्म जागृति ।

टोंक (चातुर्मास) मेवाड़ में से क्रमशः विहार करते हुए कोटा होकर टोंक पधारे और संवत् १९६१ विक्रमी का चातुर्मास अपनी जन्मभूमि टोंक में किया। यहाँ धर्म का अत्यन्त उद्योत हुआ। अजमेर के दीवान बहादुर सेठ उम्मेदमलजी साहिब लोढा आचार्य श्री के दर्शनार्थ टोंक पधारे थे। ये वहाँ के नवाब साहिब को भेंट करने को गये, उस समय नवाब साहिब के समक्ष आचार्य श्री की दैवी मनोरम वाणी, और उत्तमोत्तम गुणों को मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा कि " यह रत्न आपकी ही राजधानी में उत्पन्न हुए होने से जैन इतिहास में टोंक का नाम भी स्वर्णाक्षरों में अंकित होगा,, । यह सुन कर नवाब साहिब अत्यन्त हर्षित हुए और उन्होंने भी पूज्य श्री की प्रशंसा की।

पूज्य श्री की अपूर्व प्रशंसा सुनकर खान साहिब महम्मद इनूस खान पूज्य श्री के पास आने लगे और उनके हृदय पर श्रीजी के उपदेश का इतना प्रभावोत्पादक असर पड़ा की, उन्होंने

" आजीवन शिकार नहीं खेलने तथा मांस नहीं खाने की प्रतिज्ञा की।"

एक गृहस्थ कायस्थ लाला बद्रीलालजी ने अपनी स्त्री विद्यमान होते हुए भी ब्रह्मचर्य व्रत अङ्गीकार किया, श्रावकों के व्रतों का स्वीकार किया, सामायिक प्रतिक्रमण करना शुरु किया और दृढ धर्मी जैन बन गये। पूज्य श्री के हंसते चेहरे से मुखमंडल भव्य मालुम होता था। ज्ञान के प्रभाव से आंखें चमकती थीं। चेहरे पर माधुर्य, गांभीर्य, भव्यता, सामर्थ्य और दैवी तेज का प्रकाश झलकता था। जिससे अपने सामने वाले मनुष्य पर इच्छानुसार प्रभाव पड़ता था।

सरकारी मेम्बर बाबू दामोदरदासजी साहिब जो कि, काठियावाड़ के ब्राह्मण गृहस्थ थे वे श्रीजी के मुखारविन्द की अमृतवाणी सुन कर अत्यन्त हर्षित होते, समय समय पूज्य श्री के पास आते। कितनी ही बार तो वे व्याख्यान के प्रारम्भ में ही उपस्थित होते और पूज्यश्री मंद मंद स्वर से—

सवैया—वीर हिमाचल से निकसी,
गुरु गौतम के श्रुत कुंड ढली है।
मोह महाचल भेद चली,
जग की जडता सब दूर करी है॥

ज्ञान पयोदधि माँहि रली,
बहु भङ्ग तरङ्गन से उछली है ॥
ता शुचि शारद गङ्ग नदी,
प्रणमी अँजली निज शीशधरी है ॥ १ ॥

यह स्तुति शुरू करते और श्रोता वर्ग उसको झेल कर गाते इस समय दामोदरदासजी को बहुतही रस आता (आनन्द मिलता) किसी भी धर्म की निन्दा न करते हुए सर्व धर्म वालों को सन्तोष देने की पद्धति से पूज्य श्री जहां २ अपने भक्तों में जाते अधिक भर्ती कर सकते इस गृहस्थ ने भी उपकारों के बदले में उत्तम प्रकार के नियम किये हैं।

एक वैष्णव सज्जन छदालालजी अग्रवाल ने पूज्य श्री के समीप सम्यक्त्व ग्रहण करके त्याग पच्चक्खाण किये । प्रतिवर्ष संवत्सरी का उपवास करने की प्रतिज्ञा की और जैन-धर्म के आस्तिक बन गये । इस समय भी उनकी वैसी ही धर्म है।

टोंक में लगभग ५० घर तेलियों के हैं उन्होंने पूज्य श्री के सदुपदेश से चौमासे में घाणी बंद रखने का ठहराव किया. वे तक इसका पालन करते आरहे हैं।

सांसारिक लोगों में कहावत है कि ,, घर यह दुनिय
अन्त है। मातृभूमि के उपकार अवर्णनीय है। संसार के
प्राणियों का हित चाहने वाले जन्मभूमि को किस प्रकार भूल
है? किसीने ठीक ही कहा है:—

क्या ऐसा नर शून्य हृदय का, इसजग में पाता विश्रा
जो यह कभी नहीं कहता है 'यही हमारा देश-ललाम'
'मेरी प्यारी जन्मभूमि है' इस विचार से जिसका मन
नहीं उमंगित हुआ वृथा है, उसका पृथ्वी पर जीवन

Breathes there the man, with soul so dead,
Who never to himself hath said,
This my own, my native land!

Sir Walter Scot

उपकार का बदला न दे सकने के कारण सांसारिक दृष्टि
कृतघ्न गिने जाने की पर्वाह वे नहीं रखते थे किन्तु जहां
उपकार होने का सम्भव होता था वहां वे सब से प्रथम विच
थे। पूज्य श्रीके टोंक में चातुर्मास जैनशासन का बहुत प्रकार
उद्योत होने के सिवाय जैन, अजैन, हिन्दू मुसलमान एवं रा
प्रजा को व्याख्यान के निमित्त परस्पर दृढ सम्बन्ध लाने का हेतु भ
हुआ था। धर्म के समान नाजुक विषय में पृथक् २ धर्म की प्र

राजा परस्पर सहानुभूति रखते हों यह दोनों के कल्याण के आवश्यक है। एक व्यौपारी वनिये का युवा पुत्र, परमार्थ पर कहां तक प्रयास कर सकता है यह प्रयत्न अनुभव होने से लोगों की मंडली बातें किया करती कि " पुरुषों के प्रारब्ध आगे पत्ता है, उसका यह प्रत्यक्ष प्रदर्शन श्री पूज्यजी महाराज रसिया के शिखर पर अकेले फिरते हुए श्रीलालजी में और समय के पूज्य श्रीलालजी में ' कीड़ी और कुंजर जैसा अन्तर गया था, इस समय बड़े २ राजा महाराजा और नवाब रसियां शिखर के प्यारे लाल के पैरों में मस्तक झुकाते थे।

जिस व्यक्ति को हजारों लाखों मनुष्य मस्तक झुकाते हों, वैसी वैसी व्यक्तियां जिस समय एक वणिक् युवक के पैरों की रज ने मस्तक पर चढ़ाने को अपना सौभाग्य समझें उस समय वि की मालूम न होने वाली कलाबाजी की अपूर्वता सिद्ध थी।

एक अनुभवी सत्य कहता है कि ' श्रद्धा गिरिशृङ्गों पर परि- य करती है, इस कारण उसकी दृष्टि–मर्यादा बहुत बड़ी होती अन्य मनुष्य जिस वस्तु को देखने में असमर्थ होते हैं वस्तु श्रद्धावान् मनुष्य को दृष्टिगोचर होती है। इससे जिस का प्रयत्न करना दूसरों को असम्भव प्रतीत होता है उसी

कार्य को करने में श्रद्धावान् मनुष्य विशेष प्रयत्न करता है।
श्रीजीने इसी प्रकार का प्रयत्न अपने स्थायी धैर्य से प्रारम्भ करा
निश्चय किया ।

हम पहिले कह चुके हैं उस प्रकार जावरे के सन्तों को सा
करने (अपने में मिलाने) की पूज्य श्री की इच्छा थी । पू
जब रतलाम पधारे तब अपना यह अभिप्राय वहाँ प्रकट किया
हकीकत (समाचार, हाल) जावरों के सन्तों तथा उनके
श्रावकों को विदित होते ही वे आनन्दित हुए, कारण कि, उन
इच्छा यही थी कि, पूज्य श्री की आज्ञा में विचरें । ये सन्त
चन्दजी महाराज की ही सम्प्रदाय के हैं किन्तु श्री उदयसा
महाराज के समय से उनके साथ का सहभोजन का व्यवहार
बन्द करने में आया था जो आज तक कायम था । रत
पूज्य श्री विराजते थे उस समय उनकी सेवा में जावरा के
की ओर से मुनि श्री देवीलालजी उपस्थित हुए । पूज्य श्री
यथोचित समाधान का वार्तालाप होने के बाद उनका सहभोज
किया गया । इस समय उन सन्तों की ओर से मु
देवीलालजी ने कहा कि, भूत काल में जो हुआ सो हुआ
भविष्यत् काल में वैसा न हो इस बात का मैं सब सन्तों क
से विश्वास दिलाता हूं । उत्तर में आचार्य श्री ने न्यायानुमा
माया कि, अपने धर्म की सगाई है अणगार धर्म की मर्यादा

ाले साधुओं को ही मैं मेरे साधु मान सकता हूं। यदि इस
दा का कोई उल्लंघन करे तो उसके साथ समाचारी के सं-
को भङ्ग करने में मैं तनिक भी संकोच न करूँ इसका कारण
है कि, जिस कर्त्तव्य के लिये कुटुम्बियों और संसार के सम्बन्ध
छोड़ा है उस कर्त्तव्य में अन्तराय करने वाले का साथ और
बन्ध त्याज्य है। परस्पर प्रेम पूर्वक संयम समाधान हो गया।

उचित रीति से विचारें तो मालूम हो कि, सहकार की भी
ा हो सकती है। शास्त्र की प्रतिष्ठा और चारित्र्य के आदर्श
तक उज्वल रहें तब तक ही सहकार सम्भव रह सकता है,
र्थात् उसकी हद पूरी होते ही असहकार ही आवश्यक है छाती
पत्थर बाँधकर अपार समुद्र नहीं तैर सकते। किस हेतु
य और कौनसी नीति साधने से सहकार या असहकार करना
ा है इसका गम्भीर विचार किये सिवाय किसी प्रकार भी
मान नहीं कर सकते। भारी और व्यवस्थित शासन के बिना
ति असम्भव ही है। किसी भी कार्य में अव्यवस्था घुसी, अंधा
ी और गड़बड़ बढ़ती गई। विष प्रचारक चेप रोकने का उत्तम
ारण उपाय असहकार है। समाचारी यह सहकार का माप
ने का थर्मामेटर यंत्र ही है।

शरीर से साधु होने के साथ ही मन से भी साधु हो। मस्तक
ाने के साथ ही मन को भी मूँड़ा हुआ समझे तभी त्याग का शुद्ध

लावा ले सकते है। "श्वेत कपड़े पहिने हैं पर श्वेत दिल नहीं। सत्य कहता हूं मैं यारो! निज धर्म को चीन्हा नहीं।

जो समाज को ऐक्यता का सबक सिखाने के लिये संसार हुए हैं उनका कतरकर खाने वाला अनैक्यतारूपी कीड़ा निकल और पूर्ववत् सुख शान्ति के साथ शासन की विजय ध्वजा यह दशा देखकर किसका हृदय हर्ष से आल्हादित न हो! इस हर्ष को सजीवन रखने के लिये महात्मा श्री गांधीजी के क्ति वचनामृत मुनिराजों को अपने हृदयपर अङ्कित क चाहिये। ये वचन ऐसे हैं मानों श्री महावीर प्रभु की आ प्रतिध्वनित हो रही हों! समाधान कर्त्ता को बदले या रूप में मत समझो। मैत्री यह कुछ सौदा नहीं है। केवल धर्म और प्रेम सम्बन्ध है। जो सेवा है वही है और जो धर्म है वही ऋण (फर्ज) है यदि उस को नहीं चुकाना है तो पापके भागी होइये। अपने सामने के व्यवहार की जिम्मेवारी उसीपर डालना योग्य है। जितना विशेष दबाव डाला जावेगा उतना ही विशेष विरोध (होना सम्भव है। इसलिये प्रतिपक्षी (सामने वाले) को की जिम्मेवारी उसके खानदान और कर्त्तव्य का खयाल करके विषय उसी पर छोड़ देने में 'ही' बड़ी से बड़ी सेवा भरी है आत्म शुद्धि का मार्ग है। यह तपश्चर्या—आत्मयज्ञ है।

पूज्य श्री फरमाते थे कि, जैसे जहाज का आधार उसके योग्य
न पर, रेलवे ट्रेन का आधार एँजिन की ब्रेक पर, और घड़ी
मुख्य आधार उसकी मुख्य कमानी पर है। उसी प्रकार मुनि-
न का आधार शुद्ध चारित्र पर है। जैसे आकाश में चन्द्र, सूर्य
दि अपनी नियमित चाल से चल रहे हैं। उसी प्रकार ज्ञान,
न, चारित्र और तप का नियत नियमानुसार ही साधुजीवन
ना चाहिये।

पूज्य श्री सच्चे समयसूचक थे। उन श्रीमान् की गुण-ग्राहक
कभी भी किसीके अवगुणों को याद करने का अवकाश ही
ी थी। वे महानुभाव, इसी प्रकार मानते कि 'दीर्घ दृष्टि से
र पूर्वक समाधान करके समाज की रक्षा करना' यह पहिला
है। आवेश के वेग में और पक्षापक्षी के अँधेरे में पड़कर अपना
नहीं चूकना चाहिये। अपने विरोधी के दोषों (अवगुणों,
) का प्रदर्शन कराना ([illegible]) और उसकी निर्बलता के गीत
रहना यह कुछ चतुराई और विचारशीलता नहीं है। सांसारिक
की दृष्टि में किसीको गिरा देने की अपेक्षा, यह उस प्रकार
ें (गलतियां) पुनः न करे, ऐसा धार्मिक या नैतिक [illegible]
ी बात साधुओं को शोभा देती है और अपने [illegible]
म से रक्षा करके रखी हुई चारित्र-कीर्ति [illegible]
।

शुद्ध संयम का पालना तलवार की धार पर चलने के स
है (वैराग्य-पंथ खड्गधार) घोड़े पर चढ़ने वाला पड़ता भी अ
वश्य है भोजन बनाने वाला अग्नि से जलता भी है, खलासी का
काम करने वाले को डूबने का डर भी पहिले है इसी प्रकार फ
में आगे चलने वाले सेनापति को तीर, भाला, बन्दूक, तलवार
शस्त्रों के आघात भी सहन करने पड़ते हैं । आगे चलने व
की हिम्मत धैर्य बहादुरी पर ही पीछे वालों की विजय नि
है, आगे चलने वालों की बुद्धि की, पीछे वाले लोगों के ह
पर परछाई पड़ती है।

आचार्य श्रीका जावरे के सन्तों को शामिल कर लेने का
कार्य, सर्व मुनिवरों की सम्मति पूर्वक नहीं हुआ था, इस कारण
सम्प्रदाय के स्वामी श्रीमुन्नालालजी आदि कितने ही मुनिराज इ
अप्रसन्न हुए। इसका कारण यह है कि, वे उनको पूरी तौर से प्रायश्चि
दिये विना सम्मिलित करना नहीं चाहते थे। इससे कई सन्तों
पूज्य श्रीके इस कार्य को स्वीकार करने से इन्कार किया। कि
पूज्य श्रीकी समयसूचकता, सब को सन्तुष्ट रखने की अद
प्रकार की कार्यदक्षता और समझावट से सन्तों को शान्त कर, ज
वाले सन्तों के साथ सहभोजता आदि का व्यवहार शुरू करा सम्प्र
में सर्वत्र शान्ति स्थापित की। संसार-व्यवहार में फंसा हु
प्राणी जो कुछ नहीं देख सकता है, वसी प्रकार की अपूर्वता स

रह सकते हैं। उनके अलिप्त रहने से वे सामान्य मनुष्य को
र हो ऐसे भी कुछ २ पदार्थों का अनुभव कर सकते हैं।
क नियमों को स्वयं समझने एवं समझाने का उन्हें पूरा अवकाश
। है उनको स्वयं अपनी ही आत्मा का विचार नहीं करने का है
, जो सम्प्रदाय के सिंहासन पर विराजता है उसके श्रेय
ाये भी प्राणपण से (जीतोड़, बहुत ही) प्रयत्न करना पड़ता
मुखिया की जवाबदारी दूसरे सबों की अपेक्षा सदैव विशेष
है।

जोधपुर—(चातुर्मास) संवत् १६६२ का चातुर्मास पूज्य श्रीने
पुर में किया स्वधर्मी, अन्यधर्मी, हिन्दू, मुसलमान हजारों मनुष्य
य श्रीजी महाराज के वचनामृत का पान कर (श्रवण कर)
तुष्ट होते थे। और त्याग, प्रत्याख्यान, तपश्चर्या तथा संवर-
णी द्वारा आत्म साधन करते थे। कई मांसाहारी लोगों ने मांस
ण और मदिरापान का त्याग कर दिया और हजारों पशुओं को
भयदान दिया गया।

जोधपुर चातुर्मास पूर्ण करके श्रीमान् पूज्य श्रीजी महाराज ने
म मेवाड़भूमि पवित्र की। मार्ग में पड़ने वाले कई ग्रामों में अत्यन्त
कार, और बहुत ही त्याग पच्चक्खाण हुए। श्रीजी घाणेराव (मार-
ड़ का एक ठिकाना, सादड़ी की ओर होते हुए "श्रीचारसुजाजी

तथा नाथद्वारा पधारे । उस समय कोठारिया के श्री रावतजी साहिब भी दर्शनार्थ पधारे और उन्होंने पूज्य श्री अर्ज की कि ' मैंने प्रथम आपके पास से जो प्रतिज्ञा लं उसका मैं यथार्थ पालन कर रहा हूं ।'

अध्याय १६ वाँ
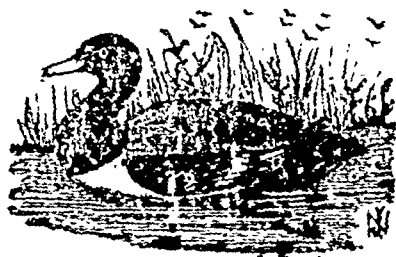
रत्नपुरी में रत्नत्रयी की आराधना।

क्रमशः वहां से (कोठारीया नाथद्वारा से) विहार करते हुए पूज्य श्री रतलाम कुछ समय के लिये पधारे। तब उनको श्री संघने चातुर्मास करने के लिये अति आग्रहपूर्वक प्रार्थना की, किन्तु वह अस्वीकृत हुई। और रतलाम से विहार करके श्रीजी पंचेड़ पधारे। रतलाम संघ के कई अग्रगण्य श्रावक भी दर्शनार्थ पंचेड़ गये और वहां के स्वर्गीय कैप्टन ठाकुर साहिब * रघुनाथसिंहजी ने

* ये स्वर्गीय ठाकुरसाहिब तथा उनके भाई साहिब वर्तमान ठाकुरसाहिब श्री चेनसिंहजी साहिब दोनों पूज्य श्री पर इतना अधिक (श्रद्धा एवं प्रेम) भाव रखते थे कि, उन श्रीमानों के फोटो इस पुस्तक में यहां पर देना उचित होगा। 'पंचेड़' यह ग्राम मार्ग में होने के कारण पूज्य श्री का वहां पर समय समय पर पधारना होता और श्रीमान् ठाकुर साहिब पूज्य श्री के उपदेश का लाभ उठाते। शान्त स्वभाव के होगये थे। पूज्य श्री के दर्शनों का लाभ जिस समय आप रतलाम में आते उस समय भी लिया करते थे।

अर्ज की कि, यदि श्रीमान् रतलाम में चातुर्मास करें तो मैं आजी
पर्यन्त हरिण का शिकार करने की सौगन्द करता हूं और
सरहद में कोई भी मनुष्य हरिण, खरगोश इत्यादि का शिका
कर सके इसका दृढ बन्दोबस्त करने को तैयार हूं।

मलवासा के ठाकुर साहिब की ओर से भी मलवासा का
बड़ा तालाब है, वहां पर कोई भी मच्छी न मार सके इस बात
पक्का बन्दोबस्त हमेशा के लिये करने में आया, तत्सम्बन्धी
परवाने भी करने में आये।

इस प्रकार अत्यन्त उपकार का कारण समझकर रत
में चातुर्मास करने की रतलाम संघ की प्रार्थना श्रीजी महारा
स्वीकृत की। इससे सब लोगों के हृदय में आनन्द साग
तरङ्ग कल्लोलित होने लगीं।

रतलाम (चातुर्मास) मेवाड़ में से क्रमशः विहार कर
श्रीजी महाराज मालवा देश में पधारे और रतलाम के
की प्रार्थना स्वीकार कर संवत् १९६३ विक्रमी का चातुर्मास
लाम नगर में किया। इससे पहिले जितने चातुर्मास हुए
सबकी अपेक्षा अबका चातुर्मास अत्यन्त उपकारक सिद्ध हुआ।
ही समय में आचार्य श्रीजी के ज्ञान, दर्शन और चारित्र के पर्याय
निर्मल होगये थे और पुण्य-प्रताप भी इतना अधिक बढ़ गय

लाम के बड़े २ वयोवृद्ध श्रावकों के मुख में से पुनः २ इस
के वाक्य निकलते थे कि, " श्रीमान् उदयसागरजी महाराज
महापुरुषों के आगमन और उपस्थिति के समान ही लोगों
य पर उग्र प्रभाव तथा उत्कृष्ट उत्साह दृष्टिगोचर होता है" ।
ध्यान, त्याग–प्रत्याख्यान करने के लिए श्रीमान् कदापि
को भी आग्रहपूर्वक नहीं कहते थे, उसी प्रकार न किसीको
र करते थे, ऐसी स्थिति में भी उनका उत्कृष्ट चारित्र और
न शक्तियों का आकर्षण इतना अधिक बढ़ गया था कि लोग
ही त्याग–पच्चक्खाण, धर्मध्यान, जप, तप, स्कंधादि विशेष
ह के साथ हार्दिक- उमंगों के साथ करने लगे । इस समय
करणी, धर्मजागृति और ज्ञानवृद्धि इतनी अधिक हुई थी कि,
ले वर्षों से उसको चौगुनी कहने में तनिक भी अतिशयोक्ति न
गी ।

इसके सिवाय विशेष चित्ताकर्षक बात यह है कि, राज्य कर्म-
री गण साधु महात्माओं के सत्संग का लाभ बहुत कम उठाते
किन्तु श्रीमान् के विराजने से उनकी अनुपम प्रशंसा सुनकर
के बड़े २ ओहदेदार, अमीर, उमराव, वकील इत्यादि पूज्य
सभा में आने लगे और उनके ऊपर पूज्य श्री का इतना
अधिक प्रभाव पड़ने लगा कि, वे पूज्य श्री के पूर्ण गुणानुरागी
और [illegible] बन गये थे ।

रतलाम स्टेट के मुख्य दीवान श्रीमान् पी. बाबूराय साहि
ए. एल- एल. बी. जो कि, उस समय इन्दौर स्टेट में सु
कारी साहिब के पदपर सुशोभित हुए थे उन्होंने पूज्य श्री
का बहुत अच्छा लाभ लिया था। पूज्य श्री के विषय में
धर्म के मूल सिद्धान्तों के विषय में उनको बहुत अच
लग गया था। श्रीमान् दीवान साहिब केवल व्याख्यान
नहीं किन्तु मध्यान्ह-काल में (दुपहर के समय में) भ
२ दिन आया करते थे। प्रेमपूर्वक व्याख्यान श्रवण करते
ही नहीं किन्तु अपनी धर्मपत्नी तथा बालबच्चों को भी
का धर्मोपदेश श्रवण करवाने के लिए अपने साथ लाते थे।
की विमल बुद्धि और स्मरण-शक्ति तीव्र होने के कारण
समय में जैन-धर्म के मुख्य २ सिद्धान्तों का उन्होंने
सम्पादन कर लिया। जिसके कारण तत्वज्ञान पर उनक
अधिक अभिरुचि उत्पन्न होगई थी कि, पूज्य श्री के विहार
पर भी (रतलाम से) वे श्रीमान् सर्व साधारण की
सम्मुख नय, निक्षेप, सप्तभंगी आदि महत्वपूर्ण विषयों प
करने योग्य भाषण देते थे। ऐसे ही रतलाम स्टेट के
साहिब श्रीमान् पंडित बीजमोहननाथ बी. ए. एल. एल. बी
श्री के उपदेश का लाभ उठाते थे।

रतलाम के मे० पुलिस सुपरिण्टेण्डेण्ट महता
...सिंहजी साहिब तो दिन में कई बार पूज्य श्री की

थे और खूब परीक्षा पूर्वक चातुर्मास के अन्त में पूज्य श्री से सम्यक्त्व रत्न प्राप्त करके दृढधर्मी श्रावक बन गये थे। १६६३ की मार्गशीर्ष वदी १ के दिन, रतलाम से करने के समय श्री जी से उन्होंने इस प्रकार अर्ज की कि, ! आज तक मैंने किसीको भी गुरु नहीं किया था, इसका यह है कि, जहाँ तक आत्म-परितोष (आत्मा का समाधान) जाय वहाँ तक गुरु के समान किसी भी व्यक्ति को किस र स्वीकार कर सकते हैं? आज मैं आपको अन्तःकरण से श्रद्धापूर्वक गुरु के समान स्वीकार करता हूं"। इस समय श्री जी के अनन्य भक्त बन गये। श्री जी महाराज से उनका ग होने के पूर्व उनकी श्रद्धा किसी भी सम्प्रदाय पर नहीं थी।

संस्थान 'अमलेठा' के स्वर्गस्थ रा० ब० महाराज रघुनाथसिंहजी पंचेड के ठाकुर साहिब केप्टन रघुनाथसिंहजी सदैव पूज्य श्री के ख्यान में पधारते थे।

उपरोक्त चातुर्मास में हिन्दू मुसलमान, इत्यादि लोग सहस्रों संख्या में एकत्रित हो पूज्य श्री के व्याख्यान का अपूर्व लाभ ले थे। 'वहोरा' कौम (जाति) के भी एक सद्गृहस्थ पन्नुलाजी' कभी २ पूज्य श्री के व्याख्यान में आते थे, एक दिन ख्यान समाप्त होने के पश्चात् वे खड़े होकर परिषद् (उपस्थित समूह) के सामने कहने लगे "आप जैन लोग ऐसे महात्मा

पुरुषों के उपदेश सुनने वाले सचमुच भाग्यवान् हों, आज
महाराज के आज के उपदेश से मेरे हृदय पर जो प्रभाव पड़ा
वह ऐसा है जो कि, आजीवन स्मरण रहेगा। आज से मैं क
भी पशु- हिंसा नहीं करूंगा; उसी प्रकार मांस भक्षण भी
करूंगा, इतना ही नहीं, किन्तु अपने भाई बन्धु, इष्ट मित्रों को
यही मार्ग बतलाऊंगा। मेरे समान वे भी पूज्य श्री के ऐसे अ
उपदेश का लाभ लेते हों तो कितना अच्छा हो।

यह भाई दूसरे ही दिन अपनी जाति के तीन चार भाइ
को अपने साथ पूज्य श्री के व्याख्यान में बुला लाये थे। और
वे अपने साथ के बैठने उठने वाले मित्रों को 'अहिंसा-धर्म'
महत्त्व समझाने को अपना कर्तव्य समझने लग गये थे। (समझो

चातुर्मास पूर्ण होने पर पूज्य श्री ने विहार किया, उस स
स्वधर्मी, अन्यधर्मी हजारों मनुष्यों के सिवाय पुलिस सुपरि
साहेब अपनी पूरी पल्टन के साथ जन-समुदाय के आगे २
रहे थे। और जैन शासन की प्रभावना करके पूज्य श्री के
में अपना अप्रतिम पूज्यभाव प्रदर्शित करते थे

आचार्यश्री नगर के बाहर पहुंचे, उस समय श्रीमान् द
साहिब की ओर से मेहताजी साहिब (पो. सु.) ने स
बाग में विराजने के हेतु अर्ज की उससे महाराज श्री बाग में वि
दूसरे दिन प्रातःकाल के समय में पूज्य श्री विहार करने को

में दीवान साहिब आ पहुंचे, एवम् पूज्य श्री से प्रार्थना की
यदि आप एक दो दिन यहां विराजो तो बड़ी कृपा हो"
र से पूज्य श्री दो दिन तक सरकारी बाग में विराजमान रहे,
री बाग में जैन साधु के विराजने का यह पहिला ही अवसर
यहां पर गुलाबचक्र के विशाल भवन में पूज्य श्री व्याख्यान
राज्य के अधिकांश आफिसर लोग अपने स्टाफ के सहित
ख्यान का लाभ उठाते थे। इसके सिवाय स्वधर्मी, अन्यधर्मी
रों मनुष्य आते थे। यह प्रसंग भी रतलाम के इतिहास में
ा ही था। श्रीमन्महावीर प्रभु के समवसरण का जो वर्णन
' उववाई सूत्र, में है उसकी कुछ २ झांकी इस समय गुलाब-
भवन में होती थी।

श्रीमान् रतलाम दरबार ने उस समय यह बात स्वीकृत भी की
" पूज्य श्री के पुण्य-प्रताप* से ही रतलाम शहर पर प्लेग का
र नहीं चल सकता।

रतलाम के चातुर्मास में अजमेर निवासी साधुमार्गी जैन-संघ
माननीय नेता राय सेठ चांदमलजी साहिब तथा जैन-समाज

---

* ऐसा ही मौका मोरवी में भी मिला था जो कि, आगे पृष्ठ
है।

के अन्य अग्रगण्य श्रावक लोग श्रीजी महाराज के दर्शनार्थ आये थे, वे तथा उसी प्रकार रतलाम कान्फरन्स सम्बन्धी विचार करने के हेतु रतलाम मुकाम पर एकत्रित हुए थे, ये सब सज्जन श्रीमान् दरबार श्रीकी सेवा में उपस्थित हुए और अर्ज की कि" रतलाम शहर के आसपास सब स्थानों में प्लेग का बड़ा भारी उपद्रव मच रहा है किन्तु रतलाम में ऐसे महात्मा के विराजने से रतलाम में किसी प्रकार का उपद्रव नहीं है,, यह सुनकर श्रीमान् दरबार श्री ने कहा कि" रतलाम शहर के अहोभाग्य हैं कि ऐसे महात्मा का यहां विराजना हुआ है। यहां पर शान्ति रही यह इन्हीं के पुण्य-प्रताप का फल है; इनके गुरुवर्य श्रीउदयचन्द्रजी महाराज भी यहां पर कईबार विराजे थे और वे भी अत्युत्तम साधु थे।

संवत् १९६३ के रतलाम के चातुर्मास में पूज्य श्री अ ठाणा ४६ विराजते थे। उस अवसर पर आषाढ शुद्ध १४ भा शुद्ध ५ तक तपश्चर्या तथा संवरकरणी निम्न लिखे अनुसार हुई थी।

सत्तरह १७ उपवास का थोक १६/२ १५/४ १३/५ १२/६ ११/११

२

९/७१ ८/१८१ ७/२१ ६/२६ ५/६११ ४/७४९ ३/१२०० ग

एक दिन के अन्तर से दो माह तक (एकान्तर)

३५१

धन्दा बन्द रहा। १०० बकरों को अभयदान दिया गया। इस काम में श्री सरकार की ओर से बहुत मदत दी गई थी।

उपरोक्त लिखे अनुसार रतलाम के चातुर्मास में जैन-धर्म का बहुत ही उद्योत हुआ।

अध्याय १७ वाँ
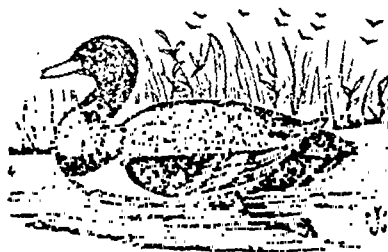
ाड़ और मालवे की सफलता पूर्वक यात्रा

———:o:———

रतलाम से विहार करके श्रीमान् आचार्यजी श्री बड़ी सादड़ी मेवाड़) पधारे वहां संवत् १९६३ पौष वद्य ३ के दिन श्री हमीचन्दजी महाराज जो कि, इस समय विद्यमान हैं, उनके सारिक अवस्था के पुत्र पन्नालालजी तथा रतनलालजी * ये दोनों ई तथा पन्नालालजी की स्त्री हुलासयांजी ऐसे एक ही कुटुम्ब के न जनों में धन, माल, जीमन इत्यादि का दान करके प्रबल राग्यपूर्वक दीक्षा स्वीकार की।

---

* भाई रतनलालजी का (सम्बन्ध (सगाई) हो चुका था और विवाह होने की तैयारी थी, ऐसी दशा में भी उन्होंने दीक्षा ली। रतनलालजी की उमर थोड़ी होते हुए भी वे अत्यन्त प्रति-भाशाली, धीर वीर, गम्भीर और संस्कारी पुरुष थे, और उनकी ानशक्ति भी अत्यन्त बढ़ी हुई थी। उनकी व्याख्यान शैली भी ीशय प्रशंसनीय थी। कई श्रावकों का ऐसा अनुमान था कि, श्री हमीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय को यह महानुभाव प्रकाशमान

तत्पश्चात् सादड़ी के मेहता कुटुम्ब के एक खानदानी घर की (उच्च कुल की) सावगणजी, नामकी एक श्राविका बहिन ने भी दीक्षा ली थी। एक ही दिन चार दीक्षाएं हुई थीं। इस समय सादड़ी में साधु, साध्वी मिलकर कुल ८४ ठाणा विराजते थे। पंजाब के पूज्य श्री श्रीचन्दजी महाराज भी इस सम्मेलन में विराजते थे।

सादड़ी क्षेत्र इस समय तीर्थस्थान के रूप में होगया था। इस शुभ अवसर पर ६० ग्रामों के लगभग ५००० पांच सहस्र मनुष्य सादड़ी में एकत्रित हुए थे। दीक्षा महोत्सव बहुत ही धूमधाम से अत्यन्त समारोह पूर्वक हुआ था। राज्य की ओर से हाथी, घोड़ा, मियाना चोबदार, चँवर इत्यादि सब प्रकार की सम्पूर्ण सहायता मिली थी। इस प्रकार की दीक्षा सादड़ी में इससे पहिले कभी भी नहीं हुई थी। यह सब पूज्य श्री के बड़प्पन के कारण ही होने पाया। कहा जाता है कि, बहुत से मुनिराजों के एकत्रित होजाने

करेगा, उनसे श्रीमान् आचार्यजी महाराज को भी उम्मेद थी। किन्तु आयुष्य कर्म की स्थिति न्यून होने के कारण ११ वर्ष तक संयम पालकर, संवत् १९७४ विक्रमी के मगसर महीने में इस असार संसार को छोड़ वे स्वर्ग को सिधारे।

ारण आहार पानी की अन्तराय न पड़े इसलिये कई दिन तक केवल सूखे आटे में जल मिलाकर आहारकर 'चउविहार' कर लेते थे।

सादड़ी की ओसवाल जाति में प्रथम कुछ अनैक्यता (फूट) थी। चार तड़ें पड़ गई थीं। किन्तु पूज्य श्रीके सदुपदेश से सब ही एकत्रित होगये (याने चारों तड़ें एक होगई) और अनैक्यता का स्थान ऐक्यता ने ग्रहण किया। इसके सिवाय इस चिरस्मरणीय अवसर पर स्कंध त्याग पच्चक्खाण जीवों को अभयदान देना आदि इतना अधिक उपकार हुआ कि, उसका सविस्तर वर्णन करना असम्भव है।

यहाँ सादड़ी के श्रीमान् राजराणा साहिब दुलेसिंहजी भी पूज्य श्रीके दर्शन तथा उनके वचनामृत का पानकर अपने को कृतकृत्य समझे और पूज्य श्रीकी मुक्तकंठ से प्रशंसा करते थे, इतना ही नहीं किन्तु उन्होंने जीवहिंसा न करने, तथा प्राणियों की रक्षा करने के विषय के अनेक त्याग पच्चक्खाण किये। जो कार्य लाखों, करोड़ों रुपयों से नहीं होता, सैन्यबल तथा तोपों की लड़ाइयों से नहीं होता जो कार्य रोब तथा भय से नहीं हो सकता, ऐसा कठिन-असम्भव और अत्यन्त सुन्दर कार्य भी निःस्वार्थी शुद्धसंयमी, सन्त के ... मात्र से सिद्ध होता है। पूज्य श्री के सदुपदेश ...

सवही स्थानों में विजयी सिद्ध हुआ है। इस प्रकार के
के लिये आत्म–संयम और चरित्र की–शुद्धचारित्र की प्रथम
श्यकता है।

बड़ी सादड़ी से विहार करके माघ या फाल्गुन मास में
श्री १६ ठाणा सहित रामपुरे (होल्कर) स्टेट पधारे। इस
जावरे के सन्त श्री बड़े जवाहिरलालजी (जो कि, इस समय
मान नहीं है) श्री हीरालालजी, श्री खूबचन्दजी, श्री चौथमलजी,
भी श्री आचार्य श्रीकी आज्ञानुसार चलते हुए उनके स्थान
पर जितने समय तक उनको (धार्मिक नियम से) रहना यो
याने कल्पता था वहां तक रहे थे। जावरे के
सन्तों ने इस समय श्रीमान् आचार्य महोदय के गुणानुवाद
कई स्तवन, लावनी भजन इत्यादि बनाये थे उनमें से कई
मुखाग्र करके श्रावक लोग गाते हैं।

इस अवसर पर श्रीमान् दीवान खुमानसिंहजी साहिव ने
के दिन जो प्रतिवर्ष इनके यहां पाड़े का वध होता था (मार
या) वह हमेशा के लिए पूज्य श्री के सदुपदेश से वन्द क
और उस विषय का पट्टा–परवाना भी करवा दिया।

राय बहादुर कोठारी हीराचन्दजी साहिव ने भी पूज्य
बहुत ही सेवा भक्ति की। इसके सिवाय अनेकों व्रत, प

था जीवों को अभय-दान आदि उपकार के कार्य हुए ! अनेकों मान वगैरह मांसाहारी लोगों ने मांस भक्षण तथा मदिरा करने की कसम ली ।

द्रव्य, क्षेत्र काल भावानुसार सदुपदेश से स्वधर्म और स्व- ज की अच्छी सेवा करके अनेकों निराधार जीवों को अभ- ान दिलाकर धर्म की दलाली की । शुद्ध संयम का प्रभाव ही । है कि, जहां जावे वहां ही विजय-ध्वजा फरके, धर्म का उद्योत और अनेकों जीवों को शान्ति मिले । स्वधर्म का सत्य ज्ञान पादन होने से, मन का मैल धुल जाने से, शंकाओं का समाधान जाने से उत्साही युवक धर्म को अवश्य ही प्रकाशित करें ।

यहां से विहारकर पूज्य श्री कोटा पधारे, कोटे में रामपु ाजार में महारानी साहिबा की कन्याशाला है, वहां पूज्य श्री वि ाजते थे । उस समय व्याख्यान में कोटे के महारावजी साहि धारे थे । पूज्य श्री की अमृतमय वाणी श्रवणकर वे बहु सन्तुष्ट हुए किन्तु सामायिक व्रत लेकर बैठे हुए कई श्रावकों महाराजा साहिब को सम्मान देने के लिए खड़े होना, आर नाना वगैरह चेष्टाएं कीं उनके विषय में उन श्रीमान् ने अ असमता प्रकट की । जिस दिन पूज्य श्री का व्याख्यान हुआ उसी दिन महारावजी साहिब शिकार खेलने के लिए

बाहर निकले, थोड़ी दूर जाने पर एक मुत्सद्दी (सरदार) ने
की कि" हूजूर ! आज तो आपने जैन-धर्मी गुरु का व्याख्यान
ना है । इसके स्मरणार्थ आज शिकार नहीं करना चाहिये"
शब्द सुनते ही बन्दूक का मुंह रुमाल से बांधते २ महाराजा
साहिब ने कहा, अच्छा चलो ! आज शिकार नहीं ही खेलें,
कह कर महाराजा साहिब राजमहल की ओर पीछे फिर गये।

अध्याय १८ वाँ ।

' मरुभूमि में कल्पवृक्ष '
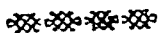
ोटे से विहार करके मार्ग में अत्यन्त उपकार करते हुए
श्री नसीराबाद होते हुए नयानगर (ब्यावर) पधारे;
पर अजमेर के श्रावकों की विनती पर से संवत् १९६४
ातुर्मास अजमेर में करने का निश्चय किया ।

अजमेर (चातुर्मास) संवत् १९५६ में श्रीमान् पूज्य श्री
रामजी महाराज के सम्प्रदाय के प्रतापी मुनियों का वियोग
तथा पूज्य श्री विनयचन्द्रजी महाराज का विराजना वृद्धावस्था
ारण जयपुर होने से अजमेर की जैन-समाज में धर्म के
ु में कुछ शिथिलता उत्पन्न होगई थी, किन्तु आचार्य श्री के
ि के पुनर्जीवन प्राप्त हुआ । पूज्य श्री के प्रताप से बहुत से
ों को धर्म-ध्यान की रुचि उत्पन्न हुई, और बहुतसों की
ि विशेष रूप से दृढ़ हुई । त्याग पच्चखाण, तथा अत्याधिक
और तपस्या आदि बहुत ही उपकार हुआ । [illegible]
महाराज के सदुपदेश से बिरादरी में (जाति में) [illegible]
[illegible] ([illegible]) बन्द करनेमें आया । [illegible]
[illegible] निकलने में [illegible] रात को [illegible]

इस वर्ष में संवत्सरी-पर्व के विषय में एक दिन का मतभेद श्रीमान् की गुरु आम्नाय के अनुसार एक दिन आगे सं[illegible] थी जब कि, दूसरे सम्प्रदाय की एक रोज पीछे थी लेकिन श्रीने सब को सम्मिलित करके दोनों दिन अत्यन्त ही धर्म कराया। बहुत से छठ्ठे हुए बहुतसी दया पोषे हुए प्रकार का भेदभाव या राग द्वेष की वृद्धि नहीं होने इतना ही नहीं, किन्तु परंपरा (पूर्वजों के समय) से आती अपने सम्प्रदाय की रीति के अनुसार संवत्सरी पहिले कर आगे दिन करने पर इस विषय को लेकर जैन पत्रों में श्री के ऊपर कितने ही एक पक्षीय अनुचित, पूर्ण लेख प्रक[illegible] हुए किन्तु सागर के समान गम्भीर महात्मा श्री ने तनिक भी न करते हुए उनके आक्षेपों का प्रतिवाद नहीं किया, यह सम[illegible] भावकी तरक्षा। अत्यन्त ही कठिन है समर्थ पुरुषों का ऐसा [illegible] उपशम(शान्ति)भाव धारण करना, ये इनके समान महान् आत्म[illegible] महानुभाव का ही काम है। इसका प्रभाव गुजरात, काठियावाड़ जैन बन्धुओं के ऊपर ऐसा पड़ा कि, वे श्रीमान् को महान् [illegible] समान मानने लगे। इस चातुर्मास में जोधपुर के भाई शोभा[illegible] को पूज्य श्री के सदुपदेश से वैराग्य उत्पन्न होगया और [illegible] पूज्य श्री के पास से दीक्षा ग्रहण की। तत्पश्चात् रतलाम[illegible] वासी श्रीयुत छगनलजी चपलोत के भतीजे तख्तमलजी [illegible] अल्पायु में ही प्रबल वैराग्य पूर्वक श्रीमान् के पास दीक्षा [illegible]

की। जिसका दीक्षा-महोत्सव अजमेर के संघने बहुत ही धूमधाम से किया। यह उत्सव अजमेर के "दौलतबाग" में हुआ था।

अजमेर के चातुर्मास में तारीख ३-११-१९०७ के दिन श्रीमान् मोरवी नरेश सर वाघजी बहादुर जी. सी. एस. आई. तथा अजमेर के ज्युडिशियल आफिसर श्रीमान् खांडेकर साहिब पूज्य श्री के व्याख्यान में पधारे थे। श्रीमान् मोरवी नरेश पूज्यश्री के व्याख्यान से अत्यन्त ही प्रसन्न हुए और उन श्रीमान् ने श्रीजी महाराज से प्रार्थना की कि, जो आप काठियावाड़ की तरफ पधारेंगे तो बहुत ही उपकार होगा। श्रीजी ने उत्तर दिया कि, जैसा अवसर।

अजमेर का चातुर्मास पूर्ण होने पर श्रीजी महाराज नयानगर (ब्यावर) की ओर पधारे। मार्ग में 'दोराई' मुकाम पर स्वामीजी श्री मुन्नालालजी महाराज जो कि, नयानगर से अजमेर की तरफ पधार रहे थे उनका समागम हुआ, वहां पर सायङ्काल का प्रतिक्रमण करने के पश्चात् स्वामी श्री मुन्नालालजी महाराज ने श्रीमान् आचार्य महाराज साहिब से अर्ज की कि, मेरी इच्छा पंजाब की ओर विचरने की है, यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं उस ओर विचरूं। आचार्य श्रीने फरमाया कि "आपको जिसमें सुख हो, वैसा करो।" पूज्यश्रीने मुन्नालालजी महाराज को पंजाब में पांच वर्ष

विचरने की आज्ञा प्रदान की। श्रीमुन्नालालजी महाराज सरल स्वभावी और सूत्रों के अभ्यास में पूर्ण विज्ञ हैं।

तत्पश्चात् आचार्य श्री मरु भूमि—मारवाड़ को पवित्र करते हुए अनेक उपकार करते हुए श्री बीकानेर श्री संघ की विनन्ति से बीकानेर पधारे और संवत् १९६५ का चातुर्मास श्रीजी ने बीकानेर में किया।

बीकानेर (चातुर्मास) संवत् १९६५ का चातुर्मास श्री महाराजने बीकानेर में किया, इस वर्ष बीकानेर के श्रावकों में अच्छा उत्साह हो रहा था। धार्मिक ज्ञान की अभिवृद्धि के लिये आचार्य श्री ने अधिक उद्योग किया और बालकों तथा नवयुवकों को जैन-धर्म के सर्वोत्कृष्ट (अत्युत्तम) तत्त्वज्ञान का लाभ मिलता रहे इस उद्देश्य (मतलब) से बीकानेर के संघ ने एक साधुमार्गी जैन पाठशाला की स्थापना की *

---

* उपरोक्त पाठशाला एक वर्ष तक श्री संघ ने चलाई। तत्पश्चात् श्रीमान् सेठ भैरूदानजी सेठी ने अपने स्वतः के व्यय से पाठशाला चलाना शुरू किया, उसमें दिनोदिन उन्नति होती गई और इस समय भी वह पाठशाला बहुत अच्छी नींव पर (अच्छी तरह से) चल रही है। पाठशाला को उपयोग के लिये सेठ भैरूदानजी ने एक मकान दे रक्खा है। लगभग ८० विद्यार्थी उससे लाभ उठा रहे हैं। ... अध्यापक नियत हैं। लगभग ४००) रुपये मासिक खर्च होता है। धार्मिक शिक्षा आवश्यक है। इसके सिवाय हिन्दी,

...त्र चौमासे में तपस्वी मुनि श्री चूलचन्दजी महाराज जो कि,
...त पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज के शिष्य हैं इन्होंने
...पवास किये थे। इस अवसर पर सैकड़ों, सहस्रों मनुष्य
...के लिए आते थे; उनका आतिथ्य सत्कार बीकानेर संघ की
...से भलीभांति होता था। श्रावकों ने भी बहुत ही तपश्चर्या
...अत्यन्त ही व्रत नियम किये थे। पूज्य श्री के सदुपदेश से
...रा निवासी ओसवाल गृहस्थ श्रीयुत ताराचन्दजी तथा उनके
...चांदमलजी ने तथा बीकानेर के सुप्रसिद्ध सेठ अगरचन्दजी
...रानजी के छोटे भाई की विधवा स्त्री रतनकुंवर बाई को वैराग्य
...न हुआ और इन तीनों का एक ही दिन दीक्षा-महोत्सव
...। श्रीमान् बीकानेर नरेश ने दीक्षा महोत्सव के लिए अपना
...ी तथा लवाजमा (घोड़े, नगारा, निशान, आदि अन्य सामान)
...। दिया था। संवत् १९६५ मगसर बद २ के दिन तीनों को
...ी ही मुहूर्त में पूज्य श्री ने दीक्षा दी थी।

... महाजनी हिसाब और लेखनकला आदि विषय सिखाये जाते
... कन्याओं को भी व्यावहारिक और धार्मिक शिक्षा मिले इस गरज
...से एक कन्याशाला भी उपरोक्त सेठ साहिब की ओर से थोड़े
...में स्थापित होने वाली है। बालकों के पास से कुछ भी
... ली जाती है। धार्मिक शिक्षण में सामायिक प्रतिक्रमण
... तथा लाभोपयोगी जैन प्रश्नोत्तर इत्यादि सिखाये

अध्याय १६ वां।

अजमेर में अपूर्व उत्साह।

श्रीजी महाराज कुचेरे विराजते थे तब अजमेर निवासी ग
सेठ चांदमलजी साहिब ने अर्ज की कि, आगामी फाल्गुन मा
अजमेर मुकाम पर कान्फरन्स का अधिवेशन है, इसी लिये सम
हिन्दुस्थान के अग्रेसर स्वधर्मी बांधव वहां पधारेंगे, उस स
आपकेसे समर्थ धर्माचार्य और धर्मोपदेशक वहां विराजने
बड़ा उपकार होने की संभावना है। इत्यादि शब्दों से बहुत ही
पूर्वक विज्ञप्ति की। इस समय पूज्य श्री का दिल वहां हाजिर
का नहीं था, परंतु सेठजी के अत्याग्रह और कितने ही साधु
की प्रबल उत्कंठा से पूज्य श्री ने अपने साधुओं को सम्बोधन दे
जो यह शर्त तुम्हें मंजूर हो तो मैं अजमेर की ओर विचरूं। एक
साधुमार्गी भाइयों के घर से जबतक अधिवेशन होता रहे कि
आहार पानी न लाना और दूसरी शर्त यह है कि, अपने को
होकर वहां जाना पड़ेगा इसमें लम्बे विहार करने से कदाचित्
पांव में तकलीफ हो जाय तो तुम्हें अपने स्कंधों पर बिठाकर
अजमेर पहुंचाना पड़ेगा। साधुओं ने दोनों शर्तें स्वीकार की
पूज्य श्री ने सेठजी की विनय मंजूर की।

ज्य श्री को अपने वचन के लिये ८० कोस का विशेष कर जोधपुर जाना पड़ा, कारण कि, जोधपुर श्रीसंघ ने पूज्य विनय की थी उस समय उन्हें जोधपुर स्पर्शने का वचन पूज्य दे दिया था।

वहां से पूज्य श्री जोधपुर पधारे वहां भी फिर राय सेठ मलजी साहिब विनन्ती करने पधारे और क्रमशः पूज्य श्री विहार ते सं० १९६९ के चैत्र वद्य २ को अजमेर पधारे पूज्य श्री जमेर पधारने वाले हैं ऐसी खबर पहिले से ही देश देशान्तरों फैल गई थी इसलिये बाहर के हजारों श्रावक उनके दर्शनार्थ न्फरन्स के अधिवेशन के समय आये थे और साधु साध्वी भी बड़ी संख्या में पधारी थीं, इसलिये श्रावक राग वश साधु के निमित्त आहार पानी अधिक निपजावें, अथवा कुछ दोष लगावें इस र से महाराज श्री ने जाते ही तेला किया और पारणा करते ही सरा तेला किया थोड़े ही साधु आहार पानी करते थे। उन्हें भी आज्ञा की कि, अन्य दर्शनियों के वहां से आहार पानी बहर लाया करो। ऐसी तपस्या में भी पूज्य श्री बुलन्द आवाज से व्याख्यान फरमाते थे।

उस समय सब मिलाकर करीब १५० साधु अजमेर में व्याख्यान श्रीमान् लोढ़ाजी की कोठी में होता था और वहां सब साधु एकत्रित होते थे पहिले दूसरे साधु बारी २ से

तक व्याख्यान फरमाते थे। उस समय किसी २ साधु के व्याख्यान के समय बहुत ही हल्ला होता रहता तो पूज्य श्री के पाट पर विराजते ही शीघ्र सर्वत्र शांति हो जाती और सब लोग चुपचाप बराबर व्याख्यान सुना करते थे। पूज्य श्री का व्याख्यान आत्मा को शूरता चढ़ाने वाला था जब कहीं कुछ गड़बड़ जैसा प्रसंग उपस्थित होता तो उस समय शांत रखने के वास्ते पूज्य श्री प्रभु स्तुति या भक्तिरस मय काव्य छेड़ देते और लोग उसमें शामिल हो जाते थे। महात्मा गांधीजी की भी यही सलाह है कि, संगति का असर बिजली जैसा है गान अर्थात् सुरीली अवस्था यह तत्काल कोमलता और मुलायमपन पैदा करती है।

अहमदाबाद कांग्रेस के समय खादी नगर में निवास करने वालों ने भिन्न २ मण्डलियों के हृदयभेदक भजन सुने होंगे जीवन पर्यंत याद करेंगे, इतनाही नहीं, परन्तु वह भावना कभी भूलेंगे नहीं।

श्रीमान् मोरवी नरेश तथा श्रीमान् लींबड़ी नरेश कि जो खास कान्फरन्स का अधिवेशन दिपाने के लिए ही आये थे वे भी व्याख्यान में पधारते थे अजमेर कान्फरन्स सं० १९६६ के चैत्र वद्य ३-४-५ तीन रोज हुई थी।

सं० १९६६ के चैत्र वद्य ६ के रोज जोधपुर के बीसा ओस

श्रीयुत शोभालालजी दोशी ने पूज्य श्री के पास दीक्षा ली, उस
। कान्फरन्स में आये हुए हजारों मनुष्य उत्सव में शामिल
थे। श्रीमान् मोरवी और लींबड़ी नरेश भी विराजमान थे,
। देने के प्रथम पूज्य महाराज ने फरमाया कि, भाई तुम घर
त्र इत्यादि त्याग कर मेरे पास दीक्षित होने आये हो परन्तु
य का कार्य महान् दुष्कर है। अनुभव हुए बिना कितनी ही
ध्यान में भी नहीं आती, इसलिए पूर्ण विचारकर यह साहस
, फिर दूसरी यह बात भी याद रखना कि, जबतक तुम पंच
व्रत शुद्धतापूर्वक पालन करोगे वहांतक मैं तुम्हारा साथी हूं,
र इसमें जरा भी दोष लगाया कि, मैं तुम्हारा साथ छोड़ दूंगा,
ारे और मेरे धर्म की ही सगाई है। यों पूज्य श्री ने सब सं-
की दुष्करता दिखाई, उसके उत्तर में श्रीयुत शोभालालजी ने
े की कि, महाराज श्री जबतक मेरी देह में प्राण है, तबतक
दावर आपकी और आप मुझे जिसकी नेश्राय में सौंपोंगे उन
गुरुदेव की आज्ञा का पालन सच्चे दिल से करता रहूंगा, फिर
य श्री ने विधिपूर्वक दीक्षा दी।

शिष्यों की संख्या बढ़ाने का पूज्य श्री को बिल्कुल लोभ न था।
ोंने अपनी नेश्रायका एक भी शिष्य नहीं किया एकदम मुंडन
ने की पद्धति से वे बिल्कुल विरुद्ध थे। वे दीक्षा के उम्मेद
ों को अपने पास रखकर शास्त्राभ्यास कराते थे। वैरागी को

अनुभव देते और कसौटी पर कसते थे। वैरागी की मानसिक, शारीरिक और सामुद्रिक चिकित्सा किये बाद उन्हें मुनि मार्ग में लेते थे। प्रवृत्ति के समय महात्मा गांधीजी का अनुभव याद आता है, वे कहते कि, एक भी अकस्मात् आ खड़े रहने वाले को पूर्ण स्वयं सेवक की तरह मैं तो दाखिल न करूं, ऐसा स्वयंसेवक मदद के बदले अड़चन करने वाला ही होता है, यह सिद्ध है, मैदान में लड़े हुए सैनिक कवायती (शिक्षित) सिपाई की हार में एक कवायती (शिक्षित) बिन अनुभवी नये सिपाई की कल्पना करो तो एक क्षण भर में ही वह समस्त सैना को गड़बड़ में डाल देगा।

इस अवसर पर पूज्य श्री की उदार वृत्ति का संख्याबद्ध भव्यों को परिचय हो गया था. प्रायश्चित लेकर संभोग किये हुए साधुओं में पुनः भूल करने वाले साधुओं को योग्य आलोचना करके सम्प्रदाय में लिया, रतलाम के वयोवृद्ध संसारी वेष में साधु जीवन बिताने वाले सेठजी अमरचंदजी पीतलिया और सेठ चांदमलजी रीयां वाले ने इस मामले में पूज्यश्री को समयोचित सलाह दी थी। पूज्यश्री ने श्रोताओं को समझाया था कि, प्रत्येक का सच्चा ताप और त्याग की दिव्य ज्योति आलोचना से देदीप्यमान हो जाती है। गफलत करने से, आलसी रहने से निंदा होने लगती है और विद्या-हीनता से विवेक भ्रष्टता होते आत्मोत्कर्ष को अंतराय लगती है।

साधु-जीवन को क्षीण करने वाली त्रुटियां जो संयम के आ-
के प्रतिकूल और संस्कृति की विघातक हों वे दूर करने की
उन्हें पुष्टि देने से तो असह्य अनर्थ उत्पन्न होता है। पुष्टि देने
और ऐसे साधनों की सरलता करने वाले श्रावक अपने कर्तव्य
से गिर पड़ते और साथ में ही ऐसे शिथिल साधुओं को भी ले
ते हैं। कर्तव्य-बुद्धि की बेपरवाही, सद्गृहस्थ हिम्मतवान श्रावकों
शिथिलता और ऐसी बातें टालने वाले बेफिक्र संघारी ऐसे
दाय को सुधारने का मौका देने की जगह बिगाड़ते हैं परिणाम
पत्थर के साथ आप भी डूबते हैं।

'चलने दो' अपने को क्या करना है, ऐसे मंद विचारों और
परवाही से समाज सड़ जाता है और फिर सड़े हुए समाज में हृदय
रूपी शान्ति न मिलने से खोटा समाज निर्बल होता चला जाता
ऐसे के पाक को पूर्ण रीति से फलने देने के लिये पासही उत्पन्न
हुए कचरे का नाश करना ही चाहिये। समाज को सड़ाने वाले
तत्वों का नाश होना ही चाहिये।

भारत की धर्म भोली प्रजा 'साधुओं को' ईश्वर अंश सम-
झने वाली है। यह दृढ़ता, यह पूज्य भाव, प्राचीन समय से प्रचलित
और इस दैवी अधिकार की मान्यता ने प्रजा से इतने गहन मूल
डाले हैं कि, इस दैवी हक की, खुमारी में समय २ पर असह्य व्यवहार
... भी ... के ... करने में धर्मभाव

जाता है। जयपुर में ऐसे दृष्टान्त प्रत्यक्ष देखकर लेखक था जाते हैं।

हिन्द अत्यन्त श्रद्धालु, धर्म प्रेमी-और आस्तिक देश है अ और सब कौमों की अपेक्षा पोची से पोची वनिक बंधुओं की इत आस्तिकता तो अजब गजब में डाल देती है। प्राचीन समय के साधु के शुभ संस्कार जो वंश परम्परा से गर्भित होते आये हैं उन्हीं यह परिणाम है। ये पवित्र संस्कार जाज्वल्यमान बने रहें ऐ अवश्य अंतःकारण पूर्वक चाहते हैं परन्तु अपनी इस भावना भोलेपन या संदेह के वेगमें बहाने से 'देवांशी हक' का दावा क वाले एक तरह से समाज को नीचा दिखाने जैसा काम बैठते हैं।

बहुत समय से स्थित रहे ये संस्कार वर्तमान समय में अ श्यक हैं ऐसे गहन विचार में पैठने से दिल घबड़ा जाता है प यह बात तो सत्य है कि, यह मान्यता जब प्रारंभ हुई तब तो सबके चारित्र अत्यन्त ही पवित्र और इस 'देवांशी हक' पूर्ण योग्यता सिद्ध करने वाले होंगे ऐसा प्राचीन साहि विश्वास देता है परन्तु साथही साथ उसी साहित्य में यह बात मिलती है कि, इन हकों का दुरुपयोग करने वा को असाधारण अपराधी से विशेष सजा मिलती थी। एक सा मनुष्य और एक सब कानून का ज्ञाता वही गुन्हा करता है

मनुष्य की अपेक्षा कानून जानने वाले को विशेष सजा है और वही अधिक तिरस्कृत होता है।

अपने समाजिक नियमों (Social Contract) के अनुसार चलने वालों के सामने सख्त कदम भरने की परवानगी है इस दृष्टान्त से दूसरों को उलट सुलट चाल चलने की मिलती है एक दो को माफी दे देने से दूसरे वाईस जनोंको इस की खुमारी में समाज में विषैला जल फैलाने तक का अधिकार ता है। योग्य को योग्य मान देने में अपन अपनी श्रद्धा की सीमा लांघते। संयम और साधु-धर्म की बहुमान्यता निभाने में ने को विनय-धर्म आदरना चाहिये परन्तु इस विनय से ऐसा न निकालना चाहिये कि, इस समुदाय की चाहे जैसी चाल हो मानना या प्रसन्नता, बड़ाई, करनी चाहिये अपने दैवी हक के के सहारे व्यर्थ घूमते हुए नामधारियों को कर्म के अचल ओं का पश्चाताप करना चाहिये। सत्य-सनातन धर्म जिनमें जैसे उत्तम सात्विक गुण हों उन्हें ही दैवी हक प्रदान करता है। साधु-वर्ग और श्रावक-समुदाय अपने २ कर्तव्य अपनी २ जवाबदारी समझ समय और भाव को सन्मुख रख पालन करें ऐसी लेखक की हार्दिक भावना है।

अध्याय २० वाँ।

राजस्थानों में अहिंसा धर्म का प्रचार

अजमेर से विहारकर राह में अनेक भव्य जीवों को उप
देश देते सं. १९६६ का चातुर्मास पूज्य श्री ने बड़ी सादड़ी मे
में किया। वहां जो [illegible] के महान् उपकार हुए। साधुमार्गी
कान्फरन्स के मेवाड़ प्रांत के प्रांतिक सेक्रेटरी नीमच नि
श्रीमान् सेठ नथमलजी चोरड़िया ने इन उपकारों की सविस्त
सांवत्सरिक क्षमापना के साथ छपाकर प्रसिद्ध की है उन
खास बातें नीचे दी गई है।

विशेष आनन्ददायक समाचार यह है कि, जिस तरह श्री
मोरवी नरेश सर वाघजी बहादुर जी० सी० आई० ई०
श्रीमान् लींबड़ी नरेश श्री दौलतसिंहजी बहादुर श्री जैन
अहिंसा धर्म की प्रीतिपूर्वक सेवना करते हैं और साधु महा
के आगमन के समय व्याख्यान श्रवण करने के लिए व्याख्या
पधारकर सभा को सुशोभित करते हैं उसी तरह यहां श्रीमान
सादड़ी राजराणा साहिब श्री दुर्जनसिंहजी जिनकी पीढ़ी दर
से इस धर्म की परंपरा होती आई है पूज्य श्री महाराज की श

ि वाणी-अमृतधारा-वृष्टि से तृप्त हो अपने राज्य में नीचे लिखे
पार जीव दया का प्रबंध किया है।

(१) नवरात्रि में जो आठ भैंसे तथा १० बकरों का वध
ता था वह हमेशा के लिए बंद किया।

पाड़ा, हिंगलाज माता को पाड़ा १, पंडेड में पाड़ा १— गाजन
की पाड़ा १, लदगीपुर में पाड़ा १, वरदेवरा कुजूं में पाड़ा २,
पुरा फावर में पाड़ा दो यों कुल पाड़े आठ।

बकरा। पालाखेड़ी में बकरे ४, वागला के खेड़े में बकरा १,
ारणों के खेड़े में बकरे ३, भैंतरडी में बकरा १ और ारिया
ड़ी में १ यों बकरे कुल १०।

कुल जानवर अठारह का वध प्रतिवर्ष होता था वह बन्द
कर दिया गया।

(२) कसाईखाना बंद (३) तालाब में मच्छी मारना बन्द
(४) कस्बे में अगते मंजूर.

श्रीमान् रावराणा साहिब की ओर से कसाईखाना बंद औ
ताब में मच्छी मारने की मुमानियत हुई इसके सिवा
ुवर सरदारसिंहजी ने शिकार करने तथा मांस भक्षण करने
ेशा के लिये त्याग किया। ठाकुर दलेलसिंहजी ने अपनी जागी
े गांवों में जो पाड़े प्रतिवर्ष मारे जाते थे वे बंद कर दिये तथा कि

ही जानवरों के शिकार करने तथा मांस भक्षण करने का त्याग किया, सिवाय उनकी रियासत के छड़ीदार, हवालदार, दरोगा इत्यादि ७० आसामियों ने शिकार करना तथा मांस भक्षण करना छोड़ दिया।

कस्बे के लोग यानी समस्त तेलियों ने एक मास में ६ तिथि घानी करना बंद किया। समस्त सुतार, लुहार, कुम्हार, कलाल नाई, धोबियों ने एक मास में तिथी ५ यानि ग्यारस २ पक्खी अमावस १ हमेशा के लिये अपना २ आरंभ त्याग कर दिया।

राजस्थानों के ठिकाणदारों की तर्फ से जीव-दया के प्रामाणिक पट्टे परवाने।

ठिकाना बान्सी-के श्रीमान् रावतजी श्री ५ तख्तसिंहजी ने अपने इलाके में श्रावण कार्तिक और वैशाख महीनों में जानवर और शिकार वास्ते खुराक मारने की हमेशा की ग्यारस व अमावस में जीव मारने की मुमानियत की व सनद परवाना नम्बरी ३८१ मेहर फ़रमाया।

ठिकाना भेंहसर-के श्रीमान् रावतजी श्री ५ भोपालसिंहजी ने भी अपने इलाके में उपरोक्त हुक्म निकालकर पट्टा नम्बरी १२ मेहर फ़रमाया।

ठिकना बोरड़ा-के श्रीमान् रावतजी साहिब श्री ५ नाहरसिंहजी

तरफ से इस चातुर्मास में कसाईखाना बन्द, बाहर वाले को शी बेचना बंद किया गया।

ठिकाना लूणदा--के श्रीमान् रावतजी साहिब श्री ५ जवानसिं-जी की तरफ से चातुर्मास में कसाईखाना बंद, बाहर वाले को मवेशी बेचना बंद, ग्यारस और अमावस को शिकार बंद, पट्टादुस्तखती ३३ ० भेट फरमाया।

ठिकाना साटोला--के श्रीमान् रावजी साहिब श्री ५ दलपत-सिंहजी की तरफ से उपरोक्त सिवाय श्रावण-कार्तिक और वैशाख में जानवरों का मारना बंद, किया और पट्टा नं० ३३ भेट किया गया।

ठिकाना [illegible]--के श्रीमान् ठाकुर साहिब के यहां समस्त कुम्हार [illegible] में ११ व [illegible] का व्यापार बंद हुआ, इस चातुर्मास में [illegible] बंद किया और पट्टा नं० १६

ठिकाना [illegible]--के ठाकुर साहिब श्री दौलतसिंहजी ने [illegible] के जानवरों का शिकार करना छोड़ा।

उपरोक्त [illegible] के [illegible] मेवाड़ ने अपने न [illegible] [illegible] के [illegible] है सहायता की है इसका कोटिशः [illegible] है व प्रभु से प्रार्थना है कि, इन नामदारों की [illegible] परोपकारी कार्यों में [illegible]

इलाके बड़ी सादड़ी के जागीरदारान की तरफ से जीव-दया के पट्टे परवाने।

१ गांव तलावदे-के ठाकुरसाहिब अमरसिंहजी ने अपने गा में सदैव के लिये कार्तिक, वैशाख व चार महीने चातुर्मास शिकार करना या खुराक के लिये जानवरों का वध करना बंद किय व ठाकुर गिरवरसिंहजी ने सदैव के लिये शिकार करना, मांस भक्ष करना व मदिरा पान करना त्याग दिया।

२ पालखेडी-के ठाकुर साहिब श्रीचतुरसिंहजी ने नवरात्रों में जी हिंसा बंद की, नदी में मछलियां मारना बंद का हुक्म जारी कि ठाकुर श्री जालमसिंहजी व दूसरे लोगों ने शराब पीने व चन्द के जानवरों का वध व शिकार करना छोड दिया व जो २ बकरे म जाते थे उनको अमरया करने का हुक्म दिया।

३ वागेला-के ठाकुर साहिब श्रीमोड़सिंहजी ने नवरात्रों की जी हिंसा बंद की और बाहर वालों को अपने यहां से मवेशी बेच बंद किया।

४ गुड़ली-के ठाकुर साहिब श्री प्रतापसिंहजी ने अपने गां चातुर्मास में जानवरों का शिकार व वध बिल्कुल बंद व वैश श्रावण तथा कार्तिक तीनों मासों में खुराक वगैरह के लिये प्र ... बिल्कुल बंद किया।

इलाके मेवाड़ के अन्य ग्रामों की तरफ से जीवदया की तफसील।

१ सरतला २ लीकोड़ा ४ चैनपुर ४ छीतोड़ ५ मूरा जिला (मामवारा) ६ सरदारपुर ७ करारण ८ खोड़ीय ६ सा देवरा १० करजू ११ उम्मेदपुर १२ नांहोली १३ खेड़ा १४ सं धरा १५ जंताई १६ देवरी १७ सतीराखेड़ा ग्राम ४ १८ मा १६ ऊदपुरा २० फतेहसिंहजी का खेड़ा २१ पारड़ा २२ ग्रा खेड़ा २३ भंवरड़ीनलाणा २४ फाचर २५ मादक्या २६ २७ तलाइखेड़ा वगैरह कुल ६५ ग्रामों में पांचसो पचीस(५२५) हिन्दू, मुसलमान, जागीरदारों ने पूज्य श्री महाराज के सदुपदे प्रभाव से अनेक जीव के परोपकार व दया के कार्य किये, जि सहस्रों मूंगे गरीब प्राणियों को दुःखजनक मृत्यु के मुख से अभयदान दिया गया है और भी किसान यानी करसी लोगों ने जंगल में दव लगाने (लाय लगाने) व बहुत से लोगों ने मदि मांस का त्याग किया है।

व्याख्यान में स्वमति अन्यमति हजारों की संख्या में एकत्रि होते हैं महाराज श्री के अमूल्य शास्त्रोक्त वचन श्रवण करने से उप जो उपकार हुए हैं वे संक्षिप्त में ऊपर लिखे हैं वद्दुप कन्या-विक्रय, बाल-लग्न, आतिशबाजी इत्यादि की तथा व्यर्थ

रने की कई लोगों ने प्रतिज्ञा ली है। इस आनन्दोत्सव में
मल होने तथा महाराज साहिब के अमूल्य व्याख्यानों का लाभ
के लिये बाहर गांवों से हजारों श्रावक श्राविकाएं आये थे।

तपश्चर्या साधुओं में—श्रीमान् पूज्यजी महाराज के १ अठाई
पचोला १० बेला तथा एकांतर मास २ की। अन्य मुनिराजों
भी बहुत ही तपश्चर्या हुई थी।

तपश्चर्या श्रावक श्राविकाओं ने:— २७/१ १७/१ १६/१ ११/१ १०/५
९/४ ८/२५ ७/६ ६/३१ ५/१२१ ४/१६१ ३/२६६ २/३३१ १/१५०५१ दया/३७[illegible]
[illegible] के पौषध/५५१ एकान्तरउपवास/८१ एकांतर बेला/३५ स्कंध/२०[illegible]
[illegible]रंगी तपश्चर्या की,/२५ पचरंगी दया पोषध की./१७

[illegible] निवासी भाई धनराजजी को पूज्य श्री के सदुपदेश
[illegible] उत्पन्न हुआ और सं० १९६६ के मगसर बद १
[illegible] स्थान पर श्रीजी महाराज के पास उन्होंने दीक्षा ली
[illegible] भी बाहर ग्राम के सैकड़ों स्वधर्मी बंधु जन पधारे थे
[illegible] उत्सव बड़ी धूमधाम से किया गया था।

वहां से शेष काल उदयपुर पधारे बहुत धर्मोन्नति

वहां से अनुक्रम विहार करते आचार्यश्री १३ ठाणों से गंगापुर हो कपासन पधारे, यहां श्रीजी के चार व्याख्यात हुए। जैन वैष्णव, मुसलमान इत्यादि सब धर्म वाले मिलाकर प्रायः २०० मनुष्य व्याख्यान में उपस्थित होते थे, जीव-दया का पूज्य श्री के मुंह उपदेश सुनते २ वहां के श्री संघ के दिल में दया आई और जी को अभयदान देने के लिये एक स्थायी फंड कायम करने का प्रय किया- तुरन्त ही उस फंड में १०००) रु० एकत्रित हो ग व्याख्यान में कोठारीजी बलवंतसिंहजी साहिब तथा हाकिम श्री जोधसिंहजी तथा चित्तौड़ के हाकिम श्री गोविन्दसिंहजी प्रभृति पधारते थे।

बड़ीसादड़ी का चातुर्मास पूर्ण किये पश्चात् आचार्य महाराज रतलाम की ओर पधारे। वहां श्री जैन ट्रेनिंग कालेज के विद्यार्थी भाई मोहनलाल मोरबी वाले ने उत्कृष्ट वैराग्य से पूज्य श्री के समीप दीक्षा ली, जिनका दीक्षा-महोत्सव रतलाम श्रीसंघ ने अत्यंत ही हर्षोत्साहपूर्वक किया वहां से विहारकर मार्ग में अगणित उपकार करते हुए पूज्य श्री मालवा मारवाड़ को पावन कर विचरने लगे। कितने ही भव्य जीवों ने वैराग्योत्पन्न होनेसे दीक्षा ली

अध्याय २१ वाँ

एक मिति को पांच दीक्षा।

ब्यावर– (चातुर्मास) सं० १९६७ का चातुर्मास श्रीजी ने शहर (नयेशहर) में किया। साधुमार्गी जैनों की वृहत् संख्या वाला यह शहर पूज्य श्री स्वयं अतुलनीय पूज्य भाव रखता हुआ भी आजतक चातुर्मास से वंचित रहा था, इसलिये ब्यावर के श्रावकों की तरफ से अत्याग्रह पूर्वक की गई विनय को स्वीकारकर इस वर्ष पूज्य श्री ने ब्यावर पर अनुग्रह किया। पूज्य श्री का चातुर्मास होने वाला है ऐसी बधाई मिलते ही श्री संघ में आनंद मंगल छा गया। वहां के श्रावकों का धर्मानुराग पहिले से ही प्रशंसनीय था और आचार्य श्री के आगमन से अत्यंत अभिवृद्धि हुई, बहुत धर्म वृद्धि हुई, घाति तपस्या, दया, पौषध, व्रत, नियम, और ज्ञान ध्यान की धूम मचगई। देशावरों से भी सैकड़ों लोग पूज्य श्री के दर्शन और वाणी श्रवण का लाभ लेने आने लगे।

पूज्य श्री की इच्छा कुछ निवृत्ति प्राप्त कर संस्कृत के अभ्यास करने की थी, उस समय [illegible] वाले पं० बिहारीलाल शर्मा कि, जिन्होंने [illegible] में रहकर सिद्धांत कौमुदी वगैरह का अभ्यास

किया था, वे ब्यावरही में थे और पूज्य श्री के पास आते थे। वे
उन्होंने महाराजश्री को संस्कृत पढ़ाना अत्यंत हर्ष पूर्वक स्वीकार
किया और महाराज श्रीने भी पूर्ण जिज्ञासा पूर्वक संस्कृत-व्याकरण
का अभ्यास प्रारंभ किया और चार मास तक अभ्यास कर सारस्वत
की तीन वृत्ति पूर्ण की उपरोक्त पंडितजी गत श्रावण मास में कर्म
के समय हमें बीकानेर में मिले थे, वहां पूज्य श्री जवाहिरलाल
महाराज के दर्शनार्थ आये थे और संघ के आग्रह से चातुर्मास
दरम्यान वहीं रहकर महाराज श्री की सेवा की थी; पंडितजी क
थे कि, पूज्य श्रीलालजी महाराज की जितनी स्मरणशक्ति थे
कुशाग्र बुद्धि थी वैसी दूसरे व्यक्ति की आजतक मैंने नहीं देखी
नित्यनियम, व्याख्यान, शास्त्र पढ़ना, शास्त्र पर्यटन, स्वाध्याय, प्र
लेहना, प्रतिक्रमण आदि २ प्रवृत्तियों में से उन्हें थोड़ा ही स
बहुत कठिनाई से मिलता था। दूर २ के कई श्रावक उनके दर्शन
आते उनके साथ धर्म सम्बन्धी वार्तालाप करने में तथा जिज्ञ
श्रावकों के साथ ज्ञान चर्चा करने में भी कितनाही समय व्यतीत
होता था। इतने पर भी उन्होंने चार महीने में सारस्वत-व्याकरण
की तीन वृत्तियां सम्पूर्ण सीख ली, यह देखकर क्या मुझे आश्चर्य न
हुआ। पंडितजी कहते कि, मुझे उनकी दिव्य शक्ति देख बड़ा आ
होता और समय २ पर ऐसा भान होता था कि, यह कोई म
है या देव हैं। अपने को अभ्यास करने के लिये विशेष समय

रते थे वे कई बार लाचारी दिखाकर कहते कि "मेरी आत्मिक उन्नति
ार्ग में अन्तराय मुझे दिवाल की तरह बाधक मालूम होती है" पूज्य
के ये वाक्या कहकर पंडितजी उनके अतिशय निराभिमान-वृत्ति की
कंठ से प्रशंसा करने लगे थे।

ाजकवि कलापी यथार्थ कहते हैं कि:--

कीर्तिने सुख माननार सुखथी कीर्ति भले मेलवो।
कीर्तिमां मुजने न कांइ सुख छे ना लोभ कीर्ति तणो॥
पोलुं छे जगने नकी जगतनी पोलीज कीर्ति दिसे।
पोलुं आ जग शुं थतां जगतनी कीर्ति सहेजे मले॥

इस चातुर्मास के दरम्यान एक ही मिति को पांच जनों ने प्रबल
ोग्य पूर्वक पूज्य श्री के पास दीक्षाली थी इन पांचों में सेचार तो एक
ाम के निकले हुए थे जोधपुर स्टेट के बालेशर ग्राम के ओसवाल
थ १ हंसराजजी २ मेघराजजी ३ किशनलालजी और ४ गुलाब
ो ये चार तथा ऊंटाला (मेवाड़) निवासी ओसवाल गृहस्थ
पन्नालालजी यों पांचों जनों ने दीक्षा ली जिनका दीक्षा-महो-
अत्यंत ही समारम्भ सहित करने में आया था और उसमें
र संघ ने अत्यंत ही उदारता दिखाई थी।

पूज्य श्री हुक्मीचंदजी महाराज के पास बीकानेर एकही मिति
ांच जनों ने दीक्षाली थी पश्चात् एकही साथ पांच दीक्षा लेने

का यह प्रथम ही अवसर था इनके सिवाय सं० १९६७ के कार्ति
शुक्ला ८ के रोज एक दूसरी दीक्षा भी हुई ।

पूज्य श्री के व्याख्यान का लाभ स्वमति अन्यमति लोग ब
बड़ी संख्या में लेते और उनके फल स्वरूप महान् उपकार होते
कई लोगों ने हिंसा करने का तथा मांस भक्षण और मदिरा पा
करने का त्याग किया था । उपरांत सैंकड़ों पशुओं को अभयदा
मिला था । श्रीयुत घीसुलालजी चोरड़िया तथा श्रीयुत मगनला
बोलेच्छा ने जीवरक्षा के कार्य में पूज्य श्री के सदुपदेश के द्वा
भारी आत्मभोग किया था ।
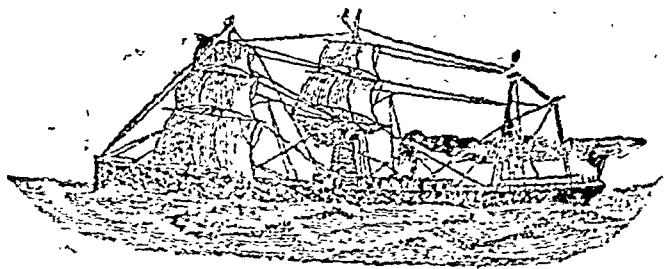
अध्याय २२ वाँ

सौराष्ट्र की तरफ विहार

काठियावाड़ के केन्द्रस्थान राजकोट शहर के श्री संघ की ओर
यावाड़ में पधारने के निमित्त पूज्य-श्री से विनंती करने के
रह व्रतधारी सुश्रावक सेठ जयचंद भाई गोपालजी* वडाली
हर आये और उन्होंने पूज्य श्री की सेवा में अत्याग्रहपूर्वक
की कि, राजकोट संघ और काठियावाड़ के कइ श्रावक आप
नों के लिये तड़फ रहे हैं कितने ही उत्तम साधु मुनिराजों की
भी ऐसी है कि, पूज्य श्री सौराष्ट्र की भूमि पावन करें तो
पकार हो इत्यादि २।

---

*सेठ जेचंद भाई की राजकोट तथा अदन कॅम्प में बड़ी भारी
थी परन्तु केवल धर्म परायण जीवन बिताने के लिये उन्होंने
की आमदनी का प्रत्यक्ष धंधा त्याग दिया और प्रतिमाधारी
हो ज्ञानाभ्यास, धर्मानुष्ठान, समाजसेवा, प्राणिरक्षा और
साधु सन्तों के सत्संग प्रभृति पारमार्थिक प्रवृत्तियों में ही
का समय, शक्ति और द्रव्य का सदुपयोग करने लगे थे। अभी

सेठ जयचंद भाई पहिले भी एक समय विनन्ती करने के लिये स्वयं आये थे। उसी तरह सं० १६६० में मोरवी निवासी सेठ वनेचंद राजपाल तथा लेखक पूज्य श्री के दर्शनार्थ तथा मोरवी कान्फरन्स में पधारने का उदयपुर श्री संघ को आमन्त्रण देने के लिये उदयपुर गए थे। तब भी काठियावाड़ में पधारने की विनती थी, सिवाय अजमेर कान्फरन्स के समय काठियावाड़ से आये हुए कई श्रावकों ने पूज्य श्री की असाधारण प्रभावशाली वक्तृता से मुग्ध हो काठियावाड़ को पावन करने की पूज्य श्री से बहुत ही आग्रह के साथ प्रार्थना की थी, उसमें श्रीमान् मोरवी तथा लींबड़ी नरेश भी शामिल थे। हर एक समय श्री जी महाराज ने कुछ न कुछ आश्वासन रूप ही उत्तर दिये थे। इसलिये इस समय श्रीयुत जयचंद भाई की प्रार्थना स्वीकृत हो गई।

ब्यावर का चतुर्मास पूर्ण होने के बाद आचार्य महाराज श्री विहार करते मरु भूमि को पावन करते पाली पधारे वहां फाल्गुण वदी १३ को श्री मनोहरलालजी की दीक्षा हुई। और पाली

थोड़े वर्ष पहिले ही उन्होंने दीक्षा ले ली है और वर्तमान समय में एक उत्तम साधु हो काठियावाड़ को पावन करते हुए विचरते हैं। वे अत्यंत आत्मार्थी और उत्तम आचारवान् साधु हैं। संसारावस्था में प्रत्येक चातुर्मास में वे पूज्य श्री की सेवा करते थे।

शिक्षित मुसलमान युवक ने मांस भक्षण करने का सर्वथा त्याग किया था तथा दया, पौषध और तपश्चर्या भी बहुत हुई थी।

वर्तमान की विलास-प्रिय प्रजा वैराग्य और भक्ति के नाम से भड़क भागती है। वह तरंगवश अमन चमन करने में ही अपना जीवन सफल समझती है उसको वैराग्य, भक्ति और परोपकार की मात्रा देने में पूज्य श्री अनुभवी वैद्य थे।

इन अरुचिकर दवाओं में असरकारक और उपदेशकारक रसीले दृष्टांतों, काव्यों, श्लोकों, और श्री महावीर की आज्ञाओं, को ऐसी रीति से कहते कि, लोग बाँसुरी पर मुग्ध नाग की तरह नाचने लगते थे, लोगों को रुचिकर दृष्टांत संकलन करने में वे पूर्ण कुशल थे और तथ्य पथ्य अनुपान वाली कटु दवा भी पूर्ण श्रद्धा से कंठ में उतार देते थे, श्रोताओं पर भारी प्रभाव गिरने से लाखों मन लोह-चुम्बक की ओर खिंचाता था। गुजरात की पवित्र भूमि पर पैर देते ही महाराज श्री का उचित आतिथ्य श्री पालनपुर संघ ने किया और Well begun is half done 'शुभ प्रारंभ अर्द्ध सफलता' कहा जाता है यह सत्य अंत में सफल हुआ ऐसा आगे पाठक देखेंगे।

पवित्र समय में आरोपित भक्ति के इन बीजों ने अपूर्व फल प्रदान किया। पालनपुर आज भी शुद्ध संयमी और आत्मार्थी साधुओं

य से सन्मान देता है पूज्य श्री श्रीलालजी की जीवन पर्यंत पा-
नपुर ने सेवा की है चाहे जितनी २ दूर पूज्य श्री के चातुर्मास
हो परन्तु पालनपुर के श्रावक वहां जाने से नहीं रुकते उनमें
हरी मानिकलाल जकशी, जोहरी मोहनलाल रायचंद, जोहरी अ-
लाल रायचंद इत्यादि तो भिन्न मकान ले सपरिवार एक दो माह
य श्री के सदुपदेश का लाभ लेने को वहां ठहरते और अब भी
ही रीति कायम रख वर्तमान पूज्य श्री की ओर ऐसे ही भाव ले
रहा बताते रहे हैं । दुनिया को सिर्फ बताने के लिये ही यह ज्ञान
है परन्तु भक्ति–भाव के प्रत्यक्ष और अनुकरणीय दृष्टांत हैं ।
उत्तेजन के लिये 'नवजीवन' निम्नांकित मंत्र सिखाता है ।

" स्वधर्म अग्नि के समान है इसके सहवास से अपने दुर्गुण
...) जल जाते हैं और फिर वह अपने को अपने समान ही तेजस्वी
... देता है आज इस अग्नि पर कुसंस्कार की क्षार ढक गई है
... उसकी परवाह न करते उस पर पानी डालते अपने स्वतः
... से फूंककर उसे जागृत करो " ।
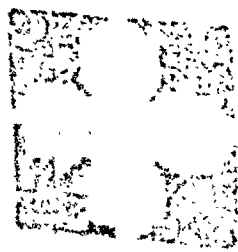
अध्याय २३ वाँ

काठियावाड़ के साधु मुनिराजों ने किया हुआ स्वागत।
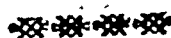
पालनपुर से विहारकर सिद्धपुर, मेसाणा, वीरमगाम, लखतर हो श्रीजी महाराज चैत्र माह में वढ़वाण पधारे। इस समय वढ़वाण शहर में ढोसा वोरा के उपाश्रय में लींबड़ी सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध मुनि श्री उत्तमचंदजी महाराज ठाणा ५ सुंदर वोरा के उपाश्रय में मुनि श्री सोहनलालजी लक्ष्मीचंदजी ठाणा ७ तथा दरियापुरी उपाश्रय में मुनि श्री अमीचंदजी ठाणा ५ कुल मिलाकर १७ मुनिराज विराजमान थे. ये सब मुनिराज पूज्य श्री के व्याख्यान में पधारते थे। श्रोतृवर्ग में देरावासी श्रावक, गिराशिया, ब्राह्मण प्रभृति सब जाति और सब धर्म के लोग दृष्टिगत होते थे। बम्बई के सुप्रसिद्ध करोड़पति सेठ गाढमलजी लोढ़ा तथा श्रीयुत वाडीलाल मोतीलाल शाह इत्यादि यहां पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे। पूज्य श्री पालनपुर विराजते थे तब राजकोट से सेठ जयचंद गोपाल इत्यादि श्रावक पूज्य श्री को राजकोट तरफ पधारने की विनती करने आये थे और चातुर्मास राजकोट का मंजूर हुआ था।

वढ़वान से राजकोट जाने की जल्दी थी, परन्तु श्रीमान् पंडित
[illegible]र मुनि श्री उत्तमचंदजी महाराज के अत्याग्रह से श्रीजी महाराज
[illegible]श्री पधारे. इन दोनों महापुरुषों के इतने अल्प समय में परस्पर
[illegible]ना अधिक धर्म स्नेह होगया था कि, मानो एक ही सम्प्रदाय के
[illegible]नों गुरु भाई हों, इतना ही नहीं परन्तु लींबडी सम्प्रदाय के पूज्य
[illegible] मेघराजजी स्वामी तथा पं० मुनि श्री उत्तमचंदजी स्वामी इत्यादि
[illegible]खास तौरपर अग्रेसर श्रावकों द्वारा ऐसा प्रबंध कराया कि, इस
[illegible] में मारवाडी मुनि पधारे हैं तो इस सम्प्रदाय के चातुर्मास करने
[illegible]त्रों में (काठियावाड़, कच्छ इत्यादि देशों में अपने मुनियों
[illegible]ऐसी रसम प्रचलित है कि, किसी ग्राम में किसी सम्प्रदाय के कोई
[illegible]नि चातुर्मास में विराजते हों तो वहां दूसरे सम्प्रदाय के मुनि चातुर्मास
[illegible] कर सकते) चाहे जिन स्थानों पर इन मुनियों को चातुर्मास
[illegible] की छूट है इतनाही नहीं परन्तु श्रावकों ने भी इन्हें दूसरी
[illegible]म्प्रदाय के समान भेदभाव न रखना चाहिये और सब तरह से
[illegible]चित सेवा करनी चाहिये। इस प्रकार लींबडी सम्प्रदाय के समय
[illegible] मुनिराजों ने भेदभाव त्याग भ्रातृभाव बढ़ाने की
[illegible] और अनुकरणीय आज्ञा की कि, शीघ्र ही वढ़वान में
[illegible] लींबडी संघवी सम्प्रदाय के महाराज श्री मोहनलालजी
[illegible] बोटादवाली सम्प्रदाय के महाराज श्री अमीचंदजी ने भी ऐसी
[illegible] अपने क्षेत्रों में कर दी।

वढ़वान से पंडित उत्तमचंदजी महाराज आदि लींबडी पधा[illegible] और उसके दो डेढ़ घंटे बाद ही पूज्य श्री भी लींबडी पधारे[illegible] उस समय लींबडी संघ का उत्साह अपूर्व था। पूज्य श्री के सा[illegible] स्टेशन जितने दूर श्री उत्तमचंदजी स्वामी प्रभृति कई मुनि[illegible] श्रीसंघ के सैंकड़ों स्त्री पुरुष गए थे।

लींबडी हाईस्कूल के बृहत् हाल में पूज्य श्री विराजते थे। [illegible] पूज्य श्री को गत सैके की उभय सम्प्रदाय की तमाम हुई ह[illegible] (दौलतरामजी महाराज तथा अजरामरजी महाराज की जो [illegible] गुर्वावली में लिख चुके हैं) श्री उत्तमचंदजी महाराज ने प[illegible] लाई। श्रीजी महाराज ने फरमाया कि, दौलतरामजी महाराज [illegible] पीढ़ी में मेरे गुरु हैं। उन्होंने गुजरात काठियावाड़ में पांच [illegible] मास किये थे। लींबडी में उन्होंने प्रथम चातुर्मास सं० १८४[illegible] किया था, पश्चात् लींबडी के सुप्रसिद्ध सेठ करमसी प्रेमजी [illegible] अत्याग्रह से सं० १८४१ में लींबडी लाये थे और फिर सं० १[illegible] ४८ में उन्होंने तृतीय बार लींबडी चातुर्मास किया था। इन [illegible] चातुर्मासों में श्री दौलतरामजी तथा श्री अजरामरजी महाराज [illegible] ही विराजे थे और दौलतरामजी महाराज के आग्रह से अजरामर[illegible] महाराज ने एक चातुर्मास जैपुर किया था और उस समय जै[illegible] में अपूर्व आनन्द मंगल हो गया था।

इत्यादि दृष्टांतों के साथ समझाने से तथा विद्यादान और दयो
इस लोक और परलोक में प्राप्त होने वाले महान् सुखों से सम्ब
रखने वाले असरकारक उपदेश से महाराजा साहिब बड़े प्रस
हुए और कई मनुष्योंने अनजान मनुष्य के हाथ गाय, भैंस बगै
बेचने की प्रतिज्ञा ली। सिवाय रोने कूटने से होते हुए गैर ला
दिखाने से लींबडी के श्री संघ ने जनरल मीटींग बुला सर्वानुमत
रोने कूटने का रिवाज बड़े अंश में बंद करने वाला ठहराव प
किया था यहां नौ दिन ठहर कर पूज्य श्री चूड़े पधारे। महाराज
उत्तमचन्द्रजी के विशाल सूत्र ज्ञान और कितनी ही कुंजियों
श्रीजी ने लाभ उठाया और अपनी कई शंकाओं का समाधा
किया। महाराज श्री उत्तमचंदजी पर पूज्य श्री की आदर बुद्धि
से समय २ पर ज्ञान प्रश्नोत्तर होते रहते थे।

ता० १३-५-१९११ के रोज पूज्य श्री चूड़े पधारे
दरबारी कन्या-पाठशाला में ठहरे ना० ठाकुर साहिब कि, जो जा
की अपनी कान्फरन्स में पधारे थे वे दीवान साहिब तथा अमल
वर्ग के साथ व्याख्यान में पधारते थे व्याख्यान में अनेक धार्मिक
ऐतिहासिक दृष्टांत आने से और मनुष्य कर्तव्य सम्बन्धी अमूल्य उ
होने से लोगों को अत्यंत रस आता था गुणानुरागी होना वैर
त्यागना, पक्षपात न करना, समभाव करना सीखना, सब धर्म
समान दृष्टि रखना आदि उपदेशों से सबको बहुत आनन्द होता

अध्याय २४ वाँ

[रा]जकोट का चिरस्मरणीय चातुर्मास

पूज्य श्री रास्ते के विहार में बीमार होगये थे, पांव में वायु की [व्या]धि बहुत बढ़ गई थी परन्तु वे समय २ पर कहते कि, मुझे चा[तुर्मा]स राजकोट करना है यह मेरा निश्चय है बाकी तो केवलीगम्य [है।] आत्मबल बहुत काम करता है। अष्टावक्र जिनके आठों अंग [टे]ढ़े थे [वे] भी के आत्मबल से कितने प्रभावशाली हुए यह सुप्र[सि]द्ध ही है। आत्मश्रद्धा, आत्मबल के प्रमाण से ही कार्यसिद्ध होता [है य]ह अनुभव सत्य है कि, भाग्य के भोगी होने के बदले अपने [भा]ग्य को बदल सकते हैं और आगे क्या होगा उसका निर्णय भी [अप]ने वश में अपन कर सकते हैं। श्रीयुत मार्डन सत्य का समर्थन [कर]ते हुए कहते हैं कि "शिथिल महत्त्वाकांक्षा अथवा ढीले उद्योग [से] कभी कोई कार्य सिद्ध नहीं हो सकता, कार्य को सिद्ध करने वाली [श]क्ति के साथ अपना निश्चय दृढ होना चाहिये।

[दू]सरे कोई होते तो ऐसे समय विहार की तकलीफ न उठाते, [क]हीं ठहरकर रह लेते, परन्तु राजकोट में व्याप्त जड़वाद को शि[थिल] करने का प्रकृति का निश्चय था। इस प्रकृति ने पूज्य श्री को

राजकोट की ओर प्रयाण कराया। चूड़ा से सुदामड़ा, पांचवड़ु चोटीला और कुवाडवा हो राजकोट पधारे, जिसके दूर से ही निकाले छप्पर दृष्टिगत होते थे।

राजकोट से चार पांच गाऊ दूर पूज्य श्री के पधारने की धाई मिलने पर इन महँगे यजमान का आतिथ्य करने के राजकोट ऊंचा नीचा हो रहा था। राजकोट के हर्ष की प्रति उनके मुख मंडल पर प्रकाशित होने लगी। राजकोट शहर के स्वच्छ आकाश में प्रभात की सूर्य किरणों ने सुनहरी रं किलोल करते, घोंसले से उड़कर आते हुए पक्षियोंने बधाई दी उनके समय से लगी हुई आशा सफल हुई समझ श्री संघ के लिये प्रस्तुत हुआ। सूर्योदय होते ही जैसे कमल के वि क्षित होते हैं वैसे ही श्रीजी महाराज के पदार्पण से राजको श्रावकों के हृदय कमल प्रफुल्लित होगए।

शहर के समीप वणिक भोजनशाला के मकान में आर सं० १९६८ का चातुर्मास पूज्य श्री ने कितने ही संतों के सा राजकोट में किया। दूसरे मुनिराजों को मूली तथा वांदरा चातुर्मा करने की आज्ञा दी और वहां भेजे। व्याख्यान भोजनशाला में होता था और निवास जैन पाठशाला में रक्खा।

महाराज श्री का यह चातुर्मास राजकोट के इतिहास में समस्त काठियावाड़ के इतिहास में सुवर्णाक्षरों से अंकित

१९६८ का चातुर्मास निष्फल जाने से बड़ा दुष्काल पड़ा, भ से ही मेघराज की कुकृपा देख, दुष्काल संभव समझ, दया र परोपकार विषय पर महाराज श्री ने अपनी अमृत तुल्य वाणी अमोघ प्रवाह का उपदेश देना प्रारंभ कर दिया। महाराज श्री दमरोज रोज के व्याख्यान में स्थानकवासी, देरावासी, जैन यों के उपरांत दूसरे धर्म के भी संख्याबद्ध मनुष्य उपस्थित थे और राजकोट वकील बरिस्टरों से भरपूर और सुधरे हुए शों की पंक्ति में है, तो भी अमलदार वर्ग या दूसरे अग्रेसर गृह- स्थों में शायद ही ऐसा कोई निकलेगा कि, जिसने व्याख्यान का लाभ न लिया हो। पूज्य श्री सरल परन्तु शास्त्रीय पद्धति से ऐसा प्रभावोत्पादक उपदेश फरमाते कि, मध्य में किसी को कुछ प्रश्न करने की आवश्यकता ही न रहती थी। अनेक शंकाओं का समाधान होता और अनेक प्रश्नों का निराकरण होता था।

पूज्य श्री के प्रभाव का डंका समस्त काठियावाड़ में बहुत दू[illegible] तक बज चुका था और राजकोट काठियावाड़ का केंद्र स्थान हो[illegible] [illegible] बाहर से आते हुए अमलदार दरबार इत्यादिकों को व्याख्या[illegible] [illegible] श्रवण करने का लाभ मिलता था। नामदार लींबड़ी के ठाकुर साहि[illegible] [illegible] राजकोट पधार कर व्याख्यान में उपस्थित हुए थे। पूज्य श्री के द[illegible] [illegible] बाहर गांव से आने वाले स्वधर्मी बन्धुओं का आतिथ्य सत्क[illegible] [illegible] [illegible] किया जाता था। भिन्न २ स्थान उतरने

लिये और भिन्न २ भोजनालय भोजन के लिये थे, इनके सिवा उनको भिन्न २ श्रावकों की ओर से टी पार्टी मिहमानी इत्यादि भी दी जाती थी। पूज्य श्री के वचनामृतों का पान करने, संतोषकारक आतिथ्य होने और व्याख्यान की धूमधाम तथा ज्ञानचर्चा की अच्छी धूम होने से आने वाले मन में धार कर आये हुए दिनों से भी दो चार दिन सहज ही ज्यादा ठहरते थे। सत्कार के उत्साही कार्यकर्ता भाई श्री चुन्नीलालजी नागजी वोहरा और सुप्रसिद्ध आर्टिस्ट छोटालाल तेजपाल सतत श्रम उठाते रहते थे।

अपने संयम को प्रतिपालते, सम्प्रदाय की सीमा न रख श्रोताओं को उनके कर्तव्य का भान भासित करने वाली श्री की कुशल बुद्धि राजकोट जैसे सुधरे हुए क्षेत्र में विजय प्राप्त करे पूज्य श्री की योग्यता का सब से बड़ा प्रमाण है। श्री महावीर प्रभु वचनामृतों को अक्षरशः अनुमोदन देने वाले विद्वान् अनुवादक का एक काव्य इस मौके पर पाठकों को अति रस देगा काव्य भारी है परंतु यहां पर उसका थोड़ासा अनुवाद दिया जाता है

"देवदूत—सत्य है ! मृत्यु लोक यही स्वर्ग लोकका द्वार है सीधा जाना पसंद करते हो—तो मेरे दूतों ने तुम्हें कभी व्रत या करते नहीं देखा, तुमने बड़े २ दान भी न किये, यात्रा करके देहको सार्थक नहीं किया, प्रभु मंदिर में कभी पांव भी न रक्खा, जीवनको क्या मैं अपने प्रभुके पास ले जाऊं ? नहीं २ ऐसा तो नहीं हो सक्ता।

दीनबन्धु—दयालुदेव ! दिव्य नयनों से देखो यों मैंने अपना कर न भी किया हो परन्तु जगत् के दुःखी अज्ञान और दलित के यों का दर्द दूर करने में मैंने अपना भाग दिया है, मैंने व्रत, करके देह दमन न किया हो, परन्तु प्रभो ! गरीबों के लिये अपनी देह सुखादी है, मैं पाप धोनेवाली गंगा में नहाया परन्तु दीनों की मीठी दुआओं से मैंने अपनी आत्मा को

अपने संयम को प्रतिपालते, सम्प्रदाय की सीमा न टाले श्रोताओं को उनके कर्तव्य का भान भासित करने वाली श्री की कुशल बुद्धि राजकोट जैसे सुधरे हुए क्षेत्र में विजय प्राप्त करे पूज्य श्री की योग्यता का सब से बड़ा प्रमाण है। श्री महावीर प्रभु वचनामृतों को अक्षरशः अनुमोदन देने वाले विद्वान् अनुवादक का एक काव्य इस मौके पर पाठकों को अति रस देगा काव्य भारी है परंतु यहां पर उसका थोड़ासा अनुवाद दिया जाता है

"देवदूत—सत्य है ! मृत्यु लोक यही स्वर्ग लोकका द्वार है सीधा जाना पसंद करते हों—तो मेरे दूतों ने तुम्हें कभी व्रत या करते नहीं देखा, तुमने बड़े २ दान भी न किये, यात्रा करके देहको सार्थक नहीं किया, प्रभु मंदिर में कभी पांव भी न रक्खा, जीवनको क्या मैं अपने प्रभुके पास ले जाऊं ? नहीं २ ऐसा तो नहीं हो सक्ता।

दीनबन्धु—दयालुदेव ! दिव्य नयनों से देखो। यों मैंने अपना न भी किया हो परन्तु जगत् के दुःखी अज्ञान और दिल के यों का दर्द दूर करने में मैंने अपना भाग दिया है, मैंने व्रत, करके देह दमन न किया हो, परन्तु प्रभो ! गरीबों के लिये अपनी देह सुखादी है, मैं पाप धोनेवाली गंगा में नहाया परन्तु दोनों की मीठी दुआओं से मैंने अपनी आत्मा का

, मैं पैसे का (अन्न वस्त्र की शक्ति न होने से) दान न किया
समस्त समाज को अपनी देह दान में दे चुका हूं. मैंने सिर्फ
में ही प्रभु को नहीं देखा, परन्तु अखिल विश्व में प्रभु की दिव्य
मैंने पूजी है। अन्य भक्तों ने पत्थर के पुतले में प्रभु माना,
र एक मनुष्य में माना, दुनियां में दयानिधि देखे हैं और
की है। मैंने उन तीर्थों की तीर्थ यात्रा नहीं की परन्तु गरीब-
दुःखी-यात्रा मनुष्य-यात्रा की है, अर्थात् गरीबों की दीनता
मनुष्य की मनुष्यता का, दुःखियों का दुःख का विचार किया है
न को भजन के बदले मैंने अपने भोले भाईयों का भजन
है, भक्तों ने एक ही भगवान् माना होगा, मैंने तो अनेक भग-
माने हैं। प्रत्येक मनुष्य में एक २ प्रतिमा विराजमान है।
के हृदय में जान्हवी है व्रत, तप की शांति है तीर्थ-यात्रा
हिमा है, और मोटाई है मालिक के ज्ञान का अनंत गुणा पुण्य
र है। दूसरों ने पापियों के लिये धिक्कार बरसाया होगा, परन्तु
भी मेरी दया के पात्र बने हैं.........................अन्य के
धु पूजना ही मेरा धर्म है। सत्य मेरी शक्ति है और सेवा मेरी
[illegible] है।

प्रभुजी--(दीन बन्धु के सिर पर हाथ रख कर) मेरे भक्त!
[illegible] सेवा सच्ची सेवा है तेरी भक्ति सच्ची भक्ति है। मुझे रामचंद्र
[illegible] के रूप में देख, भक्ति करने की अपेक्षा एक दीन

राजकोट में इस समय सेवाधर्म का सिद्धान्त पूज्य साहिब ने इस श्रेष्ठ असरकारक रीति से समझाया था कि उनके व्याख्यान सुनते वक्त उसका प्रत्यक्ष अनुभव होने के लिये गतिस्पर्द्धिता चढे थे उस समय संख्याबद्ध ढोर बिना मालिक के फिरते थे। पंजिरापोल उपरान्त शहर भिन्न २ स्थानों पर खास 'केटलकेम्प, पशुगृह खोलकर सेवकों ने बड़ी फिक्र के साथ सेवा की थी। सेठ और गृहस्थी कियें कपड़ों वाले अपने हाथों से बीमार जानवरों को बिठाते, उन्हें दवा लगाते और उन्हें पुचकारते थे।

सेठ, गृहस्थ और युवा मित्र मंडल के साथ मौज उड़ाने में या हवा खोरीपर जाने के बदले या गप्प सप्प मारने, मित्र हंसी उड़ाने के बदले, अवकाश का समय 'सेवाधर्म' में व्यतीत यह वर्तमान समय के लिये अत्यावश्यक है। कमीज की बाहें चढ़ाकर एक मनुष्य जानवर का मुंह पकड़े। दूसरा मित्र नाल में से उसके मुंह में दूध डाले। तृतीय मित्र डब्बे में से दवा ले उसके लगावे और चोथा मित्र रेशमी रुमाल से पशु की घावों पर बैठती हुई मक्खियां उड़ावे। यह दृश्य दूसरों को सेवाधर्म में लगाने के लिये काफी है। राजकोट 'केटल केम्प' का एक फोटो मिलगया है वह पास के पृष्ठ पर देखें जिस में सोनी मोहनलाल केशवजी, कंसारा [illegible] केशवजी इत्यादि स्वयंसेवकों का परिचय मिलेगा।

परिशिष्ट—प्रकरण २५.

राजकोट दुष्काल केटल केम्प.

राजकोटमां छाशनी व्हेंचणी.

परिचय–प्रकरण २५
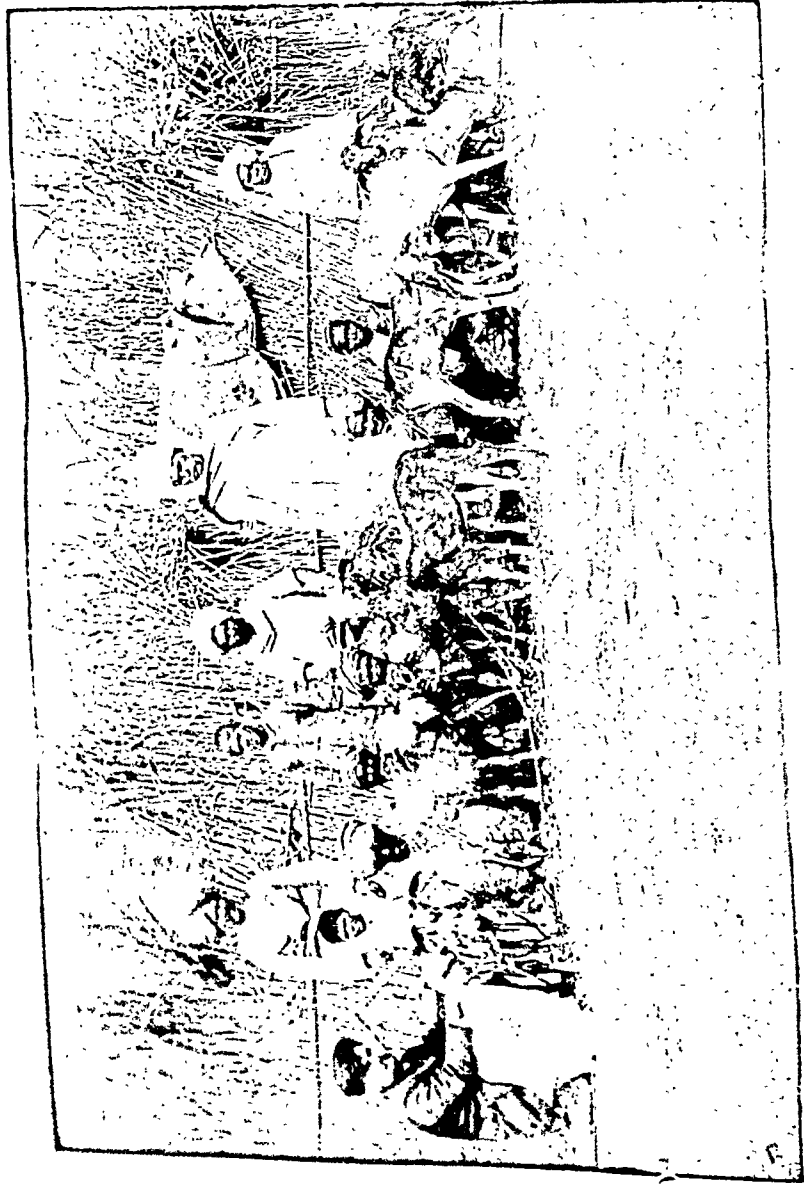
ाजकोट में ही मनुष्य जाति की सहायता में तथा ढोरों के
लगभग रु० १२५०००० (एक लाख पचीस हजार खर्च हुए थे।
ाठियावाड़ में 'छाछ' खाने का रिवाज दूसरे देशों की
अधिक प्रचलित है। छाछ करने के लिये कई जगह कुटु-
ं गाय भैंस रखने की पद्धति प्रचलित है। अगर ऐसा प्रवन्ध
हुआ तो सगे सम्बन्धी या अड़ोसी पड़ोसियों के यहां से लाने
रिवाज है। दुष्काल जैसे समय 'छाछ' की तकलीफ होने के
ा लोगों को छाछ की सुलभता कर देने से बड़ी मदद मिलती है
ोट के सोनी मोहनलाल इत्यादि स्वयंसेवकों ने छाछ का भी
प्रबन्ध कर दिया था। बम्बई की एक पारसी बाई ने 'छाछ' कितने
ाद तक आपने खर्च से ही देने की इच्छा प्रकट की थी, इस
बहुत सी छाछ बनती थी। छाछ बांटने की संस्था का पास
चित्र देखने से पाठकों को जरा ख्याल होगा।

ता० १०।९।१९११ के रोज पूज्य श्री के व्याख्यान का
लेने के लिये नामदार राजकोट के ठाकुर साहिब पधारे थे,
डेढ़ घंटे तक सावधानी के साथ पूज्य श्री के प्रवचन श्रवण
थे। उस समय २००० से ३००० श्रोताओं की उपस्थिति
पूज्य श्री ने 'मनुष्य कर्तव्य' समझाया था।

प्रथम लोगों से प्रभु स्तुति किये बाद देवता मनुष्य तिर्यञ्च
की इन चार गतियों में मनुष्य क्यों विशेष उत्तम है

चार गतियों में से मात्र एक मनुष्य की गति ही से क्यों मोक्ष हो सकता है वह समझाया। मनुष्य जन्म की दुर्लभता और जब मनुष्य जन्म दस बोलों सहित प्राप्त हो गया है तो किस तरह सफल कर सकते हैं इस पर विवेचन किया। सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और परिग्रह इन पांचों यमों के विषय महाभारत के शांतिपर्व में से कितने ही उदाहरण दे मनुष्य कर्तव्यों में वे किस रीति से गिने गए हैं यह समझाया। क्षत्री, वैश्य और शूद्रों के धर्म समझाते हुए क्षत्रिय राजाओं का चारित्र कैसा निर्मल होना चाहिये यह समझाया। एक धर्म के दूसरे धर्म के आचार्य पर हमला करें तथा धर्म का भिन्न २ किस हेतु से घटित किया है वह न समझ अनेक शाखा, मत लोकों में जो भ्रांति उत्पन्न कर दी है और विषवाद बढ़ाया है अपने को कितनी हानि पहुंची है यह समझा कर सम्प को के कर्तव्य की श्रेणी में बिठा उसके कितने ही उदाहरण दे। निम्न श्लोक पर विवेचन कर तत्व, व्रत, दान और वाणी इन पर विशेष विवेचन किया।

> बुद्धेः फलं तत्त्वविचारणञ्च
> देहस्य सारं व्रतधारणञ्च।
> वित्तस्य सारं करपात्रदानं,
> वाचां फलं प्रीतिकरं नराणाम्॥ १॥

गोरक्षा ॐ तथा प्रजा के चारित्र की सुधारणा की तरफ अ-
लक्ष देने के कारण ना. ठाकुर साहिब की योग्य बड़ाई कर
श्रोताजनों को जीवरक्षा सम्बन्धी असरकारक उपदेश दे
ना व्याख्यान पूर्ण किया था। ना. ठाकुर साहिब ने व्याख्यान
ाप्त होने के बाद ही अपनी जगह छोड़ी। उपस्थित सज्जनों ने
मदार का उपकार माना, फिर सब लोग उपरोक्त व्याख्यान की
यन्त तारीफ करते हुए बिखर गए।

गोंडल संघाणी संवाड़े की पवित्र पुण्यशाली तपस्विनी महा-
ी जीवी बाई महासती ने मंदवाड़ में आचार्य श्री के श्रीमुख
सुनने की इच्छा प्रकट की, वह श्रीयुत पोपटलाल केवलचंद
आचार्य श्री से विनन्ती निवेदन की, तब पूज्यश्री वहां पधारे
ाश्रय में बैठने की इच्छा न की। परम्परा अनुसार उन्होंने
, परन्तु इससे बीमार महासतीजी के तकलीफ में अधिकता
ा हमें समझा अंत में दूसरे दरवाजे पर महासतीजी
निक उठालाया गया था और वहीं से आचार्यश्री ने उन्हें

ाकोट नरेश गादी पर बैठे तब [illegible] समस्त
राजकोट सिविल स्टेशन के [illegible] गवर्नर को
ध रक्षा के लिये [illegible] दिया था।

साधुधर्म की अपेक्षा से अत्यंत सरल उपदेश दिया। महासती गु
गुणवती और सिद्धांत रस की पिपासु थीं, उन्होंने 'तहेत्ति' कर
यह उपदेश सिर चढ़ाया, ऐसी महासती वर्तमान समय में है
मुशकिल है। गोंडल संघाड़े के आचार्य श्री जसराजजी महा
जो उपाश्रय में विराजते थे, वह उपाश्रय मार्ग में होने से द्वार
से सुख साता पूछ सहजही धर्मालाप कर आचार्य श्री खुश हुए।

महाराज श्री के शिष्य मुनि श्री छगनलालजी महाराज ने
चातुर्मास में पैंतीस उपवास की तपश्चर्या की थी और उनके
उपवास के दिन तथा पारणे के दिन नामदार ठाकुर साहिब के
से कसाई खाने बंद रक्खे गए थे।

काठियावाड़ में राजकोट शहर इंग्लिश शिक्षा में सबसे आ
आगे है। आधुनिक शिक्षा में धार्मिक शिक्षा का अभाव होने
नई रोशनी वालों के हृदय में आर्यावर्त के अध्यात्म वाद की
पाश्चात्य जड़वाद की ओर विशेष लक्ष होने के अपन कई
देखते हैं। वर्तमान की शिक्षा से शिक्षित हुए कई नवयुवक धर्म
पराङ्मुख होते जाते हैं ऐसे कितने ही युवा पूज्य श्री के धर्मोपदेश
तथा सत्समागम से धर्मप्रेमी बन आत्मोन्नति के मार्गारूढ हो ग
पूज्यश्री के चारित्र और वाणी का प्रभाव ही ऐसा अलौकिक 'स
ात् भवति हि साधुता खलानाम्' अर्थात् सत्सङ्ग से खल पुरुषों में

घुता प्रकट हो जाती है। तो फिर पढ़े लिखे योग्य पुरुषों
सत्संग से अपूर्व लाभ प्राप्त हो इसमें क्या आश्चर्य है।

पूज्य श्री की प्रशंसा सुनकर उच्च इंगलिश शिक्षा प्राप्त वकील
रिस्टर और सरकारी आफिसर इत्यादि उनके पास आने लगे। पूज्य
ी को इंगलिश का बिल्कुल अभ्यास न था। तो भी वे नई रोशनी
ले शिक्षित समाज पर अपने चारित्र बल से अपूर्व छाप डालते
और धीरे २ वेही पूज्य श्री के प्रशंसक, अध्यात्म मार्ग के अनन्य
ासक और धर्मपर सम्पूर्ण श्रद्धा रखने लग जाते थे। यों पूज्य
के संसर्ग से कई विद्वानों ने बड़ा भारी लाभ उठाया। मिसिज्
वनबन नामक एक अंग्रेज युवती भी पूज्य श्री के व्याख्यान का
भ कुर्सी पर नहीं परन्तु नीचे बैठकर लेने लगी। पूज्य श्री के
ि धर्मचर्चा में उसे बड़ा आनन्द प्राप्त होता। संवत्सरी के प्र-
क्रमण में उपस्थित हो सब विधियों की वह ज्ञाता बनी थी।
ी बाई व्याख्यान में मुंहपत्ति बांधकर बैठती। व्याख्यान के
तों को उद्धृत कर लेती। इस विदुषी अंग्रेज युवती ने जैन धर्म
Heart of Jainism नामक एक पुस्तक लिखी है उसमें पूज्य
ाल श्री के सम्बन्ध का उल्लेख यों किया है।

The present writer had the pleasure of meeting
he Acharya of the Sthankwasi sect, a gentleman
sed Srilalji, whom his followers hold to be the

Acharya in direct succession to Mahavira. Many sub-sects have risen amongst the Sthankwasi Jaina and each of these has its own Acharya but they unite in honouring Shrilalji as a true Ascetic........when the writer for instance had the pleasure in Rajkot of meeting Shrilalji Maharaja (who is considered the most learned Sthankwasi Acharya of the present time he had travelled thither with 21 attendants "Sadhoos"

भावार्थ:—लेखक को स्थानकवासी सम्प्रदाय के एक आचा श्रीलालजी की मुलाकात का आनन्द प्राप्त हुआ था। जिन्हें महावीर के गादी के ७८ वें आचार्य उनके अनुयायी मानते स्थानकवासी जैनों में जो कि, कई शाखाएं हैं तो भी श्रीलाल महाराज को एक सच्चे त्यागी समझ बहुत से उन्हें मान देते हैं श्रीलालजी महाराज जिन्हें वर्तमान समय के बहुत से विद्वान् नकवासी आचार्य गिनते हैं उनसे राजकोट में मिलना हुआ तब २१ मुनिओं के साथ पधारे थे।

इसके सिवाय गुर्जर भाषा के अद्वितीय कविवर जय इंदुकुमार आदि अनुपम काव्यों के रचयिता सुप्रसिद्ध वि श्रीमान् न्हानालाल दलपतराम कवीश्वर M.A जिन्होंने इस पु की प्रस्तावना लिखने की स्वीकृति प्रसन्नतापूर्वक दी है वे तथा

भूप, अमीर तथा वजीर भी थे । चार दिन के उनके मुकाम में वे
हररोज आचार्य श्री के व्याख्यान में पधारते थे ।

पंजाब में उस समय विचरते पूज्य श्री की सम्प्रदाय के महारा
मुन्नालालजी के सम्बन्ध से पूज्य श्री ने दीवान साहिब के साथ
चीत की थी, बीमार मुनिराजों की सुख साता पुछाई थी और मु
की मदद की अवश्यकता हो तो मैं भेजने के तैयार हूं ऐसा कह
परन्तु दीवान साहिब के जम्मू पहुंचने पर किसी मुनि को सह
के लिये भेजने की आवश्यकता नहीं ऐसे समाचार आजाते
दूसरे मुनियों को उधर नहीं भेजा थां ।

राजकोट इत्यादि स्थलों में एक जाति के नहीं परंतु अ
जाति के स्त्री पुरुष उनके व्याख्यान में आते परंतु यों मालूम नहीं
था कि, हमारा ही धर्म हमें समझा रहे हैं ।

आत्म—कल्याण की ही बातें कह रहे हैं ज्ञान, भक्ति, वैरा
अनुभव, तप, आश्रम, धर्म का अखंडपालन हृदय की विशालता
सब सद्गुण जन—समूह को स्वाभाविक रीति से श्रीजी की त
आकर्षित कर लेते थे ।

सैकड़ों अनपढ़ ग्राम वालों की सभा को कथा, कविता,
असाक्य गप्पों से रिझा लेना सरल है परन्तु वाक्य वाक्य शब्द श

विचन और अशंका करने वाले शक्तिशाली मनुष्यों को समझाकर उन्हें
ठ उतारना विना विशाल ज्ञान व अनुभव के नहीं हो सकता। अंग्रेजी
फारसी तो क्या परन्तु जिन्होंने मातृभाषा की भी उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं
की थी ऐसे पूज्य श्री को गुरुगम और अनुभव से प्राप्त शास्त्रीय
और ऐतिहासिक ज्ञान से वैरिस्टरों और विद्वानों का भी संतोष
होता था यह पूज्यश्री के उत्कृष्ट संयम और पदवी का प्रभाव था।

राजकोट संस्थान के डेप्युटी एज्यूकेशनल इन्स्पेक्टर श्रीयुत
...पटलाल केवलचन्द शाह अपना अनुभव लिखते हैं कि:—

आचार्य श्री जब धर्मध्यान में चित्त लगाकर बैठते तब वे काया
सचमुच वोसरा ही देते थे, जब वे एकान्त में समाधि चित्त
...हते तब बहुत ही थोड़ों को उनके दर्शन का लाभ मिल सकता
...कारण कि, उनके शिष्य द्वार को रोककर इस तरह बैठते कि,
...यश्री के एक चित्त में किसी तरह से कोई खलल न पहुंचे। मुझपर
...य श्री की कुछ कृपादृष्टि थी उनके एकाग्र धर्मध्यान में [illegible]
...लूंगा ऐसा मेरा उन्हें पूर्ण विश्वास था जिससे किसी [illegible]
...ी स्थिति में भी उनके दर्शन का लाभ मिलता था। [illegible]
... है कि, जैन में सिर्फ उपवासादि तपश्चर्या [illegible] परंतु
...धि तो उनके यहां प्रायः लुप्त है [illegible] आचार्य [illegible]
...दूसरे सुपात्र साधु महात्माने [illegible] यह

बिठा दिया है कि, जैनियों में भी योग निष्ठ महात्मा पुरुष हैं।

दिवाली के दिन वे छठ (दो उपवास) करते। एक अहोरात्रि धर्मध्यान में बिताते, व्याख्यान सिवाय बाकी दिन के समय में और विशेष रात को वे योग समाधि में रहते थे। राजकोट में दिवाली की पिछली रात को संवर पौषध में रहे हुए तथा दूसरे श्रोताओं को श्री उत्तराध्ययन सूत्र पूर्ण तीन घंटे में श्री मुख से सुनाया था। दिवाली का दिन श्री श्रमण भगवान् महावीर प्रभु के निर्वाण का पवित्र दिन है। उन महावीर प्रभु ने शिष्यों को निर्वाण के समय जो उपदेश दिया था, सोलह प्रहर तक जो धर्मदेशना दी थी, उस देशना को गूंथ कर गणधरों ने श्री उत्तराध्ययन सूत्र की रचना की है जिससे दिवाली के पिछली रात्रि को समर्थ पवित्र आचार्य के मुख से उत्तराध्ययन सुना जाय तो ठीक हो—इस इच्छा से उनका दूसरा चातुर्मास मोरवी हुआ तब दिवाली के दिन मैं मोरवी गया, वहां मेरी समझ में आया कि, आचार्य श्री श्रावकों को उत्तराध्ययन सुबह अर्थात् कार्तिक शुक्ला १ को सुनाने वाले हैं इससे मैं कुछ २ निराश हुआ, क्योंकि, श्रमण भगवंत दिवाली की पिछली रात्रि को निर्वाण पाये थे, वह उत्तराध्ययन पिछली रात्रि को पूर्ण हुआ था जिससे उस समय सुना जाय तो सामयिक गिना जाय। जिससे मैंने अपनी निराशा आचार्य श्री से निवेदन की। आचार्य श्री ने समझाया कि, राजकोट के श्रावकों को मालूम हो गया था कि,

ली रात्रि को उत्तराध्ययन को सुनाया जावेगा जिससे कितने ही क घर से शीघ्र उठ एकन्द्रियादि जीवों की घात करते उत्तराध्य- सुनने मेरे पास आये थे, इस लिये दूसरे दिन गुलाबचंद्रजी ने ा की थी कि इसमें तो लाभ की अपेक्षा हानि अधिक है। ाबचंद्रजी की टीका मुझे योग्य जची, इसलिये यहां मैंने श्रावकों से ह कह दिया कि मैं सुबह व्याख्यान के समय ही उत्तराध्ययन ाऊंगा, परंतु हां तुम राजकोट से खास, इसी लिये आये हो तो या पौषध करना और धर्म जागरण करते हुए जगो तब ऊपर र करीब ३ बजे चांदमलजी को कहना, फिर मैं अपने ध्यानसे त होकर तुम्हे तुरंत बुलाऊंगा। इस उत्तर को सुनकर मैं बहुत हुआ, परन्तु कहे बिना न रहा कि, पूज्यजी साहिब इससे आप ो वक्त उत्तराध्ययन सुनाना पड़ेगा और दूना श्रम होगा। तब श्री ने फरमाया कि " मुझे स्वाध्याय का दुगुना लाभ होगा। ा की रीत्यनुसार दिवाली की पिछली रात्रि को उत्तराध्ययन ाय रूप मुंह से कहुंगा और श्रावक श्राविकाओं को सुनाने के लिये सुबह याद करूंगा।

दिवाली के संध्या समय मोरवी में निर्मला बहिन ने महाराज ेव के गुणगान की कविता परिषद् में गाई। मैंने शास्त्री जी के श्लोक और मेरी ओर से महाराज श्री के जीवन चरित्र की कुछ रूप रेखाएं ामे पाली कविता गाये बाद श्रीयुत मगनलाल दफ्तरी, भाई दुर्ल

जोहरी और मैंने समयानुसार कुछ विवेचन किया पश्चात् आचार्य काठियावाड़ में और खासकर हालार में चातुमास करने से कि... कार हुआ यह बताया। पिछली रात्रि को मुझे तो उत्तराध्ययन ... सौभाग्य प्राप्त हुआ और सुबह भी लाभ मिला। सुबह जब ... अध्यायों का स्वाध्याय होगया तब मैंने अपने समीप बैठे हुए श्रीयु... से कहा कि महाराज साहिब यह दूसरी वक्त स्वाध्याय कर रहे हैं दूसरे वक्त के श्रम को मान देने के लिये समस्त परिषद् खड़ी और जब महाराज ने सुना कि, खड़े २ सुनने का यह कारण है भी शिष्यों सहित खड़े हो गए, जिस तरह तीर्थंकर भी "नमो ... कह चतुर्विध संघ को मान देते हैं उसी तरह खड़े होकर पूज्यश्री ने पूर्ण उत्तराध्ययन सुनाया, इतनी सी हकीकत ही आचार्य कितने गुण सिखावेगी।

गोंडल, जेतपुर, जामनगर, पोरबंदर जैसे शहरों में या ... जैसे ग्रामों में जहां २ से महाराज साहिब के विहार में उनके ... नार्थ दूसरों के साथ २ मैं गया, वहां २ हिन्दू मुसलमान सब ... से पूज्य श्री के लिये जो मानवाचक और पूज्यता प्रदर्श... बोले जाते थे उन्हें सुनकर मुझे बड़ा आनन्द होता और चाहता ... अपनी जैन-समाज में ऐसे प्रभाविक महापुरुष अधिक ... क्या ही अच्छा हो ? अहिंसा धर्म का कितना अधिक प्र... जाय. पोरबन्दर से हम राजकोट पिंजरापोल के लिये चन्द...

मारवाड़ की तरफ गए थे तब पोरबंदर के भाइयों ने तथा सार्ग के भाइयों ने उसी तरह मालवा मेवाड़ मारवाड़ में जो आदर सत्कार हुआ वह अबतक कृतज्ञता से स्वीकार करता आदर सत्कार और मिली हुई आर्थिक मदद यह सब महानुभाव आचार्य श्री के प्रभाव का ही प्रताप है ऐसा कहूं तो अतिशयोक्ति न होगी।

राजकोट जैन-वणिक बोर्डिंग हाउस के स्थानकवासी विद्यार्थी पूज्य श्री के दर्शनार्थ और छुट्टी वगैरह की अनुकूलता से ान सुनने आते थे। पश्चिम के जडवाद की शिक्षा लेते युवा स्वधर्म-प्रेम प्रेरने वाले सद्गत त्रिभुवन प्रागजी पारेख का मरण हुए बिना नहीं रहता। सच्ची दिली इच्छा से गुपचुप ार के कार्य करने वाले ऐसे नर थोड़े ही होंगे। अपने परो- जीवन से उत्तम दृष्टांत छोड़ जाने वाले पूज्य श्री के इस भक्त ान पर प्रकाश डालना यहां अनुचित नहीं होगा।

अन्य ग्रामों से राजकोट में पढ़ने के लिये आने वाले विद्यार्थियों की र का अनुभव कर राजकोट में वणिक जैन बोर्डिंग प्रारंभ करने गृहस्थ हैं उन्होंने जीवन पर्यंत इसके लिए श्रम उठाया है। ी नहीं, परन्तु साढ़े तेरह हजार वार जमीन बोर्डिंग के मकान ि भरी दी है और अब उसपर रु० २५०००) खर्च कर बोर्डिंग

का मकान तैयार किया गया है इस संस्था द्वारा आज विद्यार्थी लाभ ले रहे हैं और स्वधर्म के तत्वों का भी भाग्यशाली बन रहे हैं।

वे अनाथ या निराधार विद्यार्थी को अपने यहां रखकर और सेवा-चाकरी करके पढ़ाते थे और उनकी पत्नी भी इस उन्हें मदद देती थी। जहां २ उनकी बदली हुई वहां २ पकार के कई कार्य किये हैं।

उनका इसके साथ दिया हुआ फोटो उनके शांत और भिमानी परोपकारी जीवन की पाठकों को खात्री देगा। उन पर अत्यंत दृढ श्रद्धा थी और वे पोषध संवर बहुत करते थे। के ज्ञान के लाभ के साथ व्यवहारिक ज्ञान की सुविधा अत्यंत लाभ हो, इसलिये उन्होंने एक बड़ी संस्था कायम प्रयास किया था। रतलाम जैन ट्रेनिंग कालेज वहां से उठाकर लाने के लिये वे रतलाम कमेटी में गए थे और कमेटी ने बहुत यह संस्था उन्हें सौंपी थी, परन्तु समाज की ऐसी सेवा व उनकी इच्छा पूरी न हुई और सं० १९७४ के वैशाख वद रोज उनका स्वर्गवास होजाने से रतलाम स्टेशन पर गया कालेज का सामान पीछा लाना पड़ा था. परोपकार के कार्य ही उन्होंने भविष्य की शुभ आशाएं होते भी नौकरी से परोपकारी जीवन बिताया था। उनके स्मरणार्थ उनके मित्रों ने

) एकत्रित कर उनके नाम का राजकोट पिंजरापोल में एक बोर्ड
ई जिसकी नींव धर्मपुर के महुंम महाराणा श्री मोहनदेवजी
थी।

ऱ्गत त्रिभुवन भाई के जेष्ठ बंधु देवजी भाई महुंम का अनु-
र अपने द्रव्य का सदुपयोग करते हैं लेखक की उनके साथ
सगाई थी और समय २ पर परस्पर मिलना जुलना होता था,
ंत समागम के लिए जैपुर भी पधारे थे और जहां २ पूज्य
ातुर्मास होता था वहां २ पहुंचते थे।

ऱ्गत की प्रेरणानुसार बोर्डिंग का निज का मकान और एक
रियम ' राजकोट में शीघ्र तैयार हुए अपन देखेंगे। उनका
ा करने को ललचाने के लिए ही इतना विस्तार किया है।

य श्री ने राजकोट का चातुर्मास पूर्ण कर विहार किया तब
को बहुत धक्का पहुंचा था श्रीयुत सौभागचंद वीरचंद मोदी
ामी के नाम से प्रसिद्ध हैं। उन्होंने गद्गद कंठ से नीचे के
श्रोताओं को धैर्य धराया था।

सवैया

ागथी उठी जशे, पण रागथी रागी जनों रिझवीने,
सुप समाइ जशे, पण रंगथी सर्वनी आंख सरीने
रस्ता नशे, वीर हाकथी जंगलने गजवीने,
मन श्रीलाल जशे, बहु मेल्ह अलेख अहिं जगवीने॥

अध्याय २६ वाँ

सौराष्ट्र का सफल प्रयास ।

राजकोट का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् संवत् १९६
मगसर वद्य १ के रोज विहार कर पूज्य श्री गोंडल पधारे।
में श्रीजी महाराज के व्याख्यान में बहुत से मुसलमान
आते थे। पूज्य श्री के सदुपदेश का सुंदर असर उनके ह
इतना अधिक हुआ था कि, जीवदया के लिये जो फंड किया
उसमें मुसलमान भाईयों ने भी अच्छी रकम दी थी। पू
ने गोंडल से विहार किया तब मुसलमान भाईयों ने गोंडल
ठहर कर आपकी अमृतमय वाणी श्रवण करने का लाभ
बहुत आग्रह पूर्वक अर्ज की थी।

गोंडल से विहार कर गोमटा, वीरपुर, पीठड़िया, जेतपुर,
जेतलसर हो धोराजी पधारे। यहां दशाश्रीमाली जाति के
मकान में पूज्य श्री विराजते थे। और व्याख्यान में स
हिन्दू मुसलमान तथा अमलदार इत्यादि हजारों की संख्या
स्थित होते थे। धोराजी से जल्द ही विहार करने का पूज्य
विचार था परन्तु पग में तकलीफ होजाने से एक माह धोरा

पड़ा था। जिसके फल स्वरूप वहां बहुत ही धर्मोन्नति हुई बाहर से भी लोग बड़ी संख्या में पूज्य श्री के दर्शनार्थ आते थे।

कंठाल के श्रावक श्राविकाओं का अत्यन्त आग्रह देख एवं धर्मानुराग की प्रशंसा सुन पूज्य श्री की इच्छा कंठाल ग्रल, मांगरोल और पोरबंदर) में विचरने की थी। इसलिये श्री से विहार कर जूनागढ़ पधारे। वहां भी धर्म का बहुत हुआ। वहां से अनुक्रम से विहार करते २ श्रीजी महाराज पधारे और वहां बहुत उपकार हुआ।

रावल विहार कर चोरवाड़ हो श्रीजी महाराज महा वदी १० मांगरोल पधारे। उस समय मांगरोल में गोंडल सम्प्रदाय श्री जयचन्द्रजी स्वामी विराजते थे। वे आचार्य श्री के के समाचार सुन बहुत आनंदित हुए और लेने के लिये शहर के बाहर कितने ही दूर तक आये। श्रावक भी बड़ी में सन्मुख आये थे। यहां भी स्वमति अन्यमति लोग बड़ी पूज्य श्री के व्याख्यान का लाभ उठाते थे और मुनि श्री जी स्वामी इत्यादि भी आपके व्याख्यान में पधारते थे। श्री यहां १५ दिन ठहरे थे।

यहां से विहारकर श्रीजी महाराज पोरबंदर पधारे थे और अमूल्य सदुपदेश से पोरबंदर वाली जैन अजैन प्रजा पर

सुंदर असर डाला था। मांगरोल, पोरबंदर और वेरावल के लो
के धर्म-प्रेम की पूज्य श्री ने अत्यन्त प्रशंसा की थी। और श्रा
काओं का ज्ञानाभ्यास बहुत संतोषकारक देख उन्हें सानंदाश्च
हुआ था। स्त्री शिक्षा की ओर विशेष लक्ष देना चाहिये और
जैन-धर्म के रहस्य बहुत सुंदर रीति से समझाने चाहिये ऐसी
श्री की मान्यता थी।

पोरबंदर से अनुक्रमशः विहार करते भाणवड़ हो श्री
महाराज जामनगर पधारे और वहां एक मास तक स्थिर र
जामनगर के शास्त्र के ज्ञाता श्रावकों के साथ की चर्चा से
श्री को बड़ा आनन्द आता और पूज्य श्री के प्रताप से श्रावकों
ज्ञान में भी बहुत अभिवृद्धि हुई थी।
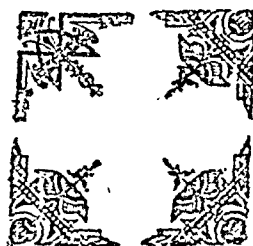
अध्याय २७ वाँ।

मोरवी का मंगल चातुर्मास।

कुँए में हाथी।

मोरवी के नामदार महाराज साहिब और श्रावकों के बहुत सम
सत्याग्रह और इच्छाएं बहुत दिनों में सफल हुईं। संवत्
६६ का चातुर्मास मोरवी में हुआ, पाईलेट की तरह पहिले कितने
शिष्य पधारे थे जो जैनशाला में ठहरे थे। पूज्य साहिब का स्वागत
पद्ध श्रावक श्राविकाओं ने सन्मुख जाकर किया था, वे मंदिर-
मार्गियों की धर्मशाला में ठहरे थे। जैनशाला के मकान में तथा
दूसरे भव्य मकान में मेरे लिये कुछ रिपेअर-काम हुआ यह सुन
श्री बड़े दिलगीर हुए और उसमें उतरे हुए शिष्यों को प्रायश्चित्त
, ये दोनों मकान चातुर्मास के लिये अकल्पनिक होने से वे सेठ
लालजी सोनजी के मकान में पधारे, परंतु श्रीजी के प्रभावशाली
व्याख्यान और दर्शनार्थ बड़ी भारी गिरदी होने लगी।

मोरवी में पधारने की पच्चीस लाख गाथाओं का स्वाध्याय करना
[illegible] था, बहुत समय तक पूज्य श्री एकांत में स्वाध्याय करते
[illegible] रहते थे। मोरवी के दो हजार तो संघ [illegible]

के उपरांत मंदिर मार्गी तथा अन्य जैनेतर प्रजा भी व्याख्
लिये आतुर थी, इन सबको लाभ मिले इसलिये बड़े म
आवश्यकता थी जो रा० रा० हेमचंद रामजी भाई महेता एल
ई० इंजिनियर के सख्त श्रम से सफल हुई, उन्होंने महाराज
अर्ज कर दरबारगढ़ के पास के स्कूल के विद्यार्थियों को दूसरे
भिजवाया। और स्कूल में पूज्य श्री ने चातुर्मास किया।

यह चातुर्मास इतना सफल हुआ कि, वृद्ध से वृद्ध
मुंह से मैंने सुना कि, ऐसा चातुर्मास हमारी जिंदगी में न
देखा। इन वृद्धों में से एक संघवी सांकलचंदजी कि, जो रतल
पदवी के महोत्सव के समय भी हाजिर थे, वे समय २ प
कि, कुँए में हाथी किसने डाल दिया' अर्थात् मोरवी जैसे
पड़े हुए ग्राम में पूज्य साहिब जैसे प्रसिद्ध विदेशी मुनिराज का
कैसा सफल हुआ ? विशेष आनंद की बात तो यह थी कि
निमित्त आने वाले तमाम श्रावकों का स्वागत करने का तमा
एक ही सद्गृहस्थ सेठ सुखलाल मोनजी ने उठा लिया
देशावरों से आने वाले स्वधर्मियों की स्वयंसेवक सब
कर देते थे, इतना ही नहीं, परंतु मोरवी के नगर-सेठ भ
सेठों के साथ हमेशा मिहमानों के निवास स्थानों पर उन
लेने पधारते और भिन्न २ गृह का निमंत्रण दे कृतार्थ होते

संवत् १९६८ के आषाढ में मोरवी में कालेरा का उपद्रव प्रारंभ
हुआ। कितने ही श्रीमंत ग्राम छोड़ कर बाहर जाने की तैयारी में थे,
किंतु पूज्य साहिब के पधारने से यह बीमारी नरम होगई थी। एक दिन
...पा समय खिड़की के पास स्वाध्याय करते पवन बदला हुआ देख
प्राकृतिक परिवर्तन का अनुभव रखने वाले पूज्य साहिब ने समीप
बैठे हुए मनुष्यों को तुरंत समझाया कि, यह पवन का परिवर्तन
...ने की आशा दिलाता है ऐसे समय श्री शांतिनाथजी के जाप से
जगह शांति हुई है मित्र–मंडल के साथ युवावर्ग बहुत रात तक
...श्री के पास धर्मचर्चा कर धर्मज्ञान बढ़ाते थे। दूसरे दिन सोम-
...की रक्षा होने से श्रीशांति जाप की योजना की गई और ५१
...दियों से उसी स्कूल में नीचे के शांत भाग में बरोबर बजे १२
...ग्रहण कर जाप करने की खानगी सूचना इस पुस्तक के
...को मिली। परिणाम स्वरूप बारह का डंका लगते ही श्री शांति-
...का जाप प्रारंभ हुआ सवालाख जाप होने के पश्चात्
...मिल कर पूज्य श्री के पास मंगलिक सुनने गये।
...के नगर की शांति और अलौकिक दृश्य तथा पवित्र
...के पत्रकारों ने उपस्थित सज्जनों के मस्तिष्क को
...मिल नम कर दिया कि, वे अपनी जिंदगी में ऐसा
प्रथम ही है और अपूर्व है ऐसा कहते थे। शुभ शकुन
...ब्राह्मणों को नारियल दिये थे, पूज्य श्री के अनुमान मुता-

विक पवन बदलते बीमारी शांति हो गई और उच्च वर्ण से
भी भोग लिये बिना बीमारी भग गई।

अपनी जन्मभूमि में सद्भाग्य से प्रारंभ हुए उपदेशा
पान करने को लेखक भी चातुर्मास दरम्यान मोरवी रहा
देश के रिवाज मुताबिक मुझे वाकिफ करने के लिये पूज्य
चिताया था, उस मुताबिक पूज्य श्री प्रसंगोपात्त से की हुई
सहर्ष स्वीकृति देते थे। पूज्य श्री की वाणी इतनी मिष्ट और
कि, बोली हिन्दी होते हुए भी अपढ़ बाइयां भी बराबर सम
थीं एक समय गोचरी के समय एक दरजी ने पूज्य श्री को
पधारने बाबत आग्रह किया, मोरवी कि, जहां पर छः सो
के उपरांत वाणियां सोनी वाणियां कंदोई और ब्राह्मणों
बड़ी संख्या बसी होने से दरजी के वहां अपने धर्मगुरु वहरते
जरा इस तरफ गौरवपूर्वक न गिना जाता है ऐसा समझ
ने फिर ऐसे वर्ण की गोचरी खासकर न की, राजकोट में
सम्बन्धी सहज अर्ज की थी। इसके फल स्वरूप में शुद्र वे
पूज्य श्री के पास बैठ उनके कपड़े का स्पर्श करने में नहीं हिच

मोरवी की अनुकूलता अनुसार सुबह साड़े छः बजे
व्याख्यान प्रारंभ कर देते थे और पूज्य सवा सात से नौ
अखंडधारा से उपदेशामृत बरसाते थे, जैन और जैनेतर

अपने ग्रहण करने योग्य बहुत ले जाते और लोग
कहते थे कि, यहां तो अभी 'चौथा आरा' वर्तता है।
रित्र के ऊपर का पूज्य श्री का व्याख्यान हमेशा थोड़े
यों की आंख तो गीली कराता ही था, चलती मां चीलती,
ाड, उदयपुरना राणाओ, जोधपुर के महाराजाओ, जैपुर के
पर एक कवि की लिखी हुई हुंडी, कच्छ के लाखा फुलाणी
असरकारक तथा ऐतिहासिक दृष्टांतों से श्रोताओं पर बड़ा
सर होता था और व्याख्यान का लाभ चूकने वाले अपने
कर्म के लिए दिलगीर होते थे! श्रावकों की दुकानें तो
र बाद ही खुलती थीं।

ाबतो और कल्पित कथाओं के वे कायर नहीं थे, सत्य कथा या
ो तक अपने अनुभव में आई हुई या ऐतिहासिक दृष्टांतों से
र्थी अपने सिद्धान्तों को पुष्टि देते थे। उन्होंने अपने काठियावाड़
ेश में इनके प्राचीन अर्वाचीन इतिहास का अभ्यास किया
ाम २ राज्य के अनुभवी अमलदार और विद्वानों से काठियावाड़
ों का पान किया था। मैं हमेशा एक घंटे भर पूज्यश्री को
[illegible] पढ़कर सुनाता था- प्रसिद्ध वक्ता रा० रा० दफ्तरी मगनलाल
[illegible] पुस्तक समझाने और देशाई वनेचंद राजपाल जैसे
[illegible] दोपहर की निद्रा को एक तरफ रख दोपहर को १२
[illegible] इतिहास इत्यादि के पुस्तक पढ़कर सुनाते थे। जो

हमेशा खस की टट्टी के पवन में दोपहर में विश्रान्ति लेने वाले को याद न कर पूज्यश्री के प्रताप से खरी दोपहर में पढ़ने में हो जाते थे, उनकी सुपत्नी अ० सौ० नानूबाई तथा उनकी विलासी पुत्रियां भी पूज्यश्री की सेवा कर विविध रीति से वृद्धि करतीं थीं, गोंडल सम्प्रदाय की आर्याजी मणीबाई ने को सूत्र सिखाये थे, मारवाड़ी श्रावक श्राविका दर्शन करते उनके लिये पूज्यश्री के सामने प्रथम पंक्ति में ही जगह रिक्खी जाती थी और देशाई वनेचंद भाई जैसे आने वाले श्रावकों का हो सन्मान कर आगे बिठाते थे, श्रीमती नानूबाईने निडर श्री से कह दिया था, कि " मारवाड़ी श्रावकों को आप चाहे दृढ सम्यक्त्व धारी गिनो परंतु उनमें सैकड़ा ९० तो गले में में या किसी जगह डोरियां या तावीज बांधने वाले हैं, श्री देव की श्रद्धा या सम्यक्त्व के मादलिये ही धारण किया तो कहना नहीं है परंतु जो दूसरों के हों तो स्वधर्म पर उनकी श्रद्धा या विश्वास नहीं है ऐसा हम मानेंगे। श्रीमती नानु बाई की प्रसंगोपात्त पूज्यश्री की स्तुति संस्कृत काव्य बना कर कहतीं और लाभ लूट सकतीं थीं लूटती थीं। पूज्यश्री साहिब ने उनके शास्त्री से मुनिश्री चांदमलजी इत्यादि को संस्कृत का अभ्यास का

पूज्यश्री पंद्रह साधुओं सहित चातुर्मास रहे थे। पूज्यश्री केवल स्वाध्याय और ध्यान में इतना अधिक लीन रहता

में से दो चार को भी कभी एकत्रित हो गप्प सप्प मारते या
हंसी दिल्लगी करते हमने नहीं देखा। स्वाध्याय और शास्त्र वचनों
... धुन लगी रहती थी। संध्या को प्रतिक्रमण किये बाद ज्ञान चर्चा
... र प्रश्नोत्तरों की धूम मचती थी। प्रतिक्रमण पूर्ण होते ही जैनशाला
... विद्यार्थी पूज्य श्री को वंदना करते और सब हाथ जोड़ स्तुति
... लते थे। पूज्य श्री को प्रिय नीचे की स्तुति हमेशा की जाती थी।
... स समय पूज्य श्री नयन मूंद उसमें तल्लीन हो जाते थे। पूज्य श्री ने
... कंठस्थ याद किया था और पूज्य श्री के साथ वाले मुनि मण्डल
... ी इस स्तुति को कंठाग्र करालिया था।

गुणवंती गुजरात (यह राग)

जयवंता प्रभु वीर, अमारा जयवंता प्रभु वीर।
शासन -नायक धीर, अमारा जयवंता प्रभु वीर।
शास्त्र सरोवर-सरस आपनुं, तत्व रसे भरपूर।
...मां न्हातां तरतां नित्ये, शुद्ध थाय अम उर। अमारा
...त्विक भावे जेह प्रकाश्युं, वास्तविक तत्व-स्वरूप।
...स्तिकतामां रमिये एथी, आनन्द थाय अनूप। अमारा
...प प्रकाशित ज्ञान-बगीचे, खील्या छे बहु फूल।
...ी वाणुनी सरस लहरथी, अमे थीए मशगूल। अमारा

आप विशाल-विचार भूमिए, उछर्या कल्प अंकूर।
रस-भर तैना फल चाखीने, रहींशु आप हजूर। अमारा·

नाम आपनुं निशिदिन प्यारूं, रमी रहूयू अम उर।
तेनी खातर प्राण अर्पवा, अपने छे मंजूर। अमारा·

मार्ग वतावा अम ऊपरजे, कर्यो महा उपकार।
अर्पण करिये सर्व तथापि, थाय न प्रत्युपकार। अमारा·

चरण आपनां शरण हमारे, मरण जन्म भय दूर।
(रत्नचन्द्र) जेम लोभी चातक, तम दर्शन आतुर। अ·

—शतावधानी पं० रत्नचन्द्रजी

जैन शाला के विद्यार्थी कि जिनपर पूज्य श्री का बड़ा भा·
था वे विद्यार्थी पास के चित्र में देख सकेंगे।

नामदार मोरवी महाराज साहिब के समीप के सम्बन्धी शिव·
सिंहजी व्याख्यान में समय २ पधारते थे उनका निम्नाङ्कित काव·
उनके भाव की खात्री देगा।

कवित्त।

मालवदेशी पवित्र करी श्री मुनीशजी, मोरवी मांहि पधार्या
मोरवी संघ तणी जोड़ लागणी दीनदयाल दिले हरषा·

श्रीलालजी स्वामी छो विद्या विशारद शास्त्र तणा प्रभु पारने पाम्या
प्रथम उधारी करीने कृपा मुनि आशिर्वाद अनेक पाम्या ।
महान् आभार 'मयुरपुरी' संघ आपतणो स्वामी दिलमां माने-
दर्शन आप तणां शिष्य-मंडली सहित थयां घणे पूरव दाने ।
एवा ग्रहरूप शिष्य संघाते चन्द्र-तुल्य गुरु पूर्ण-प्रकाशी ।
मोरवी संघ हृदय कुमुदो दर्शन थी प्रभु थाय विकाशी ।
पावन करी भूमि पाद—पद्मथी सहज दयालु दया दिले लावी
धर्मांकुरो करो जीवित, उपदेशमृत—वारि वरसावी ।
...ज इच्छु आगमनथी आपना कल्याण-कारक अम उर भावी ।
...ार-सागर तारो 'शिव' कहे अरिहंत अरिहंत मुख भजावी ।
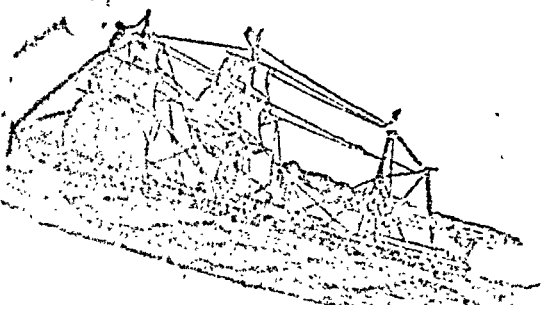
अध्याय २८ वाँ ।

मोरवी में तपश्चर्या-महोत्सव।

सोमवार या रजा (अवकाश) के दिन मोरवी में, विद्वा मुनियों के पास जैन और जैनेतर विद्वान् वकील और अमलदार कर ज्ञान चर्चा चलाते थे और हेडमास्टर तथा राज वैद्य उपरांत षाध्याय साक्षरोत्तम श्रीयुत शंकरलाल माहेश्वर भी प्रसंगोपात श्री के पास आते थे ।

पूज्य श्री के पधारने से हैजा बिल्कुल बंद होगया इसलिये नगर निवासियों की पूज्यश्री की ओर पूज्य-बुद्धि होगई और वृद्ध सबकी यह मान्यता थी कि, महात्माओं के पधारने से ही दुःख दूर हुआ। मार्ग में निकलते तब राजा महाराजाओं को भी न ऐसा आन्तरिक मान सब कौम और सब धर्म के मनुष्यों की से आपको मिलता था। तपस्वी मुनि श्री छगनलालजी ने ६१ उप किये थे ऐसी तपश्चर्या मोरवी में प्रथम ही होने से श्रावकों में अत्यंत उत्साह था। सुबह और दुपहर दोनों व्याख्यान के समय वार ६१ दिनतक प्रभावना अखंडित शुरु रही जिसमें सच्चा प्रभा हुआ कि, प्रभावना के लिये किसी को कुछ कहना न पड़ता

के दिन पूज्य श्री तपस्वीजी के साथ गोचरी पधारे थे और
घंटे तक फिरकर बीच में किसी गृह को न टालते सूझता मिला
आहार पानी ले सबको लाभ पहुंचाया था। कितने ही मनुष्यों ने
ग का प्रथम लाभ मुझे मिले तो मैं अमुक प्रतिज्ञा करता हूं ऐसी
य श्री से विनय की थी परंतु पूज्य श्री तो पक्षपात त्याग कर रंक
मंत सबके यहां पधारे थे।

तपस्वीजी के दर्शन करने के लिये देशावारों से कई श्रावक एक-
हुए थे। उनका योग्य स्वागत हुआ था, तपश्चर्या के पूर अंतिम
संवर पौषध अनेक हुए थे, और पारणे के दिन उत्सव जैसा
था। जीवों को अभय-दान दिया गया लूले लंगड़े जानवरों को
खिलाया गया और अनेक प्रकार के दान पुण्य हुए। जीव-दया
फंड हुआ था जिससे कई जीवों को शांति पहुंचाई थी।

पूज्य श्री का शिष्य-मंडल हमेशा संयम से सम्बन्ध रखने वाली
कथाओं और स्वाध्याय में तल्लीन रहता था और परदेश में पत्र
व्यवहार करना अकल्पनिक होने से ज्ञान चर्चा के सिवाय अन्य
झगड़ों में पड़ने का कोई कारण ही न था।

प्रतिक्रमण किये पश्चात् खास दोष या पाप के प्रायश्चित्त के लिये
कायोत्सर्ग ध्यान हुए बाद दोनों हाथ जोड़ शुद्ध हृदय से आत्म वि-
शुद्धि की आलोचना की याचना होती थी और पूज्य श्री उपवास

बेला, तेला, इत्यादि प्रायश्चित्त फरमाते थे, तब इस पदवी का प्रभा
व और शिष्यों के विशुद्ध होने की चिन्ता आखों से देखने वाले
का राजा महाराजाओं से भी विशेष प्रभाव शाली पूज्यपदवी की
ओर पूज्यभाव उत्पन्न हुए बिना नहीं रहता था–बारी से नयां पाठ
लेने आने वाले और प्रश्न पूछने वाले का मन संतुष्ट हो. ऐसा
पूज्य श्री समाधान कर देते थे और अपने नित्य नियम में मशगूल
रहते थे। पूज्यश्री के सुबह के चार बजे से रात की ११ बजे तक
कार्य–क्रम की प्रतिलिपि जितने मुनिराजों ने करली होगी वे सौ
आरे की बानगी की बड़ाई किये बिना नहीं रहेंगें। इस पवित्र भा
रत–भूमि में अनेक धर्मात्मा होंगे परंतु श्वे० स्था० जैन समाज
पूज्य श्री की समानता में खड़े रहने वाले उस समय विरेल मुनिराज
ही होंगे. ऐसा होते भी पूज्यश्री की खास खूबी यह थी कि, व्याख्यान
में या बातचीत में कभी किसी साधु की आचार शिथिलता या निंदा
का एक अक्षर भी पूज्य श्री के मुंह से न निकलता था, गुण ग्राह
बुद्धि यह उनका आदर्श गुण उनकी ओर हरएक को आकर्षण कर
लेता था। आहार लाते समय वे खास चेतावनी देते थे और कुछ
शिष्यों को कई दिन तक रूखा सूखा आहार ही खाने देते थे। इंद्रियों
शव करने के लिये भोजन की अत्यंत संभाल रखने का उनका आदर्श
था। काठियावाड़ और खासकर मोरबी में गरमागरम बाजरी के
रोटला और उड़द की दाल वे बहुत पसंद करते थे और कहते

वर्द्धमान को तो मूर्च्छा तक आगई थी, मेरे पिता दो चार दिन जीमे भी न थे और पीछे २ सनाला, टंकारा, तथा जामनगर गये थे। स्वर्गवासी इंजिनियर गोकुलदास भाई भी सनाले में पू[...] से विदा होते रोने लग गए थे। इन सरलस्वभावी भोले भक्तों को फिर से लाभ देने के लिये काठियावाड़ में विशेष ठहराने की की इच्छा थी परन्तु वह पार न पड़ी।
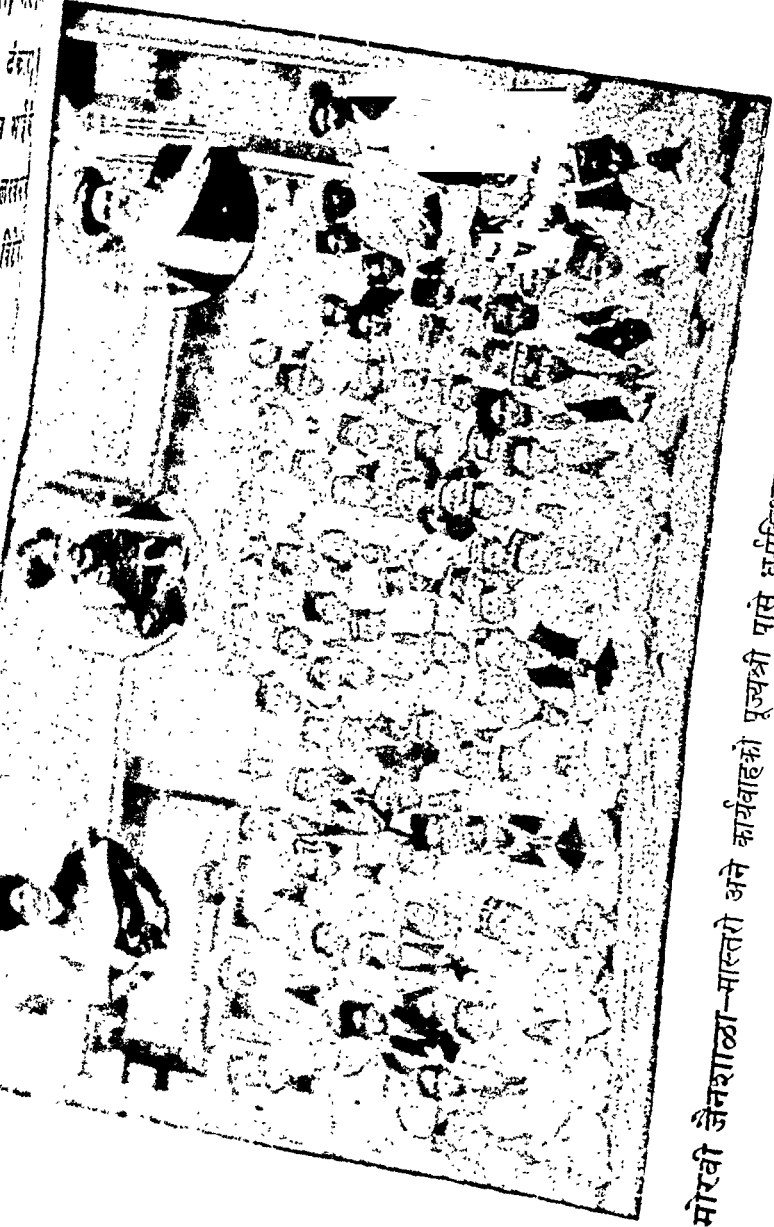
श्री मोरवी जैनशाळा–मास्तरो अने कार्यवाहको पूज्यश्री पासे धर्मशिक्षण श्रवण करे छे. परिचय–प्रकरण २७.

श्री उदयपुर स्था. जैन पाठशाला तथा कार्यवाहकों.

परिचय—प्रकरण ३५.

अध्याय २९ वाँ।

परिचय।
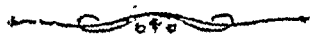
लेखक—शतावधानी पं० रत्नचन्द्रजी महाराज।

प्रवर पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज काठियावाड़ में पधारे ग कच्छ में थे। परन्तु वहां उनकी स्तुति सुन उनसे मिलने ये मनमें उत्कंठा जगी। सं० १९६८ के साल में कच्छ का तर कर झालावाड़ में आये। लींबडी साधु परिषद् का कार्य पूर्ण प्रान हमारा चातुर्मास धोराजी ठहरा था, इसीलिये उस तरफ [illegible] किया। तब श्रीलालजी महाराज वाँकानेर विराजते हैं ऐसा समाचार सुन सं० १९६९ के आषाढ वद्य १३ के रोज महाराज श्री [illegible]चन्द्रजी स्वामी, महाराज श्री वीरजी स्वामी आदि ठाणे चार [illegible] पहुँचे। वहां पूज्यपाद के दर्शन हुए। हम उपाश्रय में ठहरें [illegible] १० से उपाश्रय के पास दशा श्रीमाली की धर्मशाला में [illegible]। [illegible] दिवस तथा रात्रि के दस बजे तक इधर उधर की [illegible] [illegible] उपाश्रय और धर्मशाला एक दूसरे के इतने समीप [illegible] की खिड़कियों में से आमने सामने एक दूसरे की [illegible] सकती थी।

काठियावाड़ के दूसरे शहरों की तरह यहाँ भी पूज्यपाद ही व्याख्यान दें, यह पहिले दिन ही ठहराव हो चुका था इसीलिये धर्मशाला में व्याख्यान होता था। वहां हम पूज्यपाद की वाणी को सुनने उपस्थित रहते थे। किसी समय जब पूज्य श्री मुझे फरमाते, तब मैं भी विषय पर बोलता था। सभा में बाइयों और भाइयों से खूब भर जाता था। लोगों को पूज्यश्री की वाणी इतनी रसीली थी कि, दो तीन घंटे तक या इससे भी अधिक समय तक व्याख्यान होता रहता था। तोभी किसी की इच्छा जाने की न होती और भी अधिक व्याख्यान होता रहे तो ठीक, ऐसी प्रत्येक की जिज्ञासा रहती थी। व्याख्यान में शास्त्रीय तात्विक उपदेश के ऐतिहासिक दृष्टान्त बड़े प्रमाण में आते, उनका शास्त्रीय विवेचन के साथ ऐसा मिलान किया जाता कि, श्रोतृगण उस समय तन्मय बन जाते और करुणारस समय में अश्रुप्रवाह झरने लग जाते तथा वीर रस के समय रोमांच खड़े हुए दृष्टिगत होते थे। व्याख्यान की उस शैली से क्या जैन क्या अजैन सब इतने फिदा हो जाते कि, दूसरे दिन सुबह कब हो कि, फिर से व्याख्यान प्रारंभ हो, व्याख्यान का मार्ग हर एक आतुरता से देखता था, सत्रह दिन हम रहे, उनमें प्रथम से अंततक वृद्धिगत उत्साह देखने में आया था।

एक बार उसी दिन पूज्यश्री ने फरमाया कि, मुझे संस्कृत पढ़ना है। मैंने कहा आपको पढ़ाने योग्य मैं नहीं हूँ

तुमने गुरुमुख से सुना है तो मुझे पढ़ाओ। मेरा यह नियम
के, कोई भी सूत्र एक समय किसी से पढ़ फिर स्वतः पढ़ूं जिसमें
चंद्रपन्नत्ति जैसा शास्त्र गुरुगम से ही पढ़ना ऐसा मेरा इरादा
तब मैंने कहा, बेशक, आपका आग्रह है तो आप और हम दोनों
र पढ़ेंगे। उसी दिन से पढ़ना प्रारंभ किया। शास्त्र की एक २
तो उनके पास रखते दूसरी एक प्रति टीकावाली लेकर दोपहर
एक बजे से संध्या के पांच बजे तक पढ़ना प्रारंभ रखते थे।
मग पन्द्रह दिन में चंद्रपन्नत्ति सूत्र पूर्ण किया पूज्यश्री
समझ और प्रज्ञा इतनी तो सरस कि, चंद्रपन्नत्ति से भी कदा-
कोई गहन विषय हो तो भी वे स्वतः अच्छी तरह समझ लें,
दूसरों को समझा दें, परन्तु एक साधारण सूत्र भी आप स्वतः
[illegible] यह भावना कितने अधिक विनय और विवेक से भरी हुई
[illegible] सहज ही ध्यान में आजाता है इसीलिये उनकी स्तुति में कहा
है कि,

" विद्याविवादरहिता विनयेनयुक्ता "
" प्राचीन या अर्वाचीन अच्छा हो सो मेरा।"

कितने ही पुरुष प्राचीन पद्धति को ही मान देते हैं तो कितने ही
[illegible] को ही [illegible] हैं, सचमुच में ये दोनों ख्याल भूल
[illegible] हुए हैं। पुराना या नया चाहे सो हो अच्छा हो उसे स्वीकार और

खराब हो उसे त्याग देना यह समझदार मनुष्य का लक्षण है।पू
पाद पुरानी या नई पद्धति का आग्रह करने वाले न थे, परन्तु
सो मेरा ' इस मंत्र को स्वीकारने वाले होने से वृद्ध
युवावर्ग दोनों को एकसे प्रिय हो गए थे। राजकोट के
का बड़ा भाग धर्म की ओर अश्रद्धा रखने वाला गिना जाता है,
पूज्यश्री के राजकोट के चातुर्मास में नास्तिक कोटि में
युवावर्ग पूज्यपाद की ओर आकर्षित हो आस्तिक बन गया था,
जनों के मुँह से सुना है। वाँकानेर में तो मुझे स्वतः को
हुआ है वाँकानेर की पब्लिक (प्रजा) की ओर से पब्लिक
के लिये जब मुझ से आग्रह हुआ तब वाँकानेर के जैन
स्कूल में आम व्याख्यान देने के लिये व्यवस्था की। वाँकानेर
राज साहिब को भी आमंत्रण दिया। तब दरबार अपने
सहित वहां पधारे। तमाम अमलदार तथा प्रत्येक वर्ग के लो
सभा खूब भर गई। इस तरफ कुछ अंश में और मारवा
विशेष अंश में जूने विचारवाले आम व्याख्यान की पद्धति
नई कहकर ढकेल देते हैं जब पूज्यपाद उस रास्ते से निक
से स्कूल में पधारने की प्रार्थना की गई, आप स्वयम् वहां
गए इतना ही नहीं परंतु चालू विषय को संजीवन बनाने के
आप इतने सरस बोले थे कि, उसे सुनने वाली सभा एक ता
हो गई थी। पुराने शास्त्रीय विषय की नई शैली से चर्चा क

ऐसी खूबी थी कि, पुराने तथा नये दोनों वर्गों को वह रुचि-
हो जाती थी। दरबार तथा अन्य श्रोताओं ने दूसरे दिन फिर
ख्यान के लिये आमंत्रण दिया, तब दूसरा व्याख्यान वीसा श्रीमाली
धर्मशाला में दिया गया था। दोनों व्याख्यानों का असर आम
पर अच्छा हुआ। सारांश सिर्फ इतना ही कि, पूज्य श्री रूढि
यादि मान देते तोभी आंतरिक योग्यायोग्य का विचारकर
से आत्मा के श्रेयाश्रेय विचार को अधिक मान देते थे। इसी
नये और पुराने दोनों पद्धति को पसंद करने वाले जल्दी अनु-
हो जाते और पूज्य श्री जिसमें अधिक श्रेय हो उसका अनु-
होकर लोगों को लाभ देते थे।

पूज्यपाद का साहित्य पर शौक।

पूज्य श्री जैन–शास्त्र के समर्थ विद्वान् थे। बहुसूत्री, गीतार्थी,
..., आगमवेत्ता जो २ उपनाम उन्हें लगाये जाँय वे उनके योग्य
... और मुनिवर्ग में संस्कृत का अभ्यास करने की प्रथा
... आचार्य श्री संस्कृत के समर्थ पंडित होते, परंतु
... रिवाज न होने से उनकी यह इच्छा मन में ही
... थी। बीकानेर में थोड़े दिन के परिचय पश्चात् पूज्य श्री ने
... कि, अपना भावी पातुमास साथ हो तो तुम्हारे ...
... ... साधु को संस्कृत का अभ

और मैं भी संस्कृत के न्याय के पुस्तक सुनूं तथा उन पर विचार कर
पूज्य श्री की इस दरख्वास्त से मेरे मन में अत्यंत उत्साह था
परंतु हमारे सांप्रदायिक कितनी ही रूढियां और श्रावकों की रूढ़ि
का बंधन न होता तो एक चातुर्मास तो क्या परंतु प्रति वर्ष साथ
कर शास्त्र-विचार और साहित्य-सेवा का लाभ परस्पर लेते
परंतु वर्तमान समस्या के बाबत तीन कठिनाइयों का विचार
था। एक तो धोराजी और मोरबी के चातुर्मास में हेरफेर
कि, जिसके लिये समय बहुत थोड़ा रहा था दूसरा इसमें
के संघ की ओर पूज्य श्री की सम्मति प्राप्त करना। तीसरा
ग्राम में रहना वहां के श्रावकों की भी सम्मति लेना चाहिये
के कारण के लिये तो पूज्य श्री ने यहां तक कहा था कि, मैं
साधु लींबडी भेज कर मंजूरी मंगाऊं और मुझे विश्वास है
लींबडी संघ के अग्रेसर मुझे मान देने के लिये
मंजूरी देंगे तो वह कठिनाई दूर हो जायगी, परंतु
एक तकलीफ यह थी कि, धोराजी खाली न रहे और
सि मुकर्रर होगए थे, इसलिये वहां जाने वाला कोई न था
पूज्य श्री ने कहा कि, तुम्हारे चार ठाणों में से दो ठाणा
पधारें और दो ठाणा मोरवी चलें। मोरबी का चातुर्मास
ऐसा न था, इसलिये एक तीसरी कठिनाई दूर करने की थी,
लिये कोशीश की गई परन्तु अन्तराय के योग से इच्छा

। चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् एकत्रित हो और अमुक
तक साथ रह अभ्यास करना ऐसा विचार मन में धार प्रथम
द वद १ को पूज्य श्री ने मोरवी चातुर्मास करने के लिये
नेर से विहार किया और हमने धोराजी की ओर विहार
। मोरवी का चातुर्मास पूर्ण हुए पश्चात् कितने ही कारणों से
श्री का मारवाड़ की ओर पधारना होगया । अंतराय के योग
र संगम न हुआ सो नहीं हुआ । मनकी इच्छा मन में ही
ई । इस पर से पूज्य श्री का विद्या की ओर कितना शौक था
। कुछ खयाल हो सकेगा ।

मिलनसार वृत्ति ।

इस वृत्ति के लिये इस तरफ के कई मनुष्यों के मुंह से मैंने
। है और स्वयं भी अनुभव किया है कि । चाहे जैसा अनजान
र आया हो तो भी वह मानो पूर्व का परिचित ही है ऐसा
इसके साथ पूज्य श्री बातचीत करते थे । आचार विचार में
अमीन आकाश जितनी भिन्नता हो तो भी दोनों के बीच में
। अधिक भी भिन्नता न हो बिलकुल कपट रहित उसके साथ
चीत करते कि, वह मनुष्य अपने मन में रही हुई भिन्नता को
[illegible] ही समझने लगता था ।

इस तरफ मारवाड़ के कितने ही साधु आते हैं परन्तु उनमें अपने आचार की विशेषता बताने के साथ दूसरों की निन्दा करने का दोष विशेषता से देखा जाता है। पूज्य श्री में आचार इत्यादि की विशेषता होते भी अपने मुंह से उसे दर्शाना या उसकी सं... नता कर दूसरों की हलकाई या शिथिलिता बताना या किसी निन्दा करने का स्वभाव बिल्कुल भी नहीं पाया गया। उसके अनुकूल उनकी गुण-ग्राहक वृत्ति का कई बार परिचय हुआ है ... ख्यान के समय भी अपने परिचित साधु साध्वी श्रावक या अन्य कोई गृहस्थ के गुणों का आपको परिचय हुआ हो तो उस गुण के कारण आप अपने मुक्तकंठ से उसकी प्रशंसा करते थे, चाहे ... अन्य रीति से अपने से हलके हों तो भी वे उसके उस गुण ... ले उसकी प्रशंसा करने में तनिक भी न हिचकते थे। यह गुण ग्राहक वृत्ति सचमुच प्रशंसनीय है। इस वृत्ति को हमारे मुनि ... आत्रक मान दें तो समाज के क्लेश कितने ही अंश में दूर हो ... इन सब गुणों के कारण हमारा सहवास इतना रसमय होगया कि, विदा होते समय दोनों के हृदय भर गए थे और सहवास आनन्द बाग में आश्रय लेने का फिर कब समय उपस्थित ... उसकी सोच करते थे। उस समय थोड़े ही दिनों में फिर मिल... आशा का आश्वासन था परन्तु "दैवी विचित्रा गतिः" ...

धारता है और क्या होता है उसी तरह हुआ। विदा होने पर
शरीर रूप से तो इकट्ठे न हुए परन्तु " गिरौ मयूरा गगने
दा " इस कहावत के अनुसार जिसका जिस पर प्रेम है वह
से दूर नहीं है अर्थात् आंतरिक गुण स्मरण रूप सानिध्य ही
। फिर कभी संगम होगा यह भी आशा अवशिष्ट थी, परन्तु
सेम समाचार ने यह आशा भी निराशा में परिणित कर दी।
र सिर्फ उनके गुणों का स्मरण कर उनके लगाए बीजों का
पनकर उन्हें फलने फूलने देना है। उनकी यादगार में सब
पहिले तो यह काम करना है कि, सम्प्रदाय में फैला हुआ क्लेश
की तरह भोग दे दूर करना चाहिये। संयुक्त बल बढ़ा उन-
लगाये ज्ञान और आनन्दरूपी बाग में से सुवासित पुष्पों की परि-
ल सुगंध दिगंत पर्यंत प्रसरती रहे उसमें हाथ बटाना है। पूज्य
के गुण अनेक हैं मुझ में वे सब वर्णन करने की सामर्थ्य
हीं। अवकाश भी कम है अर्थात् इतने ही से संतोष मान पूज्य
की आत्मा को परम शांति मिले, ऐसी इच्छा करता हुआ यहां
राम लेता हूँ, 'कुमेषु किं बहुना' ॐ शांतिः।
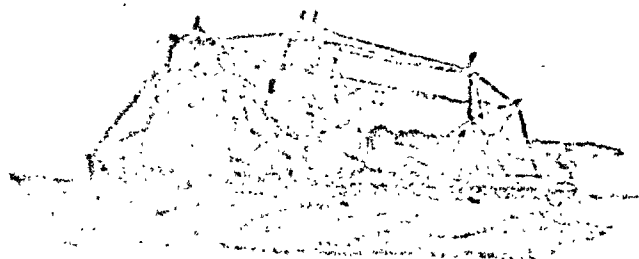
अध्याय ३० वाँ।

काठियावाड़ के लिये दिया हुआ अभिप्राय।

काठियावाड़ में अनुक्रम से विहार करते हुए आचार्य श्री भा
नगर पधारे। रास्ते में अनेक ग्रामों में अत्यन्त उपकार हुआ। भावनग
में उस समय लींबडी सम्प्रदाय के सुप्रसिद्ध वक्ता पं० मुनि श्री
नागजी स्वामी भी विराजते थे। परस्पर ज्ञानचर्चा और वार्ता
से आनंद होता था, व्याख्यान एक ही स्थान पर होता था। और
श्री नागजी स्वामी वहां पधारते थे। तब उनको योग्य आसन
का सत्कार तथा परस्पर विनय बहुत रखा जाता था। कई सम
पूज्य श्री अपना व्याख्यान बंदकर पं० नागजी स्वामी का व्या
ख्यान सुनने की आतुरता दिखाते और उन्हें व्याख्यान देने के
लिये आग्रह करते थे। पंडितजी नागजी स्वामी लिखते हैं कि, हमने ऐसे
गुणग्राहक साधु दूसरे नहीं देखे। व्याख्यान में दृष्टांत देने और
सिद्धांत के साथ उन्हें घटित करने को उनमें आश्चर्यजनक
शक्ति थी और जिससे लोग अत्यन्त आकर्षित होते थे। तथा उन
का गहन प्रभाव गिरता था, सचमुच कहा जाय तो इस सम्मान्य

नका अनुभव और सामर्थ्य अधिक थी। दोपहर के समय ज्ञान चर्चा होती। उत्तराध्ययन, भगवती, सूयगडांग, इत्यादि सूत्रों सम्बन्धी अनेक गहन चर्चाएं होतीं। तब वे कहते कि, हमें यह बात नई मालूम हुई है, इसलिये आपकी आज्ञा हो तो हम धारण करें व ऐसा आग्रह करते कि, आप मालवा मारवाड़ में पधारो, मैं रतलाम तक सामने आऊं और साथ २ घूम कर देश का अनुभव कराऊं, मुझे विद्वानों के लिये अत्यन्त मान है। हम दस दिन साथ रहे, पूज्य श्री अपने विहार का समय किसी को न बताते थे, परन्तु मुझे (नागजी स्वामी) बताया था। मैं पौन कोस तक उन्हें पहुंचाने गया था। वहां थोड़े समय तक बैठ प्रेम पूर्वक बहुत बातें कीं और जिसतरह अधिक समय से पास रहने वाले विदा होते हैं उसी तरह गद्गद होते विदा हुए थे। अंत में बतलाना यह है कि, उनके सहवास से हमें अत्यन्त आनन्द हुआ। उनकी मिलनसार प्रकृति और दूसरे मनुष्य को आकर्षित करने की शक्ति कोई अलौकिक ही थी, इत्यादि २।

काठियावाड़ के प्रवास में आचार्य महाराज को अत्यन्त संतोष मिला। वे व्याख्यान में कई बार फरमाते कि, काठियावाड़ के लोग सरल-स्वभावी हैं। शिक्षा में आगे बढ़े होने से वे शास्त्र के सूक्ष्म विषयों को अत्यन्त सरलता से समझ सकते हैं, यह देख मुझे अत्यन्त आनंद होता है और मेरा श्रम सफल होता है, आत्मिक

ओंका अभ्यास देख मुझे अत्यन्त संतोष हुआ है। दूसरे देशों अपेक्षा काठियावाड़ में जीव-हिंसा बहुत कम होती है और मां हार का प्रचार भी कम है, यह संतोषदायक है। काठियावाड़ विचरने वाले साधु, विद्वान्, मायालु, अवसर के ज्ञाता और विवे हैं, वे मारवाड़ की तरफ विचरें तो वे देश को अत्यंत लाभ प सकते हैं। पूज्य श्री मारवाड़ मेवाड़ के लोगों से कहते हैं कि, का वाड़ इत्यादि वेश्याओं से दूर रहने वाले देश में बसने वाले गृ के आंगन बालकों के कल्लोल से शोभा बढ़ा रहे हैं। इसलिये दत्तक या गोद लेने के रिवाज या कानून की आवश्यकता नहीं भाग्य से ही सैकड़े पांच मनुष्य कम नसीब वाले संतान रहित अपने देश की तरफ और मारवाड़ की ओर दृष्टि डालो। सपू कितने हैं और दत्तक कितने हैं ? यह सब अनर्थ वेश्याओं की वृ का आभारी है। लग्न जैसे शुभ प्रसंग में भी तुम्हारे परमा उन कुलटाओं के नाच के अपवित्र पुद्गलों से अपवित्र होते रहते हैं गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते कोमल बालकों के समीप ही उनका नाच कराने में तुम वरघोड़े और मंडप की शोभा समझते हो। इसलिये तुम विष-वृक्ष रोपकर उसका सिंचन करते हो यह भूल जाते हो।

संगीत का शौक हो तो घर की स्त्रियों को, बालिकाओं को सिखाओ कि, तुम्हें गुलामगीरी में इतना तो आराम मिले और जीलेजी जेल जैसी जन्म कैद में सुख प्राप्त समझो। संगीत का सम

...क हो तो प्रभु–भक्ति और परोपकारादि जीवन–कर्तव्य के कार्य ...या कम है ? कि, तुम भ्रष्ट, नीच और सड़े हुए परमाणु वाली ...घ नारियों को मकान तथा मंडप में बुलाकर तुम स्वतः अपने और ...पनी स्त्रियों के जीवन तक बिगाड़ते हो ? भाइयो ! चेतजो, मेरे ...सी सच्ची कहने वाले थोड़े मिलेंगे । बहुत पुण्योदय से मनुष्य-...न्म मिला है । उत्तम क्षेत्र उत्तम गोत्र, और नीरोगी काया ये सब ...र्थ न गमाते–एक क्षणमात्र भी प्रमाद न करते, महंगे मनुष्यभव ...सार्थक करना याद रखियो" ।

पूज्य श्री के प्रभाव से काठियावाड़ में बहुत से सज्जन श्रीजी ... अनन्य भक्त बन गए थे । जहां २ श्रीजी महाराज ने पदार्पण ...किया वहां २ के श्री संघ ने अत्यंत हर्षोत्साह से पूज्य श्री की ...सेवा–भक्ति की जिससे पूज्य श्री के चित्त में अत्यंत प्रसन्नता हुई. ...पने सम्प्रदाय का परिवार मालवा मारवाड़ में होने से उस ओर ...पधारने की पूज्य श्री को आवश्यकता जची तथा मारवाड़ में त्रि-...रने वाली आर्याजी * श्री नानीबाई की तबीयत अत्यंत खराब ...

---

* ये इस जमाने में एक लब्धिसंपन्न आर्याजी थीं । उन्होंने ...बाल्यावस्था से संसार की विचित्रता अनुभव की थी इस लिये ...रोम रोम २ की नाड़ी वैराग्य रंग से रंगी हुई थी । वे हमेशा ...तपस्या में ही लीन रहती थीं, एक माह में भाग्य से ही चार पांच

ओंका अभ्यास देख मुझे अत्यन्त संतोष हुआ है। दूसरे देशों की अपेक्षा काठियावाड़ में जीव-हिंसा बहुत कम होती है और मांसाहार का प्रचार भी कम है, यह संतोषदायक है। काठियावाड़ में विचरने वाले साधु, विद्वान्, मायालु, अवसर के ज्ञाता और विवेकी हैं, वे मारवाड़ की तरफ विचरें तो वे देश को अत्यंत लाभ पहुंचा सकते हैं। पूज्य श्री मारवाड़ मेवाड़ के लोगों से कहते हैं कि, काठियावाड़ इत्यादि वेश्याओं से दूर रहने वाले देश में बसने वाले गृहस्थों के आंगन बालकों के कल्लोल से शोभा बढ़ा रहे हैं। इसलिये वहां दत्तक या गोद लेने के रिवाज या कानून की आवश्यकता नहीं है। भाग्य से ही सैकड़े पांच मनुष्य कम नसीब वाले संतान रहित हैं। अपने देश की तरफ और मारवाड़ की ओर दृष्टि डालो। संतान रहित कितने हैं और दत्तक कितने हैं? यह सब अनर्थ वेश्याओं की पूजा का आभारी है। लग्न जैसे शुभ प्रसंग में भी तुम्हारे परमाणु उन कुलटाओं के नाच के अपवित्र पुद्गलों से अपवित्र होते रहते हैं। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते कोमल बालकों के समीप ही उनका नाच कराने में तुम वरघोड़े और मंडप की शोभा समझते हो। इसलिये तुम विष-वृक्ष रोपकर उसका सिंचन करते हो यह भूल जाते हो।

संगीत का शौक हो तो घर की स्त्रियों को, बालिकाओं को सिखाओ कि, तुम्हें गुलामगीरी में इतना तो आराम मिले और जो जेल जैसी जन्म कैद में सुख प्राप्त समझो। संगीत का समा

क हो तो प्रभु-भक्ति और परोपकारादि जीवन-कर्तव्य के काव्य
। कम हैं ? कि, तुम भ्रष्ट, नीच और सड़े हुए परमाणु वाली
व नारियों को मकान तथा मंडप में बुलाकर तुम स्वतः अपने और
नी स्त्रियों के जीवन तक बिगाड़ते हो ? भाइयो ! चेतजो, मेरे
ी सच्ची कहने वाले थोड़े मिलेंगे। बहुत पुण्योदय से मनुष्य-
न्म मिला है। उत्तम क्षेत्र उत्तम गोत्र, और नीरोगी काया ये सब
र्थ न गमाते-एक क्षणमात्र भी प्रमाद न करते, महंगे मनुष्यभव
। सार्थक करना याद रखियो"।

पूज्य श्री के प्रभाव से काठियावाड़ में बहुत से सज्जन श्रीजी
 अनन्य भक्त बन गए थे। जहां २ श्रीजी महाराज ने पदार्पण
किया वहां २ के श्री संघ ने अत्यंत हर्षोत्साह से पूज्य श्री की
सेवा-भक्ति की जिससे पूज्य श्री के चित्त में अत्यंत प्रसन्नता हुई.
परंतु सम्प्रदाय का परिवार मालवा मारवाड़ में होने से उस ओर
पधारने की पूज्य श्री को आवश्यकता जची तथा मारवाड़ में वि-
चरने वाली आर्याजी * श्री नानीबाई की तबीयत अत्यंत खराब

* वे इस जमाने में एक लब्धिसंपन्न आर्याजी थीं। उन्होंने
संसारावस्था में संसार की विचित्रता अनुभव की थी इस लिये
उनके हाड २ की मींजी वैराग्य रंग से रंगी हुई थी। वे हमेशा
तपश्चर्या में ही लीन रहती थीं, एक माह में भाग्य से ही चार पांच

हीं जाने से एवम् पूज्य श्री के दर्शन की तथा उनके पास से श्रा-
लोयणा प्रायश्चित्त लेने की प्रबलतर अभिलाषा है ऐसी खबर मिलने

दिन आहार पानी लेतीं और वह भी नीरस सूत्रों के स्वाध्याय में
ही हमेशा तल्लीन रहती थीं। मुझे इनका स्वाध्याय महामंदिर में
सुनने का अवसर प्राप्त हुआ था। कितनी ही आर्याजी की बीमारियां
उन्होंने हाथ फिराकर मिटाई थीं। परंतु यह बात वे प्रकाशित
करने देती थीं, एक आर्याजी की आंखें अनुभवी डाक्टर भी अच्छी
न कर सके थे वे आंखें आर्याजी ने अट्ठाई के पारणे के दिन
अपनी जिव्हा फेर कर दीपतुल्य कर दी थीं और उसी
वे आर्याजी व्याख्यान वाचने लग गई थीं। ऐसे २ अनेक चमत्
अनुभव किये हैं परन्तु वे तमाम यहां प्रकाशित कर देने से
भव्यजन वर्ग प्रतिकूल अर्थ लगावेगा और शुद्ध संयम तथा तप
के फलस्वरूप ऐसी लब्धियों की इच्छा में रुककर अपना
चूकेगा। इन आर्याजी की संसारावस्था के पति के पूर्व
'पत' का रोग लग गया था और इसीसे उनकी मृत्यु हुई थी
कुष्टवृद्ध मुर्दे के शरीर को श्मशान में ले जाने के लिये उनके
संबंधी भी न आये थे। नानूबाई ने कइयों से प्रार्थना की परन्
किसी को दया न आई तब मुर्दे में असंख्य जीव उत्पन्न हों
भय से आपने हिम्मत धारण कर कछोटा लगा अपने

अहमदाबाद तथा गुजरात में अपने श्वे० मूर्तिपूजक भाइयों की धर्मशालाएं अधिक हैं । स्थानकवासी तथा देरावासी भाइयों के बीच वहां जैसा चाहिये वैसा भ्रातृभाव न होने पर भी आचार्य श्री जब अहमदाबाद, पाटण, सिद्धपुर, मेसाणा इत्यादि शहरों में पधारे तब अपने श्वेताम्बर मूर्तिपूजक भाइयों ने भी आप की हरएक रीति से सेवा शुश्रूषा की थी और भक्ति पूर्वक आहार पानी आदि बहराने का लाभ उठाया था । इतनाही नहीं पर सैंकड़ों मूर्ति पूजक भाई व्याख्यान श्रवण करते थे कदाचित् कोई श्रावक योग्य बर्ताव न रखते तो उन्हें उनके अन्य स्वधर्मी भाई उपालम्भ दे पूज्य श्री के सन्मुख करते थे ।

अहमदाबाद में श्रीजी विराजमान थे तब पालनपुर मुमुक्षु का सत्याग्रह होने से पूज्य महाराज पालनपुर पधारे और लगभग २० दिन रहे । इस समय भी मेहताजी साहिब की धर्मशाला में पूज्य श्री ठहरे । उस समय पालनपुर के नेक नामदार खुदावंद नवाब साहब बहादुर सर शेरमहम्मद खानजी साहिब बहादुर के. सी. आई. ई. कि, जिनका सब धर्मों पर अचल प्रेम था वे स्वयं अपने २ मुसाहिबों के साथ तथा स्टाफ को साथ ले पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे और वे हर एक धर्म का रहस्य जानने वाले थे इस लिये लगभग दो घंटे तक धर्म-चर्चा की थी ।

फिर पूज्य श्रीजी की अत्यन्त तारीफ की थी। थोड़े दिनों
ी दूसरे वक्त दर्शनों के वास्ते पधारकर बहुत सदुपदेश सुना
और दोनों वक्त वहां के ज्ञान खाते में अच्छी रकम दे मदद
थी।

पूज्यश्री महाराज का पवित्र धार्मिक उपदेश और सामाजिक
। तथा व्यावहारिक ऐतीहासिक उपदेश से पालनपुर की जैन-जाति
ऱ्य-भाव की पूर्णता छा गई थी और बाद पूज्य श्री के अवसानतक
र रही थी इतना ही नहीं परन्तु वर्तमान पूज्यश्री की ओर भी
ही भाव कायम है और जहां पूज्य साहिब चातुर्मासमें होते हैं वहां २
ापुर के श्रावक अधिक दिन ठहरकर उनके उपदेशामृत का
करते हैं।

पालनपुर से अनुक्रमशः विहारकर मारवाड़ की भूमि को अपने
ा से पावन करते हुए श्री जी महाराज पाली पधारे वहां पर
ाल सिहजी की दीक्षा हुई और वहां जोधपुर संघ की विनन्ती
। पूज्य श्री ने सं० १९७० का चातुर्मास जोधपुर किया। इस
ास में महान् उपकार जोधपुर में हुए वे अवर्णनीय हैं।

अध्याय ३१ वां

मौलवी जीवदया के वकील

जोधपुर (चातुर्मास) पूज्य श्री के व्याख्यान में स्वमती अ-
मती बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे। सरकारी तोपखाने के
कर्त्ता माली नानूरामजी कि जो पूज्य श्री के परम भक्त हैं
करीब २०० राजपूत लोगों को उपदेश दे उनमें से कितनों
से जीवन पर्यंत शिकार छुड़ाया था और कइयों से अमुक
तक तथा कइयों से अमुक २ दिनों के लिये शिकार बंद

जोधपुर के मौलवी सा० सैयद आसदअली M.R.
(लंडन) F. T. C. कि जो राज्य में बड़े ओहदेदार थे वे
नानूरामजी माली के साथ पूज्य श्री के पास आये। व्याख्या-
न कर बड़ा आनंद हुआ और एक ही व्याख्यान से ऐसा
असर हुआ कि, उन्होंने जिंदगी भर के लिये मांस भक्षण का
त्याग किया तथा परस्त्री का त्याग किया और घर की स्त्री
मर्यादा की। मौलवी साहिब के साथ दूसरे भी पांच मुसलमान
ने जीवन पर्यंत मांस खाना छोड़ दिया था। मौलवी साहिब
श्री नानूरामजी साहिब के संयुक्त प्रयाससे करीब १५० म

पूज्यश्रींना मुसलमीन भक्त.

मौलवी सैयद आसद अली M. R. A. S. (लंडन)

श्री पंचेड
ठाकोर साहेब.

परिचय
प्रकरण १६.

श्री के पास आ। कितने ही महीनों के लिये मांस खाना छोड़ा
और दूसरे भी कितने ही लोगों ने मांस भक्षण करना सर्वदा
के त्याग दिया था।

मौलवी साहिब ने एक जैन-मुनि के पास से मांस खानेके सौगंध
यह हकीकत उनके ज्ञातिवालों ने सुनी तो उन्हें उन्होंने जाति
र निकालने की धमकी दी। पूज्य श्री ने भी यह बात सुनी फिर
वे पूज्य श्री के पास आये तब पूज्य श्री ने कहा कि "भाई!
। आपकी प्रतिज्ञा पर अटल रहेंगे तो न्याय हो जायगा" मौलवी
स अपनी प्रतिज्ञा पर मेरू की तरह डटे रहे और जिसका फल
हुआ कि, जो उनके आदि में विरोधी थे वे ही उनके प्रशंसक
गए इतना ही नहीं परंतु मौलवी साहिब की सत्प्रेरणा से उन्होंने
मांस खाना त्याग दिया यों अपनी ज्ञाति के कई मनुष्यों को
ने अपने पक्ष में कर लिया और उन्हें भी मांस खाने का त्याग
या। मौलवी साहिब हमेशा पूज्य श्री के पास आते थे वे अब भी
मान हैं और उन्होंने *जीवरक्षा के महान् कार्य किये हैं और
हे हैं इन गृहस्थ के किये हुए उपकारों का वर्णन "परिशिष्ट"
में किया है।

* मौलवी साहिब एक समय रेवाड़ी गए। वहां बहुत सी गायें
। थी यह देख उन्हें बहुत दुःख हुआ। वहां रेवाड़ी में
[illegible] डाक्टर थे, उन्होंने कहा कि 'हम [illegible]

यहां चातुर्मास करने को पूज्य श्री पधारे इसके पहिले पू
शेषकाल में भी पधारे थे। उस समय जोधपुर के धर्म-परायण मु

खातिर तवज्जो करें ? तब सैयद आसदअली साहिब ने कहा
यहां सैकड़ों गायें कटती हैं उन्हें देख मेरा दिल बहुत घबरा
किसी भी तरह इनका कटना बंद हो जाय तो अच्छा हो।
माणेज ने कहा कि, मैं बंध कराने की कोशिश जरूर करूंगा
समय में वहां प्लेग चला और एक अंग्रेज अमलदार ने प्लेग
उत्पत्ति का कारण डाक्टर से पूछा जिसके प्रत्युत्तर में
कहा कि, यहां सैकड़ों गायें कटती हैं, इनके परमाणु बहुत
रहते हैं इसलिये उनसे अनेक प्रकार के विषैले जीव
उत्पत्ति होजाना संभव है, उपरोक्त अमलदार ने गोवध
सब कसाइयों की सही ली सुना है कि, ये महाशय भी फतो
श्रीजी महाराज के दर्शनार्थ आये थे जोधपुर में गोशाला
से माली नाथूरामजी ने रु० १०००) की जगह गोशाला
अर्पण कर दी थी "महाराज सुमेर गोशाला" नाम रख
प्रारंभ किया गया और पूज्य श्री के दर्शनार्थ आये हुए गा
गाम के मिल प्रायः २००० इकट्ठे होगए, जोधपुर कौं
मेम्बर श्रीमान् श्यामबिहारी मिश्र आदि कई सज्जन गो
कार्य में उत्साह पूर्वक भाग लेते थे—इसके सिवाय इस
करीब दो हजार बकरों को अभय दान दिया गया था

लजी मूथा (चंदनमलजी साहिब के पिता) वे जोधपुर
क शनिश्चरजी के मंदिर में संथारा किये बैठे थे। एक समय
श्री फिरतमलजी मूथा को दर्शन दे पीछे फिरते थे तब जगत
तालाब पर एक मुसलमान हाथ में बंदूक लिये पक्षी को
की तैयारी में था उसे श्रीजी महाराज ने दूर से पक्षी को
बंदूक तानते देखा तब पूज्य श्री ने बड़े आवाज से बुलाया
ि अल्ला के प्यारे ! खुदा के प्यारे ! खुदा के प्यारे ! खामोश !
ाश ! वह आवाज सुन । वह मुसलमान इधर उधर देखने लगा
साधु को आता देख उसने संतोष पकड़ा. पूज्य श्री बिल्कुल
प पहुंचे तब उसने नमस्कार कर कहा कि " महाराज " मेरी
बीमार है और उसको दवा के लिये इस धनंतर पक्षी का
हकीमजी ने मंगाया है इसलिये उसे मैं मारता था' । उस
र बहुत थोड़े में परंतु बड़े प्रभावोत्पादक बोध बचन श्री जी
राज ने उस मुसलमान से कहे इसलिये इससे उसका कुछ
ा पिघल गया परंतु उसने कहा कि, इस पक्षी को तो मैं अवश्य
गा कारण न मारूं तो शायद मेरी स्त्री के प्राण न बचें । तब
श्री ने कहा कि " हम फकीर हैं हमारे वचनों पर विश्वास
तुम इस पक्षी की जान बचावोगे तो अच्छे कार्य का अच्छा
तुम्हें मिले बिना न रहेगा। दूसरों को सुख देने से ही आप
हो सकता है. इसपर ए व्ह मुसलमान महाराज श्री की

आज्ञा सिर चढ़ा पक्षी को अभय दान दे अपने घर गया ।
बिना दवा किये ही उसकी स्त्री की तबियत सुधर गई. जिससे
अपार आनंद हुआ । और महाराज श्री के पास आकर कहने लगा
कि, आपकी कृपा से मेरी स्त्री को आराम हो गया है—आप
फकीर हैं फिर वह मुसलमान जीव मारने की सौगंध महाराज
से कृतकृत्य हुआ ।

इस चातुर्मास में तपश्चर्या भी बहुत हुई. तपस्वीजी
छगनलालजी महाराज ने ६५ उपवास पन्नालालजी महाराज
४१ उपवास किये थे सती श्री सौभाग कुंवरजी ने ५१ उपवास
थे तपस्वीजी सतीजी श्री नानकुंवरजी ने चार माह में १० दिन
लिया था पूज्य श्री ने तथा अन्य साध्वियों ने एकान्तर
विविध प्रकार की तपश्चर्या की थी ।

तपस्वीजी महाराज छगनलालजी के ६५ उपवास के पारणे
के दिन पूज्य श्री सरूपचन्दजी भंडारी के घर गोचरी गए
रीजी का पुत्र गौरीदासजी चार वर्ष से बाने के दर्द से पीड़ित
उनसे बिल्कुल चला भी न जाता था । दो मनुष्य
भुजाएं पकड़ पूज्य श्री के पास मेड़ी पर से नीचे लाये.
दासजी को पूज्य श्री के दर्शन करते बड़ा प्रेम उत्पन्न हुआ
से वे पूज्य श्री के दर्शन कर कहने लगे महाराज । मैं

अध्याय ३२ वाँ ।

विजयी विहार ।

जोधपुर से अनुक्रमशः विहार करते पूज्य श्री नयेनगर पधारे मुनि श्री देवीलालजी स्वामी का मिलाप हुआ जब काठियावाड़ में श्री विचरते थे तब जावरा वाले संतों के सम्बन्ध में पूछताछ तो उन्होंने उत्तर दिया कि, मालवा में पधार आप उचित निर्णय परन्तु जयपुर के श्रावकों ने श्रीजी महाराज से जयपुर पधारने प्रार्थना की थी उसके उत्तर में उन्होंने जयपुर पधारने के लिए आश्वासन दिया था इसलिए उन्होंने जयपुर हो फिर मालवे ओर पधारने का विचार दर्शाया तब देवीलालजी महाराज ने जयपुर पधारने की इच्छा प्रकट की।

नयेनगर में उस समय पूज्य श्री के पधारने से अपूर्व आनन्द छा रहा था पूज्य श्री तथा देवीलालजी महाराज के सिवाय धर्मदासजी महाराज की सम्प्रदाय के पूज्य श्री नंदलालजी ठाणा ५ तथा श्री पन्नालालजी के वलचंदजी महाराज ७ तथा आचार्य श्री के मुनिवरों में से मुनि श्रीलालचंदजी लालजी आदि कुल ५८ मुनिराज तथा ३३ आर्याजी उस

वर्ष से दुखी हूं मेरे लिये मेरे पिताने दवाई में हजारों रुपये खर्च कर दिये हैं परन्तु आराम नहीं हुआ। तब पूज्य श्री ने कहा कि, दवाई त्याग दो नवकार मंत्र गिनो और श्रद्धा रक्खो। उसी दिन से उन्होंने दवाई छोड़ दी और नवकार मंत्र गिनना आरंभ किया थोड़े ही समय में उन्हें बिल्कुल आराम होगया और वे पूज्य श्री के व्याख्यान में पांव २ चलकर आने लग गये थे। पहिले वैष्णव-धर्म पालते थे परंतु पूज्य श्री के सदुपदेश से सब कुटुम्ब जैन-धर्म पालने लग गया।

इस तरह जोधपुर के चातुर्मास में अनेक उपकार हुए। जोधपुर के इस चातुर्मास का ध्यान दिलाने के लिये कायस्थ ज्ञाति के अजैन डाक्टर रामनाथजी कि, जो अभी गढ़झालोर में हैं उनके स्वतः के शब्दों में लिखते हैं।

पूज्य श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज का चातुर्मास मारवाड़ के मुख्य नगर जोधपुर में हुआ, उस समय इस दास को भी आपके दर्शन व सत्संग और उपदेश सुनने का गौरव प्राप्त हुआ। आपकी कांति, चित्त-शुद्धि और तपश्चर्या के परमाणुओं का आभास इतना जबरदस्त पड़ता था कि, श्रोता लोग उपदेशामृत सुधा-समुद्र में लहराते हुए मानों तुरियावस्था का आनंद प्राप्त करते थे।

। वहां विराजती थीं पूज्य श्री की विद्वत्ता विचक्षणता तथा भिन्न २
दाय के छोटे बड़े सब मुनियों के साथ यथोचित वात्सल्यता
र सम्मान पूर्वक सबको संतोष देने की अपूर्व शक्ति के कारण
पर जो आनन्द की वृद्धि और धर्म की उन्नति हुई वह आश्चर्य-
है ऐसे मौकों पर भिन्न २ मस्तिष्क के संख्याबद्ध साधु होने पर
र वात्सल्यता रहना और एक ही स्थान पर व्याख्यान होना
सब परम प्रतापी आचार्य महाराज की विचक्षणता और पुण्य
ी का ही प्रताप है।

स्वीजी श्री मुलतानचंदजी महाराज के तपश्चर्या के पूर पर पूज्यश्री के
पूर्व वैराग्य युक्त सदुपदेश से तपश्चर्या स्कंध, दया, पौषध, त्याग,
याख्यान, जीव-रक्षा आदि अनेक उपकार हुए। चार श्रावक भाइयों
ं जोड़े से ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकृत किया दूसरे भी अनेक नियम
ा स्कंधादि हुए।

उस समय एक मुनि ने २१ दो मुनिराजों ने १५ एक के १४
वास थे और तीन पचरंगी तपश्चर्या की हुई थी एक मुनिराज
गभग २० महीनों से रात्रि में शयन न कर ध्यान में बैठ रहे
ते और चाहे जैसी भी शीतऋतु हो तो भी एक ही पछेवड़ी ओढ़
ते थे।

उस मौकेपर खरवा निवासी भाई घीसूलालजी सचेती ने पूर्ण वैराग्य पूर्वक श्री पूज्यजी महाराज के पास दीक्षा ग्रहण की उस दीक्षा महोत्सव के समय करीब ४ से ५ हजार मनुष्य उपस्थित थे।

श्रीमान् गच्छाधिपति के दर्शनार्थ पंजाब, राजपूताना, मेवा मारवाड़, मालवा, गुजरात, काठियावाड़ आदि देशों के सैंकड़ो मनुष्य आये थे, जिनका तन, मन, धन से नयेनगर वालों ने भली रीति से आतिथ्य सत्कार किया था।

पूज्य श्री के पधारने से ब्यावर उस समय एक तीर्थ स्थान की नाईं होरहा था।

पूज्य श्री नयेनगर से अजमेर पधारे और जयपुर पधारने की जल्दी होने से अजमेर नगर के बाहर ही सेठ गुमानमलजी साहिब की कोठी में विराजे। परन्तु उनका पुण्य प्रभाव तथा आकर्षण शक्ति इतनी अधिक प्रबल थी कि व्याख्यान में साधुमार्गी श्रावकों के सिवाय सेकड़ों हजारों की संख्या में जैन अजैन सज्जन उपस्थित होते थे और सेठ गुमानमलजी साहिब की विशाल कोठी के बाहर के विशाल आंगन पर के चोक में भी पीछे से आने वाले को बैठने तक का स्थान न मिलता था। इस समय प्रसंगोपात पूज्य श्री ने प्राणिरक्षा के सम्बन्ध में उपदेश दिया उस पर से श्रीमान् राय बहादुर चांदमलजी साहिब की प्रेरणा से रा० ब० सेठ सोभागमलजी ब

किया। कितने ही शूद्र लोगों ने मदिरा पान का त्याग किया। ... में पूज्य श्री के व्याख्यान में हिन्दू मुसलमान बड़ी संख्या में आते और व्याख्यान का कई समय इतना प्रभाव गिरता था कि, श्रोताओं की आंख से अश्रु भी बहने लग जाते थे।

यहां से अनुक्रमशः विहार करते श्रीजी महाराज रामपुरा पधारे वहां शेषकाल लगभग एक माह तक ठहरे। बहुत उपकार और बहुत त्याग प्रत्याख्यान हुए वहां से विहार कर कंजार्डा (होलकर स्टेट) पधारे वहां संवत् १९७० के चैत्र १-३ को श्रीयुत गब्बूलालजी नाम के एक ओसवाल गृहस्थ ने छोटी वय में ही वैराग्य प्राप्त कर पूज्य श्री के पास दीक्षा ग्रहण की।

यहां से कोटा तथा शाहपुरा तरफ होकर पूज्य श्री मेवाड़ पधारे वहां उदयपुर के श्रावकों ने चातुर्मास के लिये श्रीजी महाराज से बहुत प्रार्थना की जावरा के श्रीसंघ ने भी बहुत आग्रह किया परन्तु पूज्य श्री की इच्छा रतलाम चातुर्मास करने की थी इसलिये उधर विहार किया।

पूज्य श्री के अपूर्व उपदेशामृत के पान करते मंदसौर निवासी पोरवाल गृहस्थ सूरजमलजी तथा उनकी स्त्री चतुरबाई को वैराग्य उत्पन्न हुआ और उन्होंने सं० १९७१ के वैसाख मास में सजोड़े ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया। उस समय सूरजमलजी की वय

की थी। और उनकी स्त्री की उम्र फक्त २५ वर्ष की थी। वे भर युवावस्था में ऐसी भीषण प्रतिज्ञा लेने के लिये व्याख्यान स्थान में परिषद् के खड़े हुए तब उपस्थित सज्जनों में से बहुतों आंखों से अश्रु बहने लगे थे। और कई स्त्री पुरुषों ने इन दम्पती अद्भुत पराक्रम और वैराग्य जनक दृश्य देख फुटकर स्कंध तथा आर्यो और विविध प्रकार के व्रत्त नियम किये थे। बाद चतुरबाई सं० १९७४ में और सूरजमलजी ने सं १९७६ में प्रबल वैराग्य क दीक्षा ली थी।

किया। कितने ही शूद्र लोगों ने मदिरा पान का त्याग किया। टोंक में पूज्य श्री के व्याख्यान में हिन्दू मुसलमान बड़ी संख्या में आते और व्याख्यान का कई समय इतना प्रभाव गिरता था कि, श्रोताओं की आंख से अश्रु भी बहने लग जाते थे।

यहां से अनुक्रमशः विहार करते श्रीजी महाराज रामपुरा पधारे वहां शेषकाल लगभग एक माह तक ठहरे। बहुत उपकार और बहुत त्याग प्रत्याख्यान हुए वहां से विहार कर कंजार्डा (होलकर स्टेट) पधारे वहां संवत् १९७० के चैत्र १-३ के रोज श्रीयुत गब्बूलालजी नाम के एक ओसवाल गृहस्थ ने छोटी वय में ही वैराग्य प्राप्त कर पूज्य श्री के पास दीक्षा ग्रहण की।

यहां से कोटा तथा शाहपुरा तरफ होकर पूज्य श्री मेवाड़ पधारे वहां उदयपुर के श्रावकों ने चातुर्मास के लिये श्रीजी महाराज से बहुत प्रार्थना की जावरा के श्रीसंघ ने भी बहुत आग्रह किया परन्तु पूज्य श्री की इच्छा रतलाम चातुर्मास करने की थी इसलिये उधर विहार किया।

पूज्य श्री के अपूर्व उपदेशामृत के पान करते मंदसौर निवासी पोरवाल गृहस्थ सूरजमलजी तथा उनकी स्त्री चतुरबाई को वैराग्य उत्पन्न हुआ और उन्होंने सं० १९७१ के वैसाख मास में सजोड़ ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया। उस समय सूरजमलजी की उम्र २८

वर्ष की थी। और उनकी स्त्री की उम्र फक्त २५ वर्ष की थी। वे जब भर युवावस्था में ऐसी भीषण प्रतिज्ञा लेने के लिये व्याख्यान व्याख्यान में परिषद् के खड़े हुए तब उपस्थित सज्जनों में से बहुतों की आंखों से अश्रु बहने लगे थे। और कई स्त्री पुरुषों ने इन दम्पती का अद्भुत पराक्रम और वैराग्य जनक दृश्य देख फुटकर स्कंध तथा तपश्चर्या और विविध प्रकार के व्रत्त नियम किये थे। बाद चतुरबाई ने सं० १९७४ में और सूरजमलजी ने सं० १९७६ में प्रबल वैराग्य पूर्वक दीक्षा ली थी।
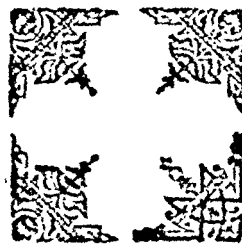
अध्याय ३३ वाँ।

संम्प्रदाय की सुव्यवस्था।

रतलाम (चातुर्मास) सं १९७१ इस समय भी पूज्य श्री के पधारने से रतलाम में आनन्दोत्सव हो रहा था, व्याख्यान में लोगों की मंडलियां की मण्डलियां आने लगी थीं। श्रीमान् पंचेड़ ठाकुर साहिब पंचेड़ा से खास पधार कर व्याख्यान का लाभ उठाते थे उपरांत राजकर्मचारीगण इत्यादि तथा हिन्दू मुसलमान बड़ी संख्या में व्याख्यान श्रवण करते और उसके फल स्वरूप रतलाम में अवर्णनीय उपकार हुए त्याग प्रत्याख्यान स्कंध तपश्चर्या इत्यादि बहुत हुई।

इस मुताबिक चातुर्मास बहुत शांतिपूर्वक व्यतीत हुआ परंतु वेदनीय कर्म की प्रबलता से कार्तिक शुक्ला १० के रोज पूज्य श्री के पांव में एकाएक दर्द जोर बढ़ गया. इसलिये मगसर वद १ के रोज पूज्य श्री विहार न कर सके। जिससे श्रीजी के दिल में ऐसा विचार हुआ कि, मेरा शरीर पग की व्याधि के कारण विहार करने में असमर्थ है इसलिये सम्प्रदाय के संख्याबद्ध संतों की संभाल जैसी चाहिये वैसी नहीं हो सकेगी और एक आचार्य की उनकी संभाल से शुद्ध संयम पलाने की पूरी आवश्यकता है।

इसलिये सम्प्रदाय को चार विभागों में विभक्त कर योग्य संतों को उनकी योग्यतानुसार अधिकार देना चाहिये ऐसा विचार कर पूज्य श्री ने सम्प्रदाय की सुव्यवस्था करने का यथोचित प्रबन्ध करना ठहराया थोड़े दिन तो पूज्य श्री के पांव में इतनी अधिक प्रबल वेदना हुई कि तनिक भी चलने फिरने की शक्ति न रही। उत्तम पुरुषों की आपत्ति चिरकाल तक नहीं रह सकती, इस न्यायानुसार थोड़े ही दिन में आराम होने लगगया। पग में दर्द तो अत्यंत था, परंतु पूज्य श्री की सहनशीलता जबरदस्त होने से वे वेदना को बहुत थोड़ी वेदते थे। ता० १५-११-१९१४ के रोज श्री जी महाराज वेदना को नहीं गिनते हुए धीमे पांव से चलकर व्याख्यान में पधारे। श्रीजी के दर्शन कर श्रावकों के आनंद की सीमा न रही, उस समय श्रीजी महाराज ने व्याख्यान में फरमाया कि मेरा विचार ऐसा है कि सम्प्रदाय के संतों की सार संभाल तथा उन्नति करना उन्हें योग्य उपालंभ या धन्यवाद देना तथा संयम में सहायता देना इत्यादि आवश्यक काम सम्प्रदाय के कितने ही योग्य संतों के सुपुर्द करदूं।

पश्चात् श्रीजी महाराज की आज्ञा से तथा रतलाम श्रीसंघ तथा जावरे से पधारे कितने ही अग्रेसर श्रावकों की सम्मति से सेठजी मिश्रीमलजी बोराना वकील ने आचार्य श्री के हुक्म मुताबिक तैयार किया हुआ ठहराव उच्च स्वर से परिषद् में पढ़ सुनाया सो निम्नाङ्कित है--

ठहराव की अक्षरसः प्रतिलिपि।

श्री जैनदया धर्मावलम्बी पूज्य श्री स्वामीजी महाराज श्री श्री १००८ श्री हुक्मचंदजी महाराजा के पांचवें पाट पर जैनाचार्य पूज्य महाराजाधिराज श्री श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज वर्त्तमान में विद्यमान हैं, उनके आज्ञानुयायी गच्छ के साधु एकसौ झाझेरा के करीब हैं उनकी आज तक शास्त्र व परम्परायुक्त सार सम्भाल आचार गोचरी वगैरह की निगरानी यथाविधि पूज्य श्री करते हैं, परंतु पूज्य महाराज श्री के शरीर में व्याधि वगैरह के कारण से इतने अधिक संतों की सार सम्भाल करने में परिश्रम व विचार पैदा होता है इसलिये पूज्य महाराज श्री ने यह विचार पूर्वक गच्छ के संत मुनिराजों की सार सम्भाल व हिफाजत के वास्ते योग्य संतों को मुकर्रर कर प्राय: करतालुक संतों को इस तरह सुपुर्दगी कर दिये हैं कि वह अग्रेसरी संत अपने गण की सम्भाल सब तरह से रक्खें और कोई गण की किसी तरह की गलती हो तो ओलम्भा वगैरह देकर शुद्ध करने की कार्यवाही का इन्तजाम करें फक्त कोई बड़ा दोष होवे और उसकी खबर पूज्य महाराज श्री को पहुंचे तो पूज्य श्री को उसका निकाल करने का अख्तियार है सिवाय इसके जो जो अग्रेसरी हैं वे थोक आज्ञा चातुर्मासादि की पूज्य महाराज श्री से अवसर पाकर ले लेवें।

इसके सिवाय जे कोई संत निचले के गणों से सबब पाकर ...ज होकर पूज्य श्री के समीप आवे तो पूज्य महाराज श्री को ...ी योग्य कार्यवाही मालूम होवें वैसी करें अख्तियार पूज्य ...राज श्री को है और पूज्य महाराज श्री का कोई संत चला ...वे तो वे अग्रेसर विना पूज्य महाराज श्री के उससे संभोग न ... इसके सिवाय आचार गोचार श्रद्धा परूपणा की गति है वह ...क्ष की परम्परा मुताबिक सर्वगण प्रतिपालन करते रहें ।

यह ठहराव शहर रतलाम में पूज्य महाराज श्री के मरजी के ...फूज हुआ है सो सब संघ को इसका अमलदरामद रखना ...हिये ।

गणों के अग्रेसरों की खुलावट नीचे मुताबिक है ।

(१) पूज्य महाराज श्री के हस्त दीक्षित अथवा पूज्य महाराज ...की खास सेवा करने वालों की सार सम्भाल पूज्य महाराजश्री करेंगे ।

(२) स्वामीजी महाराज श्री चतुर्भुजजी महाराज के परि- ...में हाल वर्त्तमान में श्री कस्तूरचन्दजी महाराज बड़े हैं आदि दाने ...मन्त हैं उनकी सार सम्भाल की सुपुर्दगी स्वामीजी श्री मुन्ना- ...लजी महाराज की रहे ।

(३) स्वामीजी महाराज श्री राजमलजी महाराज के परि-

वार में श्री रतनचन्दजी महाराज के नेश्राय के सन्तों की सुपुर्दगी श्री देवीलालजी महाराज की रहे।

(४) पूज्य श्री चौथमलजी महाराज साहिब के परिवार सन्तों की सुपुर्दगी श्री डालचन्दजी महाराज की रहे।

(५) स्वामीजी श्री राजमलजी महाराज के शिष्य घासीरामजी महाराज के परिवार में जवाहिरलालजी सार सम्भ करें।

ऊपर प्रमाणे गण पांच की सुपुर्दगी अग्रेसरी मुनिराजों को है सो अपने २ संतों की सार सम्भाल व उनका निभाव करते र

यह ठहराव पूज्य महाराज श्री के सामने उनकी राय मुता हुआ है सो सब संघ मंजूर कर के इस मुताबिक वर्ताव करें।

उपरोक्त ठहराव सुन कर श्री संघ में हर्षोत्साह की अभि वृद्धि हुई थी। उस समय रतलाम में मुनिराज ठाणा २५ त आर्याजी ठाणा ६० के क़रीब विराजमान थे।

इस चातुर्मास में श्वे० मूर्तिपूजक जैनों के अग्रेसर सुप्रसि साहिब सेठ केसरीसिंहजी कोटावाला भी श्रीजी की सेवा में दार तक आये थे और वार्तालाप के परिणाम स्वरूप अत्यंत आन

शीत किया था दूसरे भी कितने ही मंदिरमार्गी भाई आते थे और प्रश्नोत्तर तथा चर्चा वार्ता कर आनंद पाते थे।

पूज्य श्री के पांव में कुछ आराम हुआ। सं० १६७१ के मार्गशीर शुक्ला ५ के रोज दोपहर को श्रीजी ने रतलाम से विहार किया वहां से जावरे पधारे। उस विहार के समय इस पुस्तक का लेखक उपस्थित था, रतलाम से एक कोष दूरी के ग्राम में पूज्य श्री ठहरे थे और संख्याबद्ध श्रावक वहां दर्शनार्थ पधारे थे और सुबह को उपदेश श्रवण करने के लिए रात भर वहां ठहरे थे। छोटे ग्राम में मकान की तो व्यवस्था थी रात को ठंड होते भी भविजन श्रावकों की लम्बी कतार की कतार श्रद्धा के स्थान में आनंद से निद्रा लेती हुई सो रही थी सौभाग्य से यह दृश्य मुझे देखने का अवसर प्राप्त हुआ और अश्रुओं से नेत्र भीज गए। तुरंत वकील मिश्रीलालजी के साथ गाड़ी में रतलाम पीछे आये और तीन चार गाड़ी जाजमें ले गांवड़े गए और जीव जंतु या ठंढ की परवाह न करते खुली शैया, शरियों में सोई हुई कतार को जाजमों से ढांक ठंड से संरक्षा की थी।

अध्याय ३४ वाँ ।

आत्म-श्रद्धा की विजय ।

जावरा के श्रावकों की चातुर्मास के लिए बार २ अत्याग्रह पूर्व अर्ज करने पर भी उनकी विज्ञप्ति मंजूर न हो सकी थी इसलि वहां के श्रावक जनों के अंतःकरण बड़े दुःखित हुए थे, उन प्रफुल्लित करने के लिये इस समय आचार्य महाराज जावरे में ए मास शेष काल विराजे थे ।

जावरे में जिस समय पूज्य श्री महाराज व्याख्यान फरमा थे तब एक श्रावक ने खबर दी कि नवाब साहिब ने सब कुत्तों बंदूक से मार डालने का पुलिस को आर्डर दिया है तदनुस बाज़ार में एक दो कुत्ते मारे भी गए हैं और अभी तक सिपा मारने की फिक्र में बंदूक लिए घूम रहे हैं। श्रीजी महाराज ने आप व्याख्यान में यह विषय उठा लिया और अत्यन्त असरकार उपदेश दिया तथा श्रावकों से फरमाया कि तुम इस हिंसा रोकने का प्रयत्न क्यों नहीं करते हो ? अग्रेसर श्रावकों ने कहा महाराज ! हमने बहुत प्रयत्न किये परन्तु सब विफल हुए, उ समय पूज्य श्री ने फरमाया कि जो तुम में दृढ़ आत्मबल हो, तु

अटल आत्मश्रद्धा, आत्मशक्ति का विश्वास हो और तुम परोपकार के लिए आत्मभोग देने को तैयार हो तो तुम्हारा प्रयत्न क्यों न सफल ? अवश्य हो। अभी ही तुम यह दृढ़ प्रतिज्ञा करो कि जबतक यह हिंसा न रुकेगी हम अन्न पानी ग्रहण न करेंगे, सिपाही जब तुम्हारे सामने कुत्तों पर गोली चलावें तब तुम निडर हो कह दो कि प्रथम हमारे शरीर को गोली से बींध दो और फिर हमारे कुत्तों पर गोली छोड़ो, अगाध मनोबल और अखूट आत्मबल वाले इन महान् पुरुष के मुखारविंद से निकले हुए इन शब्दों ने श्रोताओं के हृदय पर अद्भुत प्रभाव जमाया, पूज्य श्री के सदुपदेश से ऐसी सचोट असर हुई कि उसी समय कई श्रावकों ने खड़े हो महाराज श्री के पास यह हिंसा न रुके वहां तक अन्न पानी लेने का त्याग कर दिया व्याख्यान के पश्चात् कई श्रावक इकट्ठे हो नवाब साहिब के पास गए और अर्ज की कि हमें जीवित रखना चाहते हो तो हमारे आश्रित इन कुत्तों को भी जीने दो और हमारे प्राण की आपको परवाह न हो तो हम भी कुत्तों के लिए प्राण देने को तैयार हैं इस हमारी विनय पर गौर फरमा कर जैसा आपको योग्य जचे वैसा करो, नवाब साहिब के पास व्याख्यान की हकीकत प्रथम ही पहुंच चुकी थी, वे अत्यन्त प्रजावत्सल थे, उन्होंने महाजनों की अर्ज शांतिपूर्वक सुन जल्द ही न मारने का आर्डर निकाला।

कलकत्ते की खास कांग्रेस में लाला लाजपतिराय ने अध्यक्ष की हैसियत से जिन शब्दों की गर्जना की थी उन शब्दों का स्मरण यहां हो आता है "आप अपनी आत्मा में दृढ़ श्रद्धा रक्खें अपने हृदय में कितना ज्वलन होरहा है इसके ऊपर कितने अग्रेसर बलिदान होने को तैयार हैं, आम लोगों में से कायरता कितने अंश में भगी है। शुद्ध भाव से अग्रेसर होने और शुद्ध भाव से दौड़ने वाले अग्रेसरों के पीछे चलने की शक्ति अपने में कितने अंश तक आई है उन सब बातों पर अपनी विजय का आधार है।"

जावरा की यह बात जो कि बिलकुल छोटी थी तो भी छोटी छोटी बातों से आत्मश्रद्धा की सीढ़ियां चढ़ने लगें तो मौका आने पर परमात्मा के संदेश को भी झेल सकेंगे। एक विद्वान् का कथन है कि—आत्मश्रद्धा द्वारा ही मनुष्य प्रत्येक कठिनाई जीत सक्ता है। आत्मश्रद्धा ही रंक मनुष्य का महान् मित्र और उसकी सर्वोत्तम सम्पत्ति है। पाई की भी विना सम्पत्ति वाले आत्म श्रद्धावान् मनुष्य महान् से महान् कार्य कर सकते हैं। और विना आत्म-श्रद्धा के करोड़ों की पूंजी भी निष्फल गई है।

पूज्य श्री जावरे में विराजते थे उस समय श्री देवीलालजी महाराज भी जावरे पधारे और श्रीजी महाराज से मंदसोर पधारने का आग्रह किया, परन्तु उनके अमुक कौल क़रार को पकड़ कर

मंदसोर पधारना श्रीजी ने नामंजूर किया। उस समय श्रीमान् सेठजी अमरचंदजी साहिब पीतालिया पूज्य श्री की सेवा का अंतिम लाभ लेने जावरे पधारे थे। उन्होंने मौका देख इन साधुओं को शुद्धकर आहार पानी इत्यादि व्यवहार पुनः प्रारंभ करने की विज्ञप्ति की। और मंदसोर पधारने के लिये पूज्य श्री से आग्रह किया। तब पूज्य श्री वहां से विहार कर मंदसोर पधारे और जैनशास्त्र की रीत्यनुसार आलोचना कर प्रायश्चित्त लेने के लिये फरमाया, परन्तु पूज्य श्री के मनको संतोष हो उस अनुसार संतोषकारक रीति से उन साधुओं ने स्वीकृत नहीं किया। इसलिये पूज्य श्री ने वहां से विहार कर दिया। परन्तु धन्य है इन महापुरुष की गंभीरता को कि इतनी अधिक बात होते भी पूज्य श्री ने उक्त सम्बन्ध में किसी तरह प्रकट निंदा स्तुति न की, इसी तरह इन साधुओं को सम्प्रदाय से अलग किये हैं इसलिये इन्हें आव आदर न देने बाबत भी कुछ कहा सुनी न की, न उनका बुरा चाहा। पूज्य महाराज श्री का इतना ही खयाल था कि वे भी किसी प्रकार का ममत्व त्याग शास्त्रानुसार समाधान कर अपना आत्महित साधें।

मंदसोर से क्रमशः विहार करते हुए पूज्य श्री मेवाड़ में पधारे और श्री उदयपुर श्रीसंघ की विनन्ती स्वीकृत कर पूज्य श्री ने सं० १९७२ का चातुर्मास उदयपुर में किया।

अध्याय ३५ वाँ।

उदयपुर का अपूर्व उत्साह।

उदयपुर में पंचायती नोहरे के नाम से प्रसिद्ध एक विशाल मकान है, वहां हर वर्ष मुनिराजों के चातुर्मास होते थे परन्तु पूज्य श्री के चातुर्मास की प्रथम उम्मीद न होने से तथा तेरापंथी के पूज्य श्री कालूरामजी का उदयपुर चातुर्मास पहिले से ही मुकर्रर होजाने से तेरापंथियों ने पहिले से ही पंचायती नोहरे की मंजूरी लेली थी इसलिये पूज्य श्री के चातुर्मास के लिये ऐसा ही कोई दूसरा आलीशान मकान ढूंढने के लिये उदयपुर श्री संघने प्रयत्न किया, कई उमराव लोगों ने हमारे मकान में "पूज्य श्री विराजें" ऐसी इच्छा दर्शाई, परंतु व्याख्यान के लिये चाहिए जैसी सोयदार जगह न मिलने से उदयपुर के महाराणा साहिब कुमलगढ़ विराजते थे। वहां उनके चरणारविंद में अर्ज कराई उस पर से कमल पर के महलों के पास जो फराशखाना अर्थात् जूना हास्पिटल है उसके लिये उन्होंने आज्ञा देदी।

इस आलीशान मकान में श्रीमान् पूज्य महाराज श्री चातुर्मास के लिये पधारे वहां पधारते ही व्याख्यान के लिये पूज्यश्रीने फराशखाने के

ाहर की जगह पसंद की कि, जिससे फ़ाशखाने के अंदर तथा
ाहर हजारों लोगों का समावेश होसके, यहां पूज्य श्री की अमृत
ाणी सुनने के लिये सरे आम रास्ते पर लोगों की इतनी अधिक
भीड़ इकट्ठी होती थी कि राह में चलना फिरना कठिन होजाता
था।

तपस्वीजी श्री मांगीलालजी महाराज ने ४५ उपवास किये थे
और दूसरे छः साधुओं ने मास-भक्षण (महीना २ के उपवास)
किये थे, एक साधु के ३४ उपवास थे तथा एक साधु ने २१
उपवास किये थे उस समय श्रीमान् हिंदवा सूरज महाराणा साहिब
ने कृपाकर श्रावण वद १ के रोज अगते पलाने का हुक्म फर-
माया, जिससे कसाईखाने, कलालों की दुकाने, तेली, भड़भूंजे
हलवाई, छींपा (रंगरेज) इत्यादि की दुकानें बंद रही थीं.

महाराज ने ४५ उपवास का पारणा किया तब सैकड़ों अभ्या-
गत गरीब दीनों को श्री संघ की ओर से भोजन मिठाई इत्यादि
खिलाने का प्रबन्ध कर उन्हें संतुष्ट किये थे। तथा कपड़े बांटे थे
इसके सिवाय बकरों को अभयदान देने के लिये एक फंड कायम
किया था जिससे करीब ४००० (चार हजार) बकरों को अभय-
दान दिया था, श्रीमान् कोठारीजी बलवंतसिंहजी साहिब ने अपनी
तरफ से ८० बकरों को अभयदान दिया था, इस के पश्चात नान

प्रकार के व्रत प्रत्याख्यान तथा स्कंध इत्यादि बहुत हुये थे।

पारणा के दिन बेदला के रावजी श्री नाहरसिंहजी साहिब ने भी अगता पलाया था, पूज्य श्री के सदुपदेश से उदयपुर के श्री संघ ने ज्ञातिके जीमणवार रात को न करते दिन को करने का ठहराव पास किया तथा पक्वान्नादि बनाना भी दिन को ही ठहरा था।

उस चातुर्मास में बाहरके देशोंसे उसी तरहसे मेवाड़ के समीपके ग्रामों से कई लोग नित्य दर्शन को आते थे। आसोज सुदी में क़रीब ६०००-७००० आदमी व्याख्यान में जमा होते थे और आने वाले श्रावकों के लिये, भोजन तथा उतरने वगैरह का कुल प्रबन्ध उदयपुर संघ की ओर से प्रशंसापात्र था। इतने अधिक मनुष्य कभी भी किसी चातुर्मास में एक साथ जमा न हुए थे। उदयपुर में दशहरे की सवारी अधिक धूमधाम से निकलती है और उदयपुर के तमाम सरदार ठाकुर इत्यादि अपने लवाजमे के साथ हाजिर होते हैं एक तो पूज्य श्री के चातुर्मास का योग अर्थात् अमृतमय वचनामृतों का लाभ दोनों समय मनोच्छित मिष्ठान्न के जीमन और उतरने, पानी वगैरह की सोय, इन कारणों से इस चातुर्मास में आने वालों की संख्या बढ़गई थी कि ऐसा मौका अगर दूसरे ग्रामों में आता तो लोग घबड़ा जाते, श्रीमान् कोठारीजी साहिब

की हिम्मत और ऐसे कुशल काटन के नीचे काम करने वालों का अविश्रांत श्रम और पूज्य श्री का प्रभाव इत्यादि कारणों से वे अपनी प्राचीन प्रतिष्ठा रख सके, एक ही पंगत में इतनी अधिक जनसंख्या को गरमागरम रसोई जिमा स्वागत करने में उदयपुर के श्रावक व्याख्यान का लाभ भी छोड़ देते, राज्य की कचहरियों में काम काज बंद रख श्रीमान् कोठारीजी साहिब को शिफारिश से मिहमानों को उतरने का प्रबंध भी अच्छा हुआ था। लोग कहते थे कि पूज्य श्री का चातुर्मास कराना मानों हाथी बांधना है, खर्च से भी श्रम अधिक, इसलिए छोटे गांव वाले बिचारे हिम्मत भी न करते थे।

दर्शन करने के लिये बहु संख्यक जनों का आना और पंचायती भोजनगृह में भोजन कर घूमते रहना इस महंगाई के जमाने में कठिन हो जाता है, कांगड़ी हरद्वार और दूसरे स्थानों में गुरुकुल इत्यादि के उत्सवों पर या महात्मा के दर्शनों की अभिलाषा से लोग बड़ी संख्या में इकट्ठे होते हैं, परंतु आप अपनी रसोई का इंतिजाम स्वयं ही कर लेते हैं, स्थानिक स्वधर्मियों को भाररूप नहीं होते हैं। हां! स्वामी वात्सल्य का अमूल्य लाभ लेनेको श्रावक ललचाते हैं, परन्तु सब सीमांतर्गत ही ठीक लगता है। अति योग का परिणाम अनिष्ट होता है। आने वाले के उतरने की व्यवस्था कर देना तथा जिस दिन आवें उस दिन स्वागत कर देना इतना ही

प्रबंध कर बाकी के दिनों की सोय आने वाले ही कर लिया करें तो जहां चातुर्मास हो वहां के श्रावक भी महात्मा के वचनामृतों का लाभ ले सकें।

कितने ही श्रावक तो यहां पूज्य श्री की सेवा में बहुत दिन तक अलग मकान लेकर रहे थे। श्रीमान् बालमुकुंदजी साहिब सतारे-वाले तथा श्रीयुत वर्द्धभानजी साहिब पीतालिया इत्यादि जानकार श्रावक पूज्य श्री के साथ ज्ञानचर्चा कर अलभ्य लाभ उठाते थे, एक समय सेठ बालमुकुंदजी साहिब "बावीश समुदाय गुणविलास" नाम की एक पुस्तक, कि जो बीकानेर में छपी है, लेकर पूज्य श्री के पास आये और उसकी प्रस्तावना पढ़ सुनाई और श्रीजी से प्रश्न किया कि क्या यह सब आपकी सम्मति से लिखा गया है? तब श्रीजी महाराज ने फरमाया कि यह पुस्तक किसने कब लिखी और किसने छपाई, इस सम्बन्ध में मैं कुछ भी नहीं जानता, सदर पुस्तक की प्रस्तावना में पूज्य श्री के नाम का आश्रय ले एक यति ने अपनी कितनी ही मानताएं पुष्ट करने का प्रयत्न किया है जिस से कितने ही श्रावकों के चित्त शंकाशील बन गए थे, परंतु श्रीजी महाराज के इतने संतोषकारक रीतिसे खुलासा करने पर सब लोगों का भ्रम दूर हो गया।

पूज्य श्री ने बाललग्न से कितनी २ हानियां होती हैं और योग्य वय तक विशुद्ध ब्रह्मचर्य का पालन करने से कितने महान् लाभ

होते हैं उसका ऐसा असरकारक विवेचन किया था कि, कई श्रावकों ने १८ वर्ष पहले पुत्र के और १३ वर्ष पहिले पुत्री के लग्न न करने की प्रतिज्ञा ली थी ।

इस वर्ष तेरहपंथियों के पूज्य श्री कालूरामजी तथा तपगच्छीय आचार्य श्री विजयधर्म सूरिके चातुर्मास भी उदयपुर में थे । और उनके कितने ही श्रावक हर प्रकार से क्लेशोत्पादक प्रवृत्तियां करते थे, परंतु यह क्षमा का सागर कभी भी न झलका । श्रावक परस्पर अत्यंत टेक्टबाजी करते थे, परन्तु आचार्य श्री ने चित्तशांति संपूर्णता से धार रक्खी थी । अपने श्रावकों को भी शांति में स्थित रहने का शतत उपदेश देते थे । अपनी बहादुरी बताने के खयाल को दूर रख पूज्य श्री संयम का संरक्षण करते थे । किसी भी तौर से इन्होंने क्लेश वृद्धि को उत्तेजन न दिया । उलटे ऐसा करने-वालों को समझा प्रतिज्ञा कराते थे । जिससे वे लोग स्वयं नम्र हो पूज्य श्री से विनय करने लगे थे, इतना ही नहीं परंतु जब उन श्रावकों को पूज्य श्री का परिचय होता तब वे उन पर भक्तिभाव दर्शाते थे ।

श्रीमान् महाराणा साहिब भी पूज्य श्री की शांतवृत्ति की प्रशंसा सुन बहुत आनन्दित हुए और कभी २ अपने आफीसर लोगों से प्रश्न करते कि, आज व्याख्यान में क्या फरमाया ।

सं० १९७२ के मंगसर वद १ के रोज पूज्य श्री ने विहार किया उस समय उनके पांव में असह्य वेदना थी, श्रावक लोगों ने ठहरने के लिए अत्याग्रह पूर्वक बहुत २ अर्ज की, परन्तु पूज्य श्री ने फरमाया कि "मेरी चलेगी वहां तक मैं कल्प नहीं तोडूंगा" उस दिन वे अत्यन्त कठिनाई से चलकर सूरजपोल महंतजी की धर्मशाला में विराजे और वहां लशकर तरफके एक अग्रवाल श्रीयुत् ब्रजमोहन लाल ने उत्कृष्ट वैराग्य से पूज्य श्री के पास दीक्षा ग्रहण की, महाशय दिगम्बर मतानुयायी थे सं० १९७२ के चातुर्मास में उन्हें पूज्य महाराज का परिचय हुआ था, दीक्षा बहुत धूमधाम से हजारों मनुष्योंकी उपस्थिति में हुई थी, संवत् १९७५ में ब्रजमोहन लालजी का स्वर्गवास होगया है।

तत्पश्चात् महाराज श्री ने उदयपुर से चार कोस दूर गुरुड़ीके तरफ विहार किया, गुरुड़ी की ओसवाल समाज में दो तड़ें थ पूज्य श्री के उपदेश से तड़ें मिट एकता होगई।

वहां से पूज्य श्री ऊंटाले पधारे वहां ४० बकरों को ऊंटाल पंचों ने तथा १०० बकरों को ऊंटाले के पटैल दला गागड़ी वाड़ वाले ने अभय-दान दिया।

सं० १९७२ के उदयपुर के चातुर्मास दरम्यान एक अंग्रेज अमलदार कांटा वाले टेलर साहिब, कि जो समस्त मेवाड़के आपियम

ग्रेन्ट थे वे पूज्य श्री के दर्शनार्थ कई समय आये थे और पूज्य श्री का व्याख्यान बहुत प्रेम-पूर्वक सुना करते थे, इतना ही नहीं परन्तु व्याख्यान के पश्चात् दूसरे समय भी वे पूज्य श्री के पास आते और तात्विक विषयों पर प्रश्नोत्तर तथा धर्म-चर्चा चलाते थे, इस महानुभाव अंग्रेज ने पक्षी वगैर जानवरों को न मारने की प्रतिज्ञा ली थी।

दूसरे एक अंग्रेज़ पादरी रेवरंड डो जेम्स शेपर्ड एम. डी. डी. डी. कि जो वयोवृद्ध और समर्थ विद्वान् हैं और अभी जो बिलायत गए हैं वे भी महाराज श्री के दर्शनार्थ आये थे। महाराज श्री के साथ वार्तालाप करने से उन्हें अपार आनन्द हुआ और वे अपने पास की एक पुस्तक महाराज श्री को भेट करने लगे, परन्तु महाराज श्री ने उसका स्वीकार न किया। साधु के कड़े नियमों से साहिब आश्चर्य चकित होगए।

इस चातुर्मास में एक दिन पूज्य श्री ने धार्मिक शिक्षा की आवश्यकता दिखाते हुए बहुत असरकारक उपदेश दिया और लघु-वय से ही बालकों के हृदय पर धर्म की छाप गिराने की आवश्यकता दिखाई। उपदेश के असर से उदयपुर के सब बालकों को शिक्षा देने के लिए एक पाठशाला खोली गई। भाई रतनलालजी मेहता के परिश्रम से यह पाठशाला वर्तमान समय में अच्छी तरह

चलती है। इस पाठशाला में धार्मिक के साथ व्यावहारिक शिक्षा भी दी जाती है इसलिए मा बाप अपनी संतानों को ऐसी पाठ-शाला में भेजने के लिए ललचाते हैं।

शिक्षाखाते में कितना ही व्यर्थ भार इतना बढ़ गया है कि, खास धार्मिक शिक्षा देनेवाली शालाओं में भी विद्यार्थियों का मन आकर्षित नहीं होता और उतना समय भी नहीं मिलता। काठिया-वाड़ की जैन-शालाएं सम्पूर्ण सफल नहीं होती उसका यही कारण है।

धार्मिक व्यवहारिक और राष्ट्रीय शिक्षा एक ही स्थान पर प्राप्त हो ऐसी पाठशालाएं स्थापित की जाय तब ही अपना आशय सिद्ध होगा, तो भी धर्म के संस्कार बालवय से ही संतानों में सींचने की लापरवाही न रखनी चाहिए।

द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, देश कालानुसार व्यावहारिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा की योजना होने से उच्च भावना की लहर रग २ में प्रसर जाती है। बारहव्रतादि जैन-नियम जो व्यवहार वैद्यक और नीति शास्त्र के अनुसार ही योजित हुए हैं उनका सत्य रहस्य समझाने एवं इस अमृत के पान के कराने वास्ते जमाने के अनुकूल और आकर्षक शिक्षापद्धति बांधी जाय तो अपने भविष्य-रत्न उसमें चंचुपात करने को अवश्य ललचायंगे। श्रीयुत देशाई सत्य कहते हैं कि मनुष्य उत्क्रांति पाकर पशु आदि प्रवृतियों से निवृ

मनुष्य-जीवन में दाखल हुआ है उसे दिव्य जीवन कैसे बिताना और उस दिव्य जीवन को बिता सिर्फ आनन्दमय जीवन सत्चिद् ानंदमय जीवन अंतमें किस रीतिसे प्राप्त करना, यही सिखाना र्म है"।

धर्म-ज्ञान प्रचार की प्रभावना में महान पुण्य समाया हुआ इसलिये एक लेखक योग्य उद्गार निकालता है कि "It is he duty of the thought-ful among the Jains to see hat a healthy knowledge of the valuable and basic rinciples of Janism is spread liberally." सर नारायण न्डावरकर लिखते हैं कि "सिर्फ बुद्धि के खिलने की क़ीमत हीं, अंतःकरण भी खिलना चाहिये। समाज, देश तथा जगत्की ांति के लिये हृदय की शिक्षा हृदय के विकास की आवश्यकता और जबतक प्रजा के हृदय विकसित न होंगे वहांतक सच्ची ान्ति कभी नहीं आसकी।

यूरोप में जड़-बल का जोर और आध्यात्मिक बल की अनुपस्थिति लड़ाई के समय प्रकट होजाती है.........जड़बल पर आध्यात्मिक बल का प्रभुत्व होना अवश्य जरूरी है, जब तक इस बल की सत्ता न फैलेगी वहां तक कायम की सुखद शांति हाथ-गोचर नहीं हो सकती।

अध्याय ३६ वाँ ।

शिकार बंद ।
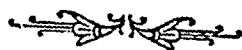
नयेनगर के आसपास का पहाड़ी प्रदेश, कि जो मगरे जिले के नाम से प्रसिद्ध है वहां के सैकड़ों ग्रामों के वाशिंदे मेर लोग, जमीनदार और पशुपालक तथा अन्य जाति के हजारों मनुष्य होली के त्यौहारों में शिकार करते और तीन दिन तक पहाड़ों में घूम निरपराधी पशु पक्षियों को मारते थे। सब दिन भर तमाम पहाड़ियों में इधर उधर दौड़ते और छोटा या बड़ा, भूचर या खेचर, जो प्राणी नजर आता उसे जान से मार डालते थे। वे जंगल में इधर उधर दौड़ते तो झाड़ झाड़ियों से उनका शरीर भी लोही लुहान होजाता था। यह घातकी और जंगली रिवाज बहुत समय से इन लोगों में प्रचलित था और जिसके कारण प्रतिवर्ष लाखों निरपराधी जीवों का संहार हो जाता था।

सं० १९७२ के फाल्गुन मास में पूज्य श्री नयेशहर पधारे, तब मगरे जिले के कितने ही जमीनदार भी श्रीजी के व्याख्यान में आये। मौका देख पूज्य श्री ने जीवदया के सम्बन्ध में ऐसा असरकारक और हृदय-विदारक उपदेश दिया कि जिसे सुनकर

पत्थर जैसा हृदय भी पिघल जाय, इस उपदेश का उपस्थित जमींदारों के हृदय पर भी बहुत भारी असर हुआ और उन्हें अपने पापकृत्यों के कारण बहुत २ पश्चाताप होने लगा। व्याख्यान समाप्त होने पर महाराज श्री ने तथा महाजनों के अग्रेसरों ने इन लोगों को यह पापी रिवाज बंद करने की कोशिश करने के लिए समझाया, तब कितने ही लोगों ने तो ऐसा करने के लिए प्रसन्नता पूर्वक हां कहा, परन्तु कितने ही जमींदारों ने महाजनों से ऐसी दलील की कि आप महाजन लोग हमारे पर तनिक भी दया नहीं करते, उधार दिये हुए रुपयों के व्याज में एक के दूने तिगुने दाम ले लेते हो और जब कर्जा वसूल करना हो तब भी दया नहीं रखते।

यह सुन उपस्थित महाजन लोगों ने ऐसी प्रतिज्ञा की कि हर मास प्रति सैकड़ा १||) रुपया से ज्यादा व्याज हम कदापि तुमसे न लेंगे। इसके उत्तर में जमीनदारों ने वचन दिया कि हम भी शिकार नहीं करने का बंदोबस्त करेंगे। दूसरों को उपदेश देने के पहिले अपना आचार शुद्ध होना चाहिए, 'परोपदेशे पांडित्यं' इस जमाने में नहीं चल सकता, पहिले अपने पांवपर घाव सहन करना सीखो।

पश्चात् उन जमीनदारों तथा महाजनों में से कितने ही उत्साही सज्जनों के संयुक्त प्रयत्न से थोड़े दिन बाद कई ग्रामों के मिल करीब २०० जमीनदार ब्यावर में आये, उन्हें महाजनों की तरफ

से प्रीतिभोज दिया गया, पूज्य श्री के अपूर्व उपदेश के असर से ग्रा लोगों ने जीवहिंसा न करने तथा शिकार न चढ़ने की प्रतिज्ञा ले और तत्सम्बन्धी दस्तावेज भी महाजन की बही में कर दिये औ महाजनों ने भी डेढ रुपये से अधिक व्याज न लेने का दस्तावेज उन्हें लिख दिया।

पश्चात् 'झाक' नामके एक ग्राम को ब्यावर से श्रीयुत पन्ना लालजी कांकरिया, श्रीयुत केसरीमलजी रांका इत्यादि २० गृहस्थ गए और वहां के जमीनदारों के हृदय में श्रीमान् पूज्य महाराज के उपदेश का असर पहुंचा ऐसा ठहराव किया कि मौजे 'झाक' के पटेल, नम्बरदार, ठाकुर, पन्ना, दल्ला, धीरा, इत्यादि तीन शिकारों में से एक शिकार आद औलाद (पीढी दर पीढी) तक न चढ़ें, मौजे झाक के ताबे में शामगढ़, लुलवा इत्यादि करीब १०० गाम हैं उन सब में इसी अनुसार ठहराव हुआ उसके बदले में एक हताई (चबूतरा) बंधा देने तथा अफीम, तम्बाकू, ठंढाई एक दिन के लिए देने * बाबत महाजनों ने स्वीकार किया और परस्पर दस्तावेज कर सही दी ली गई।

---

* सं० १९७६ में श्रीमान् आचार्य महाराज शेषकाल ब्यावर में पधारे थे, तब शिकार की निगरानी के लिये आहेड़े के पांच दिन पहिले महाजनों में से करीब ४०–५० स्वयंसेवक गृहस्थ

उपरोक्त बंदोबस्त होने से हजारों लाखों जीवों को अभयदान मिलने लगा और सैकड़ों लोग पाप की खाति में गिरते कई अंश में बचगए।

इस मुजिब पूज्य महाराज श्री के यहां पधारने से अत्यन्त उपकार हुआ। तथा यहां के ओसवाल भाइयों में कुसम्प थी जिससे तीन तड़ें होगई थीं और साधुमार्गी मंदिरमार्गी भाइयों में भोज सम्बन्ध में मतभेद हो परस्पर मन दुखित होगया था, परन्तु श्रीमान् आचार्यजी महाराज के पधारने से उनके व्याख्यान का लाभ शाह उदयमलजी तथा शाह धूलचंदजी कांकरिया इत्यादि कितने ही मंदिरमार्गी सज्जन लेते थे। महाराज श्री के सदुपदेश के प्रभाव से बिरादरी में एकमत हो तीन तड़ें इकठ्ठी होगईं और छोटे बड़े सब झगड़ों का परस्पर समाधान पूर्वक अंत हो बिरादरी में कुसम्प की जगह सुसम्प स्थापित होगया।

मौजे झाक गए और उन्होंने जमीनदारों से कहा कि तुम हताई बनवालो और उसमें जो खर्च लगे वह हम से लेओ; तब लोगों ने कहा कि हमने हममें से चन्दा कर हताई बनाना ठहरा लिया है इसलिये महाजनों से इसका खर्च न लेंगे और जो आहेड़ श्री पूज्यश्री महाराज के उपदेश से हम लोगोंने छोड़ी है उसका बराबर अमल करते हैं और करावे रहेंगे।

अध्याय ३७ वां।

मारवाड़ में उपकारी विहार।

ब्यावर से पूज्य श्री अजमेर पधारे और सुजानगढ़ की तरफ बीकानेर के श्रावक पोखरमलजी कि जो हजारों रुपयों की छती सम्पत्ति त्याग प्रबल वैराग्यपूर्वक पूज्य श्री के पास दीक्षित होने वाले थे, उन्हें दीक्षा देने के लिये उधर पूज्यश्री जल्द पधारने वाले थे, परन्तु श्रीमान् जैनाचार्य श्री रत्नचंद्रजी महाराजकी सम्प्रदाय के आचार्य श्री विनयचंद्रजी महाराज का स्वर्गवास होगया था, उनकी जगह आचार्य स्थापित करने थे, इसलिये श्रीमान् पंडितराज श्री चन्दनमलजी महाराज ने यह कार्य श्रीमान् की सहानुभूति से सफल करनेकी अर्ज की, इसलिये श्रीजी महाराज अजमेर रुके और हजारों मनुष्यों की भीड़ में श्रीमान् शोभाचंदजी महाराज को विधिपूर्वक आचार्य पदारूढ करने की क्रिया में उपस्थित रह चतुर्विध संघमें अपूर्व आनंद मंगल वरताया। दोनों सम्प्रदायों के साधुओं में परस्पर इतना अधिक प्रेमभाव देखा जाता कि उसे देख अपना हृदय आनंद से उभराये विना न रहता। इस अवसर पर श्रीमान् आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज ने आचार्य श्री की

वाबदारी, दीर्घदृष्टि और कर्तव्य विषय पर समय के अनुकूल त्यन्त उत्तम रीति से विवेचन किया और श्रीमान् शोभाचंदजी हाराज ने स्थविर मुनि श्री चंदनमलजी महाराज द्वारा ाचार्य की पछेवड़ी ओढ़े बाद समयोचित व्याख्यान दिया था। समें पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के अनुपम उदार गुणों की कंठ से प्रशंसा की थी। आचार्य श्री शोभाचंदजी महाराज ने यं पूज्य श्री श्रीलालजी का ऋणी रहूंगा ऐसा कहा था। हम ाशा करते हैं कि पूज्य श्री शोभालालजी साहिब तथा उनकी सं-प्रदाय के साधु और श्रावक अपने वचनानुसार पूज्य श्री के परि-ार पर ऐसा ही भाव रक्खेंगे।

अजमेर से उग्र विहार कर श्रीजी महाराज बीकानेर होकर सुजानगढ़ पधारें। और वहां सं० १९७२ के फाल्गुन शुक्ला ६ को शुक्रवार के रोज श्रीमान् पनेचंदजी संघवी के बनाये हुए मंदिर में बीकानेर निवासी श्रीयुत पोखरमलजी को दीक्षा दी। आपकी उम्र उस समय सिर्फ २० वर्ष की थी। आपका ज्ञान बढ़ा चढ़ा था तथा वैराग्य भी अत्यंत उत्कृष्ट था। दीक्षा लेने के पहिले उन्होंने बहुत सा द्रव्य दान पुण्य में खर्च किया था। और दीक्षा महोत्सव में भी हजारों रुपये खर्च किये थे। बीकानेर से भी बहुतसे भाई इस अवसर पर पधारे थे और मंदि-मार्गियों ने भी अनुकरणीय भातृभाव दर्शाया था।

सुजानगढ़ में साधुओं के २५ ठाणे विराजमान थे और दिल्ली, जोधपुर, जयपुर, अजमेर, बीकानेर आदि शहरों के करीब ४००० मनुष्यों दिक्षा महोत्सव में भाग लिया था। एक अपरिचित क्षेत्र में इस मुजिब दिक्षा महोत्सव की सफलता हुई तथा धर्मोन्नति हुई यह पूज्य श्री के अतिशय का ही प्रभाव था।

सुजानगढ़ से श्रीमान् ने थली की तरफ विहार किया। थली के प्रदेश में साधुमार्गी भाइयों की वस्ती न होने से और तेरहपंथी भाइयों का बहुत जोर होने से पूज्य श्री का उस तरफ का विहार उनके हृदय में शल्य के समान खटकने लगा। तेरहपंथी * कितने ही साधुओं तथा श्रावकों ने पूज्य श्री के मार्ग में अनेक विघ्न डाले, उनके लिये अनेक प्रकार की कल्पित तथा मिथ्या गप्पें विघ्न-संतोषियों ने फैलाना प्रारंभ कीं और किसी भी तेरहपंथी श्रावक ने उन्हें उतरने को स्थान न देना तथा आहार पानी न वहराना ऐसी हीलचाल प्रारंभ की। उपरोक्त रीति से तेरहपंथी भाइयों ने पूज्य श्री को परिषह देने में कमी न की, परन्तु पूज्य श्री परिषह से तनिक भी डरने वाले न थे। उन्होंने अपना विहार आगे प्रारम्भ ही रक्खा और लाडनू, खादीसर, राजलदेसर, रतनगढ़, सरदार-

* साधुमार्गी स्थानकवासी सम्प्रदाय में से भिन्न हुए साधुओं ने यह पंथ चलाया है। जीवदया इत्यादि बातों में वह तमाम जैन सम्प्रदायों से भिन्न मत वाला है।

शहर आदि अनेक ग्रामों में विचर पवित्र दयाधर्म की विजय-पताका फहराई। बीकानेर के सुप्रसिद्ध सेठ हजारीमलजी मालू इत्यादि थली में पूज्य श्री के दर्शनार्थ गए थे और कितने ही दिन उन की सेवा में रह अनेक ग्रामों में फिरे थे।

थली के विहार में महेश्वरी, अग्रवाल, ब्राह्मण इत्यादि वैष्णव भाइयों ने बहुत ही पूज्यभाव दर्शाया था और आहार पानी इत्यादि बहरा कर अलभ्य लाभ उठाया था, वे पूज्य श्री के सदुपदेश से उन्हें अपने साधु हों ऐसा मानते थे और तेरहपंथी साधुओं की उत्सूत्र प्ररूपणा से जैनधर्म के विषय में उन्हें तथा थली के कई लोगों को ऐसी शंकायें थीं कि जैन लोग जीवोंको मृत्यु के पंजेमें* से छुड़ाना पाप समझते हैं, दान देने में पाप मानते हैं और गोशाला जैसी पारमार्थिक संस्थाओं को कसाईखाने से भी अधिक पापखाता समझते हैं। ऐसी २ शंकाओं के कारण वहां के निवासी जैनधर्म की ओर घृणा की दृष्टि से देखते थे, परन्तु श्रीजी महाराज के सदुपदेश से उनकी भ्रमनाएं दूर होगई। सब शंकाएं भाग

---

* तेरहपंथी साधु ऐसा उपदेश देते हैं कि [illegible] मारने में सिर्फ एक पाप (प्राणातिपातका) ही लगता है। परन्तु उसे बचाने में अठारा पापस्थानक सेवन करने पड़ते हैं।

गई और जैनी ही प्राणीरक्षा के पूर्ण हिमायती हैं ऐसा दृढ नि-श्चय पूज्य श्री ने उन्हें शास्त्रीय दृष्टांत दे करादिया।

प्रतापमलजी की अपील।

कई तेरहपंथी भाई भी पूज्य श्री के शास्त्रानुसार उपदेश से उनके प्रशंसक और दयाधर्म के अनुयायी बनगए. उनमें से कितने ही सहृदय जनों को पूज्य श्री के साथ अपने स्वधर्मी बंधु और साधु जो अघटित वर्ताव करते थे, बड़ा दुःख होता था और उनमे से एक सद्गृहस्थ मुंवासर निवासी श्रीयुत प्रतापमलजी नाहटा ने एक विज्ञापन पत्र छपाकर अपने स्वधर्मी भाइयों को मुफ्त बांट उन्हें सत्य हाल से परिचित किया था।

सदर विज्ञापन के सिर्फ थोड़े शब्द यहां दिये गए हैं, किसी भी सम्प्रदाय या व्यक्ति की निंदा को इस पवित्र पुस्तक में जगह देने का लेखक का विचार न होने से समस्त विज्ञापन जो कि तेरहपंथी भाइयों की भूल बताता है तो भी इसमें प्रसिद्ध नहीं किया गया।

प्यारे भाइयों से निवेदन।

प्रिय सज्जनों को ज्ञात हो कि हमारे तेरहपंथी और बाईस सम्प्रदाय के साधु श्रावकों में मतभेद है, आजतक मैंने बाइस सम्प-

दाय के किसी साधु को न देखा था परन्तु सुना था। आज अपने (तेरहपंथी के) साधु श्रावकों के सामने उनके सम्बन्ध में इस लेख द्वारा मैं कुछ कहना चाहता हूं, इसपर से कोई यह न समझे कि मैं अन्यधर्मी हूं, अबतक मैं तेरहपंथी ही हूं और इसीलिए निम्नां-कित हक़ीकत समक्ष पेश करता हूं।

ता० ७ वीं मई १६१६ के रोज सरदारशहर निवासी बाल-चंदजी सेठिया प्रथम 'आडसर' आये और हमारे तेरहपंथियों के साधु श्रावकों द्वारा बाईस टोले के साधुओं को उतरने के लिए मकान न देने का प्रबंध किया। फिर वहां से रवाना हो 'मुंबासर' आये और संध्या के छः बजे साध्वीजी के पास आये। वहां मैं भी हाजर था और अन्य भी २०–२५ गृहस्थ तेरहपंथी बैठे थे। तब बालचन्दजी सेठिया साध्वी को कहने लगे कि "बाईस टोले के साधुओं का आचार ठीक नहीं होता, वे यहां आवेंगे उन्हें उतरने वास्ते मकान न मिले तो ठीक है"। तब साध्वीजी बोले कि उनके आचार विचारके कुछ हाल सुनाओ, तब बालचंदजी बोले कि वे दोषीला आहार पानी लाते हैं अर्थात् जबरदस्ती से आहार मांग लेते हैं और उन्हें कोई प्रश्न पूछते हैं तो उत्तर भी नहीं देते और उत्तर न देने का कारण पूछते हैं तो कहते हैं कि अभी अवसर नहीं है। तब हम पूछते हैं कि आपको अवसर कब मिलेगा? तो बोलते भी नहीं, फिर बालचंदजी बोले कि 'सरदारशहर में तो कालूरामजी चंडालिया ने चालीस हजार

का मकान उतरने के वास्ते दिया, जो वे मकान नहीं देते तो वे कहां उतरते ? उन साधुओं के बाप दादों ने भी वैसा मकान न देखा होगा ! ऐसी २ अनेक बातें रात के छः बजे से साढ़े आठ बजे तक होती रहीं और साध्वीजी तथा श्रावक सब उसे सुनते रहे। वे सब बातें लिखी जायँ तो एक छोटीसी पुस्तक बनजाय। परन्तु मैंने संक्षेप में लिखी हैं। फिर मैं तो उन सबको बातें करता छोड़ अपने मकान पर जा सोया। तत्पश्चात् ता० १४ के रोज २२ सम्प्रदाय के साधु सुबासर आये। मालचन्दजी तथा नालचन्दजी ने जो बातें कहीं थीं वे सच्ची हैं या झूठी, उसके परीक्षार्थ मैं गोचरी पानी में उनके साथ रहा और देखा तो गोचरी में कोई किसी प्रकार की जबरदस्ती नहीं करते। दोषीले आहार पानी न लेते। परिचय से ज्ञात हुआ कि मालचन्दजी इत्यादि की सब बातें मिथ्या हैं। इन साधुओं को लोग स्थान २ पर आकर प्रश्न पूछते थे और वे सब को यथार्थ उत्तर भी दे देते थे, परंतु गोचरी के समय कई लोग राह में उन्हें रोकते तो वे कहते कि अभी मौका नहीं है।

अब मेरे दिल में जो विचार उत्पन्न हुए, उन्हें जाहिर करता हूं। सब तेरहपंथी भाइयों से प्रार्थना करता हूं कि इस तरह कदाग्रह करना, साधुओं को मिथ्या कलंक देना, उन्हें उतरने के लिये मकान न देना, लड़ाई झगड़े करना, चातुर्मास न करने देना, ये भले आदमियों के काम नहीं हैं। अपने तेरहपंथी के साधुओं को तो वादाम

...श्यादि के हलुवे वहराना और दूसरे साधुओं पर मिथ्या दोषारोपण करना यही क्या अपना धर्म है ? यह बात सोचना चाहिये, नहीं तो इसका फल यह होता है कि परस्पर द्वेष भाव बढ़ता जाता है और साथ ही अपनी मूर्खता प्रकट होती जाती है। आप लोगों को तो ...ना चाहिये कि सब से प्रेम रक्खें और अनुचित प्रवृत्ति से साधु श्रावकों को रोकें। तेरहपंथी साधु साध्वी कहते हैं कि तुम्हारे घर से तो दूसरी सम्प्रदाय के साधु आहार पानी लेगए तो तुमने क्यों वहराया ? इसलिये अब हम तुम्हारे यहां गोचरी न आवेंगे, जो अब तुम ऐसी प्रतिज्ञा लो कि तेरहपंथी साधु के सिवाय अन्य किसी को दान न देंगे, तभी हम तुम्हारे यहां आवेंगे। ऐसा कह कइयों को प्रतिज्ञा देते हैं। पाठक ! विचार करें कि जो साधु पंच-महाव्रत लेकर भी राग द्वेष नहीं त्यागते और उलटे उसकी वृद्धि करते हैं तो फिर गृहस्थी का तो कहना ही क्या है ? इसलिये आप लोगों से यह विनती है कि कुछ दिल में विचार करो गृहस्थी का ... द्वार है और दया दान से ही गृहस्थाश्रम की शोभा है, ...याण है। महावीर भगवान का दया दान पर ही परम उपदेश है। ...से बंद करना जिन-वचनों की उत्थापना करने के समान है। इसलिये भविष्य कालका विचार कर सब भाई सम्प रक्खें और ...की उन्नति करें और जो मिथ्या चाल पड़गई है उसे सुधारलें ... काम जैन श्वेताम्बर तेरहपंथी सभा को हाथ में लेना चाहिये।

प्रतापमल नाहटा, ग्रंथासर

राज्य श्री बीकानेर (मारवाड़)

पूज्य श्री का परिचय करानेवाला चाहे जितना उनके विरुद्ध हो तो भी प्रशंसा करने लग जाता था। थली में अपने स्वधर्मियों की बस्ती न होने से पूज्य श्री को बहुत कष्ट उठाना पड़ता था उनके वहां विचरने से जैनधर्म का अपार उद्योत हुआ ※

सरदारशहर तथा रतनगढ़ में अग्रवालों के हजारों घर हैं वे पूज्यश्री के उपदेशामृत का अत्यानंद पूर्वक पान करते थे और ऐसा कहते थे कि हमारे अहोभाग्य हैं कि ऐसे महान पुरुषोंने हमारे देश में पदार्पण कर हमें पावन किया है ये केवल ओसवालों के ही नहीं, हमारे भी साधु हैं।

रतनगढ़ में पूज्यश्री के सदुपदेश से जीवदयाके लिये रु० ८०००) का फंड हुआ था।

※ पूज्य श्री के थली के विहार दरमियान कई जगह तेरापंथी साधु तथा श्रावकों के साथ ज्ञानचर्चा तथा संवाद हुए, उस समय पूज्य श्री ने अकाट्य प्रमाणों द्वारा दयाधर्म की स्थापना की। वे प्रश्नोत्तर मिलाने बाबत हमने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु अंततक वे न मिलसके। वह प्रश्नावली प्राप्त कर बीकानेर के श्रावक प्रसिद्ध करेंगे तो जीवदया सम्बन्धी थलीमें भराया हुआ भूत भग निकलेगा, साधुमार्गी मुनिराजों को भी थली की तरह विहार कर जीवदया के लगाये हुए संस्कारों को संजीवन रखना चाहिये।

यजी के विहार दरम्यान बीकानेर के सैकड़ों श्रावक तथा अजमेर से राय सेठ चांदमलजी साहिब तथा दी० ब० उम्मेदमलजी लोढा इत्यादि दर्शनार्थ आये थे।

बड़े २ करोड़पतियों को इन महापुरुष की पदरज मस्तक चढ़ाते देख उनको अपमानित करने वाले कितने ही तेरहपंथी भाई यन्त लज्जित हुए थे।

महापुरुषों के तो ऐसे कष्ट ही कीर्ति कोट की दिवाल दृढ ने में सीमेंट के समान है।
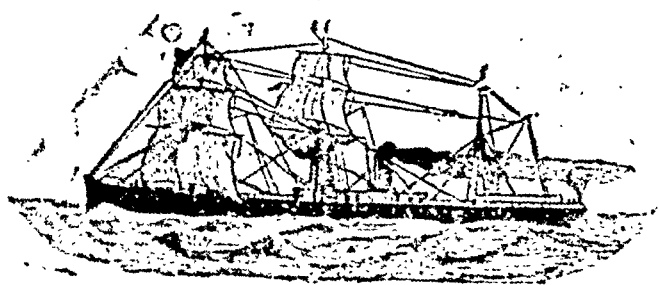
अध्याय ३८ वाँ ।

श्री संघ का कर्तव्य ।

पूज्य श्री जब थली में इस प्रकार जैन-धर्म की विजयध्वजा फहराते हुए विचर रहे थे, तब जावरा वाले साधु जोधपुर में एकत्रित हुए और अपने में से किसी को आचार्य पद देने का विचार किया, परन्तु जोधपुर संघ इस कार्य में सहमत न हुआ। तब उन साधुओं ने सात कलम लिख जोधपुर श्री संघ को दी। वे लेकर जोधपुर के श्रावक सरदारशहर में पूज्य श्री के पास आये। पूज्य श्री ने शुद्ध अंतःकरण से फरमाया कि शास्त्र के न्याय से और सम्प्रदाय की रीत्यनुसार सात तो क्या परन्तु सातसौ कलमें मुझे मंजूर हैं। इस पर से उस समय जोधपुर के संघ ने यह कार्य बंद रखाया। उसी तरह श्री संघ के अन्य अग्रेसर श्रावक महाशयों ने भी सम्प्रदाय में फूट न हो तथा पूज्य श्री हुक्मीचंदजी महाराज के सम्प्रदाय का गौरव पूर्ववत् जाज्वल्यमान रहे इस हेतु से जोधपुर संघको और जोधपुर में इकट्ठे हुए संतों को हित सलाह दे अपना कर्तव्य बजाया था।

एक विद्वान् अनुभवी के वाक्य इस समय याद आते हैं समुद्र शांत रहता है तब जहाज लेजाने में अत्यंत होशियारी अथवा अनु-

[illegible] की आवश्यकता नहीं रहती, परन्तु जब जहाज भर समुद्र में [illegible] जाता है और डूबने की तैयारी में रहता है तथा बैठने वाले भय [illegible]त रहते हैं तब ही कप्तान के कार्य कौशल्य की सच्ची कसौटी होवी [illegible] संघ कटाकटी के मामले में ही मनुष्य की चतुराई, अनुभव और विवेकता की परीक्षा होती है और ऐसे समय ही मनुष्य अपनी महान् शक्ति दिखा सकता है ....जबतक हम कसौटी पर नहीं चढ़े, जबतक गुप्त शक्ति सामान्य संजोगों के समय प्रकट नहीं होती तबतक हमें अपने आंतरिक बल का वास्तविक भान भी नहीं [illegible]ता। यह शक्ति आपात्तिकाल में ही प्रकट होती है क्योंकि वह शक्ति सम्पादन करने के लिए हमें अंतरगहनमें पैठने की आवश्यकता है हरएक कार्य में परिणाम को प्रमाण में ही कार्यकी अपेक्षा है।

जोधपुर के संघ के माफिक ब्यावर-नयेशहर के श्री संघ ने [illegible] आदेश वाले संतों को समाधान की ही सलाह दी और जब [illegible] दूसरी पूज्य पदवी प्रकट की तब चतुर्विध संघ की सम्मति [illegible] ऐसा व्याख्यान में ही प्रगट होगया था और समस्त श्री संघ [illegible] धन्त मनुष्यों की सही से हमें यह मंजूर नहीं [illegible], [illegible] [illegible] था।

[illegible] मेवाड़ से बहुत दूर पंजाब में पूज्य श्री की आज्ञा में [illegible] और जम्मू कश्मीर में एक संत बीमार होजाने से वहां

बहुत दिनों से ठहरे हुए महाराज श्री मन्नालालजी स्वामी जो सत्य हकीकत के पूरे ज्ञाता न थे और सरल स्वभावी होने से दूसरों की युक्ति प्रयुक्ति में भुला जाने जैसे हलुकर्मी हैं, वे दूर के अपरिचित क्षेत्र में आसपास के संजोग बिना जाने और पूज्य श्री की आज्ञा में विचरते होने से उन्होंने पूज्य श्री की बिना आज्ञा लिये ही यह पद स्वीकार करने का साहस किया।

इस पर विचार करने से सिर्फ ममत्व ही मालूम होता है। छद्मस्त मनुष्य भूल कर बैठते हैं, इसलिये दीर्घदर्शी शास्त्रकारों ने प्रायश्चित्त की विधि बताई है। प्रबल सबूत होने पर जिन्होंने आलोचणा नहीं की तब शास्त्र की आज्ञानुसार उन्हें अलग किये, परन्तु पूर्व परिचय के कारण कई संत और कई श्रावक उनके पक्ष में पड़गए।

सं० १६७३ का चातुर्मास आचार्यजी महाराज ने बीकानेर में किया। अपार अवर्णनीय, धर्मोद्योत हुआ। शहर के जैन अजैन मनुष्य तथा देशावर के दर्शनार्थ बड़ी संख्या में आने वाले श्रावक श्राविकाओं की हज़ारों मनुष्य की भीड़ व्याख्यान में इकट्ठी हो लगी था। पूज्य श्री के सदुपदेश द्वारा वरिप्रभु की वाणी का दिव्य प्रकाश जनसमूह के हृदय में व्याप्त अज्ञानान्धकार को दूर कर रहा था। बीकानेर संघ में अपूर्व आनन्द छारहा था। ज्ञान, ध्यान

तप, जप, दया, परोपकार और अभयदान के मांगलिक कार्यों से बहुत ही धर्मवृद्धि तथा जैन शासन की प्रभावना हुई।

इस वर्ष साधुओं में भी खूब तपश्चर्या हुई। श्री हरकचंदजी महाराज के सुशिष्य मुनि श्री नंदलालजी महाराज ने ७२ उपवास किये थे और श्री गेनचंदजी महाराज की सम्प्रदाय के मुनि श्री केवलचंदजी महाराज के शिष्य मुलतानचंदजी महाराज ने ८२ उपवास किये थे। ये दोनों तपस्वी एक ही दिन पारणा करने वाले थे। सेठ चांदमलजी ढड्ढा सी. आई. ई., कि जो बीकानेर के श्वे० मूर्तिपूजक जैन भाइयों के अग्रेसर हैं उनके सुप्रयास से राज्य की तरफ से उस रोज कसाईखाने बंद रक्खे गए थे तथा भटियारा, हलवाई, सोनी, लुहार इत्यादि के हिंसा के कार्य तथा अग्नि के समारंभ बंद रक्खे गए थे। इसके सिवाय केवलचंदजी महाराज के शिष्य भिरेमलजी महाराज ने ३१ उपवास किये थे। चातुर्मास के बाद विहार कर मारवाड़ तथा जोधपुर स्टेट के ग्रामों में विचरते २ पूज्य श्री जब जोधपुर पधारे तब जयपुर श्रीसंघ ने चातुर्मास जयपुर करने बाबत विनय की, तब उसे मंजूर कर नयेनगर अजमेर होकर पूज्य श्री आषाढ़ शुक्ला २ को जयपुर पधारे। उस समय अजमेर नगर में महामारी-प्लेग का उपद्रव प्रारम्भ था, परन्तु पूज्य श्री के अजमेर में पदार्पण करते ही शांति होगई थी।

अध्याय ३९ वाँ।

जयपुर का विजयी चातुर्मास।

सं० १९७४ का चातुर्मास पूज्य श्री ने जयपुर किया। जयपुर में धर्मध्यान तपश्चर्या, त्याग, प्रत्याख्यान तथा धर्मोन्नति अत्यन्त हुई। बाहर ग्राम से संख्याबन्ध श्रावक दर्शनार्थ आते थे। रतलाम, बीकानेर, जावरा और ब्यावरनगर के कितनेक श्रावक पूज्य श्री के सत्संग और वाणी श्रवणादि का लाभ उठाने को खास मकान लेकर रहे थे। श्रीमती नानूबाई देसाई मोरवी वाली तथा मुम्बई, गुजरात और काठियावाड़ के कई श्रावक दर्शनार्थ आये थे और बहुत दिनोंतक व्याख्यान का लाभ उठाया था। व्याख्यान में कभी २ नानूबाई स्त्री-उपयोगी महत्व के प्रश्न पूज्य श्री से पूछती थी और उनके संतोपदायक उत्तर पूज्यश्री की ओर से मिलने पर श्रोतागण सानंदाश्चर्य होते थे।

जयपुर स्टेट की तरफ से बकरियों का वध करना मना था, परन्तु बकरी का वध होता है, ऐसी खबर पूज्यश्री को मिलते ही एक समय व्याख्यान में पूज्य श्री ने प्राणीरक्षा पर असरकारक विवेचन कर श्रावकों को उनका कर्तव्य बताते हुए कहा कि, उदयपुर के श्रावक

तथा नंदलालजी मेहता जैसे उत्साही कार्यकर्ताओं ने महाराजश्री के उदार आश्रय से हिंसा रोकने के लिये प्रशंसनीय प्रयत्न किया है और हिंसा बराबर रुकी रहे और राज्य के हुक्म का बराबर अमल होता रहे उसकी पूर्ण निगाह रखते हैं इसलिये वहां कोई भी मनुष्य राज्य की आज्ञा के विरुद्ध जीवहिंसा करने का साहस नहीं कर सक्ता। जो नंदलालजी मेहता उदयपुरवाले यहां होते तो राजकी आज्ञा उल्लंघन कर बकरियों का वध करने वालों को ज़रूर रुकाने की कोशिश करते, इस बात की खबर उदयपुर नंदलालजी मेहता को मिलते ही तुरन्त वे और केसूलालजी ताकड़िया जौहरी उदेपुर से रवाना हो जयपुर आये और कई दिन ठहर कर बकरियों का वध रोकने का प्रयत्न किया। नामदार महाराज तक खबर पहुंचा कर सम्पूर्ण सफलता प्राप्त की। इस चातुर्मास से बकरी का बिलकुल वध होना बन्द होगया। श्रीमान् रायबहादुर खवासजी बालाबक्षजी साहिब ने कसाईखाने की तपास करने वाले डाक्टर साहेब को सख्त फरमाया था कि जो कोई शख्स बकरियों का वध करे उनके पास से कानून अनुसार ५०) रुपये दण्ड मात्र ही नहीं लो, परन्तु उन्हें सख्त सजा कराओ। इस कारण खवासजी धन्यवाद के पात्र हैं।

इस चातुर्मास में दर्शनार्थ आनेवाले स्वधर्मी बंधुओं का स्वागत करने का सन्मान सुप्रसिद्ध जौहरी काशीनाथजी

जौहरी नवरत्नमलजी ने प्राप्त किया था। वे स्वतः तथा उनके भाई जौहरी मुन्नीलालजी इत्यादि व्याख्यान पूर्ण होते ही दरवाजे पर खड़े रहते और महमानों को हाथजोड़ अपना मकान पवित्र करने वास्ते अर्ज करते तथा खड़े रह कर सबको आग्रह से जिमाते थे। रतलाम में युवराज पदवी के उत्सव पर जयपुर से खास जौहरी मुन्नीलालजी रतलाम पधारे थे और अपने प्रांत की ओर से इस पदवी बाबत हार्दिक अनुमोदन दिया था।

मोरवी चातुर्मास के समय स्वागत का कुल खर्च देने वाले सेठ सुखलाल मोनजी अपने स्नेहियों के साथ जयपुर आये थे और प्रीतिभोजन दे स्वधर्मियों से भेट करने का अवसर प्राप्त किया था।

जयपुर चातुर्मास में देश परदेश के कई श्रावक जयपुर में होने से धर्म का बड़ा उद्योत हुआ था। जागीरदार और अमलदार तथा रावबहादुर डाक्टर दुर्जनसिंहजी इत्यादि ज्ञानचर्चा के लिए पूज्य श्री के पास आते और उनके मनका सरल रीति से समाधान होजाने पर अपने दूसरे मित्रों को भी साथ लाते थे।

जयपुर चातुर्मास पूर्ण होने पर पूज्य श्री टोंक पधारे, उस समय टोंक की ओसवाल जाति में कुसम्प था। ज्ञाति में दो तड़ें होगई थीं, परन्तु पूज्य श्री के सदुपदेश से कुसम्प दूर हो पूर्ण एकता होगई थी।

टोंक से क्रमशः विहार कर पूज्य श्री रामपुरा पधारे और सं० १९७४ के फाल्गुन शुक्ल ३ के रोज संजीत वाले भाई नंदरामजी ने पूज्य श्री के पास रामपुरा मुक़ाम पर दीक्षा ली।

अध्याय ४० वाँ ।

सदुपदेश का प्रभाव ।

रामपुरा से श्रीजी महाराज कुकड़ेश्वर पधारे । व्याख्यान में स्व परमती बड़ी संख्या में आते थे । स्कंध तथा व्रतादि बहुत हुए । जड़ावचन्दजी पोरवाड़ ने ४५ वर्ष की अवस्था में सजोड़ ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया । वहां दो रात ठहर कर पूज्य श्री कंजारड़ा पधारे, वहां नावद वाले भाई कजोड़ीमलजी ने दीक्षा ली, वहां से पूज्य श्री भाटखेड़ी पधारे, वहां श्रीयुत नानालालजी पीतलिया ने सजोड़ ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया था तथा वहां के रावजी साहेब ने शिकार खेलने का त्याग किया । वहां से श्रीजी मनासा पधारे । वहां महेश्वरी (वैष्णव) भाई भावभक्ति सहित व्याख्यान का लाभ लेते थे । वहां के न्यायाधीश, मुन्सिफ साहिब इत्यादि सरकारी कर्मचारीगण भी [illegible] का लाभ उठाते थे । मनासासे महागढ़ हो पूज्य श्री [illegible] पधारे । वहां मंदिरमार्गी भाइयों के घर होने से २२ [illegible] के साधु वहां नहीं जाते थे तथा उन्हें आहार पानी व [illegible] मकान नहीं देते थे । श्रीजी महाराज के सदुपदेश से उनकी [illegible] [illegible] और वहां के ठाकुर साहिब ने [illegible] [illegible]

पीपलिया से पूज्य श्री धामणी पधारे। वहां साधुमार्गी के सिर्फ ५-७ घर थे। यहां के जमींनदार मीणा लोग नवरात्रि में देवी को चार बकरे चढ़ाते थे, पूज्य श्री के अमृत तुल्य उपदेश से उनके हृदय पर जादू के समान प्रभाव पड़ा और उन्होंने हमेशा के लिये देवी के सामने बकरे न चढ़ाने की प्रतिज्ञा ली और नीचे लिखा ठहराव कर उन पर सबने अपनी २ सही की "आगे से बकरों का वध नहीं करते ओसवालों के समस्त पंचों की ओर से चूरमा बाटी की रसोई का नैवेद्य माताजी को रक्खेंगे।"

यहां से श्रीजी महाराज 'बहेड़ी' नामक एक छोटे ग्राम में पधारे। वहां के ठाकुर साहिब ने पूज्य श्री के सदुपदेश से अपनी पत्नि के साथ ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया और शिकार खेलने का त्याग किया। वहां से पूज्य श्री ने जावद की तरफ विहार किया।

बड़े २ शहरों की अपेक्षा छोटे २ ग्रामों में जहां ऐसे समर्थ धर्मोपदेष्टाओं का आगमन क्वचित ही होता है, वहां के लोग महापुरुषों की अद्भुत वाणी श्रवण करने का अपूर्व प्रसंग प्राप्त कर कितनी अभिलाषा दिखाते हैं, और व्रत प्रत्याख्यान करते हैं इसके ये प्रत्यक्ष उदाहरण हैं।

सं० १९७४ के फाल्गुन वदी ५ के रोज रामपुरे से ही पूज्य

श्री जावद पधारे । जावद में प्लेग का उपद्रव था, परन्तु पूज्य श्री के पदार्पण करते ही उनके पवित्र चरणकमल से पवित्र हुई भूमि में से प्लेग भगगया । और शांतिदेवी ने अपना साम्राज्य जमा दिया । जावद निवासियों पर इसका इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि जैनधर्मी और अन्यधर्मी पूज्य श्री की मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे ।

रामपुरा से जावद पधारते समय पूज्य श्री के सदुपदेश से मार्ग के अनेक ग्रामों में तथा जावद में जो जो उपकार हुए, उनका संक्षिप्त सार निम्नांकित है:—

१ संस्थान पहेड़ी के ठाकुर साहिब प्रतापसिंहजी बहादुर ने कई प्रकार के शिकार के सौगंध लिये तथा उनकी बड़ी ठकुराइन साहिबा ने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया ।

२ ग्राम गोरवण में ओसवाल ज्ञाति में तीन तड़ें थीं, वे श्रीमान् के उपदेशामृत के सींचने से कुसम्प मिट सम्पूर्ण एकता होगई और कितने ही कुव्यसनों का त्याग हुआ ।

३ [illegible] ग्राम के राजपूत लोगों ने जीवहिंसा तथा मादक द्रव्य पान न करने के त्याग किये ।

४ जावद में पूज्य श्री के दर्शनार्थ सैकड़ों ग्राम पर--ग्राम के मनुष्य नित्य दर्शन को आते थे, सबका उत्तम रीति से स्वागत होता था, श्रीमान् लगभग एक माह तक वहां विराजे, संघ का उत्साह हर-रोज बढ़ता जाता था। १६ वर्ष के पहिले पुत्र तथा १२ वर्ष के पहिले पुत्री का ब्याह न करने बाबत तथा ४५ वर्ष से ज्यादा उमर वाले वर को कन्या न देने बाबत बहुतों ने प्रतिज्ञा ली। तथा स्कंधादि बहुत हुए।

सं० १९७५ के वैशाख वदी ३ को वालेसर निवासी श्रीयुत कस्तूरचंदजी ने प्रबल वैराग्यपूर्वक जावद में दीक्षा ली। दीक्षा उत्सव में करीब ४००० मनुष्य की उपस्थिति थी। यहां से स्वामीजी ने निम्बाहेड़ा की तरफ बिहार किया।

अध्याय ४१ वां।

डाकन की शंका का निवारण।

निम्बाहेड़ा में बहुतसी स्त्रियों के ऊपर डाकन होने का मिथ्या कलंक बहुत समय से था। वहेमी लोग उनसे डरते और कोई भी स्त्री उनके साथ खानपानादि का व्यवहार नहीं रखती थी। पूज्य श्रीके निम्बाहेड़ा पधारने पर उक्त बात पूज्य श्री को ज्ञात हुई और 'किसी प्रकार इन पर से यह कलंक छूटे तो ठीक हो' ऐसा उन्हें जचा। ग्राम के लोग कहते कि कदाचित् आकाश में से देवता साक्षात् प्रकट हो भूमि पर आ यह कहदें कि ये बाइयां डाकण नहीं हैं तो भी डाकन का जो कलंक उनके सिरपर है, वह कदापि दूर नहीं हो सकता, । परन्तु परम प्रतापी पूज्य श्री की अपूर्व उपदेशामृत की धारा ने यह कंलक धोडाला।

व्याख्यान में साधुमार्गी, मंदिरमार्गी, वैष्णव इत्यादि स्त्री पुरुष बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे, तब श्रीजी महाराजने मौका देखकर ऐसा उत्तम और प्रभावोत्पादक भाषण दिया कि उसका अद्भुत असर तत्काल लोगों पर हुआ और उसी दिन से सब स्त्रियों ने उन बाइयों के साथ खानपानादि का व्यवहार

पूर्ववत् प्रारंभ कर दिया और सब झगड़ा मिटगया, उस समय पूज्य श्री ने निम्नाङ्कित एक दृष्टांत दिया था—

" एक सेठ के यहां कई गायें और भैंसें थीं। सेठानी बहुत भली और दयालु थी, जिससे ग्राम के लोगों को पोले हाथ छाछ देने लगी। एक दिन सब छाछ खुटगई, बाद एक बाई छाछ लेने आई, तब सेठानी ने निरुपाय हो उसे इन्कार किया। फिर दो चार दिन बाद भी यही हाल हुआ। जिससे वह स्त्री सेठानी पर क्रोधित हो बोली कि ग्राम के सब जनों को छाछ देती है फक्त मुझे ही तूं बारबार निराश कर पीछा लौटने को कहती है, परन्तु अब याद रखना ऐसा कह कर क्रोधावेश में वह चली गई और फिर कभी छाछ लेने न आई।

इस बातको थोड़े ही दिन बीते होंगे कि एक दिन वह स्त्री पानी का बेवड़ा लिये हुये नदी की ओर से घरको आरही थी जब सेठ की दुकान के समीप आई तब माथे पर का बेवड़ा फेंक दिया और खूब जोर से सिर धुनने और होहा करने लगी। बाजार के हजारों लोग इकट्ठे होगये। मंत्रवादी, भोपे प्रभृति आये और उसे पूछने से वह कहने लगी कि मैं फलां सेठानी हूं, गाय भैंस इत्यादि हैं, वे तो मेरे पति (सेठ को) की लाई हुई हैं, मैं उनकी स्वामिनी हूं किसी को छाछ देना न देना मेरी इच्छा की बात है, यह रांड (स्वयं) मेरे

हां छाछ लेने आई और मैंने इनकार कर दिया तो मुझे कई गालि-
यां और श्राप दे चलीगई अब मैं इसे जीवित नहीं छोडूंगी "सेठ
जी उस भीड़ में थे अपनी स्त्री पर ऐसा कलंक आता देख वे शर-
मिंदा होगए। बिचारी भली सेठानी इस बात से बिलकुल अज्ञात थी
वह बिलकुल निर्दोष थी, छाछ लेने आने वाली बाईका ही यह सब
दोष था, तो भी सब ग्राम में वह सेठानी डाकन के सदृश गिनी
जाने लगी और सबने उसके साथका व्यवहार बंद कर दिया।
इस तरह अज्ञान और संशयी मनुष्य बिचारे निर्दोष व्यक्ति पर
मिथ्या आल चढ़ा उसकी जिंदगी बर्बाद कर देते हैं, परन्तु बदकाम का
नतीजा बद ही होता है, आज तुम्हारे पर किसी ने मिथ्या कलंक
चढ़ाया है तो तुम्हें कितना दुःख होगा, इसका विचार कर उसके
साथ ऐसा व्यवहार रक्खो कि जैसा व्यवहार दूसरों से तुम अपने
साथ रखवाना चाहते हो। 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्'
यह मंत्र खूब याद रक्खो। इसका यह मतलब है कि जो २ बातें
[illegible] घटनाएं तुम्हारे प्रतिकूल हैं दूसरों के द्वारा जो व्यवहार होता
[illegible] तुम्हें नापसंद हो, उसे अहितकर दुःखदाई समझते हो
[illegible] तुम वैसा व्यवहार दूसरों के साथ भी मत करो। इस उपदेश

Do unto others what you wish to be done unto
[illegible] दूसरों का तुम अपने साथ जैसा व्यवहार चाहो वैसा ही
[illegible] तुम दूसरों के साथ प्रारंभ करो। (बाईबल)

और सेठानी के दृष्टांत का लोगों पर पूर्ण प्रभाव पड़ा। इसी तरह 'शत स्कन्धा' में कितनी ही बाइयों के शिरपर डाकन का कलंक था वह पूज्य श्री के वहां पधारने पर उनके उपदेश से प्रयाण कर गया था।
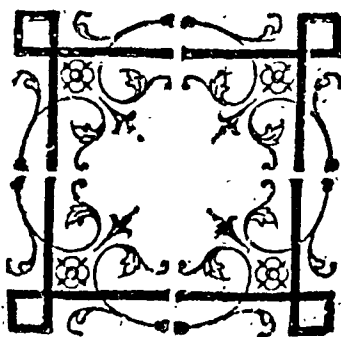
अध्याय ४२ वां।

उदयपुर महाराज-कुंवार का आग्रह।

यहां से विहार करते २ पूज्य श्री भीलवाड़े पधारे। वहां शेष काल कल्पित दिन ठहरे। भीलवाड़े के हाकिम पंडितजी श्री [illegible]शंकरजी श्रीमान् का सदुपदेश श्रवण करते थे। यहां [illegible]वालों में २७ वर्ष से भिन्न २ तीन तड़ें कुसम्प के कारण हो [illegible] थीं। श्री जी महाराज के अमूल्य उपदेश से सब क्लेश दूर हो [illegible] और तीनों तड़वाले इकट्ठे होगये। चातुर्मास के लिये बहुत [illegible] के साथ प्रार्थना की परन्तु उदयपुर से श्रीमान् कोठारीजी [illegible] चातुर्मास की विनन्ती वास्ते स्वयं पधारे और चातुर्मास [illegible] करने बाबत बहुत आग्रहपूर्वक अर्जकी, इसलिये भील-[illegible] का चातुर्मास स्वीकृत नहीं हुआ।

[illegible]त् श्रीजी महाराज चित्तौड़ पधारे। वहां भी ओसवालों [illegible] तड़ें थीं, वे पूज्य श्री के सदुपदेश से एक होगई। यहां भी [illegible] कोठारीजी साहिब दर्शनार्थ पधारे थे और चित्तोड़ के ओ-[illegible] के एकता कराने में उनका मुख्य हाथ था। महेश्वरी और [illegible]वालों के बीच भी कलह था, वह पूज्य श्री के उपदेश से दूर [illegible]।

इस वर्ष पूज्य श्री के चातुर्मास के लिये नयेशहर के श्री संघ
को अत्यन्त अभिलाषा थी, जिससे नयेनगर के श्रावकों ने जाव
इत्यादि स्थानों पर श्रीजी की सेवा में उपस्थित हो प्रार्थना की
और उन्हें कुछ आशा भी होगई थी, परन्तु जब दूसरी ओर
यपुर संघ का भी सम्पूर्ण आकर्षण था और खुद नामदार महारा
कुमार साहिब की भी पूज्य श्री का चातुर्मास उदयपुर कराने
प्रबल आकांक्षा थी। श्रीमान् महाराजकुमार साहिब बहुत ही
प्रेमी गुणग्राही, तत्वजिज्ञासु और दयालु दिल वाले
उच्च भावनाओं में ऐसा बल रहता है कि उन्हें उत्तम वस्तुओं
योग मिल ही जाता है, कुछ न कुछ निमित्त आ मिलता है।
चातुर्मास में पूज्य श्री जब जयपुर विराजते थे तब उदयपुर के
सुयोग्य श्रावक श्रीयुत कन्हैयालालजी चौधरी ना० महाराणा
के अंगोछे तथा कमरबंद छपाने वास्ते जयपुर आये थे तब
ने श्रीजी महाराज के दर्शन तथा वानी श्रवण का लाभ
था और सं० १९७४ के कार्तिक शुक्ला ११ के रोज वे पीछे
पुर गए और श्रीमान् महाराजकुमार साहिब को सब ह
निवेदन की, पूज्य श्री के अमृतमय उपदेश की यथार्थ प्रशंसा
तब महाराजकुमार साहिब ने फरमाया कि भविष्य का चातु
पूज्य श्री को यहां करना कल्पता है या नहीं, उत्तर में चौधरी
अर्ज की कि, हां हुजूर कल्पता है, यह सुन महाराजकुमा

...ग्रांजी से कहा कि तुम, आगामी चातुर्मास पूज्य श्री यहां करें, ...बावत अभी से पूरी २ कोशिश करो।

चैत्र माह में पूज्य श्री मनासा विराजते थे, तब पन्नालालजी ...को विनन्ती करने के वास्ते भेजे थे। पूज्य श्री जावद पधारे वहां ...उदयपुर के कई श्रावक विनन्ती करने वास्ते आये थे और अर्ज ...थी कि महाराजकुमार की भी प्रबल आकांक्षा है कि आगामी ...तुर्मास उदयपुर में हो तो बहुत ठीक हो, परन्तु पूज्य श्री की तरफ ...स्वीकृति का उत्तर न मिला। चैत्र शुक्ला ११ के रोज कोठारी ...साहिब उदयपुर आये और चौधरीजी कन्हैयालालजी को ...वद विनन्ती के वास्ते भेजे। उन्होंने उदयपुर पधारने से बहुत ...कार होना संभव है, ऐसा विश्वास दिलाया। तब श्रीजी महा-...ज की तरफ से कुछ आशाजनक उत्तर मिला। महाराजकुमार जब ...पुर पधारे और उनके पूछने पर सब हकीकत निवेदन कीगई। ...श्री चित्तौड़ पधारे तब महाराजकुमार साहिब की आज्ञा से ...कन्हैयालालजी चौधरी चित्तौड़ विनन्ती के लिये गए और ...भीलवाड़े भी गए थे।

पूज्य श्री भीलवाड़े पधारे तब उदयपुर से घेरीलालजी खमे-..., ...लालजी ताकड़िया, पन्नालालजी धरमावत तथा नंदलालजी ... इत्यादि ने वहां जाकर पूज्य श्री से अर्ज की कि चातुर्मास ...आता है और आप के पांव में व्याधि रहती है, इसलिये

इस वर्ष पूज्य श्री के चातुर्मास के लिये नयेशहर के श्री सं
को अत्यन्त अभिलाषा थी, जिससे नयेनगर के श्रावकों ने जाव
इत्यादि स्थानों पर श्रीजी की सेवा में उपस्थित हो प्रार्थना की
और उन्हें कुछ आशा भी होगई थी, परन्तु जब दूसरी ओर
यपुर संघ का भी सम्पूर्ण आकर्षण था और खुद नामदार महारा
कुमार साहिब की भी पूज्य श्री का चातुर्मास उदयपुर कराने
प्रबल आकांक्षा थी। श्रीमान् महाराजकुमार साहिब बहुत ही
प्रेमी गुणग्राही, तत्वजिज्ञासु और दयालु दिल वाले
उच्च भावनाओं में ऐसा बल रहता है कि उन्हें उत्तम वस्तुओं
योग मिल ही जाता है, कुछ न कुछ निमित्त आ मिलता है।
चातुर्मास में पूज्य श्री जब जयपुर विराजते थे तब उदयपुर के
सुयोग्य श्रावक श्रीयुत कन्हैयालालजी चौधरी ना० महाराणा
के अंगोछे तथा कमरबंद छपाने वास्ते जयपुर आये थे तब
ने श्रीजी महाराज के दर्शन तथा वानी श्रवण का लाभ
था और सं० १९७४ के कार्तिक शुक्ला ११ के रोज वे पीछे उ
पुर गए और श्रीमान् महाराजकुमार साहिब को सब हकी
निवेदन की, पूज्य श्रीके अमृतमय उपदेश की यथार्थ प्रशंसा
तब महाराजकुमार साहिब ने फरमाया कि भविष्य का चातु
पूज्य श्री को यहां करना कल्पता है या नहीं, उत्तर में चौधरीज
अर्ज की कि, हां हुजूर कल्पता है, यह सुन महाराजकुमा

ारीजी से कहा कि तुम, आगामी चातुर्मास पूज्य श्री यहां करें, बाबत अभी से पूरी २ कोशिश करो।

चैत्र माह में पूज्य श्री मनासा विराजते थे, तब पन्नालालजी को विनन्ती करने के वास्ते भेजे थे। पूज्य श्री जावद पधारे वहां उदयपुर के कई श्रावक विनन्ती करने वास्ते आये थे और अर्ज़ थी कि महाराजकुमार की भी प्रबल आकांक्षा है कि आगामी ुर्मास उदयपुर में हो तो बहुत ठीक हो, परन्तु पूज्य श्री की तरफ स्वीकृति का उत्तर न मिला। चैत्र शुक्ला ११ के रोज कोठारी साहिब उदयपुर आये और चौधरीजी कन्हैयालालजी को वद विनन्ती के वास्ते भेजे। उन्होंने उदयपुर पधारने से बहुत कार होना संभव है, ऐसा विश्वास दिलाया। तब श्रीजी महा- ा की तरफ से कुछ आशाजनक उत्तर मिला। महाराजकुमार जब यपुर पधारे और उनके पूछने पर सब हकीकत निवेदन कीगई। य श्री चित्तौड़ पधारे तब महाराजकुमार साहिब की आज्ञा से ायुत कन्हैयालालजी चौधरी चित्तौड़ विनन्ती के लिये गए और र भीलवाड़े भी गए थे।

पूज्य श्री भीलवाड़े पधारे तब उदयपुर से घेरीलालजी खमे- रा, केशूलालजी ताकड़िया, पन्नालालजी धरमावत तथा नंदलालजी हता इत्यादि ने वहां जाकर पूज्य श्री से अर्ज की कि चातुर्मास ामीप आता है और आप के पांव में व्याधि रहती है, इसलिये

आप उदयपुर की ओर विहार करो तो बड़ी कृपा हो,
पूज्य श्री ने फ़रमाया कि नयेशहर के श्रावकों को जावद
पर उनकी विनन्ती पर से नयेशहर शेषकाल फरमने के
मैं उन्हें आशाजनक वचन दे चुका हूं और मेरे पांव में त
होगई है, ऐसी स्थिति में ब्यावर होकर उदयपुर आना कठि
इस पर से उदयपुर से आये हुए चारों भाई ब्यावर गए औ
के संघ से सब हकीकत निवेदन की, तब ब्यावर के श्री सं
कहा कि जो महाराज साहिब का ब्यावर चातुर्मास न होगा
इतना चक्कर खाकर ब्यावर पधारने की तकलीफ वे न उठावे
अच्छा है, कारण कि उनके पांव में बहुत व्याधि रहती है।
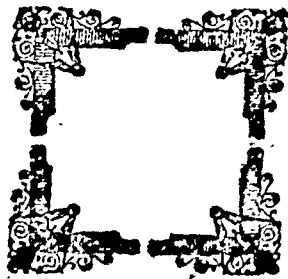
अध्याय ४३ वाँ ।

आर्याजी का आकर्षक संथारा ।

यहां से विहार कर पूज्य श्री ज्येष्ठ माह में राशमी पधारे। वहां श्री को खबर मिली कि रंगूजी आर्याजी की सम्प्रदाय के ससी-श्री राजकुँवरजी ने उदयपुर में संथारा किया है और आपके न की उनके दिल में पूर्ण अभिलाषा है इसलिए पूज्य श्री ने यपुर की ओर विहार कर दिया। संवत् १९७५ के आषाढ़ वदी के रोज उदयपुर शहर के बाहर दिल्ली दरवाजे से निकल आगे वे जो कोठारी साहिब बलवंतसिंहजी की बगीची है वहां ठहरे।

बाड़ी में थोड़े समय विश्राम ले श्रीजी महाराज आर्याजी को र्शन देने के लिए शहर की ओर जाने लगे। बाड़ी के बाहर निक-ते ही हीरा नामक एक उदयपुर का खटीक १३१ बकरों को लेकर ारने के लिए जा रहा था। पूज्य श्री के साथ उस समय लाला ारीलालजी तथा मेहता रतनलालजी इत्यादि थे। राह सकड़ी और करों की संख्या अधिक होने से पूज्य श्री राह के एक ओर खड़े होगए। उस समय पूज्य श्री के पास से जाते हुए बकरे दीनतामय ृष्टि से पूज्य श्री की ओर देखने लगे, मानो कुछ विनय कर कृपा

प्राप्त करना चाहते हों या अभयदान दिलाने की भिक्षा चाहते हों, ऐसा भास होता था। उन्होंने उस खटीक से प्रश्न किया कि इन बकरों को तूं कहां ले जावेगा। खटीक ने धूजते २ उत्तर दिया कि "महाराज क्या करूं मेरा यह धंधा है इसलिए इन्हें मारने ले जा रहा हूं।" यह सुनकर महाराज का हृदय बहुत करुणार्द्र होगया और एक लम्बी सांस निकल गई, लालाजी केसरीमल जैसे प्रसिद्ध श्रावक उनके पास ही खड़े थे वे पूज्य श्री की मुख मुद्रा पर से उनके मनोगत भाव समझ गए और मेहता रतनलालजी से कहा कि इन सब बकरों को अभयदान मिलना चाहिए और इसमें जो खर्च होगा वह मैं दूंगा। यह सुन श्रीयुत रतनलालजी मेहता ने खटीक को रुपये ५२५) देना ठहरा कर सब बकरों को छुड़ा दिये और दूसरों का आग्रह होते भी आप अकेले ने ही कुल रकम दे महान लाभ उठाया। इस तरह पूज्य श्री के उदयपुर में पदार्पण करते ही १२१ पशुओं के प्राण बचने पाये।

पश्चात् सतीजी श्री राजकुँवरजी कि जिन्होंने जावज्जीव का संथारा कर दिया था उनके पास आये और तबियत के हाल पूछे। पूज्य श्री के दर्शन से उन्हें परम हुल्लास प्राप्त हुआ और उन्होंने कहा, कि आपके पधारने से मैं कृतार्थ हुई, आर्याजी की समता और चढ़ते परिणाम देख श्रीजी महाराज सानंदाश्चर्य हुए।

आर्यांजी का संथारा बहुत दिनतक चला। पूज्य श्री भी नित्य धर्मामृत का पान कराते थे। उनकी सेवा में १६ आर्याजी थीं। को निरंतर शास्त्रों की स्वाध्याय करने का सतीजी श्री राजकुँवरजी फरमा रक्खा था और आप स्वयं बहुत ध्यान से स्वाध्याय ण करते थे। उनका उपयोग इतना शुद्ध था कि कोई भी र्याजी उच्चारण में एक अक्षरकी भी भूल करदेतीं तो तुरंत वे उसे ारती थीं।

एक दिन रात को खूब वृष्टि होरही थी। जिस मकान में सती- ने संथारा किया था उसकी छत प्रथम से ही खुली पड़ी । और जब वर्षा होती थी, तब उस मकानमें पानी भर जाता , इसलिये श्रावकों को रातभर चिंता हुई कि सतीजी को बहुत रिश्रम पड़ता होगा. परन्तु सुबह तपास करने पर ज्ञात हुआ कि ानीका एक बूंद भी छतमें से न गिरा।

संथारा किये बाद ३४ वें दिन पूज्य श्री सतीजी की साता छने हमेशा की नाईं गए और तबियत के समाचार पूछे। तब त्तर में सतीजी ने यह दोहा कहा—

मरने से जग डरत है, मुझ मन बड़ा आनंद।
कब मरस्यां कब भेटस्यां, पूरण परमानंद ॥

अर्थात् जग सब मरने से डरता है, परन्तु मेरे मन में तो बड़ा आनन्द है कि कब मरूंगी और कब पूरण परमानंद से मिलूंगी (प्राप्त करूंगी) ।

देशावर से हजारों लोग पूज्य श्री के तथा सतीजी के दर्शनार्थ आते थे, और सतीजी के अखूट धैर्य को देख आनंद पाते थे। दिनोदिन उनकी कांति और मनके परिणाम बढ़ते ही गए अंत समय तक शुद्धि रही, किसी समय मुंह से एक शब्द भी ऐसा न निकला कि जिससे उनकी कायरता प्रतीत हो।

संथारे में श्रीमान् कोठारीजी साहिब को सतीजी ने फरमाया कि श्रीदरबार को एक सिंह को अभयदान देने बाबत अर्ज करना उस मु आफिक श्रीमान् महाराणा साहिब की सेवा में कोठारीजी ने अर्ज की थी और महाराणा साहिब ने बहुत खुशी से वह अर्ज मंजूर की और याद रखकर पूर्ण करदी और संथारे की सब हकीकत कोठारीजी से सुन उन्होंने सतीजी की बहुत प्रशंसा की थी।

संथारा ३९ दिन चला, श्रावण वद १० के रोज रात को नौ बजे के करीब संथारा सीझा. उस समय एक तारा आकाश में से खिरा, उस पर से पूज्य श्री ने अनुमान किया और पास बैठे हुये श्रावकों से कहा कि सतीजी का संथारा इस समय सीझगया हो ऐसा मालूम होता है, इसके थोड़े मिनट बाद ही सतीजी के स्वर्ग गमन की खबर मिली।

अध्याय ४४ वां।

राजवंशियों का सत्संग।

उदयपुर के इस चातुर्मास में भी पूज्य श्री पंचायती नोहरे में विराजते थे और व्याख्यान में हजारों मनुष्य आते थे। राज्य के अमलदार वैष्णव तथा मुसलमान इत्यादि बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे।

श्रीमान् महाराणा साहिब के ज्येष्ठ भ्राता बावाजी सूरतसिंहजी साहिब कई समय पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे और उनके उपदेश से पूर्ण संतुष्ट हो पूज्य श्री के पूरे भक्त बन गए थे। बावाजी सूरतसिंहजी साहिब एक धर्मात्मा और तेजस्वी पुरुष थे। कई वर्षों तक उन्होंने अन्न का परित्याग किया था, सिर्फ फल, दूध और दूध की बनी हुई चीजें पेड़े, बरफी इत्यादि के ऊपर ही निर्वाह करते थे, बहुत वर्ष तक उन्होंने ब्रह्मचर्य पालन किया था। जीव दया की ओर उनका पूर्ण लक्ष्य था। बहुत वर्षों से उन्होंने मांस, मदिरा का त्याग कर दिया था, इतना ही नहीं, परन्तु श्रीमान् कोठारीजी साहिब के मारफत कई समय बकरों को अभयदान दिलाया था और यों जीवों को अभय दान दे अपने द्रव्य का

पयोग करते थे। संवत्सरी के दिन बाबाजी सूरतसिंहजी साहिब ने पूज्य श्रीजी से अर्ज की कि आज बड़ा भारी संवत्सरी का दिन है और बाई, भाई बृहत् संख्या में व्याख्यान में इकट्ठे होंगे, जो मनुष्य के लार एक २ बकरा अभयदान पावे तो सैकड़ों को अभयदान मिलेगा। इन पुण्यात्मा पुरुष की हितसलाह उदयपुर के श्रावक श्राविकाओं ने तत्काल स्वीकृत की और प्रायः दो, ढाई हजार बकरों को अभयदान देने का प्रबंध किया। बाबाजी साहिब अब तो स्वर्ग सिधारगए हैं। पास के पृष्ठ पर आपका चित्र दिया गया है। बेदला के रावजी साहिब श्रीमान् नाहरसिंहजी साहिब भी पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे।

उदयपुर के नामदार श्री कुँवरजी बावजी श्री श्री १०५ श्री भूपालसिंहजी साहिब जो पूज्य श्री की अपूर्वता से पूर्ण ज्ञात थे, उन्होंने पूज्य श्री का दर्शन व उपदेश सुनने की इच्छा दर्शाई। सं० १९७५ श्रावण सुदी ८ के रोज सज्जननिवास बाग के नवलखा महल में (जिसकी पूज्य श्री ने चातुर्मास पहले ही रियासत से आज्ञा लेली थी) समागम हुआ। दूर से देखते ही श्रीमान् महाराज कुमार साहिब पग में से बूंट निकाल पूज्य श्री के समीप आगे आ नमस्कार कर महाराज के सन्मुख बैठ गए। उस समय उन के साथ कितनेक राजकीय गृहस्थ भी थे। उस समय पूज्य श्री ने समयोचित उपदेश देते हुए कहा कि:—

आप सूर्यवंशी हैं, दिलीप से गोपालक, हरिश्चन्द्र से सत्यवादी और रामचंद्रजी के समान धर्मधुरंधर महात्माओं ने जिस वंशको ावन किया था उसी वंश में आप उत्पन्न हुए हैं। अभी आप राम- द्रजी की गादी पर हैं इसलिए आपको धर्मकी पूर्ण रक्षा करनी ाहिए। जीवों की रक्षा करना यह आपका परमधर्म है। जैनधर्म की ोर, जैन साधुओं की ओर आप प्रेम तथा बहुत मानकी दृष्टि से खते हैं यह देख मुझे बड़ा आनंद होता है। आपके पूर्वज भी जैन र्म की ओर हमेशा सहानुभूति रखते थे और आपके पिता श्री वर्तमान नरेश) दयाधर्म की ओर पूर्ण ध्यान रखते हैं। महाराणा ाहिब के दयामय कार्यों की मैंने बहुत २ प्रशंसा सुनी है उन्होंने र्मकी रक्षा कर शिशोदिया के कुल को दिपाया है, आप भी उनका नुकरण कर धर्म की रक्षा करेंगे। पूर्व धर्म की रक्षा करने से ही नुष्यदेह, उत्तम कुल और राज्यवैभव मिला है, आप अभी नुष्यों के राजा हैं, परन्तु धर्म की विशेष रक्षा करने से देवों के ाजा (इंद्र) भी हो सकते हैं।

पूज्य श्री ने यह श्लोक विस्तार से समझाया—

> अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनं द्वयम्।
> परोपकाराय पुण्याय पापाय परपीडनम्॥

उपदेश सुन महाराजकुमार बहुत प्रसन्न हुए ाट कर शंभुनिवास महल में पधारे।

आसोज सुदी ११ के रोज महाराज कुमार साहिब ने फिर पूज्य श्री के दर्शन और वार्तालाप का लाभ सज्जननिवास बाग में लिया। कुमार साहिब बाग में पधारे थे, उन्होंने पूज्य श्री को दूर से जाते देख गिरधारीसिंहजी (कोठारीजी साहिब के पुत्र) को पूज्य श्री के सामने भेजे और बाग में पधारने बाबत अर्ज की। पूज्य श्री पधारे और सदुपदेश का लाभ उठाया।

इस चातुर्मास में तपस्वीजी श्री मांगीलालजी तथा नंदलालजी महाराज ने बड़ी तपश्चर्या की थी। इसके उपलक्ष्य में श्रीजी हुजूर म अर्ज कर एक दिन अगता रखाया था। और उदयपुर श्री संघ ने बड़ी जेल तथा छोटी जेल के कैदियों को मिठाई पूड़ी इत्यादि खिलाने वास्ते महाराणा साहिब की मंजूरी ली थी। छोटी जेल के कैदियों को मिठाई खिलाई गई, परन्तु बड़ी जेल के कैदियों में ज्वर का रोग चलता था इसलिए साहिब ने इन्कार कर दिया, इसलिए फिर महाराणा साहिब की परवानगी ले छोटी जेल के कैदियों को दूसरी वक्त मिठाई खिलाई गई।

मेवाड़ के ओपियम एजेंट टेलर साहिब इस चातुर्मास में भी पूर्ववत् आते थे। एक दिन वे अपने साथ एक अंग्रेज मित्र को भी पूज्य श्री के पास लेते आये। वे भी पूज्य श्री के परिचय से अत्यंत प्रसन्न हुए और अपने पास से एक

सेकेरीन की शीशी पूज्य श्री को भेट करने लगे और कहा कि इस में से थोड़ीसी शक्कर पानी में डालने से बहुत पानी मीठा होजाता है, और आप को यह शीशी बहुत दिनों तक चलेगी। फिर महाराज श्री ने साधुओं के कठिन नियम की हकीकत कह सुनाई कि हमें खाने पीने की कोई भी चीज सामने न लाईहुई स्वीकार नहीं करनी पड़ती है, इतना ही नहीं, परन्तु पाहिले प्रहर का लाया हुआ आहार पानी चौथे प्रहर में हमसे भोगना भी नहीं हो सकता, यह सब हकीकत सुन दोनों अंग्रेज चकित होगए और शीशी महाराज श्री के कार्य में नहीं आई, इसलिये दिलगीर हुए। उन्होंने कहा कि आप शीशी न ले सको तो खैर, परन्तु इस चीज में मिठास का कितना अधिक तत्व है, वह तो आप थोड़ा सा पानी मंगाकर इसमें से थोड़ी सी यह चीज डाल कर पी देखो कि जिससे आप को खात्री होजाय। महाराज ने यह भी स्वीकार नहीं किया, तब साहिब ने कहा कि हम आपके उपकार का बदला कैसे दे सकते हैं ?, महाराज ने कहा—आप कर्तव्यपरायण बने, दयापालें और धर्म निबाहें। यही हमारे लिये भारी से भारी लाभका कारण है। टेलर साहिब १९७१ के चातुर्मास में भी पूज्य श्री के पास आते थे, सं० १९७५ में पूज्यश्री चित्तोड़ शेष काल पधारे तब भी वे पूज्य श्री के पास आये थे।

गुणग्राही विदेशियों में सात्विक वृत्ति होती है इस कारण वे जैसा देखते हैं वैसा सत्य कहने में डरते नहीं हैं। गुजरात काठियावाड़ के अनुभवी और पूज्यश्री के व्याख्यान में राजकोट में उपस्थित रहनेवाली मिसिस स्टीवनसन् लिखती हैं कि--

" Their standard of literary (405 males and 40 females per 1000) is higher than that any other community save the Parsis and they proudly boast that not in vain in their system are practical ethics wedded to Philosophical speculation for their criminal record is magnificently white. "

राज्यकर्त्ता जाति यों कहती है कि जैनों में नियम और तत्वज्ञान फिलासोफी ऐसी है कि जैन कौम छाती ठोक कह सकती है कि जैनियों में गुन्हेगारों की लिस्ट आश्चर्यपूर्वक बिलकुल कोरी है। गुन्हगारों की लिस्ट में जैनियों का नाम शायद ही दृष्टिगत होगा।

यह प्रमाणपत्र कम आनंददायक नहीं, इस प्रमाणपत्र के निभाने की कुल जवाबदारी जैन मुनिराजों पर है, जो अभी श्रीसंघ स्टीमर के कप्तान गिने जाते हैं।

एक दिन दो बड़े बकरे प्रेमा नाम का खटीक पंचायती नोहरे पास से ही सिंहों की खुराक के लिये ले जाता था। इतने में पूज्य

श्री बाहर जंगल से आगए, उनकी उन बकरों पर दृष्टि पड़ी, इतने में प्रेमा खटीकने कहा कि ये जानवर न मरें तो ठीक हो, यह कहकर प्रेमा दोनों बकरों को ले नोहरे के आगे खड़ा रहा । श्रावकों को खबर मिलते ही श्रीयुत नंदलालजी मेहता ने आकर प्रेमा से कहा कि इस राह से बकरे ले जाने की मनाई है, तू क्यों लाया? सरकार की ओर से बाजार में तथा महाजन और ब्राह्मणों की वस्ती वाली गलियों में से किसी भी मनुष्य को बकरे मारने के लिये ले जाना मना है । इस पर से उन दोनों बकरों को छुड़ा कसाई पास से ले नगरसेठ के वहां भेज दिये । जो बकरे नगरसेठ के वहां चले जाते हैं उनके कान में कड़ी डाली जाती है वे बकरे मारे नहीं जा सकते । उन बकरों को अमरे कर दिये ऐसा उधर मेवाड़ मालवा में बोलते हैं । अमरे किये हुये बकरों की रक्षा का प्रबन्ध राज्य की ओर से होता है । श्रीमान् मेदपाटेश्वर ने इनके लिये जमीन, मकान, मनुष्य और खर्च इत्यादि का पूर्ण प्रबन्ध कर रक्खा है । महाराणा साहिब इतने अधिक दयालु और प्रजावत्सल हैं कि वे अपने या अपने सम्बन्धी जनों के या राज्य के चाहे जितने बड़े ओहदेदार के लिये कायदे का बराबर अमल हो इसकी पूर्ण चिन्ता रखते हैं । मेवाड़ के रेजीडेन्ट साहिब कर्नल [illegible] के दो भेड़ उदयपुर की धानमंडी में आगये, उनको भी यहां के [illegible] जनों ने कायदे मुआफिक छुड़ा लिये और नगर सेठजी के [illegible]

असमियें करा दिये । ऐसे मुआमले अक्सर कई दफा पेश आते रहते हैं, परन्तु श्रीमान् महाराणा साहिब के धर्म पर पूरी २ निष्ठा होने से इस क़ायदा का पूरा २ अमल रहता है और कोई खिलाफ़ करता है वह यथोचित दंड पाता है ।

अध्याय ४५ वां ।

नवरात्रि में पशुवध बंद कराया ।

वर्तमान चातुर्मास में एक दिन पूज्य श्री के व्याख्यान में
दयपुर के पास खेरादा नामक एक ग्राम है वहां के कई श्रावकों
आकर अर्ज की कि हमारे ग्राम के पास बाठरड़ा पट्टा का ग्राम
ोहनपुरा है और वहां चार पांच वर्ष से कालबेलिया, वादी और
दारी आदि लोग आ बसे हैं, वे वहां सर्प तथा गोयरे इत्यादि
ानवर पकड़ते हैं और वहां उन्होंने माताजी का एक स्थानक किया
है वहां आसोज महीने में नवरात्रि के दिन तथा चैत्र महीने की
नवरात्रि और भादवा सुद ६ के रोज माताजी के पास १५ से २०
पाड़े तथा ४० से ४५ बकरों का प्रतिवर्ष बलिदान अंतिम चार
पांच वर्ष से देने लगे हैं वह बंद होना चाहिए। इस पर से पूज्य
श्री ने फरमाया कि जीवदया के हिमायती यहां हैं या नहीं ? तुरंत
श्रीयुत नंदलालजी मेहता ने खड़े होकर अर्ज की कि मैं हाजिर हूं।
पूज्य श्री ने फरमाया कि यह पशुवध बंद होजाय तो बड़ा उपकार
हो। पश्चात् श्रीयुत नंदलालजी मेहता ने श्रीमान् महाराणा साहेब
की गणेश ड्योढ़ी पर जा दरख्वास्त दी। उसपर से महकमे खास के

द्वारा गिरवा जिले के हाकिम ऊपर हुक्म फरमाया गया कि जो य बलिदान नये सिरे से होना प्रारंभ हुआ हो तो बंद करदो। यह हुक पाकर मावली के थानेदार और गिरवा के गिरदावर ने माता स्थानक पर जाकर तलाश की और बलिदान नये सिरे से होता ऐसा सबूत मिलने से श्रीमान् मेवाड़ाधीश्वर के हुक्म अनुसार नहीं होने बावत वहां के लोगों से मुचलका लिखा लिया औ जामिन भी ली, तब से माता के पास पाड़ों, बकरों का बलिद होना बंद होगया। चातुर्मास व्यतीत हुए बाद पूज्य श्री जब खेर हो कानोड़ पधारे तब खेरादे वालों ने अर्ज की कि महाराज आप प्रताप और मेहता नंदलालजी के सुप्रयास से पाड़ों, बकरों का ब होना हमेशा के लिए बंद होगया है।

श्रीयुत मांगीलालजी गुगलिया, उनकी पत्नी तथा कुटुम्ब सहि दर्शनार्थ आये थे। वहां उस बाई के शरीर में अचानक व्याधि उत्प होजाने से बाई की प्रार्थना पर से श्रीजी महाराज ने प्रथम तेविह और फिर चउविहार संथारा कराया था। बाई ने सम्पूर्ण शु से आलोयना प्रायश्चित्त किया। दो दिन संथारा रहा और आसो सुदी १५ के रोज उनका स्वर्गवास होगया। पाठकों को याद हो कि इस बाई ने बालवय से ही ब्रह्मचर्य व्रत, तथा चारों स्कं करीब ४॥ वर्ष से ऊपर होगए, किये थे और उनके पति ने भी ३० व की उम्र में सजोड़ शीलव्रत धारण किया था। यह बाई पूज्य श

की संसार पक्ष की भानजी तथा चाँदकुँवर बाई की पौत्री थी। धार्मिक संस्कारों की छाप उत्तरोतर कैसी प्रबल पैठती है, उसका यह एक उदाहरण है।

चितोड़ जिले के ग्राम कणेरा के सुश्रावक छोंटमलजी कोठारी पूज्य श्री के दर्शनार्थ उदयपुर आये। पूज्य श्री के सदुपदेश से उनके हृदय में परिग्रह से मूर्च्छित भाव आये। कुछ अंश में कम करने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। उन्होंने उसी समय रुपया दश हजार परमार्थ कार्य में व्यय करना निश्चय किया और व्याख्यान में नंदलालजी मेहता द्वारा जाहिर किया कि "रु० ५०००) उदयपुर पाठशाला इत्यादि शुभ कार्य में खर्च करने तथा रु० ५०००) अकाल पीड़ित स्वधर्मियों को सहायता देने के लिए मैं अर्पण करता हूं" इसके सिवाय रु० १२४१) का एक खत भी उदयपुर श्री संघको उन्होंने उसी समय अर्पण कर दिया।

चातुर्मास पूर्ण होने पर उदयपुर में धर्म का पूर्णतः उदय कर पूज्य श्री ने वहां से विहार किया। वे आखेड़ हो गुरुड़ी पधारते जो उदयपुर से ९ माइल दूर है, गुरुड़ी की सीमा में पूज्यश्री पधारे, ये इतने में उदयपुर का मांणा मोती नामका एक खटीक ८४ बकरे लेकर मारने के लिये उदयपुर आता था, उस समय पूज्य श्री गुरुड़ी की सीमा में एक आम्रवृक्ष के नीचे विराजते थे। कुल

बकरे पूज्य श्री से तीन चार हाथ दूर उस आम्रवृक्ष की छाया के नीचे बैठगए, उस समय पूज्य श्री के साथ उदयपुर के श्रावक नंदलालजी मेहता, श्रीयुत प्यारचंदजी वरड़िया तथा श्रीयुत कन्हैयालालजी वराड़िया तथा गुरुड़ी के भी श्रावक थे। पूज्य श्री ने माणा खटीक को एक हृदयभेदक लावनी सुनाई तथा असरकारक उपदेश दिया, जिससे खटीक ने कहा कि मुझे मुद्दल रकम मिलजाय तौभी मैं ये सब बकरे महाजनों के सुपुर्द करदूं। मेरे पास रसीद है तत्काल बकरे छुड़ादिये गये और गुरुड़ी पींजरापोल कि जो उदयपुर के कोठारीजी श्री बलवंतसिंहजी की सहायता प्रयास से चलती है, उसमें रखदिये गये।

सं० १९७५ के चातुर्मास पश्चात् पूज्य श्री कानोड़ भींडर आदि में पधारे। करीब १०० स्कंध हुए। बहुत से अन्यदर्शनी भी सुलभ बोधी हुये और उनमें कितने ही अन्य दर्शनियों ने जैनधर्म अंगीकार किया।

वहां से विहार कर पूज्यश्री बड़ी सादड़ी पधारे, उस समय बड़ी सादड़ी के जैनियों और बोहरों में बहुत कुसम्प बढ़गया था। बोहरे लोगों की ओर से जीवहिंसा की वृद्धि करने वाला मिलता हुआ वर्ताव ही इस कुसम्प वृक्ष का बीज था। बात यहां तक बढ़गई थी कि सादड़ी के बोहरों के साथ वहां के महाजनों ने लेनदेन व्यापार इत्यादि

कार्य बन्द कर दिया था। श्रीमान् आचार्य श्री ने सादड़ी
रने पर उस कुसम्प को भगाने और परस्पर भ्रातृभाव बढाने
लेये हमेशा उपदेश देना प्रारंभ किया जिसका शुभ परिणाम
हुआ कि निम्नांकित शर्तें होकर बोहरे लोगों के साथ समा-
। होगया।

१ सादड़ी के तालाव में कोई मछली न पकड़े और न मारे।
२ प्रत्येक एकादशी और अमावास्या के रोज जीवहिंसा न हो।
३ श्रावण, भाद्रपद और वैशाख तथा अधिक मासमें किसी भी दिन जीवहिंसा न हो।
४ आमराह में एवं प्रकटमें मांस ले कोई बाहर न निकले।

उपर्युक्त शर्तें बोहारे लोगों ने सब लोगों के सामने कुरान की
।थ ले मन्जूर कीं। दोनों पक्षों में कुसम्प दूर होने से सब तरफ
।नंद छागया और सब पूज्य श्री की अनुकरणीय अनुग्रह
द्वि की मुक्तकंठ से प्रशंसा करने लगे। उस समय पूज्यश्री यहां
क मास तक ठहरे थे और इस बीच में अनेक उपकार के
ार्य हुये थे।

अध्याय ४६ वाँ ।

सुयोग्य युवराज ।

वर्तमान साल में इन्फ्लूएञ्जा नामका भयंकर रोग समस्त भारत में फैलगया था । उदयपुर शहर पर भी आश्विन मास में उसका भयंकर आक्रमण प्रारंभ हुआ । इस दुष्ट रोगने पूज्य श्री को भी अपने पंजे में लिया । ऐसे सख्त ज्वर में भी पूज्य श्री अपना नित्य नियम शुद्धोपयोग पूर्वक करते थे और समभाव से वेदना सहते थे । थोड़े ही दिन में आराम तो होगया, परन्तु व्याधि के दिनों में ही पूज्य श्री ने औदारिक शरीर का क्षणभंगुर स्वभाव समझ पूर्वजों की कीर्ति कायम रखने, सम्प्रदाय की सुव्यवस्था और समुन्नति होने के लिये न्यायविशारद, पंडितरत्न श्री जवाहरलालजी महाराज को सर्वथा सुयोग्य समझ उन्हें सम्प्रदाय का भार सौंपना निश्चय किया और अपना यह निश्चय उदयपुर के संघ के अग्रेसर श्रावकों एवं रतलाम, अनेक शहर, ग्राम के आगवानों को, कि जो पूज्य श्री के दर्शनार्थ उदयपुर आये थे, कह सुनाया। सबने अत्यानन्दपूर्वक पूज्य श्री के इस सुविचार की प्रशंसा की, कारण कि श्रीमान् जवाहरलालजी महाराज ने ज्ञान, चारित्र,

वक्तृत्व शक्ति में और अणगार पद को सुशोभित करें ऐसे उत्तमोत्तम गुणों में ऐसी तो असाधारण उन्नति की है कि आपकी समानता करने वाले वर्तमान समय में कोई विरले ही साधु होंगे। आचार्य पद को दिपावें, ऐसे सर्वगुण उनमें विद्यमान है। दक्षिण और महाराष्ट्र में जिन्होंने जैन धर्म की विजयपताका फहराई है, वहां के जैन और जैनेतर लोग उन्हें जैनियों के दयानन्द सरस्वती कहते हैं। स्व० लोकमान्य तिलक ने उनकी असाधारण ज्ञान-सम्पत्ति और अद्वितीय वाक्-चातुर्य की मुक्तकंठ से प्रशंसा की है और स्वरचित गीतारहस्य नामक पुस्तक में जैनधर्म के विषय में किये हुए उल्लेख में उनके कथनानुसार सुधार करने की इच्छा प्रकट की थी। ऐसे पुरुष पूज्य श्री के उत्तराधिकारी हों और श्रीमान् हुक्मी-चंदजी महाराज की सम्प्रदाय की कीर्ति समुज्वल करें तो इसमें कौन आश्चर्य है? इसलिये सबकी सलाह अनुसार पूज्य श्री ने सं० १९७५ के कार्तिक शुक्ला २ के रोज व्याख्यान में श्रीमान् जवाहिर-लालजी महाराज को युवाचार्य पदपर नियुक्त किये, ऐसा जाहिर किया। जिससे सकल संघ में आनन्दोत्सव [illegible]। यह खबर उदयपुर श्रीसंघ ने डेपुटेशन द्वारा पंडितरत्न श्री जवाहिरलालजी महाराज को पहुंचाई और पछेवड़ी की क्रिया दानवीर स्थवर [illegible] श्री मोतीलालजी महाराज के हाथ से कराने बाबत आचार्य श्री ने फरमाया। जवाहिरलालजी महाराज उस समय दक्षिण में

थे। उन्हें यह खबर मिलते ही आपने पूज्य श्री से दूर विचरते बहुत समय होजाने से पूज्य श्री के दर्शन का लाभ ले उनके करकमल से पछेवड़ी धारण करने की अभिलाषा दिखाई। चातुर्मास पूर्ण होने पर उन्होंने दक्षिण से मालवे की तरफ विहार किया और आचार्य श्री मेवाड़ से मालवा की ओर पधारे। रतलाम में दोनों महापुरुषों का समागम हुआ और वहां सं० १९७९ के चैत्र वदी ९ के दिन पूज्य श्री ने अपने कर-कमल से पंडित श्री जवाहिरलालजी महाराज को युवाचार्य पद पर चतुर्विध संघ के समक्ष नियुक्त किये और अपने मुबारिक हाथ से पछेवड़ी धारण कराई। इस अलभ्य अवसर का लाभ लेने के लिये बाहर ग्राम के बहुत भाई उत्सुक थे। रतलाम संघ ने भारतवर्ष के प्रत्येक मुख्य २ शहरों में खबर पहुंचाई थी, जिससे संख्याबद्ध श्रावक श्राविका उपस्थित हुए थे।

पंचेड़ से ठाकुर श्री चैनसिंहजी इत्यादि भी पधारे थे। लेखक ने अपनी जिंदगी भर में ऐसा उत्सव न देखा था। तीर्थंकरों के समवसरण का संस्मरण होवे, ऐसा भव्य दृश्य था। उस समय का वर्णन बहुत लिखा जा सकता है, परन्तु पुस्तक बढ़ जाने के भय से 'कान्फ्रेन्स प्रकाश' में प्रसिद्ध किया हुआ हाल ही यहां पाठकों के अवलोकनार्थ उद्धृत कर देते हैं।

अध्याय ४७ वाँ ।

तलाम में श्रीमान् पंडितरत्न श्री श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब को युवाचार्य पदकी चादर ओढ़ाने का महोत्सव ।

हिन्द के प्रत्येक प्रांत में से करीब २०० ग्राम के लगभग सात आठ हजार मनुष्यों का अपूर्व सम्मेलन ।

श्रीमान् महाप्रतापी महाराजाधिराज श्री श्री १००८ श्री हुक्मीचंदजी महाराज की सम्प्रदाय के वर्तमान जैनाचार्य श्रीमान् गच्छाधिपति महाराजाधिराज १००८ श्री श्री श्रीलालजी महाराज साहिब ने उदयपुर में गत साल चातुर्मास में अपने शरीर में व्याधि आदि अनेक शारीरिक कारणों से परम्परा की रीत्यनुसार सम्प्रदाय के गौरव के संरक्षणार्थ तथा मुनि महाराजों की साल संभाल करने एवं उन्हें ज्ञान, दर्शन, चारित्रादि गुणों की वृद्धि में सहायता देने इत्यादि सम्प्रदाय रूपी कल्पवृक्ष को यथावत् स्थित रखने के आशय से महाराष्ट्र देश में विचरते उपरोक्त सम्प्रदाय के जाति-

कुल सम्पन्न विद्वद्रत्न पंडित-शिरोमणि मुनि महाराज श्री श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज को सब तरह योग्य समझ सं० १९७९ के कार्तिक शुदी २ के रोज उदयपुर के सर्व संघ समक्ष सम्प्रदाय के युवाचार्य जाहिर किये थे। उसकी चादर-पछेवड़ी ओढ़ाने वास्ते (श्रीमान् महाराज साहिब के पूर्वजों ने भी ऐसे महत् कार्यों में रतलाम को ही योग्य समझ मान दिया था, तदनुसार) श्रीमान् पूज्य महाराज साहिब ने भी रतलाम पधारने की कृपा की और श्रीमान् युवाचार्यजी महाराज को भी उदयपुर संघ के अग्रेसरों तथा रतलाम संघ के नेता श्रीयुत वर्द्धभाणजी पीतलिया तथा श्रीयुत बहादुरमलजी बांठिया भीनासर वालों ने शहर मीरी (जिला अहमदनगर) में जाकर मालवे की ओर पधारने के लिये प्रार्थना की। तदनुसार श्रीमान् युवाचार्य महाराज ने दक्षिण देश के अनेक ग्रामों के संघ की पछेवड़ी का उत्सव दक्षिण में करने की महती अभिलाषा होने पर भी श्रीमान् आचार्य महाराज साहिब के दर्शनार्थ तथा श्रीमान् आचार्य महाराज साहिब के कर-कमल से यह बख़्शीस लेने वास्ते बहुत परिश्रम उठाकर उग्र विहार कर रतलाम पधारने की कृपा की। श्रीमान् आचार्य महाराज साहिब ने फाल्गुन शुक्ला ५ गुरुवार के रोज और श्रीमान् स्थेवर महात्मा तपस्वीजी श्री मोतीलालजी महाराज ने मय युवाचार्य महाराज के फाल्गुन शुक्ला १० मंगलवार को रतलाम शहर पावन किया, जिनके आदर

र तथा भक्तिभाव प्रकट करने के लिये रतलाम संघ के सब श्रावक
रकाएं तथा अन्य धर्म के भी बहुतसे धर्मप्रेमी बन्धु बहुत दूर २
भक्तिपूर्वक रतलाम शहर में लाये। इन महापुरुषों के आगमन
दृश्य भी बड़ा ही भव्य और चित्ताकर्षक था। श्रीमान् उभय
पुरुषों के पधारने बाद युवाचार्य पदकी पछेवड़ी प्रदान करने
शुभ प्रसंग मिती चैत्र वदी ६ बुधवार ता० २६-३-१६ का
राया गया। यहां यह लिखने की आवश्यकता है कि श्रीमान्
चार्य महाराज के करकमल से श्रीमान् युवाचार्य महाराज को
दर रतलाम में बख्शी जायगी, यह खबर हिन्द के प्रत्येक विभाग
फैलजाने से अनेक देशवासी बन्धुओं ने उभय महापुरुषों के
क साथ ही दर्शन करने तथा इस अपूर्व प्रसंग का लाभ लेने के
ए रतलाम श्रीसंघ से बार २ आग्रह किया था, कि युवाचार्य
र महोत्सव के शुभ प्रसंग का लाभ लेने से हम वंचित न रहजायं,
सलिए हमें अवश्य खबर मिलनी चाहिए। इसपर से रतलाम
घ की तरफ से साधारण रीति से कार्ड तथा चिट्ठी द्वारा हिन्द
के प्रत्येक विभागों में आमंत्रण पत्रिकाएं भेजीगई थीं जिसे मानदे
हिन्द के प्रत्येक विभाग में से करीब २०० ग्रामों के हजारों श्रावक
श्राविका तथा अनेक प्रतिष्ठित अग्रेसरों ने यहां पधार कर रतलाम
की अलौकिक शोभा में अभिवृद्धि की थी। उनके उतरने तथा भोजन
के लिए रतलाम श्रावकों की तरफ से उचित प्रबन्ध किया था।

कितने ही अति उत्साही बन्धु तो श्रीमान् महामुनियों के पधारने की खबर मिलते ही इस शुभ प्रसंग का दिन नियत होने की खबर पहुंचने के पहले ही पधार गए थे। मुंबई संघ के खास नेता सेठ मेघजी भाई थोभण तथा हैदराबाद निवासी लाला सुखदेवसहायजी के सुपुत्र लाला ज्वालाप्रसादजी इत्यादि बहुतसे श्रावक पधारे थे। परन्तु सांसारिक अनेक कारणों से रुकने की प्रबल उत्कंठा होते भी अधिक दिन का अवकाश न मिलने से वे इस महत् कार्य में अपनी प्रसन्नता प्रकट कर पीछे चले गये थे। चैत्र वदी ५ के रोज से बहुतसे श्रावक, श्राविकाएं आने लगीं और चैत्र वदी ८ तक तो हजारों श्रावक श्राविकाएं उपस्थित होगईं। यह महत् कार्य भारतवर्ष के सर्व संघकी सम्मति से रीत्यनुसार होना आवश्यक समझ कर चैत्र वदी ८ मंगलवार ता० २५-३-१९ के रोज रातको आठ बजे हनुमान रुंडी के भव्य मैदान में प्रत्येक ग्राम से पधारे हुए श्रावकों के मुख्य २ प्रतिनिधियों तथा रतलाम संघ के प्रतिनिधियों की एक समस्त संघ सभा एकत्रित कीगई। और नवमी के प्रातःकाल को जो महत्कार्य होने वाला था, उसका प्रोग्राम नक्की किया गया। तथा आवश्यक अनेक कार्यों का निकाल कर अत्युपयोगी ठहराव किये गये।

ता० २६ मार्च १९१९ मिती चैत्र वदी ९ बुधवार को प्रातःकाल के छः बजे से श्रीमान् आचार्य महाराज विराजते थे, वा

स्थानक में हजारों श्रावक श्राविकाओं की मेदिनी पचरंगी, नाना-विधि पोषाकों से सजी हुई बहुत तेजी से चमकने लगी। उस छटा का दृश्य अपूर्व था। श्रीमान् पूज्य महाराज के पधारने के दिन से ही श्रावक, श्राविकाओं को उस भव्य मकान के कम्पाउन्ड में समावेश न हो सकने से सड़क के आम रास्ते पर शामियाना खड़ा किया गया था। तथा नीचे तख्त बिछाये गये थे, परन्तु इतने में भी हजारों मनुष्य कैसे बैठ सकें? इसलिये तम्बू फिर बढ़ाया गया तथा आसपास के और सामने के पांच २ सात २ मकानों के चबूतरों पर तथा सड़क पर लोगों की अत्यंत भीड़ होगई।

उस समय श्रीमान् पंचेड़ ठाकुर साहिब (जिला रतलाम) श्री चैनसिंहजी साहिब कि जो रतलाम नरेश के मुख्य सर्दार हैं वे इस जलसे को सुशोभित करने के लिये ही पंचेड़ से यहां पधारे थे। तथा शहर के अन्य अग्रेसर भी पधारे थे। करीब ८ बजे श्री-मान् आचार्य महाराज तख्त पर विराजमान हुए। उपस्थित साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका चतुर्विध संघ तथा अन्य सभाजनों ने उप-स्थित हो भक्तिपूर्वक सत्कार किया, तथा वंदना कर जयजिनेंद्र की ध्वनि आलापते हुये यथायोग्य स्थान पर बैठगये। पश्चात् श्रीमान् आचार्य महाराज ने प्रभु—प्रार्थना आदि मंगलाचरण फरमा कर श्रीनन्दीजी सूत्र की सज्झाय फरमाई। पश्चात् श्री युवाचार्यजी महाराज को कितनी ही अत्युपयोगी सूचनाएं कर अपने शरीर

पर धारण की हुई निज पछेवड़ी (चादर) को प्रसन्नतापूर्वक उप-स्थित सब मुनि महाराजाओं ने हाथ लगाकर चतुर्विध संघ के समक्ष " जयजिनेंद्र " "आचार्य महाराज की जय" "युवाचार्य महाराज की जय" "जैन शासन की जय " इत्यादि अनेक हर्ष-नाद गर्जना में धारण कराई। निस्संदेह वह दृश्य अलौकिक था। उसे किसी भी रीति से कहने के लिये हमारे पास शब्द नहीं हैं वह चादर धारण कर श्रीमान् युवाचार्यजी महाराज ने श्रीमान् आचार्य महाराज को तथा श्रीमान् स्थेवरमुनि श्री मोतीलालजी महाराजको यथाविधि उठ बैठ कर वंदना की। पश्चात् सर्व मुनि ने युवाचार्य महाराज को यथाविधि खड़े हो वंदना की। पश्चात् उपस्थित करीब ७५–८० महासतियों ने यथा विधि उठ बैठ वंदना की। बाद श्रावक श्राविकाओं ने वंदना की। उक्त वंदनादि क्रिया समाप्त हुये बाद श्रीमान् युवाचार्य महाराज नीचे के पाटपर से उठ श्रीमान् आचार्यजी महाराज के समीप आसनारूढ हुए, सामान मुनि हरकचंदजी महाराज ने उठ कर सब मुनि महाराजों की ओर से उक्त कार्य के लिये अपना संतोष प्रकट किया और श्रीमान् आचार्य महाराज की तरह युवाचार्य महाराज की आज्ञा पालन करना स्वीकार किया। उसे श्रीमान् हीरालालजी महाराज ने अनुमोदन दिया, तत्पश्चात् भारतवर्षीय समस्त संघ की ओर से निम्नलिखित महाशयों ने अपना संतोष प्रदर्शित कर अनुमोदन दिया—

(१) श्रीयुत उदयपुर नगर के सेठ नंदलालजी की तरफ से
लालाजी साहिब केसरीलालजी (उदयपुर)
(२) ,, सेठ चंदनमलजी पीतलिया अहमदनगर
(३) ,, जौहरी सेठ मुन्नीलालजी सकलेचा जयपुर
(४) ,, वर्धभाणजी पीतलिया रतलाम
(५) ,, सेठ पन्नालालजी कांकरिया नयानगर
(६) ,, मास्टर पोपटलाल केवलचंद राजकोट
(७) ,, प्रतापमलजी बांठिया बीकानेर
(८) ,, फूलचंदजी कोठारी भोपाल
(९) ,, नन्दलालजी मेहता उदयपुर
(१०) ,, कुंवर गाढ़मलजी साहिब लोढ़ा अजमेर

पश्चात् भंडारी केसरीचंदजी साहिब (देवास) ने बाहर [गां]वरों के कितने ही अग्रेसरों के, जो अनिवार्य कारणों से न [आ] र सके थे, उनके तार तथा पत्र पढ़ सुनाये, उन्हें यहां सविस्तर लिखते सिर्फ नाममात्र प्रकट किये जाते हैं—

(१) श्रीयुत जनरल सेक्रटरी सेठ बालमुकुन्दजी साहिब
मूथा, सतारा
(२) ,, वाडीलालजी मोतीलाल शाह मुंबई
(३) ,, कामदार सुजानमलजी साहिब बांठिया प्रतापगढ़

(४) राजश्री कोठारीजी साहिब श्री बलवंतसिंहजी साहि
प्रधान रियासत उदयपुर (मेवाड़)

(५) ,, जमशेदजी रुस्तमजी साहिब चीफ सेक्रेट
रियासत जावरा (मालवा)

(६) श्रीयुत कुंदनमलजी फिरोदिया बी. ए. एलएल. बी.
अहमदनगर

(७) ,, बच्छराजजी रूपचंदजी पांचोरा (खानदेश)

(८) ,, सेठ रतनलालजी दौलतरामजी बागली(खानदे

(९) ,, परमानन्दजी वकील बी. ए. कसूर (पंजाब

इनके सिवाय अनेक दूसरे सद्गृहस्थों से भी अनुमोदन पत्र आये थे। इन सब पत्रों में मुख्य आशय इस कार्य में अत्यन्त हर्ष पूर्वक अनुमोदन तथा मुबारिकबादी देने उपरांत स्वयं उपस्थित न हो सके इसलिये लाचारी दिखाई थी।

पश्चात् युवाचार्यजी महाराजने उक्त पद का भार स्वीकृत करते हुए अपने तथा चतुर्विध संघ के कर्तव्यों का अत्यन्त असरकारक शब्दों में दिग्दर्शन कराया था। फिर पंडित दुःखमोचन झा मिथिला निवासी ने समयोचित गायन तथा विवेचन बहुत ही उत्तम रीति से किया था। उसमें श्री आचार्य महाराज के साथ श्री संघ का क्या कर्तव्य है, उसका प्रतिपादन उत्तम रीति से किया था।

श्रीयुत सेठ वर्द्धभाणजी ने विवेचन करते श्रीमान् आचार्य
राज साहिब तथा श्रीमान् युवाचार्य महाराज साहिब ने इतने
श्रमपूर्वक यहां पधार कर रतलाम पावन किया तथा ऐसे मह-
ार्य का लाभ भी रतलाम को ही दिया इसके लिये श्री संघ की
र से उपकार जाहिर किया तथा श्रीमान् रतलाम नरेश तथा
फीसर वर्ग, जिन्होंने इस कार्य में पूर्ण सहानुभूति दिखाई है
नका उपकार प्रदर्शित किया तथा श्रीमान् पंचेड़ ठाकुर साहिब
था पधारे हुए श्राविक, श्राविका तथा अन्य महाशयों का संघ
रफ से उपकार प्रदर्शित किया। इस महान् कार्य में यहां के स्वधर्मी
ज्जनों ने तन, मन, धन से लाभ उठाने के वास्ते
ाये हुए साहिबों का आदर सत्कार, उतरने तथा भोजन
मेटी बनाकर वालण्टियरों के समान जो अपूर्व सेवा बजाई है तथा
तलाम संघ को महान् यश प्राप्त कराया है उन्हें भी धन्यवाद दिया,
पश्चात् जयजिनेन्द्र की दिव्य ध्वनि के साथ व्याख्यानसभा विस-
र्जित हुई। उस समय यहां के संघ तरफ से प्रभावना बांटी गई थी।

दोपहर के दो बजे श्रीयुत जालिमसिंहजी कोठारी इन्दौर राज्य
के आवकारी कमिश्नर साहिब का व्याख्यान हुआ, जिसके असर
से जैन महाविद्यालय खोलने बाबत कई उदार गृहस्थों की ओर से
बड़ी २ रकमों के वचन मिले, परन्तु वे स्कीम मंजूर होने बाद प्रकट
किये जायँगे। उस दिन नयेनगर निवासी सज्जनों ने आत्मभोग

दे रु० १५००) के पंचेन्द्रिय जीव छुड़ाये । समस्त शहर में कसाइय की दूकानें, भट्टियें, घाणियें इत्यादि आरम्भ तथा हिंसा के का बन्द रक्खे गए थे । उस दिन रात को भी एक जनरल मीटिंग क गई थी जिसमें विद्यालय, पाठशाला इत्यादि ज्ञानवृद्धि के सम्ब में अनेक भाषण हुए थे । जीवदया के लिये एक फंड हुआ जिस रुपये २५००) इकट्ठे हुए ।

ता० २७-३-१६ के रोज व्याख्यानों में सभा का ठा पूर्ववत् ही था, जिसमें फिर नथमलजी चोरड़िया का विद्यालय सम्बन्ध में व्याख्यान हुआ और उस समय भी कितने ही बच मिले । पश्चात् मीरी जिला अहमदनगर निवासी के अग्रेसरों वहां की गोशाला में दुष्काल से दुःख पाती गायों के लिये फंड इक कर उनकी रक्षा करने की प्रार्थना की जिसमें क़रीब २०००) मदद मिली ।

श्रीमान् जैनाचार्य महाराजाधिराज १००८ श्री श्रीलाल महाराज साहिब के व्याख्यान में 'जैनों की उन्नति कैसे होसकती है इस विषय पर बहुत ही मनन करने योग्य विवेचन हुआ । आच श्री ने फरमाया कि जबतक समाजमें स्वार्थत्यागी स्वयंसेवक उ स्थित हो, गरीब और निराधार जैनियों की संभाल नहीं ले श्रं वे सिर्फ थोड़े दिन सम्मेलन में उपस्थित हो समाज के अग्रेसर

फिर घर चले जायँ वहांतक उन्नति होना कठिन है। अधिक नहीं तो सिर्फ पचास ही स्वयंसेवक हमेशा जैनसमाज की सार संभाल रते रहें तो समाज की अवनति होना रुक जाय और थोड़े ही मय में समाजकी दशा निःसंदेह उदय होजाय, परन्तु वे स्वयं-सेवक सद्गुणी सदाचारी न्यायी और पक्षपातादि दोषरहित होने चाहियें।

ऐसे महाशय अवश्य समाज पर असर उत्पन्न कर सकते हैं। फिर कई सज्जनों ने उपरोक्त बातें समझ उपरोक्त नियमानुसार चलना पसंद किया और मेम्बरों में नाम लिखाया।

यों यहां के आनंद का सविस्तृत वर्णन लिखा जाय तो एक वृहद् पुस्तक तैयार होजाय, परन्तु पेपर में सिर्फ सारांश ही प्रकट किया गया है कि जिससे कार्य कर्ताओं को कंटाला न आवे और वे उसमें से कुछ काट छांट न कर सकें। इति शुभम्

रतलाम श्री संघ

(कान्फ्रेन्स प्रकाश ता० २२ एप्रिल १९१९)

रतलाम में शेषकाल का समय पूरण हुआ था ही कि उ समय एक पत्र जावरा स्टेट के चीफ सेक्रेटरी साहिब का श्रीम सेठ वर्द्धमाणजी पर आया, उसमें उन्होंने लिखा था कि मे

ओर से महाराज साहिब को निवेदन करें कि आपका चातुर्मा
जावरे में होगा तो बहुत ही उपकार होगा, रतलाम से विहारक
खाचरोद-उज्जैन की ओर पधारे, वहां जावराके श्रावकों ने चातुर्मा
के लिये आग्रह किया, इसलिये सं० १९७९ का चातुर्मा
जावरा किया। किसे खबर थी कि यह पूज्य श्री का अन्तिम चातु
र्मास है।

बहुत वर्ष से जावरा निवासी श्रावकों की अभिलाषा औ
प्रार्थना थी वह इस वर्ष सफल हुई। आषाढ शुक्ला ३ सोमवार
१२ ठाणे से आचार्य श्री जावरे पधारे। वहां आषाढ शुक्ला १
के रोज जयपुर निवासी भाई चौथमलजी ने करीब १७ वर्ष क
उमर में दीक्षा ली। दीक्षोत्सव जावरा के संघ ने बहुत धूमधा
से अति उत्साहपूर्वक किया, करीब २००० मनुष्य बाहर गांव
पधारे थे। किसी धर्मद्वेषी ने सरकार में इस मतलब की अर्ज क
कि चौथमलजी को बलात्कार दीक्षा दी जाती है इसपर से दीक्ष
के एक दिन प्रथम जावरा स्टेट के चीफ सेक्रेटरी जमशेदजी शेठ
चौथमलजी को अपने पास बुलाया, कई श्रावक भी उनके साथ थे
जमशेदजी शेठ ने कई विचित्र प्रश्नों से उनके वैराग्य की कसौटी
की, प्रत्येक प्रश्नका उत्तर बहुत ही संतोषकारक मिला, जिसे
सुनकर वे बड़े प्रसन्न हुये, उनका समाधान हुआ, और दीक्षा की
आज्ञा देदी।

जावरा के चातुर्मास में सागर वाले सेठ चांदमलजी नाहर सकुटुम्ब पूज्य श्री के दर्शनार्थ पधारे थे। उनकी पत्नी ने वहां अठाई की थी, इसके उपलक्ष्य में भादवासुदी ३ को उत्सव मनाया गया था, जिसमें ३० ग्राम के करीब २००० मनुष्य बाहर से आये थे।

पंचेड़ के श्रीमान् ठाकुर साहिब चैतसिंहजी व्याख्यान का खास लाभ लेने के वास्ते पांच वक्त यहां पधारे थे।

इस चातुर्मास में पूज्य श्री को अनेक उपसर्ग सहन करने पड़े, परन्तु आप स्वयं कभी नाहिम्मत या निराश न हुए, न कभी घबराये, परन्तु सत्यपथ पर कायम रहे। और घबरानेवाले श्रावकों को हिम्मत देते कि असत्य की झलक बहुत समय तक नहीं टिक सकती, सत्य ही की अंत में जय होती है। इसलिये सत्य को ग्रहण करो, सत्य को अनुमोदन दो, फिर स्वयं सत्य प्रकाशित हो जायगा।

इस समय कान्फ्रेन्स आफिस दिल्ली थी। समग्र श्री संघ की आफिस और प्रकाश पत्र का खास कर्तव्य तो पड़ी हुई छोटी दराड़ जल्द ही मिटाना था। जो उन दिनों का प्रकाश पक्षपात में न पड़ता, समाधान करने बाबत अपना सुप्रयास प्रचलित रखता और जलते में घी न होमता तो यह बात इतने से ही बंद हो

जाती। छोटी २ दराड़ में बड़े खोलने न पड़ते और आगरा कमेटी में सब लेख पीछे खींच लेने न पड़ते। सुभाग्य से पीछे प्रकाश में यह विषय न लेने बाबत ठहराव हुआ था।

लाला लाजपतराय के कलकत्ते की खास कांग्रेस में कहे हुए निम्नांकित शब्दों का यहां स्मरण हो आता है। "जब लोगों की इच्छा का ज्वालामुखी फटता है तब उसका पाप आंदोलन करने वालों के सिर पड़ता है।
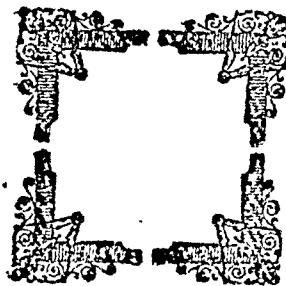
अध्याय ४८ वाँ ।

सवालाख रुपयों का दान ।
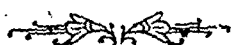
जावरा से मालवा मेवाड़ की ओर के विहार में छोटीसादड़ी में सेठ नाथूलालजी गोदावत ने सवालाख रुपयों का दान प्रकट किया था। जिस रकम के व्याज में अभी श्रीगोदावत जैन आश्रम छोटीसादड़ी में चलता है। एक तो रास्ते से दूर एक कोने में छोटासा ग्राम, दूसरे आत्मभोगी कार्यकर्ताओं की त्रुटि, इन दोनों कारणों से इस आश्रम का लाभ चाहे जैसा हम नहीं उठा सकते। जबतक स्वार्थत्यागी आत्मभोगी काम करनेवाले नहीं निकलेंगे वहां तक दान वगैरह का सदुपयोग नहीं होगा।

इस विहार में युवराज भी शामिल थे। सब मुनिराज नये शहर पधारे और वहां कल्पते दिन ठहरे। दोनों मुनिराज सूर्य और चन्द्र की तरह जैनधर्म की ज्योति का अपूर्व प्रकाश फैला रहे थे।

पंजाब में से पीछे आये हुए जावरे वाले संतों की प्रेरणा से आगरा, जयपुर और अजमेर के श्रावकों ने नयेशहर जाकर पूज्य श्री

से अजमेर पधारने की प्रार्थना की, जहां जावरे के संतों से मिल कर चारित्र के सम्बन्ध में मतभेद का समाधान होने की आशा दिखाई।

इस अत्याग्रह को मान दे पाली हो डुंगराल प्रदेश और गर्मी का परिसह सहन कर भी पूज्य श्री अजमेर पधारे। वहां साधु समाचरी के अनुकूल योजनाएं निश्चित कीगई। उदयपुर महाराणा साहिब ने श्रीमान् कोठारीजी बलवंतसिंहजी जैसे अनुभवी और कार्यदक्ष पुरुष को सुलह के मिशन में जाने बाबत परवानगी दी थी। पूर्ण कोशिश हुई। पूज्य श्री ने समाधानी के वास्ते कोशिश करने में कमी न की, परन्तु समाधानी की आशा उड़ जाने से पूज्य श्री ने वहां से विहार कर दिया।

उस समय लेखक अजमेर हाजिर था। और जैनपथप्रदर्शक वाले भाई पद्मसिंहजी तथा जैनजगत वाले भाई धारशीजी डाक्टर तथा भिन्न २ शहरों के श्रावकों के समक्ष जो २ प्रयास और बातें चीतें हुई वे अक्षरसः यहां लिखी जायं तो सत्यासत्य समझना सहल होजाय, परन्तु मैंने जिनके पवित्र जीवन लिखने के लिए यह कलम उठाई है उन महात्मा के मनोभाव की याद आते ही उनके जीवन-चरित्र में क्लेष वर्णन का एक विंदु भी न लिखना ऐसी प्रेरणा हो जाती है।

विहार के समय एक मुनि ने मध्य बाजार में पूज्य श्री को
के सामने अविवेकपूर्ण वचन कहे थे, परन्तु मानों आपने
ने ही न हों दिलमें जरा भी क्रोध न लाते आगे बढ़ते ही गए।
जी मुकाम पर उस अविवेकी मुनि ने पूज्य श्री से माफी चाही
। पूज्य श्री ने बिलकुल निर्मल भाव से जवाब दिया कि तुम्हारे
मैंने एक कान से सुन दूसरे कान की ओर से निकाल दिये
सलिए मुझे माफी की जरूरत नहीं है, परन्तु जब साथ के
ओं ने बहुत अनुनय विनय की, तब मुंह से ही नहीं, परन्तु
। अपमान करने वाले साधु के सिरपर हाथ रख माफी के साथ
र्म में सुदृढ़ रहने की आशिष दी, तब देखने वालों की आंखों
अश्रु भराये बिना न रहे।

अजमेर में इकट्ठे हुए श्रावकों ने अजमेर छोड़ते समय सुलह
आशा भी छोड़दी। ममत्व के पास निष्पक्षपात और शास्त्रानु-
र न्याय करने वालों को भी निराश होना ही पड़ता है। यह
जमेर का दृश्य एक पत्र-सम्पादक के शब्दों में ही यहां प्रसिद्ध
रते हैं। बहुत से बादल इकट्ठे हुए, गंभीर गर्जनायें भी हुईं, बिजली
ी चमकी, वर्षात के सब चिन्ह हुये, परन्तु अंत में यह सब
आडम्बर व्यर्थ गया, बादल बिखर गये, तृषातुर चातक निराश हो गये,
जापियों ने अपनी कला खिकोडली, ममत्व की चढ़कर आई हुई
आंधी के रजकणों से बहुतों की आंखें लाल होगई। निराशा औ

निरुत्साह की श्याम रेखा कइयों के वदन पर फिर गई, उत्साह से आये हुए निश्वास छोड़ पीछे फिरे, परन्तु आकाश में ऊंचे चढ़े हुए सूर्य देवता ने आश्वासन दिया कि धैर्य रक्खो, सत्यकी ही जय है और मैं वर्षांत को पलटा कर गर्मी से गभराये हुओं को शांति कराऊंगा।

डरपोक श्रावकों की सहनशीलता को भी धन्य है! समाज सेना के सेनापति हो करके समाजसेना का सत्यानाश करें, समाज स्टीमर के कप्तान हो करके जहाज को खराबी में ला छिन्न भिन्न करें, धर्म के नाम से ही अधर्म का जाल बिछा निरपराधियों को फांसा जाय, ये तो भ्रष्टाचार की अनुमोदना ही है और उस सहाय करने वाले श्रावक समाज के शत्रु गिने जायँ।

एक सज्जन को क्लेश की शान्ति के बारे में लिखा हुआ उसका उत्तर पाठकों के मनन करने योग्य होने से उन्हीं के शब्दों में यहां लिखा जाता है, आपने लिखा कि "मुनि क्लेश की शान्ति करो, तो मुनि क्लेश दोनों को सहयोगी स्थान कैसे? मुनिपन में क्लेश नहीं रह सकता और क्लेश में मुनिपन नहीं रह सकता"।

एक गुणानुरागी मुनिराज ने मुझे लिखे हुए पत्र के नीचे के शब्द पक्षपातियों को अर्पण करता हूं।

शिथिलाचार की पछेवड़ी में ढँकाते हुए साधु शरीर को तो मैं
की चमड़ी में सज्ज हुआ सियाल ही समझता हूँ, विचारे दूसरे
वरों की तो क्या ताकत परन्तु कुए म प्रतिबिम्ब दिखाकर सिंह
ही वह फंसा देता है। ऐसे सियालों को ढूंढ निकालने में श्री
जितनी बेपरवाही, आलस्य और टालमटूल करेगा उतना ही
का किला पोला होता चला जायगा। किले का एक आध
ढीला होजाय और जल्द ही उसे दुरुस्त कर दिया जाय
ठीक नहीं तो वह गुम्मज ही दुश्मनों को राह दे देता है।
रोगों को निर्मूल करने की संजीवनी मात्रा एक ही है वह
ऐसे सियालों से समाज को होशियार रखना और इस रोग के
का प्रसार फैलाते हुए रोकना'।

प्राचीन संस्कृत विभूति और गौरव के अमूल्य
श्री संघ का यह अंग अपनी अस्वस्थता है।
वनना चाहता है उठकर खड़े रहना मांगता है, परन्तु पक्ष-
के घोंघाट प्रयत्नों की सफलता में विलम्ब करते हैं। आग
आलस्य त्याग खड़े हो जागृत होने का जमाना है। सागर पर
कर आती हुई लहरें झेलने को तैयार होने का समय है।
घोर पर्यटन कर, विहार को राह दे, पक्षपात को
, अश्रद्धा और कुमन्द का निवारण करने

होना चाहिये । यह उपयोगी और कठिन कार्य है कुछ बच्चों का खेल नहीं है ।

जो चिन्ता हो, इच्छा हो, कर्त्तव्य का भान हो तो शुद्धचारित्रै निर्दयी स्वभाव, शान्त जीवन, संयम सार्थक और सतत परिश्रम शीलता का सेवन करो 'सोये तानी सोड़' का कलंक धो डालो समाजोन्नति करने का कलश तुम पर ढोलने दो ।

अपने में रहा हुआ मनुष्यत्व अपने को पुकार पुकार कर कहता है कि—

"पक्ष छोड़ पारखी निहाल देख नीकी कर", व्याख्यान पहिले यह वाक्य हररोज सुनते भी कान बहरे हो जायँ तो उनकी सार्थकता क्या ? अपने प्रातःस्मरणीय पूर्वजों का स्मरण करो, उनके ओर तुम्हारा पूज्यभाव हो तो उनकी आज्ञा सिर पर चढ़ाओ उनके सौंपे हुए समाज रक्षा के सुकार्य को हाथ में लो, वे शरीर या श्रावकों के गुलाम न बने थे ।

शुद्ध सात्विक जीवन व्यतीत करना, आत्मबल खिलाना, अध्यात्मिक उन्नति करना, यह आर्य के प्राचीन संस्कारों का तत्व है। भौतिक सिद्धान्त आध्यात्मिक प्रगति के बीच में कभी नहीं आ सकते । संयम सागर की जीवन नौका में सोते समय, तुम्हारी

अमरचन्दजी पीतलिया का स्मरण हुए बिना नहीं रह सकत प्रभाव और बनिये की रीति से समझाने और ठिकाने लाने व राय सेठ चांदमलजी साहिब और समाधान करने में पूर्ण अ अनुभवी राजश्री गोकुलदास राजपाल, जो इस समय कोठारीज साथ अजमेर होते तो आज भी संयम संस्था का विजय फहराता। शांत मुद्रा और शास्त्रों की आज्ञा से दूसरों को करने वाले सेठजी बालमुकुंदजी मूथा और भद्रिक स्वभावी बहादुर सुखदेवसहायजी जौहरी हाजिर होते तो प्राचीन प्र निभाने के लिये मथने वालों को लताप्रहार सहन करना न पड़ श्रीयुत वाड़ीलाल बीच में न पड़े होते तो स्वमान संभालने की ठिकाने लगा देते।

अभी भी समाज में अग्रेसर पद के योग्य अनेक श्रावक जमान है वे निष्पक्षपात हृदय से आगे आकर वर्तमान नाम श्रीमान् कोठारीजी की तरह खड़े रहे तो चारित्र संयम की संस्था सरलता से हो सके। बहुरत्ना वसुंधरा।

अध्याय ४६ वां।

उदयपुर महाराणा के भतीजे ने लग्न के समय पशुवध बंद किया।
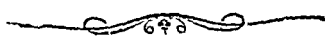
श्रीमान् आचार्यजी महाराज अजमेर से विहार कर नयेनगर पधारे और श्रीमान् युवाचार्य जी महाराज ने बीकानेर की तरफ विहार किया। नये शहर पूज्य श्री कितने ही दिन विराजे। चातुर्मास भी नयेनगर होने की संभावना थी इसके लिये कालक्षेप करने वास्ते आसपास मारवाड़ में पूज्य श्री विचरने लगे। अनुक्रम से विचरते पूज्य श्री बावेर पधारे। बावेर के श्रावकों ने पूज्य श्री के सदुपदेश से १००–१५० बकरों को अभयदान दिया। पूज्य श्री जब बावेर विराजते थे तब उस समय महाराणा उदयपुर के भतीज शिवरती महाराज हिम्मतसिंहजी के कुंवर साहेब की बरात बावेर के समीप राश ग्राम है वहां के ठाकुर साहेब के वहां आई थी। पूज्यश्री बावेर विराजते हैं ऐसी खबर मिलते ही हिम्मतसिंहजी इत्यादि सरदार बावेर पधारे और पूर्व परिचय के कारण अर्ज की कि चार पांच दिन वहां ठहरेंगे इसलिये आप राश पधारने कि

की कृपा करें तो हमें अत्यंत लाभ हो। श्रीमान् ने फरमाया कि अभी
राश आने का अवसर नहीं है सबब कि वहां आप की मिहमानी
में पशु पक्षियों के वध होने की संभावना है, तब उन्होंने अर्ज की
कि महाराज! हम हिंसा बिलकुल न होने देंगे।

आप राश पधारने की कृपा करें। तत्पश्चात् ठाकुर श्रीने राश जा
आज्ञा की कि 'हमारे लिए बिलकुल जीवहिंसा न करें'। इससे १
से १७५ बकरों को सहज ही अभयदान मिल गया। पूज्य श्री रा
पधारे। वहां व्याख्यान में शीवरती महाराज श्रीमान् हिम्मतसिंह
साहिब तथा अन्य सरदार, स्वमती और अन्यमती लोग बड़ी सं
में उपस्थित होते थे। राशके कामदार ने १०१ बकरों को अ
यदान दिया, श्रावकों ने भी बहुत से बकरों को अभयदान दिया
श्रीयुत झाव वाले के नीचे के विचार मांसाहारी लोगों को म
करने योग्य है, सादी जिंदगी और स्वच्छ खुराक यह अपना मु
लेख होना चाहिए। जैसा खाते हैं वैसा ही अपना स्वभाव बन
है अपनी खुराक में तामस की चीजें बहुत पड़ी हुई है अपनी खु
के लिए अपन मनुष्य तक का जीव ले लेते हैं अपन मांस वा
खाने के लिये खून पर चढ़ जाते हैं, जहांतक ऐसे निर्दोषों के
न रुकें वहां तक अपन में से चोरी, लूटपाट, दगा, फाटका,
बदमाशी का अंत सरलता से नहीं हो सकता।

दया का धर्म जब अशोक राजा ने स्थापित किया तब हिन्दु-
स्थान की बनावट हो गई। दयाधर्म जब राजकुमार पाल ने स्थापित
किया तब गुजरात की आबादी हुई। दयाधर्म जब राणी विक्टोरिया
के जमाने में प्रारंभ हुआ तब लोग संतोषी बनने लगे, परन्तु अपना
धर्म आज स्वार्थी, क्रूर और अधम बनता जाता है। पहिले अपने
को इसका त्याग करना चाहिये, दया से शांति होती है किसी का
कुछ गुन्हा हो तो इस पर दया करनी चाहिए, इनकी रक्षा करेंगे
तभी भ्रातृभावना का राज्य अपने में जल्द हो सकेगा।

गूंगे, दीन, निर्दोष और मूक प्राणियों पर जुल्म करना या
उन पर तेज छुरी चलाना निर्दयता है जिसका त्रास अपने को भी
सहना पड़ता है इसलिए अपने को सब जगह दया का प्रचार करना
चाहिए।

राश से पूज्य श्री कोकिन पधारे, वहां वे एक सप्ताह तक ठहरे
। वहां श्रीजी के दर्शनार्थ निकटवर्ती ग्रामों के सैकड़ों श्रावक आये
। करीब ४०० बकरों को जसनगर में अभयदान मिला। यहां से
विहार कर आषाढ़ वदी १ के रोज पूज्य श्री [illegible] पधारे, यहां के ठा-
कुर साहिब पूज्य श्री के व्याख्यान में आये। [illegible]
पूज्य श्री के व्याख्यान का अत्यंत ही असर हुआ। ठाकुर साहिब ने
कितने ही नियम तथा प्रत्याख्यान किये और चार बकरों को अभय-
दान दिया। दूसरे भी बहुत से लोगों ने नानाप्रकार की प्रति-

आषाढ़ वदी ३ के रोज पूज्य श्री कालू पधारे। वहां पूनमालालजी कोठारी ने सजोड़ चौथेव्रत का स्कंध लिया। उपवास, दया, पौषध तथा अन्य स्कंधादि बहुत हुए। कालू के कृषिकारों ने हरे वृक्ष तथा हरे चने इत्यादि जलाने के सौगंध लिये।

कालू में महाराज दौलतऋषिजी (जिन्होंने भी काठियावाड़ में विचर कर अत्यंत उपकार किया है वे) ठाणा ८ सहित पधारे। परस्पर बहुत आनंदपूर्वक ज्ञानचर्चा और वार्तालाप हुआ। व्याख्यान एक ठिकाने होता था। प्रातःकाल में व्याख्यान दिगम्बरी स्कूल में होता था। पहिले एक आध घंटे तक दौलतऋषिजी महाराज को व्याख्यान फरमाने के लिए पूज्य श्री कहते थे और बाद में पूज्य श्री व्याख्यान फरमाते थे। दोपहर को बड़े बाजार में श्री लक्ष्मीनारायणजी के मंदिर की तिबारी में दोनों महात्मा व्याख्यान फरमाते थे। परिषद् का जमाव दर्शनीय था। और दोनों संतों के श्रवणीय और अद्वितीय उपदेश के प्रभाव से महान् उपकार हुए। व्याख्यान में स्वमती और अन्यमती करीब ५०० मनुष्य आते थे। कालू से विहारकर आषाढ़ वदी १३ के रोज पूज्य श्री वालूंदे पधारे। वहां के धनाढ्य गंगारामजी मूथा ने, जिनकी दुकानें बंगलौर तथा

ग्राम में हैं, पूज्य श्री की पूर्ण भक्तिभाव से सेवा की। बलूंदा में
ज्य श्री पधारे, उसी दिन संध्या समय पूज्य श्री बाहर जंगल में
जा रहे थे तब एक खटीक की लड़की दो बकरों को ले जा रही
थी। सेठ गंगारामजी को यह खबर मिलते ही उन्होंने दोनों बकरों
को अभयदान दिला दिया।
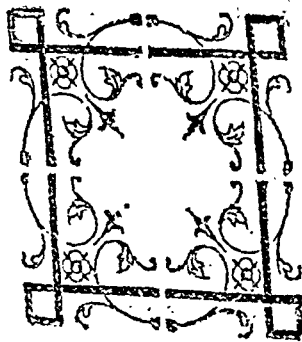
अध्याय ५० वां।

अवसान।

आषाढ़ वदी १४ के रोज बलूंदे से विहार कर पूज्य श्री जैतारण पधारे। वहां आहार पानी किये, बाद स्वाध्यायादि नित्य-नियम से निवृत्त हो पूज्य श्री ने दोपहर का व्याख्यान फरमाया। दूसरे दिन आषाढ़ वदी ३० के रोज नित्यनियम से निवृत हो पूज्य श्री ने प्रतिलेहन किया और पूजन प्रमार्जन कर अपने हाथ से ही कांजा निकाला तथा पाटिया लगा व्याख्यान फरमाने लगे। श्री भगवतीजी सूत्र में से गांगिये अणगार के भांगे फरमारहे थे। आधा घंटा बांचने के बाद महाराज श्री को अचानक चक्कर आने लगे और आखों में तकलीफ होगई। महाराज श्री ने अपने हाथ में से सूत्र के पन्ने सहित पाटी नीचे रख अपने दोनों हाथों से आखें थोड़े समय तक ढक रक्खीं। फिर ऐनक लगाकर सूत्र पढ़ने का प्रयत्न किया, परन्तु नहीं देख सके। तत्काल दूसरी वक्त चक्कर आया तथा शिर में असह्य दर्द होने लगा, तब महाराज श्री ने फरमाया कि अब मेरी आंखें पढ़ने का कार्य नहीं कर सकतीं। इसलिये मुंह से ही व्याख्यान देता हूं। पूज्य श्री ने उसी समय मुंह से सूत्र की गाथा

फरमाकर उसका रहस्य समझाना प्रारंभ किया । इतने में फिर चक्कर आये और दर्द का जोर बढ़गया । तब दूसरे साधु गब्बूलालजी को व्याख्यान देने की आज्ञा देकर आप अंदर पधारे और मुनि श्री मनोहरलालजी इत्यादि के समक्ष कहा कि " मैंने आगे ज्ञानी वृद्ध पुरुषों के मुंह से ऐसा सुना है कि बैठे २ आंख की दृष्टि एकाएक बंद हो जाय तो मृत्यु समीप आगई है ऐसा समझना चाहिये । इसलिये मुझे अब संथारा करादो और मुनि श्री हरकचंदजी आजायँ तो मैं आलोयना करलूं " ऐसा कह पूज्य श्री ने चतुरसिंहजी नामक एक साधु को आज्ञादी की तुम अभी नयेनगर की ओर विहार करो । श्रावकों को यह खबर मिलते ही उन्होंने एक शख्स को रेल में नयेनगर की तरफ रवाना कर दिया । वह साधुजी के पहिले शीघ्र पहुंचगया और मुनि श्री हरकचंदजी महाराज की सेवा में सब हकीकत निवेदन की । श्रीमान् हरकचंदजी महाराज यह सुन आषाढ़ सुदी १ के रोज बारह कोस का विहार कर नीमाज पधारे और वहां चिंताग्रस्त स्थिति में रात्रि निर्गमन की । दिन उदय होते ही नीमाज से विहार कर आठ बजने के समय जेतारण पहुंचगए । उनसे महाराज श्री ने कहा कि " मेरी आखें तुम्हारी मुंहपत्ति नहीं देख सकती । अब मुझे शीघ्र संथारा कराओ । जीव और काया भिन्न होने में अब विशेष विलम्ब नहीं है । " मूलचंदजी महाराज ने कहा कि महाराज ! संथारा

कराने जैसी बीमारी आपके शरीर में नहीं मालूम होती है तब हम संथारा कैसे करावें ! शिष्यों के हृदय में बड़ा भारी धक्का लगा, वे ढीले होगए। पूज्य श्री उन्हें हिम्मत दे जागृत करते कि 'जो नियम तीर्थंकर तक को लागू हुआ वह नियम सब के लिए एकसा है। इस समय तुम से बन सके उतना धर्म ध्यान सुनाओ, यही तुम्हारा कर्तव्य है।'

पूज्य श्री के मस्तिष्क में तीव्रवेदना हो रही थी। दर्द क जोर बिजली की तरह बढ़रहा था। परन्तु उपस्थित साधु दर्द का उग्र स्वरूप पूज्य श्री की अद्वितीय सहनशीलता से न समझ सके और पूज्य श्री के वार २ कहने पर भी उन्होंने संथारा नहीं कराया, परन्तु ज्यों २ व्याधि बढ़ती गई, वैसे २ पूज्य श्री के भाव समाधि में स्थित होते गए, ऐसी उज्वल वेदना में भी उनकी शांति और धैर्य अनुपम था, कायरता प्रतीत हो ऐसा एक शब्द भी इस सिंह समान शूरवीर, धीरपुरुष के मुंह से कभी न निकला।

पूज्य श्री की बिमारी के समाचार जेतारण के श्रावकों ने देशा-वरों में तारद्वारा अनेक शहरों के मुख्य २ श्रावकों को पहुंचा दिये थे। उस पर से कई श्रावक वहां आपहुंचे थे। आषाढ शुक्ला १ के रोज ब्यावर के कई भाई आये और उसी दिन शामको उज्जैन

बुलाकर ... ी बीमारी आपके शरीर में नहीं मालूम होती है तब हम
हो यों कहन ... रहना, पंडित श्री ... वें ! शिष्यों के हृदय में बड़ा भारी धक्का लगा, ते
धर्मी, चुस्तसंयमी ... श्री उन्हें हिम्मत दे जागृत करते कि 'जो निय
रख सके हैं । मैं और ... हुआ वह नियम सब के लिए एकसा है
उनकी सेवा करना, श्री हुवे ... उतना धर्मध्यान सुनाओ, यही तुम्हारा
मान रखना, शासन की शोभा बढ़ाना, 'क्षमाता हूं ...
पूज्य श्री बोलते रुक गए । पास बैठे हुए मुनिमं ... अश्रु
पूर्ण हो गए, एक मुनिराज ने उत्तर दिया " पूज्य साहेब ! आप की आज्ञा हमें शिरोधार्य है, आप निश्चित रहें । हम बालकों को आप क्या क्षमाते हैं ! सच्चा क्षमाना तो हमें चाहिये कि आपके उपकार के प्रमाण में हम आपकी किंचित् सेवा का भी लाभ न ले सके" इससे अधिक बोलना न हो सका ।

समयसूचक पूज्य श्री ने इस शोक के समय जल्द ही श्रीसूत्र की गाथा बोलना प्रारंभ की । शौक को शांति के रूप में बदल दिया और शिष्य भी मंदस्वर से उसमें शामिल होगये ।

दूसरे दिन आषाढ़ शुक्ला २ को सवेरे अजमेर से श्रीमान् गाढ़मलजी लोढा तथा व्यावर के कई गृहस्थ आ पहुंचे। उस दिन पूज्यश्री के शरीर में व्याधि बहुत बढ़गई थी और नित्यनियम

जब वे विराजते थे तब तो वे उनका लाभ न ले सके, और पीछे से रोना यह बिलकुल पाखंड ही है।

खुले नेत्रों से तो उनके स्मितपूर्ण मुखचंद्र के दर्शन नहीं कर सकेंगे, विशालभालरचित मुखकमल में से झरते हुए मधुर प्रोत्साहक अमृत के पान से पवित्र न हो सकेंगे, परन्तु हां, [illegible] यही उनकी आत्मा थी। अपन उन श्री [illegible] आकाश में से एक वात्सल्यनाम सूर्य अस्त होगया। चतुर्विध संघ का [illegible] आधार स्तंभ टूटगया, उस समय साधुजी के १२ थाने [illegible] की सेवा में उपस्थित थे।

पूज्यश्री के शरीर में रहा हुआ प्राण उनका ही नहीं परन्तु [illegible] संघ का था। राजा महाराजाओं की भी न होसके ऐसी [illegible] चिकित्सा की गई। कई स्थान पर तपश्चर्या प्रारंभ हुई, [illegible] दिया गया, प्रतिज्ञायें ली गईं और पूज्य श्री को आराम होने [illegible] प्रार्थनाएँ की गईं, परन्तु उस आत्मा को परमात्मा के आमंत्रण [illegible] बेपरवाही न करना होने से असंख्य श्रावकों को शोकसागर में [illegible] में डाल समाज का सितारा अदृश्य होगया। संथारा इतना [illegible] न होता तो इस मृत्युमहोत्सव को दिखाने के लिये लोग [illegible] और लाखों रुपये खर्च कर देते।

बुलाकर ... बीमारी आपके शरीर में नहीं मालूम होती है तब हम हो यों कहन ... वें ! शिष्यों के हृदय में बड़ा भारी धक्का लगा, वे रहना, पंडित श्री ... श्री उन्हें हिम्मत दे जागृत करते कि 'जो नियम धर्मी, चुस्तसंयमी ... हुआ वह नियम सब के लिए एकसा है। रख सके हैं। मैं और ... उतना धर्म ध्यान सुनाओ, यही तुम्हारा उनकी सेवा करना, श्री हुक ...

... रखना, शासन की शोभा बढ़ाना, 'क्षमाता ... ना ता इन महात्मा के शरीर में थी वह समस्त श्रीसंघ में व्याप्त होगई।

कौनसा वज्रहृदय इस वियोग का—अवसान समय का वर्णन कर सकता है ? कौन कवि इस विरह को वर्णन करने की हिम्मत धारण कर सकता है ? एक भक्त के शब्द में ही कहें तो—उनका शरीर गया, मूर्ति अदृश्य होगई, उनका दर्शन दूर होगया, स्थूल दुनियां में स्थूल व्यवहार मस्त दुनियां में उनका स्थूल स्वरूप नाश होगया, परन्तु यशःशरीर अभी तक मौजूद है।

कौन ऐसा हृदयशून्य होगा कि इस समय लोगों को रोने नहीं देगा। मस्तिष्क की गर्मी कम नहीं करने देगा, परन्तु ... बध हुआ।

" रोई रोई आंसूड़ानी नदिओं वहे तोये।
गयुं ते गयुं, शुं आवी आंसु लुछवानुं शाणा॥"

जब वे विराजते थे तब तो वे उनका लाभ न ले सके, और
छे से रोना यह बिलकुल पाखंड ही है।

खुले नेत्रों से तो उनके स्मितपूर्ण मुखचंद्र के दर्शन नहीं
र सकेंगे, विशालभालरचित मुखकमल में से झरते हुए मधुर
ल्हादक अमृत के पान से पवित्र न हो सकेंगे, परन्तु हां, उनका
ासन यही उनकी आत्मा थी। अपन उन श्री के सद्विचारों को
ण करेंगे तो वे हरएक के हृदय-सिंहासन पर आरुढ़ हुए दृष्टि-
त होंगे।

पूज्यश्री के देह का नाश हुआ, परन्तु उन श्री के प्राणरूप
न श्री के आत्मारूप चारित्रधर्म का ध्येय तो विशेष विस्तृत ही होगा।
ह ध्येय खूब फैले, पूज्यश्री की अमर आत्मा समाज के कोने २
ें प्रवेश करे और पूज्यश्री सा जीवनबल सब संतों में स्फुरित हो।

तीसरे दिन बीकानेर, उदयपुर इत्यादि कई ग्रामों के श्रावक
एकत्रित होगए और आचार्य श्री का निर्वाणोत्सव बहुत ही धूमधाम
से किया गया।

चंदनादि लकड़ियों से चिता तैयार कीगई। चिता में आग रखने
की बहुतों की हिम्मत न हुई। अंत में पूज्य श्री का मानुषीदेह भस्मी-
भूत होगया। श्रावकों ने मुनिराजों के पास आ आश्वासन दिया औ

मंगलिक सुनकर अपने २ स्थान पर गए। भस्मी, हड्डी व दांत बा
से श्रावक लेगये।

भारत की शोचनीय दशा यह है कि अपने नेताओं की
कम होती है और तन्दुरुस्ती जल्द बिगड़ने लगती है। मृत्यु के सम
स्वामी विवेकानंद की आयु ३९ वर्ष, श्रीयुत केशवचंद्र सेन
आयु ४५ वर्ष, जष्टिस तैलंग की ४८ वर्ष और श्रीयुत गोपाल कृ
गोखले की ४९ वर्ष की थी। पूज्यश्री का आयुष्य अवसान के स
५१ वर्ष का ही था। इस उम्र में भी नई २ बातें सीखने का उत
बढ़ता ही जाता था। उस समय ग्लेडस्टन और एडीसन याद
बिना नहीं रहते थे।

अंतिम कसौटी तक तपकर शुद्ध कुंदन होने में पूज्यश्री
असह्य परिसह सहन करने पड़े, पूज्य श्री के प्रकाशित कीर्ति
को बुझाने के लिए नीच प्रयास हुए, परन्तु सूर्य के सामने
डालने वाले की क्या दशा होती है ? पूज्यश्री के शुद्ध संयम
तेज से इर्षाग्नि पिघल जाती, ईर्षा के वेग में चारित्रधर्म का
कर बैठने वालों को वे दया की दृष्टि से देखते और डर बताते
कि कहीं जैन--शासन के मुख्य स्तंभरूप साधु धर्म के क्रियाकां
की यह हत्या न कर बैठे।

श्रीयुत डाह्याभाई के शब्दों में यह प्रसंग पूर्ण करते हैं, जिन्होंने
ारे लिये इतना कष्ट उठाया और हम उन्हें जीतेजी विशेष
ाराम न दे सके। उनके दुःख में उनके जीतेजी हमने
ृ भाग न लिया, जिनकी तप्त आत्मा को कुछ भी शान्ति
दे सके। उनके गुणगान करने की शक्ति भी हम बाहिर
दिखा सके.........किसी कृतघ्नी ने तो उनकी व्यर्थ ही टीका
। इन महात्मा, इन संत, इन नरम हृदय के दयालु पुरुष का
ना श्रेय करने वाले सुकृत्यों का त्याग कर दिल दुखाया यह
याद आते हृदय फट जाता है .....परन्तु अहोभाग्य है कि
प महारथी की जगह एक दूसरे संत महात्मा ने स्वीकृत की है।
ार सम्प्रदाय के सेनापति का जोखिम भरा हुआ पद स्वीकार
ा है, उन्हें यश मिले।

लगभग बत्तीस वर्ष तक चारित्र प्रवर्ज्या पाल और उसी बीच
र वर्ष तक आचार्यपद को सुशोभित कर अनेक भव्य जीवों
ो प्रतिबोध दे पूज्यश्री ने जीवन सार्थक किया; आपका जन्म,
ापका शरीर, आपकी प्रवर्ज्या, आपका आचार्यपद यह सब
ास्तित्व जनसमूह के कल्याण के लिये ही था, आपने अपनी
ाय में एक भी शिष्य न करने की प्रतिज्ञा करली थी, परन्तु
बहुसंख्यक मनुष्यों को दीक्षा दे उनका उद्धार किया और कई
ीवरों पर अवर्णनीय उपकार किया। आपका चारित्र अत्यंत ही

अलौकिक और आपके गुण अपार अकथनीय हैं। विद्वान् लेखक और शीघ्रकवि वर्षों तक वर्णन करते रहें तो भी आपके चारित्र का यथातथ्य निरूपण होना या आपके गुणसमूह का पार पाना अशक्य है। आपके ज्ञान, दर्शन, चारित्र की शुद्धि, आपके अतीत काल में उत्पन्न हुए शुभकर्मों के उदय का अपूर्व प्रभाव, वर्तमान की शुभ प्रवृत्ति, आगामी समय के लिये दीर्घदर्शीपन इत्यादि इतने प्रबल थे कि जिनकी उपमा देना ही अशक्य है। इस पंचम काल के जीवों में से आपकी समानता कोई कर सकता है, ऐसा व्यक्ति दृष्टिगत नहीं होता। तथापि आश्वासन पाने योग्य बात यह है कि आपके समान ही अनुपम आत्मिक गुण, अद्वितीय आकर्षण शक्ति, दिव्य तेज, अपार साहसिकता, आत्मबल, आपकी गादी पर विराजमान वर्तमान आचार्य श्री १००८ श्री पं० रत्न श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब में अधिक अंश से विद्यमान है। हमारी यह हार्दिक अभिलाषा है कि आपके ज्ञान, दर्शन, चारित्र के पर्यायों में समय २ पर अधिक २ अभिवृद्धि होती रहे और वे निरामयी तथा दीर्घ आयुष्य भोग जैनधर्म की उदार और पवित्र भावनाओं का प्रचार करने में अपने कार्य में पूर्ण सफलता प्राप्त करें।

अध्याय ५१ वाँ ।

शोक-प्रदर्शक सभाएं

मारवाड़, मालवा, मेवाड़, गुजरात, काठियावाड़, दक्खिण, आदि इत्यादि प्रत्येक प्रान्तों के अनेक शहरों और ग्रामों में पूज्य श्री के स्वर्गवास की खबर मिलते ही हड़ताल, अगते, पर्व, पाले गए। ध्यान किया गया और लाखों रुपये जीवदया के कार्य में व्यय किये गये थे * स्थानाभाव के कारण वह सब वृन्तान्त यहां नहीं दिया जा सकता, किन्तु उनमें से मुख्य २ सभाओं का हाल नीचे दिते हैं:—

मुम्बई संघ की वृहद् सभा, बाज़ार बंद रक्खे गए ।

तारीख २४-६--२० को चींचपोकली के जैन उपाश्रय में जैनसंघ की एक आमसभा की गई थी। उस समय सैकड़ों जैन

---

* एक अन्य धर्मी साधु ने कितने ही जीव को अभयदान दिराने का निश्चय किया था, वह भी कोशीश कर के परिपूर्ण किया था।

बाई, भाई एकत्रित हुए थे और पूज्य आचार्यश्री के स्वर्गवास जैन कौम और धर्म में ऐसी बड़ी भारी कमी हुई है कि, जिस पूर्ति नहीं होसकती, इस विषय पर कई सज्जनों के व्याख्यान और अत्यन्त शोक प्रदर्शित किया गया।

अन्त में मुंबई के जैनसंघ की ओर से बीकानेर में विरा मान युवराज महाराज श्री जवाहिरलालजी महाराज तथा वहां श्रीसंघ एवं रतलाम के जैनसंघ को शोकप्रदर्शक तार दे निश्चित हुआ।

पूज्य आचार्यश्री के निर्वाण—महोत्सव के समय जीवों अभयदान देने के लिए एक फंड किया गया, जिसमें उपस्थित सज्ज ने पांच हजार रुपया दिया और बांदरा इत्यादि स्थानों के कस खाने बंद रक्खे गए, फंड अभी शुरू है।

आज रोज मुम्बई में जौहरी बाज़ार, सोना, चांदी बाज़ार, बाज़ार, मूलजी जेठा मारकीट, मंगलदास कपड़े का मारकी कोलावे का रुई बाज़ार, दाणा बाज़ार, किरयाना बाज़ार इत्यादि व्य पारी बाज़ार बंद रहे थे।

रतलाम।

ता० २५-६-२० को बड़े स्थानक में समस्त संघ की एक सभा एकत्रित हुई। जिसमें मुंबई संघ का शोकप्रदर्शक तार पढ़ा गया।

त चार व्याख्याताओं ने सद्गत पूज्यश्री का जीवनचरित्र कह सुनाया। पूज्य महाराज श्री के अकस्मात् वियोग से समस्त संघ को अत्यंत खेद हुआ और निम्न ठहराव पास किये गए थे।

प्रस्ताव पहला।

श्रीमान् परमगुणालंकृत, क्षमावान्, धैर्यवान्, तेजस्वी, जगद्व-भ, महाप्रतापी, आचार्यपदधारक परम पूज्य महाराजाधि-ज श्री श्री १००८ श्रीलालजी महाराज का आषाढ़ शुक्ला ३ निवार को सु० जेतारण में अकस्मात् स्वर्गवास होगया, यह त्यन्त खेदजनक और हृदयभेदक खबर सुनकर इस स्त-म संघ को पूर्ण रंज व दुःख प्राप्त हुवा है। इन महात्मा वियोग से सारे हिन्दुस्थान में अपनी समाज के लोगों के तिरिक्त हजारों अन्य मतावलम्बियों को भी अत्यंत रंज हुवा है। री जैन–समाज ने एक अमूल्य रत्न खोया है और ऐसा फिर त होना दुर्लभ है। इसलिये यह संघ सभा पूरी रंजी के साथ र जाहिर करती है। इसी मजमून का तार मुम्बई संघ का भी रों पर आया हुआ सभा में सुनाया गया। यह सभा मुंबई संघ उपकार मानती है। और श्रीमान् वर्तमान पूज्य महाराज श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब को और संघ को निदर और रतलाम संघ की तरफ से आश्वासन देने के लिये श्रीका... र दिया जाने का ठहराव करती है व वर्तमान पूज्य महाराज

श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी की तेज क्रांति दिन २ बढ़े ऐसा हृदय से इच्छती है ।

प्रस्ताव दूसरा ।

श्रीमान् पूज्य महाराज के स्वर्गवास की खबर सुनते ही तमाम संघ ने उसी वक्त अपनी २ दुकान बंद करके शोक माना था, तो भी संघ की तरफ से फिर ठहराने में आता है, कि स्वर्गस्थ पूज्य महाराज के शोक-निमित्त फिर भी आषाढ़ सुदी १३ मंगलवार को सब व्यापार बंद रक्खा जावे और हलवाई, भड़भूजा आदि की भी दुकानें बंद कराई जावे व गरीबों को अन्न वस्त्र का दान दिया जावे। यह कार्य ४ आदमियों के सुपुर्द किया जावे। इस खर्च में जो कोई अपनी खुशी से जो रकम देवे सो स्वीकार की जावे।

उपरोक्त ठहरावानुसार मिती आषाढ़ सुदी १३ को रतलाम में कई दुकानें बंद रहीं। अन्न वस्त्रादि दान दिये गए और पूज्य महाराज की स्मृति में सब लोगों ने वह दिन पर्व के समान समझा।

राजकोट।

ता० २६-६-२० को यहां के तालुका स्कूल के मिडिल हाल में राजकोट स्टेट के मे मुख्य दीवान रावबहादुर हरजीवन भवान भाई कोटक बी. ए. एलएल. बी. के सभापतित्व में राजकोट के

ों की एक जाहिर सभा हुई थी। उस समय सभापति महो-
था अन्य वक्ताओं ने पूज्यश्री के राजकोट के चातुर्मास में
हुए अवर्णनीय उपकारों का अत्यन्त ही असरकारक भाषा
वेचन किया था और पूज्यश्री के स्वर्गवास से शोक प्रकट
नीचे मुजिब ठहराव सर्वानुमत से पास किये गए थे:—

ठहराव १ ला.

ाजकोट के निवासियों की यह सभा श्री स्था० जैनाचार्य
हाराज श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज के अपक्व वय
वास हो जाने से अंतःकरणपूर्वक अत्यन्त खेद प्रकट
है।

.१९६७ का चातुर्मास निष्फल जाने से संवत् १९६८ के
स में खासकर जानवरों के लिये बड़ा भारी दुष्काल
उस समय चातुर्मास में पूज्यश्री के यहां के निवास में पूज्य-
यहां के तथा बाहर ग्राम के लोगों को दया और सेवा धर्म
चा अर्थ समझा कर लोगों में दया का बड़ा भारी जोश
त्या था और पूज्यश्री के सद्बोध से राजकोट ने इस
ा में वहां से तथा बाहर देशावरों से बड़ा भारी फंड
त कर मनुष्यजाति एवं जानवरों के प्रति बड़ा भारी
कान कर दिखाया था, ऐसे एक सच्चे महान् विद्वान् पं

और चारित्रवान् महामुनि के स्वर्गवास से सिर्फ जैन-जाति को ही नहीं परन्तु अन्य सभों को भी एक बड़ी भारी कमी हुई है, ऐसा यह सभा जाहिर करती है ।

ऊपर का यह ठहराव पत्र द्वारा तथा उसका थोड़ासा सार तार द्वारा बीकानेर तथा रतलाम संघ को सभापति महोदय के हस्ताक्षर से भेजने का प्रस्ताव करती है ।

तारकी नकल.

Citizens of Rajkot assembled in public meeting express their deep sorrow for the premature demise of Achārya Mahārāj Shri Shrilālji and beg to say that in him not only the Jain Commuuity but a people in general have lost a most learned pious and ideal saint. Please convey this message to Achārya Mahārāj Shri Jawāharlālji with our humble requests.

ठहराव दूसरा,

आचार्य महाराज श्री श्रीलालजी महाराज जैसे नमूनेदार गुणवान् मुनि ने अपने पर किये हुए उपकारों के कारण उनकी ओर जितना भी मान और भक्ति प्रगट कीजाय उतनी ही थोड़ी है, ऐसा इस सभा का विश्वास है। इसलिए यह सभा ऐसी उम्मेद करती है कि उन का

दिन जो जैन तथा कितने ही अन्य शास्त्रों के अनुसार चातुर्मास की पर्वी का है तथा व्रत—नियम धारण करने का एक पवित्र दिन है, उस दिन महाराजश्री के तरफ भक्तिभाव रखने वाले लोग अपना २ कार्य-धंधा बंद रख हो सके तो उपवासादि कर धर्मध्यान में बिताएंगे और इसतरह स्वर्गस्थ महाराज श्री की तरफ अपना भक्ति-भाव प्रदर्शित करेंगे। यह ठहराव भी महरबान सभापति साहिब की सही से पत्रद्वारा बीकानेर तथा रतलाम संघ की तरफ भेजना स्वीकार हुआ।

जोधपुर।

ता० ३-७-२०

पूज्य महाराज श्री के स्वर्गवास से संघ में बड़ा भारी शोक हुआ। पंडित श्री पन्नालालजी महाराज ने उस दिन व्याख्यान बंद रखे और भारी उदासी प्रकट की।

कलकत्ता।

तार द्वारा समाचार मिलते ही समस्त श्रावक भाइयों ने मारवाड़ी चेम्बर्स की सम्मति के अनुसार बाजार का सब कामकाज बंद किया। हटखोला पाट का बाजार भी बंद रहा। संवर पौषध, तथा दान पुण्य बहुत हुआ।

भीलवाड़ा।

आषाढ़ शुक्ला ४ को प्रातःकाल खबर मिलते ही स्वमती अन्यम इत्यादि में सम्पूर्ण शोक होगया। धर्मध्यान पुण्य दान इत्यादि य शक्ति हुआ। जावेर वाले संत श्री देवीलालजी महाराज यहां विरा थे उन्हें एकाएक यह खबर मिलने से बड़ा भारी रंज हुआ व्याख्यान भी बंद रक्खा, गौचरी करने भी न गए। फ़िर भी वे सदृ आचार्यश्री के गुणानुवाद अपने व्याख्यान में समय २ पर गा रहते थे।

सादड़ी।

अवसान की खबर मिलते ही जीवदया के लिये रु०४००) का फंड हुआ, उनसे जीव छुड़ाये गए। द्वितीय श्रावण वदी १ के रोज़ एक दवाखाना खोलागया।

रामपुरा।

श्री ज्ञानचंद्रजी महाराज के सम्प्रदाय के मुनि श्री इन्द्रमलजी ठाना २ यहां विराजते हैं। पूज्यश्री के स्वर्गवास की खबर सुनते ही उन्हें अत्यन्त खेद हुआ। उस दिन आहार पानी भी न किया, संघ में भी बड़ाभारी शोक रहा।

बड़ी सादड़ी।

सकल संघ में बड़ा भारी शोक छागया। व्याख्यान बंद रहा, ध्यान, दान, पुण्य, व्रत, प्रत्याख्यान बहुत हुआ। आसपास ग्रामों में भी यही बात हुई।

रावलपिंडी।

जैन सुमति मित्रमंडल के आधीन जितनी संस्थाएं हैं, वे सब रक्खी गई।

रायचुर।

यहां पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की स्मृति में एक 'श्रीलाल न पुस्तकालय' खोला गया।

धोराजी।

व्याख्यान की परिषद् में शतावधानी पं० रत्नचंद्रजी महाराज पूज्यश्री के स्वर्गवास के शोक प्रदर्शित करते हुए अपने परिचय वर्णन के साथ पूज्यश्री के उत्तम गुणों की तारीफ करते ऐसा करुणारसपूरित वर्णन किया कि श्रोताओं का हृदय शोकनिमग्न हो गया और कितने ही की आखों में से अश्रुप्रवाह बहने लग गया। बहुत व्रत, प्रत्याख्यान हुए। परस्पर बातचीत कर रु० १२५) के कपासिये ले अपंग ढोरों को खिलाये गए।

भूसावल ।

पत्र द्वारा समाचार मिलते ही आषाढ़ शुक्ला ११ को तमाम व्यापार आदि बंद रक्खा गया और श्रावकों ने दया, पौषध कर समस्त दिन धर्मध्यान में बिताया।

अमृतसर ।

युवराज श्री काशीरामजी महाराज ने एक दिन व्याख्यान बंद रख बड़ा भारी शोक प्रदर्शित किया। समस्त संघ में बड़ा भारी शोक रहा।

हींघनघाट ।

साधुमार्गी तथा मंदिरमार्गी भाइयों ने मिलकर आषाढ़ शुक्ला ११ के रोज बाजार बंद रक्खा।

कपासन ।

तपस्वीजी हजारीमलजी ठाणा ३ वहां विराजते हैं, स्वर्गवास की खबर मिलते ही साधु, श्रावकों में भारी शोक छागया। दूसरे दिन व्याख्यान बंद रहा। महाराज ने उपवास किया। पांजरापोल खोलने का प्रबंध हुआ।

जावद ।

समस्त श्रावकों ने दुकानें बंद रक्खीं और उपाश्रय में एकत्रित
ए, कसाइयों की दुकानें बंद रक्खी गईं गरीबों को वस्त्र तथा भोजन,
शुओं को खल तथा घास, कबूतरों को जुवार तथा कुत्तों को
ड़ियें डाली गईं, जिसमें रु० २००) खर्च हुए। कई तैलियों ने अपनी
ार से ही कई पशुओं को खल खिलाई ।

उपरोक्त स्थानों के अतिरिक्त उदयपुर, बीकानेर, दिल्ली,
कोला, शिवपुरी, सिन्दुरणी, जावरा, मोरवी, जयपुर इत्यादि अनेक
हरों और ग्रामों में सभाएं इत्यादि दान-पुण्य, संवर, पौषध हुए,
रन्तु स्थल-संकोच से तथा कितने ही स्थानों का सविस्तृत हाल
मिलने से यहां दाखिल न किया गया ।
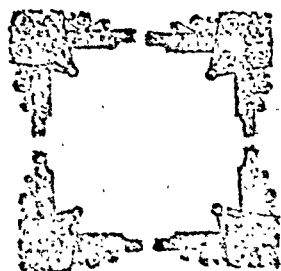
अध्याय ५२ वाँ ।

सम्पादकों, लेखकों इत्यादि के शोकोद्गा

हमारी निराशा. ।

साखी ॥

अंतरनी आशाओं सघली अतरमांज समाणी.
रह्या मनोरथो मनना मनमां कहेवी कोने कहाणी.
न्होती जाणी ....के आम थशे हाणी. ॥१॥

पूज्य महाराज श्री श्रीलालजी महाराज के शोकदायक अ
साान के समाचार थोड़े ही समय के पहिले मैंने सुने तब मेरे ह
को बड़ा भारी धक्का लगा, स्वर्गस्थ महात्मा श्री के उम्दा गुणों
गुणानुवाद पहिले मैंने कई जनों के मुंह से सुना था और तब से उन
मिलने की मेरी प्रबल उत्कण्ठा रही, परन्तु दुर्दैव ने यह अभिला
निर्मूल करदी। जब पूज्यश्री का यहां पधारना हुआ तब मेरा
हार कच्छ के प्रदेशों में था और मैं जब लींबड़ी आया तब मैं
पूज्यश्री से फिर से इस तरफ पधारने के लिए वीनती करा
परन्तु वे नहीं पधार सके, और मैं अपने गुरु की सेवा में लगा रहने

इन दिनों लींबड़ी न छोड़ सका, इसलिये मेरी यह अभिलषा अपूर्ण ही रही।

मेरा उनके साथ प्रत्यक्ष परिचय नहीं होने से मेरे मन पर जिन गुणों की छाप पड़ी है वह मात्र परोक्ष है।

लींबड़ी में पूज्य महाराज का आगमन संवत् १९६७ के वैशाख-शुक्ला ६ गुरुवार को २१ ठाणों से हुआ। तब वे वहां के उपाश्रय में ठहरे थे। उनके व्याख्यान में वहां के ठाकुर साहिब प्रतिदिन उपस्थित होते थे। ऑफिस के लोग सब व्याख्यान का लाभ ले सके, इसलिये कोर्ट का मॉर्निङ्ग टाइम बदल दिया था, जिससे ऑफिस के या ग्राम के अन्य इच्छुक समुदाय का जमाव खूब होता था। पूज्यश्री के व्याख्यान की शैली अत्यंत आकर्षक शास्त्रानुसार और देश, काल की वर्तमान भावनाओं की पोषक थी। उनकी प्रकृति अत्यंत सरल और निर्मल थी। प्रत्येक जाति के मनुष्य उनका सत्संग का लाभ लेते थे और उन्हें उनके अतिशय के कारण सब अपने ही धर्मगुरु के समान मानते थे। व्याख्यान में अनेक प्राचीन कवियों के काव्य, सुमधुर कंठ से शिष्यवर्ग के साथ इस तरह पोषित करते थे कि जिससे श्रोताओं पर अजब असर पड़ता था। मारवाड़ की वीरभूमि के इतिहास के दृष्टांत और उन पर सिद्धांतों की ऐसी मजेदार घटना घटित करते थे कि श्रोतालोग रस

में बिलकुल निमग्न बन जाते थे। व्याख्यान से उठने की इच्छा तो होती ही नहीं थी, कारण मधुरी शैली से बुलंद आवाज द्वारा श्रोताजनों को सम्हालते रहते थे। उस समय यहां पंडितराज व सूत्री स्वर्गस्थ महाराज श्री उत्तमचंदजी स्वामी अपने समुदाय सहित विराजते थे और वे भी व्याख्यान में हमेशा पधारते थे। उनके मुंह से तथा अन्य श्रावकों के मुंह से यह सब तारीफ मैंने सुनी तथा उनकी वाणी की महिमा तो मैंने कइयों के मुंह से सुनी है।

बहुत से मनुष्यों ने उनको व्याख्यान सुने हैं उनसे मैंने सुना है कि उनका प्रभाव अब भी श्रोताओं पर वैसा ही कायम है, ऐसी प्रभावोत्पादक शैली और श्रोताओं के मन पर छाप पाड़ने की शक्ति इस बात को सूचित करती है कि पूज्यश्री जो कथन श्रोताओं के समक्ष प्रकाशित करते थे उसे वे अपने हृदय में सत्य के सदृश स्वीकार करते थे और उस सत्य पर उनकी अचल श्रद्धा और प्रीति के कारण ही वे श्रोताओं पर ऐसा उत्तम प्रभाव गिरा सकते थे।

शास्त्रों में फरमाई हुई आज्ञाओं का वे असाधारण धैर्य और दृढ़ श्रद्धापूर्वक पालन करते थे। पूज्यश्री जिन भावनाओं को अपना धर्म और कर्तव्य समझ स्वीकार करते थे उन्हें वे अपनी आत्मा के ऐकात्मभाव में परिणमा सकते थे, इसके सिवाय वर्तमान साधु-समुदाय में दुर्लभ और अनेक उच्च तथा साधु के शृंगार स्वरूप गुणों के धारक थे।

ऐसे एक परम दुर्लभ गुणधारी साधु के देहांतरगमन से हम को सचमुच बड़ा भारी खेद है। सद्गति के अनुयायी समाज का कर्तव्य है कि वे पूज्य महाराज श्री के गुणों को अपने जीवन में लाने का प्रयत्न करें और उन गुणों द्वारा उनकी स्मृति की संरक्षा करें।

ली० संतशिष्य,

भिक्षु नानचन्द्र.

जैन-हितेच्छु।

...काश से गोला का जल भी सूख जाता है यह कहावत तद्दन ...या नहीं है, जैन समाज का एक कोहिनूर अदृश्य होगया है, ... और इनके प्रतिपक्षी के दृष्टिबिंदु में कहां फरक था तथा कौन ...ने दरजे पर्यंत दोषी था, यह चर्चा मैं बिलकुल पसंद नहीं ...।.......... आज जब पूज्य महाराज हयात नहीं हैं तब इतना अवश्य कहूंगा कि दूसरे श्रीलालजी पचास वर्ष में भी न होंगे और दूसरे साधुओं की पार्टी जमाने में मुख्यतः अग्रेसर ...षी थे।

अब तो पूज्यश्री विदा होगए हैं और [illegible] ...सकते हैं। अब चारित्र, [illegible] और [illegible] ...स होजायगी और इसका [illegible] ...। श्रीलालजी महाराज के [illegible]

कर 'जैन गुरुकुल' या ऐसी एक कोई संस्था खोलना जिसका सं-
म्मेलन बीकानेर में इस अंक के निकलने के पहिले ही होगया
होगा, मैं चाहता हूं कि इन पवित्र पुरुष का नाम किसी भी संस्था
या फंड के साथ न जोड़ा जाय। समाज की वर्तमान स्थिति देखते
कोई संस्था कैसे चलेगी यह अन्दाज लगाना कठिन नहीं और
जहां हजार तकरारें होतीं ही रहेंगी, ऐसी संस्था के साथ इन शांत
पवित्र पुरुष का नाम जोड़ने में भक्ति की अपेक्षा अविनय होना
ही अधिक संभव है। चारित्र के नमूनेदार दो महात्मा काठियावाड़
में जन्मे हुए श्री गुलाबचन्द्रजी और राजपूताने में जन्मे हुए श्रीलाल
जी दोनों अदृश्य होगए हैं यों तो दूसरे भी बहुत से मुनि शुद्ध
चारित्री हैं, व्याकरण न्याय के ज्ञाता भी हैं, परन्तु गुलाब और
श्रीलाल ये दो पुष्प अनोखे ही थे एक में सत्य के लिये क्रोध
(Noble indignation) और दूसरे में आत्मगौरव में से
स्वाभाविक उत्पन्न हुआ गूंगा मान दृष्टिगत होता था। परंतु ये दो
उनका मूल्य बढ़ानेवाले तत्व थे। अप्रशस्त क्रोध और अप्रशस्त मान
से ये बिलकुल भिन्न वस्तुएं थीं। क्षत्रिय में और संघ के नायक में
प्रशस्त क्रोध और प्रशस्त मान आवश्यक हैं और यह तो उनके
उज्वलता का सबूत है।

इस अवसर पर एक आध्यात्मिक सत्य Mysticism का
कारण स्फुरित हो जाता है। चारित्र और बुद्धि के संपर्क का यह

ाय है, व्याकरण, न्याय, तर्क के अभ्यास का शौक़
ापूताने की ओर के श्रावकों एवं साधुओं की प्रकृति में न
। वहां सिर्फ निर्दोष चारित्र का शौक़ था। बुद्धि की लीलाएं
ों ओर पुजाने लगीं और इनमें से कितने ही साधु भी धीरे २
ावैभव की ओर झुकने लगे। पहले तो सब को यह अच्छा
।। फिर चारित्र और बुद्धि में परस्पर युद्ध प्रारम्भ हुआ। यह
लम्बे समय तक टिकना चाहिये। दोनों एक दूसरे की तपल
र कर अन्त में चारित्र बुद्धि में और बुद्धि चारित्र में समा
वगी। अर्थात् बुद्धि और चारित्र से परे ऐसे "आध्यात्मिक भान"
ाखिल हो जायंगे। हृदय और बुद्धि दोनों एक व्यक्ति के मालिक
समान तो भयंकर हैं परंतु व्यक्ति के साधन—दास के समान
योगी हैं। दयालु और विद्वान दुःखी हैं। परन्तु योगी कि जो
य और बुद्धि के राज्य में होकर उस सीमा को पार कर गया है
एक सुखी महाराजा है कि जिसके दोनों तरफ हृदय और
े हाथ जोड़ हुक्म की आज्ञा मांगती रहती हैं। इस स्थिति तक
ुचने के लिये हृदय की बलवान् तरंगें और बुद्धि की उद्धताई
ान करनी ही पड़ेगी।

वा. मो. शाह.

जैनपथ-प्रदर्शक, आगरा।

भीषण वज्रपात

जिस पै सब को दिमाग था हा ! न रहा।
समाज का एक चिराग था हा ! न रहा॥

आज चारों ओर से इस जैन-धर्म पर आपत्ति की घ
घटायें घिरी देखकर किस जैन-धर्म के प्रेमी को दुःख न
होगा। जिस जैन-धर्म के मुख्योद्देश "अहिंसा परमो धर्मः"
कारण एक दिन सारे नभोमंडल में उसकी तूती बोलती थी,
उसी का प्रचार था, आज वही धर्म—हा शोक है कि उसी के
यायी उसका अनुकरण न करके उसको अधोगति में पहुंचा
कोशिश कर रहे हैं।

धर्म को हीनदशा से बचाने अर्थात् बिना बोझ की खुश
डूबने वाली नौका को ऊपर उठाने के लिये, उसे पार करने के
ही साधु महात्माओं ने अहर्निश प्रयत्न किया, किंतु खेद
"अहिंसा परमोधर्मः" का प्रचारक जैन धर्म आज अपने साधु
भी वंचित होता जाता है। हा ! जब इस जैन-धर्म के स्थ

ाचार्य्य प्रवर, विद्वान्मंण्डली के रत्न, क्षमा के भूषण, दया के ागर, शांति के उपासक, धर्मप्रेमी, निर्भीक, स्पष्टवादी, रात्रिन्दिवा न-धर्म का प्रचार करने वाले परमपद प्राप्त पूज्य श्रीलालजी हाराज के आषाढ शुक्ला ३ शनिवार संवत् १९७७ जयतारण शहर जपूताना में स्वर्गारोहण का समाचार सुनते हैं तब कलेजे के टे २ हो जाते हैं ।

आषाढ सुदी ३ शनिवार जैन-धर्म के इतिहास में काले अक्षरों लिखा जायगा । जिस बात की कुछ भी सम्भावना न थी, वही ांखों के आगे घटित होगई । जिस घोर आपत्ति की आशंका से मन अधीर हो उठता है वह अंत में इस दुखिया जैन-माज की आखों के सामने आ ही गई । अनेक आशाओं पर नी फेर कर तमाम स्थानकवासी ही नहीं लेकिन अनेकों जीवों अथाह शोकसागर में निमग्नकर उस दिन निष्ठुर काल ने नकवासी जैन-वाटिका में वज्रपात करके जिस प्रस्फुटित और न्त तक सौरभ विकीर्ण करने वाले सुमन को उसकी गौरव-ालिनी लता की गोद में से उठा लिया । देखते २ बिना किसीके ल में पहिले से इस बात का ख्याल भी आये हुए और बिना सी महान् कष्ट के ५१ वर्ष तक औदारिक शरीर की ... कर अपने सुकृत मय जीवन में महाशुभकर्म ...

बंधकर तेजस और कार्मण शरीर को लिये हुए किसी वैक्रिय शु
शरीर में दीर्घ काल के लिये स्थायी हो गए।

एक तो योंही जैन-धर्म पर आपत्ति की घनघोर घटाएं छा र
हैं। लगभग एक माह ही हुआ होगा कि, अभी पंजाब प्रांत
लाहौर नगर में श्रीमान् अनेक गुणों के धारक जैन-मुनि श्
शादीरामजी और दूसरे जैन-नवयुवक पंडित मुनि श्री कालूराम
महाराज का जो सियालकोट में स्वर्गवास हुआ उसको तो हम भू
भी न पाये थे कि, इतने ही में हम जैन-धर्म के प्रचारक कार्यक
और उसके माननीय स्तम्भ का दुःखदायी एकाएक समाचार सुन
हैं तब हमें

"फ़लक तूने इतना हँसाया न था।
कि जिसके बदले यों रुलाने लगा।"

वाली लोकोक्ति याद आती है। हा! जब हम मुनिवर
श्रीलालजी महाराज के मिष्टभाषण की ओर ध्यान देते हैं और वि
चार करते हैं कि, जिनका मिष्टभाषण जैन-धर्म के केवल स्थान
वासी ही सुनकर प्रसन्न नहीं होते थे, परन्तु जिस मिष्टभाषण
सुनकर सब ही मधुरभाषण करने की प्रतिज्ञा करते थे, हा! आ
वे ही पूज्यवर श्रीलालजी जिनका नाम सोने में सुगन्ध
कहावत चरितार्थ करता था नहीं है! यदि शेष है तो वह ही

कि, जो उन्होंने जैन-धर्म की रक्षा, सेवा और अभिवृद्धि के लिये अपने प्यारे जीवन को तुच्छ वस्तु की तरह उत्सर्ग करने में समर्थ किया। स्वदेश, जाति और समाज की उन्नति एवं योगक्षेम के लिये जो भारी से भारी विपत्ति झेलने और जीवन में सम्पूर्ण सुखों को अनायास ही बलिदान करने को तैयार हुए। मृत्युशय्या पर बेबसी में पड़े हुए भी अपने प्राणप्रिय धर्म की हित कामना के उच्च विचार जिनके मस्तिष्क में घूमते रहे जो दीन दुखियों के अकारण बंधु थे, जिनके पतन पर एक ओर शोक की कालनिशा, दुःख की तरंगें तथा हृदय-विदारक हाहाकार ध्वनि और दूसरी तरफ समस्त नरनारी, बूढ़े बड़े और सर्व साधारण के मुंह से यशः-सौरभ का पटहनाद चारों ओर गूंज रहा है उनका देह और प्राण समयरूपी गह्वर में चिरकाल के लिए छुप-जाने पर भी वे चिरजीवी हैं उनकी मृत्यु किसी प्रकार भी हो नहीं सकती। यमराज का शासन दण्ड उनकी विमल-कीर्ति की अभेद्य चट्टान से टकराकर कुंठित हो जाता है—टुकड़े २ होकर गिर जाता है। मनुष्य चक्षु से अगोचर रहने पर भी उनकी पूजनीय आत्मा विचरण बराबर करती रहती है। मरने के बाद भी उनका पवित्र और आदर्श जीवन उसपर मनन करने वालों के जीवन को पवित्र और उच्च करने का महान् उपकार करता रहता है।

आज शोकाकुल और निराधार समूह के मुंह से

जैसे—अब क्या करें, कुछ सूझता नहीं, ऐसे ही वाक्य निकल रहे हैं लेकिन यह कबतक के हैं ? पाठकगण ! ये तभीतक के हैं जब तक हम और आप अपने विषयरूपी कषायों को छोड़ हुए हैं क्योंकि, यह अनादि काल से नियम चला आया है कि, प्रायः ज्यों २ दिन बीतते जाते हैं त्यों २ जीव अपने विषयरूपी कषायों में फंसकर शोक से शांति पाते जाते हैं। इसी प्रकार थोड़े समय के बाद आप भी उन पूज्य श्री की याद तक भी भूल जाओगे। थोड़ी देर के लिए यह हम मान भी लें कि, जिन्होंने पूज्य श्री को देखा है जिनको परिचय है वे कदाचित् न भी भूलें तो भी उनकी भावी संतान को तो नाम भी सुनना एक तरह से कठिन हो जायगा ऐसी अवस्था में हमारा और आपका कर्तव्य है कि, हम स्वर्गीय श्री श्री १००८ पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज का

सच्चा स्मारक

बनाने को हर प्रांत, देश, शहर और गांव में "श्रीलालजी फण्ड" की स्थापना करके स्मारक के लिये चंदा करें।

जैन-धर्म ही एक ऐसा धर्म है जो कृतघ्नता के दोष से बचा हुआ है इसलिये आईये, भ्रातृगण ! हम अपने माननीय, पूजनीय जैन-धर्म के अनन्य भक्त, निःस्वार्थ-प्रेमी पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के स्मारक रूप में कोई संस्था बनाकर अपने कर्तव्य का पालन करें। यों तो जैन-समाज में आजकल छोटी मोटी कितनी

ही संस्थायें हैं लेकिन हमारी राय में इस पवित्र आत्मा की एक ऐसी आदर्श संस्था होनी चाहिये जैसे वे आदर्श पूज्य, मुनि, आचार्य, प्रभावशाली और जैन-धर्म के स्तम्भ थे।

आपका जन्म संवत् १९२६ में ग्राम टोंक (राजपूताना) में हुआ था। आपके पिता श्री का नाम चुन्नीलालजी ओसवाल था। वे बड़े ही धर्मात्मा थे। आपने संवत् १९४४ माघसुदी ५ को दीक्षा ली थी। पश्चात् संवत् १९४७ में आपको पूज्यपदवी की प्राप्ति हुई। तब से आप अहर्निशं धर्म-चर्चा में ही अपना समय बिताने लगे व सदा अपने जीवन को धार्मिक-जीवन बनाने में ही लगे रहते थे। ऐसे महात्मा के असमय में उठजाने से जैन-धर्म को बड़ी हानि पहुंची है तथा शीघ्र ही इसकी पूर्ति होना भी असंभव है। इस समय में इनके शोक-प्रकाश में सभी जगह सभायें होरही हैं। इसी वैशाख महीने में हम ने आपकी अजमेर में खूब सेवा की तब आपकी बातों से मालूम हुआ कि, जैन-पथ-प्रदर्शक पर आपकी विशेष कृपा थी आप इस पत्र को जैन-जाति को उठाने वाला समझते थे इनके शोक में प्रदर्शक का कार्यालय बराबर तीन दिन तक बंद रहा कार्यालय ने इस शोक संवाद को हरएक के कानों तक पहुंचाया हमने अपने भाईयों से आशा की थी कि, ज्योंही वे इस शोक समाचार को सुनेंगे अपने २ वहां शोक सभाएं करेंगे तथा एक बड़ी भा[illegible] सभा संगठित करके 'श्रीलाल जैन फण्ड' की स्थापना [illegible]

मुम्बई समाचार में से।

(लेखक—श्रीयुत चुन्नीलाल नागजी बोरा, राजकोट) साम्प्रत समय में अशांति, अज्ञान और जीवन कलह का तीक्ष्ण साम्राज्य जगत में सब तरफ फैला हुआ है। ऐसे समय में पूज्य महाराजश्री "रण-मां एक बेट समान" थे और संसार के त्रिविध तापों से तप्त जीवों को सिर्फ यह एक ही दिलकी शांति और विश्वास मिलने का पवित्र स्थान था वह भी जैन कौम के हीन भाग्य से नष्ट होगया और जैन-धर्म तथा कौम को बड़ा भारी धक्का लगा तथा उनकी यह कमी बहुत समय तक पूर्ण होना कठिन है।

हिन्द के भिन्न २ भाग-पंजाब, राजपूताना, मारवाड़, मेवाड़, मालवा, कच्छ काठियावाड़, गुजरात, दक्षिण, आदि देशों के निवासी हजारों और लाखों जैनी पूज्य महाराज श्री पर अत्यंत पूज्यभाव रखते थे और तरणतारण रूप जहाज के समान वीतरागी साधु के नमूने के तुल्य समझते थे। चौथे आरे की प्रसादी के समान श्री महावीर स्वामी विचरते थे। उस सुखदाई समय के प्रसाद स्वरूप में पूज्य आचार्य श्री की गिनती होने से उनके शांतिमय मुखमंडल के दर्शनार्थ एवं महाप्रभावशाली दिव्यवाणी और जगत् में सर्वत्र-सुख और शांति फैलाने वाले पवित्र सद्बोधामृत के पान करने के लिये प्रतिवर्ष चातुर्मास में हिन्द के तमाम भागों में से हजारों

महान् विकट कार्य को परिपूर्ण करने के लिए सतत परिश्रम करते हैं। कारण कि, आर्यमान्यता के अनुसार भी प्रत्येक जीवात्मा षड् रिपुओं द्वारा अनादि काल से बंधा है और उनके साथ उसका घनिष्ट सम्बंध है तात्पर्य यह कि, स्वसत्ता को भूला हुआ जीवात्मा पुनः वही सत्ता प्राप्त करने के लिए मार्ग बदलता है और नये मार्ग पर चलने से पूर्वकाल के दूसरे अभ्यास के कारण अनेक व्याघात प्रतिघात उत्पन्न होते हैं। उन्हें हटाने के लिए सतत उद्योग की आवश्यकता प्रधानता से रहती है यह उद्योग और यह विचार पूज्य आचार्य श्री में मुख्यतया और अनोखी रीति से भरा हुआ दृष्टिगत होता था। आधुनिक जैन और कई एक जैन-साधु लौकिक और लोकोत्तर धर्म की भिन्नता बिना समझे साधु और श्रावकों के आचार, व्यवहार और शिक्षा आदि कर्मों में आधुनिक समयानुसार हेरफेर करने की हिमायत करते हैं। उन्हें पूज्य श्री ने एक दृष्टांत रूप होकर विश्वास दिलाया कि आत्मा को निज गुण की प्राप्ति में पर्व समय जिन वस्तुओं की आवश्यकता थी, आजभी उन्हीं की आवश्यकता है और भविष्य में भी उन्हीं की रहेगी जिन्हें अपनी आत्मा का भान करने की तीव्र जिज्ञासा है और जिन्होंने इसीलिये संयम ग्रहण किया है ऐसे महानुभाव और ज्ञानी पुरुष आज भी श्री वीरप्रभु की आज्ञानुसार राग द्वेष से विरक्त हो एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक के जीवमात्रकी सच्चा

सी समक्ष समस्त जीवोंपर समभाव रख स्वकार्य में तत्पर रहते और धर्मान्ध न बन जैन और जैनेतर प्रत्येक जीव कर्मों से हलके ऐसा सोचकर उपदेश देवे और अपने चारित्र को समुज्वल लोगों और जगत् पर महान उपकार करने के सिवाय स्वआ- के कल्याण करने में भी सम्पूर्ण आराधक होते हैं ऐसे ही उपकारी पूज्यश्री में प्रधानता से थे। यही कारण है कि, पूज्यश्री और जैनेतर वर्ग में अति माननीय और पूजनीय होगये थे।

'मा हणो, किसी जीव को मन, वचन और कर्म से दुःख दो, यह पूज्यश्री का अतिप्रिय और मुख्य उपदेश था। सी जीव को तानिक भी दुःख होता देख या सुन वे मन में बड़े :खी होते थे और कभी २ उन्हें उनका वह दुःख सहन भी हो सकता था।

संवत् १९६७ के साल में पूज्यश्री काठियावाड़ में विचरते थे। समय वर्षा न होने से संवत् १९६७ में भयंकर दुष्काल ा; दया और क्षमा की मूर्ति के समान आचार्य श्रीने जब देखा कि, बिचारे प्राणी सिर्फ घास के बिना मरण की शरण में जा है तब उन्हें अत्यन्त दुःख पैदा हुआ। परिणाम यह हुआ कि, काल पीड़ित दुखी जानवरों की रक्षा से उचित लाभ और पु- पर ऐसा सचोट उपदेश शास्त्राधार से दिया कि, उसके प्रभ

से श्रोतृवर्ग में दया की उत्कृष्ट भावना उत्पन्न हुई और राजकोट
छोटे शहर में एक ही दिन तीस हजार रुपयों का फंड इकट्ठा
गया कि, जिससे हजारों जानवरों को अभयदान मिला।

इस समय यह बात खास जानने योग्य है कि, संवत् १९
में काठियावाड़ के बहुत से हिस्सों में पूज्य महाराजश्री के उपदेश
प्रभाव से जानवरों के रक्षार्थ केटल केम्प खुले थे और इस त
लोगों का अधिक ख्याल रहा, पूज्य आचार्य श्री ने इस तरह जीव
का जो बीज बोया उसका विशेष फल संवत् १९६८ के साल
पश्चात् के पड़े हुए दुष्कालों में काठियावाड़ के छोटे २ ग्रामों में
जानवरों की रक्षा के लिये किये हुए प्रयत्न सबके दृष्टिगत हुए ही है

यों काठियावाड़ की भूमि को पूज्य श्री के मंगलमय पद
पवित्र होने का ऐसा अलौकिक स्मरण चिन्ह प्राप्त हुआ है। ए
प्रभावशाली व्यक्ति के उपदेश का यह कुछ कम प्रभाव नहीं क
जा सकता।

राजपुताना-मालवा इत्यादि में भी अनेक स्थानों पर गोर
के लिये संस्थाएं और ज्ञानशालाएं मुख्यतः पूज्यश्री के सद्बोध से
ही प्रारंभ हुई हैं इसी तरह छोटी सादड़ी वाले सद्गत श्रीमान्
सेठ नाथूलालजी गादावत ने रुपया सवालाख की सखावत प्रकट
कर एक जैनाश्रम खुलाया है वह भी पूज्य श्री के प्रभाव का ही
फल है।

पूज्य श्री चारित्र के एक उमदा से उमदा नमूने थे। उनकी
मय मुखमुद्रा, दयामय हृदय, ज्ञानमय अलौकिक वाणी और
वन के प्रभाव से अन्यधर्मी साक्षर लोग भी उन्हें पूजनीय
ते थे। राजकोट के चातुर्मास में श्रीयुत न्हानालाल दलपतराम
और सद्गत अमृतलाल पढ़ियार पूज्य श्री से पक्के परिचित
और जब २ इन दोनों साक्षरों को प्रकट आम सभा में बोलने
समय मिलता तब २ आचार्य श्री के उत्तम चारित्र, ज्ञान और
की मुक्तकंठ से तारीफ किये बिना नहीं रह सकते थे। उनके
मुताबिक "श्रीलालजी महाराज चारित्र के एक उमदा से
नमूने हैं और इस कलिकाल में उनकी समानता करने वाला
दुर्लभ है।"

आचार्य श्री इतने अधिक प्रभावशाली, चरित्रवान् और ज्ञानी
प्रायः तमाम जैन मुनिराज उन्हें आचार्य के समान मान देते
भी वर्तमान में उनकी संप्रदाय में ७२ साधु मुनिराज
हैं। पूज्य श्री के निर्वाण के कारण युवराज मुनि श्री जवा-
लजी महाराज अब आचार्य पद पाये हैं वे भी सर्वथा
हैं।

स्थानकवासी जैन-समाज के ऐसे एक महान् पूज्य आचार्य श्री
संसार से जैन कौम का एक अनमोल रत्न खो गया है।

शोक ! शोक !! महाशोक

लेखक—श्रीमज्जैन-धर्मोपदेष्टा माधवमुनिजी मह

श्रीयुक्त श्रीलालजी को स्वर्गवास सुनते ही,
जैन प्रजा एक साथ शोकाकुल ह्वै गई।
ह्वै गई हमारी मति आर्त्तध्यान मांही मग्न,
लिख्यो नहीं जाय लेखनी हू दगा दैगई।
शांति छबि जाकी देखि संघमें सु शांति होसी,
अहो ! मनमोहनी वो सूरति किते गई
रे ! रे ! क्रूर कुटिल करालकाल ! तेरी चाल,
हाय ! हाय ! हाय रे ! कलेजा काट लैगई

प्रबल प्रतापी पूज्य अतिशय अमितधारी,
घोर ब्रह्मचारी उपकारी शिर सेहरो।
हुकममुनीश वंशभूषण "विभूति लाल",
सत्तपशम संयमादि सर्व गुण गेहरो।
विक्रमीय संवत् उन्नीसौ सित्तर,
आषाढ़ शुक्ल तृतीया को पिछान आयु छेहरो।
औदारिक देह गढ़ गेह, हेय जान हाय,
जाय-जय तारण जाने धार्यो दिव्य देहरो॥

न जगत जाल इन्द्रजाल को सो ख्याल,
जाने बालापन ही से मद मोह को हटायो है ।
ीश्वर हुकम वंश मांहिं अवतंश समो,
जाको जश-वाद मत छहुंन में छायो है ॥
दे उपदेश देश देशन में विशेष भांति,
भव्यों के हृदय में सुबोध बीज वायो है ।
गीय जीवों को सुबोध देन काज राज जाय,
जय-तारण जगतारण स्वर्ग सिधायो है ॥ ३ ॥

गीय श्री श्री १००८ श्री पूज्य श्री
ालजी महाराज का गुणगान)

क-पंडित लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी रामपुरावाला.

श्रीलालजी महाराज पूज्य अवतारी ।
हुए जैन जाति में सूर्य असिव्रत-धारी ॥ टेक ॥
य चुन्नीलालजी सेठ पिता के घर में ।
थे हुए वहां उत्पन्न सु-टोंक नगर में ॥
ज्ञान लगा हुए साधु थोड़ी उमर में ।
पाठको ! हुए एक ही, जो भारत भर में ॥
जब २ होती है हानि, धर्म की भारी ।
तब २ लेते हैं जन्म, धर्मध्वज-धारी ॥
श्रीलालजी ॥ १ ॥

शोक ! शोक !! महाशोक

लेखक—श्रीमज्जैन-धर्मोपदेष्टा माधवमुनिजी म०

श्रीयुक्त श्रीलालजी को स्वर्गवास सुनते ही,
जैन प्रजा एक साथ शोकाकुल ह्वै गई।
ह्वै गई हमारी मति आर्त्तध्यान मांही मग्न,
लिख्यो नहीं जाय लेखनी हू दगा देगई।
शांति छवि जाकी देखि संघमें सु शांति होती,
अहो ! मनमोहनी वो सूरति किते गई।
रे ! रे ! क्रूर कुटिल करालकाल ! तेरी चाल,
हाय ! हाय ! हाय रे ! कलेजा काट लेगई।

प्रबल प्रतापी पूज्य अतिशय अमितधारी,
घोर ब्रह्मचारी उपकारी शिर सेहरो।
हुकममुनीश वंशभूषण " विभूति लाल ",
सत्तपशम संयमादि सर्व गुण गेहरो।
विक्रमीय संवत् उन्नीसौ सित्तर,
आषाढ शुक्ल तृतीया को पिछान आयु छेहरो।
औदारिक देह गय नेह, हय जान हाय.

न जगत जाल इन्द्रजाल को सो ख्याल,
जाने बालापन ही से मद मोह को हटायो है ।
श्वर हुकम वंश मांहिं अवतंश समो,
जाको जश-वाद मत छहुंन में छायो है ॥
: उपदेश देश देशन में विशेष भांति,
भव्यों के हृदय में सुबोध बीज बायो है ।
ांय जीवों को सुबोध देन काज राज जाय,
जय-तारण जगतारण स्वर्ग सिधायो है ॥ २ ॥

ीय श्री श्री १००८ श्री पूज्य श्री
ालजी महाराज का गुणगान)

:-पंडित लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी रामपुरावाला.

श्रीलालजी महाराज पूज्य अवतारी ।
हुए जैन जाति में सूर्य असिव्रत-धारी ॥ टेक ॥
य चुन्नीलालजी सेठ पिता के घर में ।
ध हुए वहां उत्पन्न सु-टोंक नगर में ॥
ज्ञान लगा हुए साधु थोड़ी उमर में ।
पाठको ! हुए एक ही, जो भारत भर में ।
जब २ होती है हानि, धर्म की भारी ।
तब २ लेते हैं जन्म, धर्मध्वज-धारी ॥
श्रीलालजी

द्धार को धर्म की दृष्टि से सुधारने को तत्पर उन जैसे संत महंत के जैन-समाज को बड़ी भारी खामी हुई है। मैंने कई साधु साध्वीओं दर्शन एवम् सत्संग का लाभ लिया है परंतु ऐसे एक ही संत महं मैंने अपनी तमाम उम्र में भी न देखे कि जिनका प्रताप, जिनकी वाणी जिनकी शासन रक्षा, जिनका उपदेश, जिनका तप, तेज, जिनव आतंक, जिनका उद्योत, जिनका उत्साह ये सब एक सा दूसरों में भाग्य से ही होंगे। बेशक, कई साधु साध्वी उत्तम पूज्य हैं, वंदनीय हैं, परोपकारी हैं परन्तु मुझे पक्षपाती का या अनन्य भक्त कहो, जो कहना हो सो कहो, परन्तु मेरा और जिन जैनों को या जैनतरों को प्रामाणिक और परीक्षक समझ हूं उनका हृदय तो उन्हें सब साधुओं में श्रेष्ठ समझता था।

राजकोट में उन पर जैन और जैनेतर सबका ऐसा उत्तम भा रहा कि, उनके स्वर्गवास से उन पर प्रेम प्रकट करने के लिये सि जैनों ही की नहीं, परन्तु एक आम सभा बुलाकर खेद प्रकट कि और हिंदू मुसलमान व्यौपारियों ने इनके मान में व्यौपार बंद र पर्व पाल एक दिन अपने २ धर्मध्यान में बिताया।

परमपूज्य सद्गत आचार्य महाराज श्रीलालजी महारा साहिब समभावशील और गुणानुरागी थे, तथा सब मतों में कथा हो उस सत्य के पक्षपाती थे। जैन-धर्म में कथित जीवद

पुष्ट करने वाली कई बातें, कविताएं और कहावतें चाहे जिस
की हों उसे याद रख व्याख्यान में कहते और सब श्रोतृ-समु-
य को आनंदित करते थे।

एक कवि की भाषा में कहूं तो अहिंसा इनके जीवन का मुख्य
त्र था और यह उनके जीवन में ताने, बाने, की तरह फैल गया
, सत्य उनका मुद्रालेख था, तप उनका कवच था, ब्रह्मचर्य
नका सर्वस्व था, सहिष्णुता उनकी त्वचा थी, उत्साह जिनका
ज था, अखूट क्षमा-बल जिनके हृदय पात्र या कमंडल में
रा था, सनातन योगी कुल का यह योग मालिक था, राग
के झंझानल से यह अलग था, मेरे तेरे के ममत्व-भाव
परे था, सब जीव के कल्याण का यह इच्छुक था, इतना
नहीं, परन्तु सबके कल्याण के उपदेश में वह सदा मश्गूल
ऐसा जैन भारत का एक वर्तमान महान् धर्म गुरु धर्माचार्य
सन का शृंगार, परोपकारी समर्थ वक्ता, समर्थ क्रियापात्र,
पनिष्ठ गच्छाधिपति ५१ वर्ष की अपरिपक्व वय में कालधर्म
हमने एक अनुपम अमूल्य आचार्य खोया है।

राजकोट और काठियावाड़ में उन्होंने जगह २ जीव-दया की
घोषणा उच्च स्वर से असरकारक रीति से की थी। छप्प-
के दुष्काल की अपेक्षा त्र्यत्रिया दुष्काल अधिक विषम था, गोंडी
त्रिया में जीव-रक्षा या गो-रक्षा के लिए जो हुआ था उसके

द्धार को धर्म की दृष्टि से सुधारने को तत्पर उन जैसे संत महंत के
जैन-समाज को बड़ी भारी खामी हुई है। मैंने कई साधु साध्वीओं के
दर्शन एवम् सत्संग का लाभ लिया है परंतु ऐसे एक ही संत महं
मैंने अपनी तमाम उम्र में भी न देखे कि जिनका प्रताप, जिनकी वाणी,
जिनकी शासन रक्षा, जिनका उपदेश, जिनका तप, तेज, जिनक
आतंक, जिनका उद्योत, जिनका उत्साह ये सब एक सा
दूसरों में भाग्य से ही होंगे। बेशक, कई साधु साध्वी जे
उत्तम पूज्य हैं, वंदनीय हैं, परोपकारी हैं परन्तु मुझे पक्षपाती कहे
या अनन्य भक्त कहो, जो कहना हो सो कहो, परन्तु मेरा और मै
जिन जैनों को या जैनतरों को प्रामाणिक और परीक्षक समझ
हूं उनका हृदय तो उन्हें सब साधुओं में श्रेष्ठ समझता था।

राजकोट में उन पर जैन और जैनेतर सबका ऐसा उत्तम भा
रहा कि, उनके स्वर्गवास से उन पर प्रेम प्रकट करने के लिये सि
जैनों ही की नहीं, परन्तु एक आम सभा बुलाकर खेद प्रकट कि
और हिंदू मुसलमान व्यौपारियों ने इनके मान में व्यौपार बंद र
पर्व पाल एक दिन अपने २ धर्मध्यान में बिताया।

परमपूज्य सद्गत आचार्य महाराज श्रीलालजी महाराज
साहिब समभावशील और गुणानुरागी थे, तथा सब मतों में जो
जो दो उस सत्य के पक्षपाती थे। जैन-धर्म में कथित जीवदया

ष्ट करने वाली कई बातें, कविताएं और कहावतें चाहे जिस की हों उसे याद रख व्याख्यान में कहते और सब श्रोतृ-समु-को आनंदित करते थे।

एक कवि की भाषा में कहूं तो अहिंसा इनके जीवन का मुख्य था और यह उनके जीवन में ताने, बाने, की तरह फैल गया त्य उनका मुद्रालेख था, तप उनका कवच था, ब्रह्मचर्य । सर्वस्व था, सहिष्णुता उनकी त्वचा थी, उत्साह जिनका था, अखूट क्षमा-बल जिनके हृदय पात्र या कमंडल में था, सनातन योगी कुल का यह योग मालिक था, राग ह झंझानल से यह अलग था, मेरे तेरे के ममत्व-भाव रे था, सब जीव के कल्याण का यह इच्छुक था, इतना हीं, परन्तु सबके कल्याण के उपदेश में वह सदा मश्गूल था जैन भारत का एक वर्तमान महान् धर्म गुरु धर्माचार्य त का शृंगार, परोपकारी समर्थ वक्ता, समर्थ क्रियापात्र, धीनिष्ठ गच्छाधिपति ५१ वर्ष की अपरिपक्व वय में कालधर्म हमने एक अनुपम अमूल्य आचार्य खोया है।

राजकोट और काठियावाड़ में उन्होंने जगह २ जीव-दया की घोषणा उच्च स्वर से चमत्कारिक रीति से की थी। अटक-[illegible] की अपेक्षा [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] में जीव-रक्षा या गो-रक्षा के लिए जो हुआ [illegible]

अनेक गुना कार्य अडसठिया में हुआ अडसठिया दुष्काल में किये गये दया के कार्य पशु-रक्षा, गो-रक्षा, मनुष्य-रक्षा, इत्यादि कैसी सुन्दरता से हुए थे, एवम् धर्म-श्रद्धालु परोपकारी पुरुषों ने इस कार्य को पार लगाने में कैसा सरस उत्साह दिखाया था तथा राजकोट ने इस विषय पर समस्त काठियावाड़ को जो नमूना दिखाया था वह सब सोचते २ इन स्वर्गवासी--इन देवगतिपाये हुए महात्मा का उपकार तनिक भी नहीं भूल सकते और इस काठियावाड़ में जहां २ पूज्य श्री के स्वर्गवास के समाचार मिलेंगे वहां २ उनके परिचितों को पारावार शोक होगा।

ज्ञान, भक्ति, वैराग्य, अनुभव, तप, आश्रम धर्म का अखंड पालन, हृदय की विशालता इन सबका जब हृदय हिसाब करता है तब उनकी जैन-समाज में कितनी बड़ी भारी कमी हुई है समझा जा सकता है। हृदय में आंसू निकल पड़ते हैं और साश्रुलोचन से कलम अधिक कम्पित होती है, गद्गद-कंठ से आज इतना ही लिखता हूं।
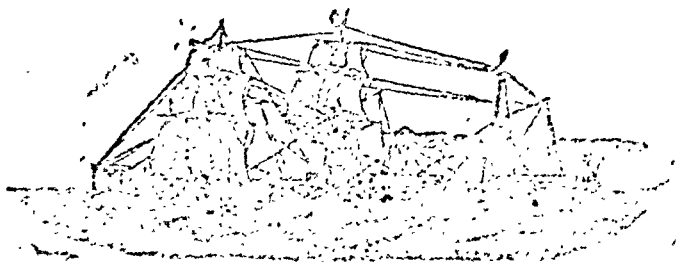
शोकोद्गार ।

(राग सोरठा)

अमृत भीनीं वाण, सांभलता सुधर्या घणा,
वण मूलुं व्याख्यान, सुणशुं क्यां श्रीलालजी ॥ १ ॥
प्राणी-रक्षण काज, अमर पडो वजड़ावता,
करी शके नवराज, करनारा श्रीलालजी ॥ २ ॥
अडसठ साल कराल, छतां जणायों नहि जरा,
थयो न वांको वाल, प्रताप ए श्रीलालजी ॥ ३ ॥
आप गुणोनी खाण, अल्प प्राण शुं कही शके,
अमने मोटी हाण, जगमां विण श्रीलालजी ॥ ४ ॥
संयमना परिणाम, आप स्वर्गमां शोभता,
मरजीवा तम नाम, विसरो क्यम श्रीलालजी ॥ ५ ॥
सदैव ल्यो संभाल, अवध ज्ञान उपयोगथी,
वर्णा भूलयां बाल, अरज एज श्रीलालजी ॥ ६ ॥
कईक कराई खास, लाखो जीव छिडारना,
ल्यों दयाना दास सांभरशो श्रीलालजी ॥ ७ ॥
राजकोट पर प्यार, पूरो राख्यो प्रथम थी,
गुण रत्ना भंडार, सद्गुरु श्रीलालजी ॥ ८ ॥

— प्राणजीवन मोरारजी शाह—राजकोट.

अध्याय ५३ वाँ ।

सच्चा—स्मारक।

महियर नरेश को धन्यवाद ।

संख्याबंध प्राणियों को अभयदान ।

श्रेष्ठ समुदाय और शुद्धाचारित्र यही पूज्यश्री का सच्चा स्मारक है। इस शुद्ध—चारित्र को निभाने की शक्ति उत्पन्न करना यह मुनि-राजों की और चारित्र पालने की सरलता का रक्षण करना श्रावकों की कृतज्ञता है। उनके उपदेश को याद रख इसी मुआफिक वर्ताव करना यह उनका उत्तमोत्तम स्मारक है।

जीव—दया की वकीली में उन्होंनें अपनी जिन्दगी का वृहद् भाग अर्पण किया है। उनके स्मरणार्थ उनके स्वर्गवास के पश्चात् जल्दी ही जीव-दया का एक महान् कार्य हुआ और कायम की हिंसा बची। उस सम्बन्ध में 'जीव—दया' मासिक का निम्नांकित लेख यहां देते हैं।

वैरिणोऽपि हि मुच्यंते, प्राणान्ते तृणभक्षणात् ।
तृणाहाराः सदैवते, हन्यन्ते पशवः कथम् ॥ १ ॥

हमारे देशके रक्षक सचमुच ये पशु हैं,
हमारे देशकी दौलत सचमुच ये पशु हैं,
हमारा बल और बुद्धि सब कुछ ये पशु हैं,
हमारी उन्नति का सुदृढ़ पाया ये पशु है.

"All are murderers-the man who advise the killing of a creature, the man who kills, the man who slays, the man who purchases, the man who sells, the man who cooks (the flesh) the man who distributes and the man who eats."
—Manu

पशु भारत का धन है, प्रभु की विभूति है और अपने लघु बांधव हैं। धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, और आरोग्यशास्त्र, की दृष्टि से पशुवध करना यह अत्यंत हानिकर और महा अनर्थकारी है। प्रत्येक धर्मप्रवर्तक ने पशुवध का—प्राणीमात्र की हिंसा का निषेध किया है। अहिंसा, दया यह मनुष्य का प्राकृतिक धर्म है हिन्दुओं के पांच यम, बौद्धों के पांच महाशील, जैनों के पांच महाव्रत इन सब में अहिंसा धर्म ही प्रधान पद पर आरूढ़ है।

पञ्चैतानि पवित्राणि सर्वेषां धर्म चारिणाम्।
अहिंसा सत्यमस्तेयं त्यागो मैथुन वर्जनम्॥

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, त्याग और मैथुन वर्जन इन पांचों को अनेक धर्म वालों ने पवित्र माने हैं इसके सिवाय

"अहिंसा परमोधर्मः" "माहिंस्यात् सर्वाभूतानि"
"आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति"

इत्यादि अनेक मनन योग्य वाक्य हिन्दू धर्मशास्त्रों में स्थल स्थल दृष्टिगत होते हैं तो भी अफसोस की बात है, कि आर्यावर्त में ऐसा एक वर्ग प्रस्तुत है जो हिंसा के कृत्यों में ही धर्म मानता है—धर्म के लिये हिंसा करता है जो अत्यंत निंदनीय एवं भयंकर है। काली, महाकाली दुर्गा, जगदम्बा, बहुचरा, शारदा, आदि देवियों के उपासक अपनी अधिष्ठात्री देवी को पशुओं के रुधिर की प्यासी महाविकाल और क्रूर हृदय की कल्पते हैं और उसकी कृपा सम्पादन करने के लिये उसे पाड़े, बकरे इत्यादि निर्दोष पशुओं का बलिदान कर भेंट चढ़ाते हैं। यह प्रवृत्ति सिर्फ अज्ञानजन्य है। मांसलोलुप, स्वार्थान्ध, लोभग्गू आचार्य कि जिनके हृदय में दया का लेश भी न था, धर्म ग्रन्थों में कितनी ही कल्पित बातें घुसादी और लोगों के नेत्रों पर पट्टा बांध इन्हें केवल उलटे मार्ग पर लगा दिया। इसतरह अपनी दुष्ट वासनाओं को तृप्त करने वास्ते तथा अपने पर पूज्यभाव कायम रखने वास्ते उन्होंने धर्मशास्त्रों से, और साधारण ज्ञान से भी प्रतिकूल इस एकांत पापमय प्रवृत्ति को भी धर्म का कार्य ठहराया है। उनकी प्रपंच जाल में फंसे हुए भोले अज्ञानी लोग तनिक भी विचार नहीं

...ते कि इन कार्यों से देव देवी तुष्ट होंगे या रुष्ट होंगे ? इनकी ...मान्यतानुसार देवी जगज्जननी है समस्त जगत् की अर्थात् ...णीमात्र की वह माता है इस हिसाब से मनुष्य मात्र उसके ...ड़ पुत्र हैं और पशु उसके कनिष्ठ पुत्र हैं । माताओं का प्रेम ...मेशा छोटे बच्चों पर अधिक रहता है यह स्वाभाविक है । माताको ...रने के वास्ते उस के ही छोटे २ बच्चों के गले उसके समक्ष छेद ...ना यह कितना बेहूदा और मूर्खता पूर्ण क्रूर कर्म है ? इससे ...माताएं प्रसन्न होती हों तो वे माताएं ही नहीं हैं । देव देवियों ...राजी करने के लिये बलिदान देना ही हो तो अपनी प्यारी से ...री वस्तु का देना चाहिये । स्वार्थी उपासक इष्ट वस्तुओं ...वियोग सहन नहीं कर सकते, इसलिए निरपराधी पशुओं पर ...ड़ डालते हैं । देव-देवी तो सिर्फ वासना के भूखे हैं । तुम्हारी ...सर कैसी भावनाएं हैं यह योजना तुम्हारी कसोटी की है जो ...रखते हो वे तो उसे लेते ही नहीं, उनकी अमीदृष्टि से वह ...स होगया ऐसा समझ उसे तुम वापिस लेजाते हो, जठर उपा-... स्वार्थी पुजारियों ने मुफ्त के माल में मांसाहार प्राप्त करने की ...युक्ति ढूंढ निकाली और धर्म के नामपर भोले भारत को ठगना ...रंभ किया ।

जबतक सत्य न समझा जाय तबतक ही लोग ठगे जाते हैं, सत्य ... समझने के साथ ही लोग अपने भ्रम से ...

समझने लगे। देवी का साम्राज्य समस्त दुनियां में है, दुनियां के समस्त देशों की अपेक्षा भारत अधिक अधम दशा को प्राप्त होगया है। उसका कारण भी सोचने योग्य है पशुओं के बलिदान से देव प्रसन्न होते तो भारत की ऐसी दुर्दशा कभी न होती। प्लेग का प्रकोप, नानातरह के रोगों का उपद्रव, बड़े से बड़ा मृत्यु प्रमाण, दुष्काल पर दुष्काल पराधीनता, दरिद्रता आदि दुःखों का वरसाद, उपर्युक्त पापमय प्रवृत्ति से कुपित हुए देव देवी ही क्यों न बरसाते हों "जैसे बोवे जैसे लुने और करे वैसा भोगे अन्य को सुख देने से सुख और दुख देने से दुःख प्राप्त हो यह त्रिकाल से बंधा हुआ सनातन सत्य है अन्य के अनिष्ट द्वारा अपना इष्ट साधने की आशा रखना यह प्राकृतिक कानून से विरुद्ध है।

"मा हिंस्यात् सर्वा भूतानि" किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो यह महावाक्य याद रखकर ही उसके सत्वगुण सम्पन्न पुरुषों ने देवी पूजा इत्यादि कार्य करने चाहिए, परन्तु यह पूजा ऐसी न होनी चाहिए कि जिसमें दूसरे निर्दोष प्राणियों का संहार किया जाय। कदाचित कोई ऐसा कहे कि दुर्गा सप्तशती में पशु 'पुष्पै गंधैश्च' पशु पुष्प और सुगंधित पदार्थों से देवी की पूजा करना कहा है तो उसका अर्थ क्या है? जिसका उत्तर यही है कि जिसतरह पुष्प की पूजा, पुष्पों को पूरे २ चढ़ाकर की जाती है उसीतरह पशुओं से पूजा करनी हो तो पशुओं को माता के सामने लाकर

सी प्रार्थना कर छोड़ देना चाहिए कि हे जगदम्बे ! आपके दर्शन
पवित्र हुआ यह बकरा भी निर्भय होकर विचरे अर्थात् कोई भी
ांसाहारी उसका वध न करे, ऐसा संकल्प कर उस बकरे को छोड़
ना चाहिए' जिससे पुण्य हो, सचमुच में पूजा की यही विधि है
ह पद्धति कई स्थानों पर प्रचलित है और बकरे के कान में कड़ी
हना कर उसे निर्भय 'अमरा' किया जाता है उपदेशकों ने धर्मोपदेश
ारा और राजाओं ने राज्य सत्ता द्वारा इस सत्व विधि का प्रचार
रना चाहिए।

जमाना ज्यों २ आगे बढ़ता जाता है त्यों २ ऐसे घातकी रूढ़ियाँ
ी कम होते जाते हैं। कितने ही दयालु और धर्मनिष्ठ राजाओं ने
पने राज्य में इसतरह होते हुए पशुवध को देशकी अवनति का
ौर कालेरा प्लेग इत्यादि रोगों की उत्पत्ति का कारण समझ राज्य-
त्ता से उसे बंध कर दिया है यह अत्यंत संतोष की बात है।

अभी ही मैहियर राज्य के नामदार नरेश ने जिस पुण्यमन्
से द्वारा प्रतिवर्ष हजारों जीवों का वध होता हुआ बंद कराने
ा प्रशंसनीय कार्य किया है वह सुन दयालु मनुष्यों के हृदय
ानंद से लहराये बिना नहीं रह सकते।

मैहियर यह बुंदेलखंड का एक देशी राज्य है। यहां प्राचीन
ाल से एक उच्च टेकरी पर शारदा देवी का स्थान है। इस

रियाया में से अधिकांश रियाया इस देवी की उपासक है। अ
देवी को प्रसन्न करने के लिये पुत्रादिक की प्राप्ति अथवा अन्य इच्
की सिद्धि के लिये देवी को भेड़ों बकरों का बलिदान देने
कुप्रथा बहुत समय से वहां प्रचलित थी। इसलिये वहां प्रतिः
हजारों भेड़ों बकरों का बलिदान दिया जाता था। चैत्र माह
वहां बड़ा भारी मेला लगता है और वहेमी, अज्ञानी, मूर्ख लो
नारियल की तरह पशुओं को माताजी पर चढ़ाते हैं। यह नि
प्रथा क्यों और किसतरह बंद की गई जिसका संक्षिप्त वृत्त
वाचकों को आनंदित करेगा।

जैनाचार्य श्रीलालजी महाराज कि जिनके सदुपदेश से लाख
जीवों को अभयदान मिला था और कई राजा महाराजाओंने अप
राज्य में धर्म निमित्त होती हुई पशुहिंसा और शिकार इत्यादि बं
कराया था, उनका स्वर्गवास गत अषाढ़ शुक्ला ३ को जेतार
मुकाम पर हो जाने के दुःखद समाचार इस लेखक को मोर
मुकाम पर मिलने से उनके उपर पूज्यभाव और प्रशस्तराग
कारण से हृदय को बड़ा भारी आघात पहुंचा, परंतु धर्म क्रिया
प्रवृत्त हो संसार की असारता और देह की क्षणभंगुरता का विच
आते ही अंतरात्मा की ओर से ऐसी प्रेरणा हुई कि गुरु श्री
स्मारक के उपलक्ष में कुछ शुभ प्रवृत्ति करना उचित है। परन्तु क्य
करना इसका निर्णय न हो सका। मन अनेक तर्क वितर्क द्वारा

हॉस्पिटल की नींव का मुहूर्त ता॰ १२ १० ३० के रोज़ बुंदेलखंड के पोलिटिकल एजन्ट के हाथ से होगया और मकान बनना भी प्रारंभ है स्टेट तरफ से अधिक रकम देकर मकान बड़ा बनाना निश्चित हुआ है हास्पिटल का खर्च भी राज्य से होगा।

अंत में हम चाहते हैं कि इस सत्य प्रवृति का सर्वत्र अनुकरण हो और पवित्र आर्यावर्त में से पशुवध बंद होजाय तथा पुण्य भारत भूमि अपना पूर्वसा गौरव पुनः प्राप्त करे।

इस अवसर की खुशी में श्री मोरबी हाइ स्कूल के शास्त्री श्रीयुत पुरुषोत्तम कुबेरजी शुक्ल की ओर से निम्नांकित काव्य प्राप्त हुआ है।

शार्दूल विक्रीड़ितं वृत्तम्।

यत्साध्यं न भवेत् कदापि बहुलै निष्क्रय्यैः कोटिभिः
वर्षाणामयुतेन नापि सुलभं यत्तत्र वद्धूश्रमैः॥
यस्मिन्वै विजयं न याति सततं संख्यातिगावाहिनी।
तत्कार्यं सुमहात्मनां करुणया स्वल्पश्रमात् सिध्यति॥१॥

राज्ये यन्महियारके वलिवधौ श्रीशारदाम्बाकृते।
प्राचीनः पशुतावधः कुविधिना यः क्रियमाणोऽभवत्॥
श्रीश्रीलालजि सद्गुरोर्गुणनिधेः स्मृत्यर्थमेवाधुना।
सोदुर्लभ ओछिनेश कृपया धर्म प्रभावो महान्॥ २॥

इनको अनुवाद ।

यहाँ लिखोहित ।

[illegible]

स्त्री
ाहिब
पूर्वक
अपने
श्री
भक्तों
उत्तर
न को
भी
र देना
ाम से

अध्याय ५४ वाँ ।

बीकानेर में हिन्द के जैन साधु मार्गियों का सम्मेलन ।

श्री बीकानेर श्रावकों की ओर से स्मारक के विचार बा भारतवर्ष के भिन्न २ प्रान्तों के अग्रगण्य नेताओं को आमंत्रण कि गया था । जिस पर से भिन्न २ प्रान्तों से करीब २०० सदगृह हाजर होगए थे जिनमें मुख्य २ ये थे ।

श्रीमान् सेठ गाढ़मलजी लोढ़ा अजमेर, श्रीमान् सेठ वर्द्धभाण पीतलिया रतलाम, श्रीयुत दुर्लभजी त्रिभुवनदास जौहरी जैपुर, श्री सुगनचंदजी चोरड़िया जौहरी जयपुर, श्रीयुत जालमसिंहजी कोठ B.A. जोधपुर, श्रीयुत माणकचंदजी मूथा जोधपुर, श्रीयुत जौह सोहनलाल रायचंद बम्बई, श्रीयुत जौहरी अमृतलाल रायचंद बम्ब जौहरी माणकचंद जकशी बम्बई, जौहरी लक्ष्मीचंद जशकरण पा नपुर, जौहरी कालीदास गोदड़भाई पालनपुर, सेठ भगवानजी ना णजी वोरा वढवाण शहर, लाला केशरीमलजी रिटाइर्ड ज्युडीशीय सेक्रेटरी उदयपुर, जौहरी केसुलालजी ताकड़िया उदयपुर, श्रीयुत नं

मेहता उदयपुर, श्रीयुत सागरमलजी गिरधारीलालजी बंगलोर, शम्भूमलजी गंगारामजी बंगलोर, श्रीयुत श्रीचंदजी अब्बाणी, श्रीयुत चुन्नीलालजी चोरड़िया ब्यावर, श्रीयुत अ रचंदजी, चंदजी अजमेर, श्रीयुत मोतीलालजी कांसवा अजमेर, श्रीयुत मलजी गाढ़मलजी चोरड़िया अजमेर, श्रीयुत मिश्रीलालजी जयपुर, श्रीयुत रतनचन्दजी दफ्तरी जयपुर, श्रीयुत गुमा- लजी ढड्ढा जयपुर, जौहरी कल्याणमलजी छाजेड़ जयपुर, शेरमलजी बालिया पाली इत्यादि २ ।

उपस्थित गृहस्थों तथा बीकानेर और भीनासर संघ की एक ता० ३-८-२० से ता० ४-८-२० तक श्रीयुत भेरूदानजी के मकान में एकत्रित हुई । प्रमुख स्थान श्रीयुत दुर्लभजी त्रिभुवनदास जौहरी को दिया गया । प्रारंभ में आये हुए देशावरों सहानुभूति दर्शक तार, पत्र प्रमुख महाशय ने पढ़ सुनाये । १००८ श्री श्रीलालजी महाराज के अकस्मात् वियोग से को जो हानि पंहुची है उसके लिये हार्दिक खेद प्रकट किया ।

उपस्थित सभासदों ने एसा विचार प्रकट ... महाराज के उपदेशों की स्मृति ... करने के लिये एक स्थायी संस्था ...

जिससे उनके उपदेशामृत की यादगार चिरकाल तक स्थायी बन रहे। इस पर से निम्नांकित ठहराव सर्वानुमत से पास किये गए

प्रस्ताव १ ला।

(१) निश्चय हुआ कि श्री संघ की उन्नत्यर्थ एक गुरु खोला जावे और उसका नाम "श्री० श्वे० साधुमार्गी जैन गुरुकु रक्खा जावे।

(२) इस संस्था के लिये अनुमान रु० ५०००००) प लाख की आवश्यक्ता है जिसमें रु० २०००००) दो लाख चन्दा वसूल हो जाने पर कार्यारंभ किया जावे.

(३) कमसे कम रु० २१०००) का विशेष प्रदान क वाला इस संस्था का संरक्षक (Patron) गिना जावेगा संरक्षकों में से ही इस संस्था की प्रबन्ध कारिणी सभा का सभ पति चुना जावे।

(४) रु० ११०००) देने वाले गृहस्थ इस संस्था सहायक गिने जावेंगे और उनमें से इस संस्था की प्रबन्धकारि सभा के उप सभापति तरीके या कोषाध्यक्ष (खजानची) त चुने जावेंगे।

(५) रु० ६०००) या ज्यादा और रु० ११०००) से कम देने वाले इस संस्था के शुभेच्छुक Sympathiser) गिने जायेंगे और इनमें से भी मंत्री आदि पदाधिकारी चुने जा सकेंगे।

(६) रु० २०००) या अधिक प्रदान करने वाले गृहस्थ सभा के सभासद् गिने जावेंगे और उनका चुनाव प्रबन्धकारिणी सभा में हो सकेगा।

(७) चंदा प्रदान करने वाले गृहस्थों के नाम शिलालेखों द्वारा आश्रम के दरवाजे पर मय चंदे की तादाद के प्रकट किये जायेंगे।

(८) प्रबंध कारिणी सभा अपनी इच्छानुसार पांच अन्य गृहस्थों को सलाह लेने के लिये शरीक कर सकेगी और उनके ... में आसकेंगे और उनपर चंदे का कोई प्रतिबंध ... ।

...—इस गुरुकुल का उद्देश्य समाज की भावी संतान को ...पन्न, नीतिमान, विनयवान, शीलवान, व विद्वान बनाने का है।

[illegible]

[illegible]

बाहर गुरुकुल खोला जावे तो इस समय रु० १२५०००) की रकम यहां के संघ की ओर से लिखी जाती है और प्रयत्न चंदा बढ़ाने का जारी रहेगा, रुपेय दो लाख इकट्ठे होजाने पर कार्यारंभ किया जावेगा।

उक्त कार्य के लिए सभा की तरफ से श्री बीकानेर संघ को हार्दिक धन्यवाद दिया जाता है कि जिन्होंने उत्साहपूर्वक इतनी बड़ी रकम प्रदान कर एक ऐसी संस्था की बुनियाद डालने का साहस किया कि जिसकी परम आवश्यक्ता था।

प्रस्ताव ३ रा.

इस उपयोगी कार्य में सलाह देने के लिये बहार गाम से तकलीफ लेकर पधारने वाले गृहस्थों को यह सभा धन्यवाद देती है।

प्रस्ताव ४ था.

श्रीयुत दुर्लभजी भाई के सभापतित्व में यह कार्य सफलता पूर्वक किया गया अतएव यह सभा उनका उपकार मानती है।

प्रस्ताव ५ वां।

आपस में निंदायुक्त लेख छपने से समाज में पूरी हानि हो हाल में जो सत्यासत्य कमेटी जावरे की तरफ से ३६ कलम

। एक ट्रैक्ट निकला है उसका यथोचित उत्तर दिया जाना स्वाभा-
विक है मगर आज रोज श्रीमान परम पूज्य महाराजा साहिब
१००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज साहिब ने शांतिपूर्वक
। उपदेश व्याख्यान द्वारा विस्तारपूर्वक फरमाया कि अपने
मान् सद्गत् पूज्य महाराज साहिब के उपदेशामृत को व श्री
। मार्ग के मूल क्षमाधर्म को अंगीकार करके श्रीमान् के भक्तों
तरफ से शान्तता ही रखना चाहिए। और छापा द्वारा उत्तर
युत्तर नहीं करना चाहिए। महाराजा साहिब के इस फरमान को
ने सहर्ष स्वीकार किया। यदि किसी की तरफ से फिर भी
भव्य में निंदायुक्त लेख प्रकट हुए और न्यायपूर्वक उत्तर देना
जरूरी समझा जावे तो निम्नलिखित पांच मेम्बरों की नाम से
का प्रतीकार किया जावे।

१ नगर सेठ नंदलालजी वाफना, उदेपुर
२ सेठ मेघजी भाई थोभण, बंबई
३ ,, फतीरामजी बांठीया, भीनासर
४ ,, नथमलजी चोरडिया, नीमच
५ ,, दुर्लभजी भाई जौहरी, जैपुर

अध्याय ५४ वां ।

विहंगावलोकन ।

सद्गत आचार्य महोदय की असाधारण गुण सम्पत्ति उपर्युक्त लेखों से पाठकों को अप्रकट नहीं रही होगी, तोभी इस स्थान पर उपसंहार रूप उनके मुख्य सद्गुण विभव का समुच्चय किया जाता है। ऐसे युग प्रधान पुरुषों के सद्गुण वर्णन करना महार्णव सागर का पानी गागर में भरने के समान उपहास जनक और अशक्य है तोभी उन के चरित्र की कितनी ही घटनाओं पर दृष्टि निक्षेप कर उन में से कुछ सार बोध ग्रहण करने कराने के हेतु से यथामति, यथाशक्ति, यत्किंचित्, प्रवृत्ति कर लिखता हूं।

ज्ञानबल ।

ब्रह्मचर्य का प्रभाव, तीव्र जिज्ञासापूर्वक परम पुरुषार्थ, सुयोग्य सद्गुरु का सुयोग और विनयादि आवश्यक गुण इत्यादि ज्ञान प्राप्ति के परमावश्यक साधनों की पूर्व पुण्य प्रसाद से पूज्य श्री में सम्पूर्ण विद्यमानता थी। जिससे उन्हें अल्प समय में अद्भुत तत्त्वावबोध होगया था, सूत्र श्री आचारांग, सूत्र कृतांग, सुयग-

क, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, नन्दी चारों छेदसूत्र (व्यवहार, निशीथ, बृहत्कल्प और दशाश्रुतस्कंध) तथा सूत्रों के सार रूप और १५० श्लोक (थोकड़ा प्रकरण) उन्हें कंठस्थ थे, शेषसूत्र पुनः २ पढने मनन करने से हस्तामलकवत् होगये थे, इनके सिवाय श्वेताम्बर दिगम्बर मतके अनेक तात्त्विक ग्रन्थों का भी होंने सूक्ष्म अवलोकन किया था. जैनेतर दर्शन शास्त्रों का भी ज्ञान अति विशाल था, ऐतिहासिक ग्रन्थ पढ़ने का उन्हें अत्तन्त शौक था. इस के सिवाय आधुनिक वैज्ञानिकों के नये २ आविष्कार की तरह हर्बर्ट स्पेन्सर, डार्विन इत्यादि पाश्चात्य दार्शनिकों के सिद्धांत जानने की भी उन्हें अत्यंत जिज्ञासा रहती थी. स्वयं अंग्रेजी पढे हुए न होने से ऐसे ग्रन्थ अंग्रेजी पढ़े हुए विद्वानों के मुख से सुनते थे।

राजकोट के चातुर्मास में नई रोशनी वाले बी. ए. एम. ए. और वकील, बैरिस्टर पूज्य श्री के साथ दर्शनशास्त्र विज्ञान शास्त्र और भूगोल खगोल सम्बन्धी विवाद करते तब उन्हें आचार्य श्रीकी गम्भीर बुद्धि और ज्ञान की उत्कृष्टता देख अत्यंत आश्चर्य होता और चर्चा में भी बहुत स्वाद मालूम होता था।

दर्शनार्थ आने वाले श्रावकों में से जिज्ञासु जनों को ज्ञान का आस्वादन कराने वास्ते ज्ञानचर्चा करने के लि

निमंत्रण करते. शिष्य के पूछे हुए एक प्रश्न का संतोषकारक समाधान होते ही " और पूछो " यह वाक्य प्रायः उनके मुख-कमल में से खिले बिना नहीं रहता था. उनकी वाणी में अद्वितीय आकर्षण था. उनके समाधान किये बाद शंका को मौका भाग्य से ही मिलता था. उनके साथ ज्ञानचर्चा करने वाले सूत्र के ज्ञाता श्रावक लोक उनके विशाल शास्त्रज्ञान पर बड़ा आश्चर्य प्रकट करते थे. एक सिद्धांत का समर्थन करने के लिए वे एक के पश्चात् एक शास्त्रीय अनेक प्रमाण अत्यन्त शीघ्रता पूर्वक प्रकाशित करते थे जैन के ३२ सूत्रों तो मानों उनको दृष्टि के सामने ही तिरते हों, त्यों उनमें से एक के पश्चात् एक २ रत्न ढूंढ निकालते जिसे पदानुसारिणी लब्धि करते हैं वैसी लब्धि पूज्यश्री में दीख पड़ती थी. किसी भी धार्मिक विषय की चर्चा छिड़ते ही उस विषय का उनका ज्ञान तलस्पर्शी है ऐसा दूसरों को प्रतीत होता था. इतना ही नहीं परन्तु उनके मुंह से निकलते हुए अमृत जैसे मीठे वाक्य सुनकर आनंद का पार भी नहीं रहता था।

चारित्र विशुद्धि ।

पूज्यश्री का चारित्र अत्यंत निर्मल था. वे इतने अधिक आत्मार्थी, पाप भीरु, और निरतिचार चारित्र पालने में सावधान रहते थे कि उनका वर्णन शब्दों में हो ही नहीं सकता. जिन्होंने

[illegible]विषय का त्याग करना या आयम्बिल करना यह उनका खास शौक था। इंद्रियों को वश रखने का कार्य सचमुच बड़ा कठिन है जिस में भी रसेंद्रिय का वश करना यह सब से अधिक दुष्कर है। शरीर पर से मुर्च्छा उतरती है जबही शरीर को पोषण देने वाले खाद्य पदार्थों पर से भी मुर्च्छा उतर सकती है।

आधाकर्मी स्थानक में उतर न जांय इस बाबत भी वे बड़े सावधान रहते थे। मांगरोलबंदर पधारे तब उन्हें भोजनशाला में उतारने की संघ की इच्छा थी। पूज्य श्री ने भोजनशाला देख, विशाल और श्रेयस्कर मकान तथा जैनों की बस्ती और साधुओं का उपाश्रय अधिक समीप होने से यह स्थान पूज्य श्री को अधिक पसंद हुआ। परंतु पूछताछ करने पर यह भोजनशाला बिगड़ी हुई थी और पूज्यश्री के लिये ही साफसुफ कराई गई थी ऐसा मालूम पड़ते ही वे वहां न ठहर ग्राम बाहर एक झोंपड़ी में उतर गये। ऐसी ही घटना मोरवी में भी घटी थी।

कल्पविहार करने में भी वे कितने अप्रमत्त रहते और कैसे [illegible] रहते थे यह स्वयं के बहाने निकाल स्थिरवास पड़े रहने वाले साधुओं को खास ध्यान देने योग्य है। कई समय से [illegible] में असह्य वेदना हो रही थी, गोडों में दर्द [illegible] [illegible] हारते थे। सं० १९७२ के चातुर्मास [illegible]

प्रमाद को त्याग और शुद्धोपयोग पूर्वक संयम के सुखद सुपथ में विचरते थे। अपना मन अन्य प्रदेश में लेश भी प्रवेश न करे उसकी बड़ी संभाल रखते थे और इसलिये व्यर्थ बैठे रहना, व्यर्थ की हंसी करना, सांसारिक खटपट में भाग लेना इत्यादि २ प्रवृत्तियां कि जो अभी निठल्ले श्रावकों की संगति से कितने ही साधुओं में घुस पड़ी हैं, पूज्यश्री ने परिहार किया था। वे दिन रात ध्यान में निमग्न रह और ज्ञान विषय की चर्चावार्ता कर समय का सदुपयोग करते थे।

आधाकर्मी—सदोष आहार पानी न लेने बाबत अत्यन्त सावधान रहते थे। अजमेर कॉन्फरन्स के समय स्वधर्मी रागवश दोषीला आहार पानी वहिरावेंगे और साधु निमित्त पहिले या पीछे आरंभ समारंभ करेंगे ऐसा संभव समझ पूज्य श्री ने साधुमार्गी के यहां से आहार न लाने बाबत अपने शिष्यों को बिलकुल मनाकर आपने तेला का पारणा कर दूसरा तेला कर लिया था और सात दिन में एक दिन आहार लिया था। कई वक्त साधुओं की बड़ी संख्या एक ग्राम में एकत्रित होजाती तब तब पूज्य श्री और उनके शिष्य छठ, अठम, चोले, पचोले की धुन लगा देते थे और ऐसे समय में कई समय कच्चा आटा लाकर पानी में डाल पीजाते थे। पूज्य श्री विशेषतः मकी और जव की रोटी गरीबों के यहां से ला

शहर के मध्य में हो कर जब वे सूरजपोल महंत की धर्मशाला पधारे उस समय का दृश्य जिन्होंने आंखों से देखा है वे कह हैं कि उस समय पूज्यश्री के पांव में अतुल वेदना थी, पांव तली छिलरही थी. ऊपरका भाग सूजरहा था. तोभी वे वज्र कठिन हृदय कर विश्राम लेते २ चलते थे और अत्यन्त कष्ट हो से उनके नेत्रों में से मोती की तरह अश्रुबिंदु टपकते थे, जिसे दे भाविक भक्तों के हृदय थर २ धूज उठते थे, इसमें तो कुछ नवीन नहीं थी, परन्तु नगर का हरएक प्रेक्षक यह स्थिति देख भर धूज उठता था। ऐसी स्थिति में उन्होंने एक समय नहीं अने समय विहार किया है।

वाक्पटुता।

प्रिय और पथ्य वाणी किसी विरले पुरुष की ही होती है. पं बिरले पुरुषों में पूज्यश्री का दर्जा अति उच्च था. उनका वाक् चातु अति प्रशंसनीय था. धर्म और हृदय की उच्च भावनाओं से मिश्रि तथा विचार के प्रवाह से प्रवाहित हुई उनकी असाधारण वाणी अजब आश्चर्य था. अद्भुत शक्ति थी और परिपूर्ण निरवद्यता थी

जिसतरह प्रशस्त प्रेम का पवित्र प्रवाह पूज्यश्री के नेत्र युग से निरन्तर वहा करता था उसीतरह कमल वदन से भी व्याख्या के गय वहता हुआ वचनामृत का स्रोत सर्वत्र प्रेम का "वसुधै

इसलिये उनका सच्चारित्र मौन दशा में भी जन समूह पर जादूसा असर उत्पन्न करता था। तो फिर उनके पवित्र आत्मा की वाणी, व्यापार, लोगों के चरित्र, संगठन में अपूर्व अवलम्बन रूप हो इसमें क्या आश्चर्य है? कभी २ उनके सद्बोध का पूरा रहस्य अल्पमति श्रोतृ समुदाय भी समझ सकती थी। उनकी वाणी का प्रभाव ऐसा अलौकिक था कि वह भव्यात्माओं के अन्तरपट को खोल देता था। पूज्य श्री की शास्त्रीय शैली ने निराश हुए कई श्रावकों को अत्यंत सहृदय आत्माओं को उत्साह और आशा दिला सतेज किये हैं। सूत्रों का स्वाध्याय रस के आनन्द में अर्वाचीन समय में मस्त होने वाले कितने मुनि हैं? मलिन वृत्तियों को हटा कर, सात्विक वृत्तियों को जागृत कराने वाला पूज्य श्री के हृदय—सारंगी के तार से उत्पन्न हुआ हृदय-भेदक-संगीत किस को कितना प्रिय लगता था! सात्विक भावना के प्रकाश दीप को प्रकटाना तो अनुभवी उपदेशकों के भाग्य में ही लिखा है। सिर्फ कर्णेन्द्रिय को प्रिय हो वह क्या काम का है? अर्थ गंभीरता आत्मा को प्रसन्न करदे तब ही असर होता है।

पूज्य श्री की वाणी सत्य और हितकारी थी किंतु सर्वथा सब को प्रियकर हो ऐसी वाणी उच्चारण करना यह इनकी प्रकृति के प्रतिकूल था। कभी २ किसी २ व्यक्ति को इनकी वाणी में कटुता प्रतीत होती थी। क्योंकि ज्वर पीड़ित मनुष्यों को शक्कर या मिश्री

चर्चा के शब्दों की मारामारी में चाहे जैसी वकीली चल जाय परन्तु शब्दों की अब कीमत नहीं. कहने की अपेक्षा कर दिखाने का ही यह जमाना है. उनके फट के कभी भूले नहीं जाते
' सुंदर सब सुख आन मिले, पण संत समागम दुर्लभ भाई

' धनवंत को आदर करे, निर्धन को रखे दूर;
एऊ तो साधु न जाणिये, वो रोटियां को मजूर "
रंग घणा पण पोत नहीं, कुण लेवे उस साड़ी को ?
फूल घणा पण बास नहीं, कुण जावे उस बाड़ी को ?

निर्भयता

भय यह मानव जीवन की उन्नति में पीछे हटाने वाला भ कर आवरण है। एक विद्वान् ने कहा है कि "भय यह मनुष्य आसपास कटुता फैलाता है वह मानसिक, नैतिक, और आध्य त्मिक प्रवृत्तियों का नाश करता है और कितनी ही दफा मृ तक का अवसर पैदा करता है वह सर्व शक्ति और विकास नाश कर देता है।"

चर्चा के शब्दों की मारामारी में चाहे जैसी वकीली चला जाय परन्तु शब्दों की अब कीमत नहीं. कहने की अपेक्षा कर दिखाने का ही यह जमाना है. उनके फट के कभी भूले नहीं जाते।
' सुंदर सब सुख आन मिले, पण संत समागम दुर्लभ भाई '

' धनवंत को आदर करे, निर्धन को रखे दूर;
एऊ तो साधु न जाणिये, वो रोटियां को मजूर "
रंग घणा पण पोत नहीं, कुण लेवे उस साड़ी को ?
फूल घणा पण बास नहीं, कुण जावे उस वाड़ी को ?

निर्भयता

भय यह मानव जीवन की उन्नति में पीछे हटाने वाला भ-कर आवरण है। एक विद्वान् ने कहा है कि " भय यह मनुष्य आसपास कटुता फैलाता है वह मानासिक, नैतिक, और आध्या-त्मिक प्रवृत्तियों का नाश करता है और कितनी ही दफा मृ-तक का अवसर पैदा करता है वह सर्व शक्ति और विकास नाश कर देता है। "

पूज्य श्री में बालवय से ही निर्भयता भरी हुई थी। खाद प्रतिगमन, कानोड़ में सांप के साथ चार माह तक निवास, गांढ़-गढ़ से कोटे जाते समय भयंकर जंगल का विहार, सुखेल के सुना

सामने का सत्याग्रह इत्यादि अवसरों से वे कितने निर्भय बने
थे वह वाचकों को विदित ही है ।

लोकापवाद का भय भी उन्हें कर्तव्य विमुख कदापि न बना
सका था । सम्प्रदाय परिवर्तन तथा अनेक बड़े २ साधुओं का
बहिष्कार इत्यादि प्रवृत्तियों के ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत हैं सामान्य
मनुष्यों के लिये लोकापवाद की भयंकर भींत उलांघना अति
कठिन है ।

जनभीरुता का स्थान पूज्य श्री में पापभीरुता ने लिया था ।
जनभीरुता इनके रोमांच में भी न थी । पापभीरुता इनके रग
रग में भरी हुई थी । उन्हें देह की चिंता भी न थी । आत्मा की
चिंता तो हमेशा रहती थी ।

दुनियां मुझे क्या कहेगी ? इस पर उन्होंने ध्यान ही नहीं
दिया, कभी विचार भी नहीं किया, परन्तु सिर्फ महावीर क्या कह
रहे हैं ? उनकी क्या आज्ञा है ? यही उनका जीवन पर्यंत शोध
था, यही चिन्तवना रहीं और वे वीर प्रणीत निरवद्य मार्ग पर
दृढ़ता से, निर्भयता से आगे २ बढ़ते ही चले गए । एक फारसी
कवि के फरमाते थे कि:—

" तीर तलवार तग्र तेगा व खंजर बरसे;
जहर खून और मुसीबत के समुंदर बरसे;

चर्चा के शब्दों की मारामारी में चाहे जैसी वकीली चल जाय परन्तु शब्दों की अब कीमत नहीं. कहने की अपेक्षा कर दिखाने का ही यह जमाना है. उनके फट के कभी भूले नहीं जाते ' सुंदर सब सुख आन मिले, पण संत समागम दुर्लभ भाई

' धनवंत को आदर करे, निर्धन को रखे दूर;
एऊ तो साधु न जाणिये, वो रोटियां को मजूर "
रंग घणा पण पोत नहीं, कुण लेवे उस साड़ी को ?
फूल घणा पण बास नहीं, कुण जावे उस बाड़ी को ?

निर्भयता

भय यह मानव जीवन की उन्नति में पीछे हटाने वाला भयंकर आवरण है। एक विद्वान् ने कहा है कि " भय यह मनुष्य के आसपास कटुता फैलाता है वह मानसिक, नैतिक, और आध्यात्मिक प्रवृत्तियों का नाश करता है और कितनी ही दफा मृत्यु तक का अवसर पैदा करता है वह सर्व शक्ति और विकास का नाश कर देता है। "

पूज्य श्री में बालवय से ही निर्भयता भरी हुई थी। खादेड़ा प्रतिगमन, कानोड़ में सांप के साथ चार माह तक निवास, गांडलगढ़ से कोटे जाते समय भयंकर जंगल विहार, सुशेल के सुभा को

ग्रामने का सत्याग्रह इत्यादि अवसरों से वे कितने निर्भय बने
थे वह वाचकों को विदित ही है।

लोकापवाद का भय भी उन्हें कर्तव्य विमुख कदापि न बना
सका था। सम्प्रदाय परिवर्तन तथा अनेक बड़े २ साधुओं का
तिरस्कार इत्यादि प्रवृत्तियों के ज्वलंत उदाहरण प्रस्तुत हैं सामान्य
व्यक्तियों के लिये लोकापवाद की भयंकर भींत उलांघना अति
कठिन है।

जनभीरुता का स्थान पूज्य श्री में पापभीरुता ने लिया था।
जनभीरुता इनके रोमांच में भी न थी। पापभीरुता इनके रग
रग में भरी हुई थी। उन्हें देह की चिंता भी न थी। आत्मा की
चिंता तो हमेशा रहती थी।

दुनियां मुझे क्या कहेगी? इस पर उन्होंने ध्यान ही नहीं
दिया, कभी विचार भी नहीं किया, परन्तु सिर्फ महावीर क्या कह
गये हैं? उनकी क्या आज्ञा है? यही उनका जीवन पर्यंत शोध
था, यही चिन्तवना रही और वे वीर प्रणीत निरवद्य मार्ग पर
निर्भयता से, निर्भयता से आगे २ बढ़ते ही चले गए। एक फारसी
शेर वे फरमाते थे कि:—

" तीर तलवार तब्र तेगा व खंजर बरसे;
जहर खून और मुसीबत के समुंदर बरसे;

बिजलियां चर्ख से और कोट से पत्थर बरसे,
सारी दुनियां की बलायें मेरे सरपे बरसे;
खतम होजाय हर एक रँजो मुसीबत मुझपर,
मगर इमान को जुंबिस हो तो लानत हो मुझपर।

संयम सरिता का प्रवाह सहज ही शिथिल हो जाता तो उन्हें बड़ा दुःख होता था। बिलकुल रज जैसे बारीक छिद्र न पूरे जाय तो हाथी निकले जैसे द्वार होजाते हैं इसलिये छोटे कार्य में ही जल्द साल संभाल कर लेना वे पसंद करते थे। परन्तु प्रफुल्लित हुए वृक्षों में जब क्षय घुसने लगा, ईर्ष्या और अंगद्वेष रूपी कीड़े फल को ही खाजाने लगे, तब सम्प्रदाय के मुख्य सिद्धांत और सीमा की रक्षार्थ वे जागृत हुए, घबराये नहीं। अवसर के जानकार ये महात्मा तो कबूल करते थे कि मतभेद यह महान् पुरुषों ने भी स्वीकार किया है और सजीवता का चिन्ह है जागृत रहने की चाबी है।

"मुंहु मुहुं मोह गुणे जयंतं। अणेग रूवा समणं चरंतं।
फासा फुसंती असमंजसंच। नते सुभिक्खु मणसा पउसे"
Bear and forbear.

सब सहन करलेते और आत्मा पर विश्वास रखते. परन्तु सत्ता के मद में चारित्र की पांख कटजाय या बाजी बिगड़ जाय

इसे बहुत सावधान रहते थे। दुराग्रह से किसी विचार को पकड़े रहते तथा शास्त्र का नियम खंडित हो वहां वे झुकते भी नहीं, तु सत्याग्रह करते थे। समाज संरक्षा की सौंपी हुई जोखिम से हमेशा जागृत रहते थे।

शिष्यों के साथ के व्यवहार में कुसुम से कोमल मालूम होने वाला हृदय उनके अन्यायी व्यवहार के समय वज्र से भी कठिन हो जाता था। सत्य के ताप का यह तेज था। मतभेद के कारण योग न होने पर भी वे दूसरों के सद्गुणों की बेदरकारी न करते थे, परन्तु अवसर मिलने पर उनके गुणों की प्रशंसा करते थे। उन्होंने अपना समस्त जीवन श्री शासन देवी के शरण में ही समर्पण किया था। उनके वय के प्रमाण में दूसरा कोई व्यक्ति क्वचित् ही मिले, ऐसा अपूर्व गांभीर्य पूज्य श्री में प्रकट हो गया था। सूत्र ज्ञान की प्रवीणता अनोखी थी। वे सूत्र के ज्ञान की प्रकाशित किरणें फैलाने के लिये शिष्य समूह को खास आग्रह करते थे। ऐसे विचारशील धर्माध्यक्ष के आश्रय में संख्या-बद्ध साधु आकर्षित होते और मनमानी प्राप्त कर जन्म सार्थक करते थे।

धर्म के कारण मरना, प्राण देना यह कुछ प्राचीन समय ही देख नहीं, जब २ धार्मिक तेजस्विता कम होती हुई दी

होती, कि जल्द ही उसकी कीर्ति बढ़ाने की फिक्र लगती। धार्मि
जुल्म सहन न होता परन्तु उसे बिलकुल निर्मूल करने का ही प्रय
होता था। परिणाम में सत्ता भिन्नता पकड़ती, सर्वानुमत असम
हो जाता, अनिवार्य प्रसंग उपस्थित होने से भिन्न २ सम्प्रदाय ह
गए और पोषाते गए, इतने अधिक सम्प्रदायों का अस्तित्व ऐसे
कारणों का आभारी है। सांसारिक व्यवहार या मान्यता को पक
कर भिन्न चौतरे पर चढ़ भिन्न २ बात कहना यह भिन्न वात
गुन्हेगारों का गुन्हा बिल्कुल साफ प्रकट होजाने पर भी नगत
कारण कितनी ही ज्ञातियों में गुन्हेगार के सगे सम्बन्धी भिन्न त
डालदेते हैं उसतिरह सत्य की शमशेर के प्रभाव से संयम रण
गस में उतरे हुए इन तड़ों का अनुकरण करें तो श्री महावीर भग
वान् की आज्ञाओं का प्रत्यक्ष अपमान होता है और श्री संघ
आदर भाव गुमाते हैं।

अलबत्त शरम भरी हुई स्थिति में बेशरम कबूल से आघात
तो होता है परन्तु धार्मिक कायदे तो जीव को जोखिम में डालक
ही निभाने पड़ते हैं इन कायदों पर अपील नहीं, ठहराविक स
भुगतना ही चाहिए, भविष्य की भूलों का भान ऐसी सजाओं मे
ही जागृत रहता है और दूसरों को भी जागृत करता है। वृत्ति को पर
टाने की यह कसोटी है। कसोटी के कस में शुद्ध कंचन ज्यों पा
उतरने वालों का ही संयम सार्थक है।

आकर्षणों में फंसने वाले धोबी के कुत्तों की तरह न घर के
ाट के, धर्म के नियमों के कारण प्राणार्पण करने वालों के और
ाग्रह धरने वालों के प्राचीन दृष्टांत बहुत हैं आज भी ऐसे धर्म
का पाक प्रस्तुत है।

अपनी ही सम्प्रदाय के एक साधु की दृष्टांत ध्यान में देने
ा है। दो प्रहर को कुछ औषधी लेने एक युवान साधु को
गृहस्थ के वहां जाना पड़ा, उस मकान में उस समय एक विधवा
के सिवाय कोई न था, मुनिराज पीछे फिरते थे कि वह स्त्री
ारवश हो मुनि के पीछे पड़ी। मुनि ने असरकारक उपदेश दे
धर्म समझाया, परन्तु काम अंधा है समय बड़ा तीव्र था बूम
से उलटी अपनी इज्जत बिगड़ती है आत्मा के श्रेय के कारण ही
र मुंडाने वाले इन मुनि ने मन में ही आलोयणा कर अपनी
भ काट अपने व्रत निभाने वास्ते अपनी प्रतिज्ञा पालने वास्ते
ाने धर्म वास्ते अपना प्राण बहादुरी से अर्पण किया। एक गुरु
शिष्य के संथारे के समय शिष्य की शिथिलता के कारण उस
थारे के स्थान पर सोकर प्राण दे टेक निभाई थी।

आयर्लेडमें नगर सेठ लार्ड मेयरने जेलमें खुराक न ले उपवास
कर आत्मभोग दिया श्रीयुत् शेठी अर्जुनलालजी ने जेल में इष्टदेव के
दर्शन बिना किये अन्न लेना इन्कार कर दिया था। रामचंद्र ब्राह्मण ने
ाशान में जनेव बिना अन्न न ले नव्वे दिन भूखे रह मृत्यु

होती, कि जल्द ही उसकी कीर्ति बढ़ाने की फिक्र लगती । धार्मिक जुल्म सहन न होता परन्तु उसे बिलकुल निर्मूल करने का ही प्रयास होता था । परिणाम में सत्ता भिन्नता पकड़ती, सर्वानुमत असम्भव हो जाता, अनिवार्य प्रसंग उपस्थित होने से भिन्न २ सम्प्रदाय होते गए और पोषाते गए, इतने अधिक सम्प्रदायों का अस्तित्व ऐसे ही कारणों का आभारी है । सांसारिक व्यवहार या मान्यता को पकड़ कर भिन्न चौतरे पर चढ़ भिन्न २ बात कहना यह भिन्न बात है गुन्हेगारों का गुन्हा बिलकुल साफ प्रकट होजाने पर भी ममत्व के कारण कितनी ही ज्ञातियों में गुन्हेगार के सगे सम्बन्धी भिन्न तड़ें डालदेते हैं उसतिरह सत्य की शमशेर के प्रभाव से संयम रणांगण में उतरे हुए इन तड़ों का अनुकरण करें तो श्री महावीर भगवान् की आज्ञाओं का प्रत्यक्ष अपमान होता है और श्री संघ का आदर भाव गुमाते हैं ।

अलबत्त शरम भरी हुई स्थिति में बेशरम कबूल से आघात तो होता है परन्तु धार्मिक कायदे तो जीव को जोखिम में डालकर ही निभाने पड़ते हैं इन कायदों पर अपील नहीं, ठहराविक सजा भुगतना ही चाहिए, भविष्य की भूलों का भान ऐसी सजाओं से ही जागृत रहता है और दूसरों को भी जागृत करता है । वृत्ति को पलटाने की यह कसोटी है । कसोटी के कस में शुद्ध कंचन ज्यों पार उतरने वालों का ही संयम सार्थक है ।

आकर्षणों में फंसने वाले धोबी के कुत्ते की तरह न घर के न घाट के, धर्म के नियमों के कारण प्राणार्पण करने वालों के और अभिग्रह धरने वालों के प्राचीन दृष्टांत बहुत हैं आज भी ऐसे धर्म वीरों का पाक प्रस्तुत है।

अपनी ही सम्प्रदाय के एक साधु का दृष्टांत ध्यान में देने योग्य है। दो प्रहर को कुछ औषधी लेने एक युवान साधु को एक गृहस्थ के वहां जाना पडा, इस मकान में उस समय एक विधवा स्त्री के सिवाय कोई न था, मुनिराज पीछे फिरते थे कि वह स्त्री विकारवश हो मुनि के पीछे पडी। मुनि ने असरकारक उपदेश दे स्त्री धर्म समझाया, परन्तु काम अंधा है समय बडा तीव्र था बूम देने से उलटी अपनी इज्जत बिगडती है आत्मा के श्रेय के कारण ही सिर मुंडाने वाले इन मुनि ने मन में ही आलोयणा कर अपनी जीभ काट अपने व्रत निभाने वास्ते अपनी प्रतिज्ञा पालने वास्ते अपने धर्म वास्ते अपना प्राण बहादुरी से अर्पण किया। एक गुरु ने शिष्य के संथारे के समय शिष्य की शिथिलता के कारण उस संथारे के स्थान पर सोकर प्राण दे टेक निभाई थी।

आयर्लेंडमें नगर सेठ लार्ड मेयरने जेलमें खुराक न ले उपवास कर आत्मभोग दिया श्रीयुत् शेठी अर्जुनलालजी ने जेल में इष्टदेव के दर्शन बिना किये अन्न लेना इन्कार कर दिया था। रामचन्द्र ब्राह्मण ने अंदमान में जनेव बिना अन्न न ले नव्वे दिन भूखे रह मृत्यु स्वीकार

स्त्री थी ऐसे दृष्टांतों पर खास पुस्तक लिखी जा सकती है यहां सिर्फ संकेत करने का कारण यह है कि धार्मिक नियम धार्मिक प्रतिज्ञा यह कुछ बालक का खेल नहीं है कि अपनी इच्छानुसार कसोटी के समय प्रतिज्ञा को त्याग दें और समय के वश होजांय।

'नवजीवन' इस सम्बन्ध में अपना यह अभिप्राय व्यक्त करता है कि इस सुधार के जमाने में ऐसे प्राणत्याग को कोई मूर्खता से भरा हुआ भी कहदे, क्योंकि जनेव केकारण मरने को तैयार हो जाना ऐसी सलाह आजके समय कोई सचमुच में नहीं देगा. परन्तु अपने को जो वस्तु धर्म जची है उसके लिये प्राण देने की शक्ति तो प्रत्येक मनुष्य में रहनी ही चाहिये. वर्त्तमान समय में समाज में से यह शक्ति बहुत कम होगई है इसीलिये समाज में पामरता दृष्टिगत होती है और अधर्म इतना बढ़ा चला आता है।

ईसु के इन बचनों का सार अंतःकरण में उतारना ठीक है कि गेहूं का कण जबतक जमीन में दबकर नहीं मरता तबतक जैसा का तैसा रहता है।

सत्य और निर्भयता आत्मभोग बिना सजीवन नहीं होती। सचमुच जो हमें मर्द नहीं बनना है अपनी इज्जत कायम रखने जितना भी पुरुषार्थ हम में नहीं है स्वतः में प्रभु और पंच की साक्षी से ली हुई प्रतिज्ञा पालने की सामर्थ्य भी(मर्दपना)नहीं है तो या

ठीक है कि लाचारी के साथ अपना पहिना हुआ भेष उतारकर फेंकदे, परन्तु भेष को न लजावें, दंभ से दुनिया को न ठगें. चोर चोरी करे इसमें नवीनता नहीं है परन्तु चोकी पहरे वाले, रक्षण करने वाले ही भक्षण करने लगजाँय वह असह्य होजाता है।

कर्तव्य पालन की टेवें निर्भयता का पोषण करता है. पूज्यश्री का जीवन विविध घटनाओं से पूर्ण है वे कभी दुःख से दबे नहीं, दिङ्मूढ़ बने नहीं, उदासीनता से दुबले हुए नहीं, आत्मा की भूख मिटाने, प्यास छिपाने में उन्होंने अविश्रान्त श्रम किया है. पाप पुंज के अग्नि समान और अन्याय के शत्रु समान वे हमेशा गर्जारव करते रहे, कभी भी कोमलता नहीं त्यागी. श्रीकृष्ण को एक ब्राह्मण ने लात मारी उसे अलंकार की तरह धारण करली, गांधारी ने घोर श्राप दिया, जिसे श्रीकृष्ण ने अधिक सम्मान दिया. साधु चरिता की ओट होजाने पर भी श्रीजी ऐसे ही अविचलित, गंभीर और महासागर बने रहें।

" आचार सिंधु महा शोधक मोती नोंतु !
दोरी विना उदधि ने तलीये ज्वानुं !
त्यां मच्छ सिंधु महि, व्हाण गली जनारा !
तोफान गिरि मूल तेय उखेड़नारा !
ते राक्षसोनी उपर प्रीति राखवानी !
ते राक्षसोनी सहसा अप दैव अंश !

छे युद्ध तो जगाववुं, पण प्रेम प्रेम राखी !
लोही लीधा वगर लोही दइज देवुं"
कलापी.

एमर्सन के ये वाक्य यहां याद आजाते हैं ।

"Doubt not O Poet but persist say-it is in me and shall outstand there, bulked and dumb shu'tering and stammering hissed and hooted, stared and strive until a last ruge draw out of thee that dream power which every night shows thee is thine own. A man transcending all limit and privasy and by virtue of which a man is conductor of the whole river of electricity." Emerson.

स्मरणशक्ति ।

पूज्यश्री की जैसी स्मरणशक्ति अच्छे २ अवधानियों में भी नहीं दिखती, उनकी असाधारण स्मरणशक्ति के एक दो उदाहरण यहां देता हूं ।

पूज्यश्री राजकोट विराजते थे, तब एक दिन मोरवी से कितने ही अग्रगण्य श्रावक मोरवी पधारने के लिये विनन्ती करने आये थे. उनमें सेठ अम्बावीदास डोसाणी भी थे. जब सेठ अम्बावीदास भाई ने वंदना की, तब महाराज श्री ने उनका नामले 'जी' कहा,

उसका नाम ठाम पूज्य श्री नहीं भूलते थे । भीणाय वाले पंडित विहारीलालजी इस के सबूत में सत्य कहते हैं कि:—

" मुझे इनकी अद्‌भुत स्मरण शक्ति देख अत्यन्त आश्चर्य होता था और कभी २ मुझे ऐसा भान होता कि ये मनुष्य हैं या देवता हैं ।

कर्तव्य पालन में सावधानी ।

आचार्य पद प्राप्त हुए पश्चात् दूसरों की तरह अपना प्रचार बढ़ाने की ओर पूज्य श्री का बिलकुल लक्ष न था, परन्तु अपनी आज्ञा में विचरने वाले चतुर्विध संघ में ज्ञान, दर्शन, चारित्र तप को बढ़ा कर जैन शासन की उन्नति करें यही उनका परम ध्येय था । पूज्य श्री अपने साधुओं से बार बार कहते कि:—

" तुमने दिक्षाली है और घर कुटुम्ब स्त्री सब को छोड़ दिये है सो अब उनके काम के तो तुम नहीं रहे हो यह दिक्षा चिंतामणि रत्नों का हार है इसको अच्छी तरह से पालने में उत्कृष्टा रस आवेगा तो सिर्फ एक भव कर के मोक्ष में चले जाओगे संसार के सुख वैभव भुंगड़े की मुठी समान हैं सो इस भुंगड़े की मुठी के वास्ते चिंतामणि रत्नों का हार मत खो बैठना " व्याख्यान बाचने वाले साधुओं को उद्देश्य कर वे कहते कि:—

"अन्य को उपदेश देना सरल है परन्तु उस मुआफिक वर्ताव करना कठिन है उपदेशक होने की अपेक्षा आदर्श होने में ही अपना और जगत का श्रेय विशेष सिद्ध कर सकते हैं इसलिये मुनियों ! तुम उपदेष्टा होने के पहिले दृष्टांत रूप बनो। वचन की अपेक्षा वर्ताव में बल अधिक है उत्तम वर्ताव कभी भी न घिसे ऐसे गहन संस्कारों द्वारा परिचित जनों के हृदय पट पर अंकित हो जाता है"।

पूज्य श्री बाह्य त्याग की अपेक्षा आंतर त्याग को प्रधान पद देते और कहते कि:—

"विषय कषाय के त्याग रूप आंतर त्याग विना सिर्फ बाह्य त्याग जीवन के विना देह विना नीर के कूप जैसा है। वे कहते कि:—

कामना सब दुःखों की जननी है। निष्काम वृत्ति धारण करना यही सुख प्राप्ति का श्रेष्ठ साधन है। खारे जल के पीने से तृषा दूर नहीं होती परन्तु उलटी अधिक तृषा लगती है इसी तरह विषयों के सेवन से विषय वासना घटती नहीं परन्तु उलटी अधिक बढ़ती है"

"अशुचि मय शरीर पर मोह ममत्व रखना यह बड़ी भारी भूल है। शरीर के अन्दर जो जो वस्तुएं हैं वे अगर शरीर के

आग पर होती तो उसे खाने को गीद्ध कोए, इत्यादि पक्षी शरीर पर गिरते और उन्हें हटाने में ही अधिक समय व्यतीत करना पड़ता।"

"मुनियो! तुम जो संसार के क्षुद्र बंधनों से पूर्ण वैराग्य पूर्वक मुक्त हुए हो अगर हो जाओ तो तुम आनन्द की भूमि में विचरने वाले हो। भय और दुःख तो हमेशा तुम्हारे से दूर ही रहेंगे। दुनियां जिसे दुःख २ कह कर रोती है उसे तो तुम आनंद देने वाली मान लोगे"

"केवल शास्त्र पढ़ने से ही मुक्ति नहीं मिल सकती परन्तु शास्त्र की आज्ञानुसार चलने से ही मुक्ति प्राप्त हो सकती है"।

उपरोक्त सद्बोधामृत का अपने शिष्य समुदाय को पान करा कर कर्तव्य पालन के लिये उचित प्रोत्साहन देते थे और अपने उत्तम चारित्र बल से सम्प्रदाय की नांव सही सलामत रीति से रास्ते पर आगे बढ़ाते चले जाते थे।

चतुर्विध संघको पूज्यजी परमावलम्बन के समान थे। सत्पुरुष सद्गुण और सद्वर्तन की जीती जागती मूर्ति हैं सब संग परित्याग किये हुए महात्माओं के देखते ही उनके दर्शनमात्र से ही कई संस्कारी जीवों को उनके उत्तम गुणों के अनुकरण करने की स्वतः

को मरना भी पड़ा था पूज्य श्री को भी चारित्र शुद्धि के लिये अपना आत्मभोग देना पड़ा था ।

फांसी की सजा पाए समाज वाद के एक कवि जोहले ने कहा है कि ।

Don't mourn for me;.
Friends ! organise !

दोस्तों ! मेरे लिये शोक न करते समाजको सुव्यवस्थित करो ऐसा ही उपदेश श्रीजी के अवसान समय का था,.

त्याग.

" धर्म के प्रत्यक्ष अनुभव का प्रथम सोपान त्याग है जहां तक बने वहां त्याग तक व्रत स्वीकार करें "

स्वामी विवेकानन्द

पूज्यश्री के रक्त के एक २ अणु में त्याग की भावना उछल रही थी दुनियां धन दौलत हाट हवेली स्त्री इत्यादि मिलाकर आनंद पाती है परन्तु पूज्यश्री इन सब के त्याग में परमानन्द अनुभव करते थे. बाह्य और अंतर इन दोनों प्रकार के त्याग से उन्हों ने आत्माको समुज्वल किया था..सर्व संग परित्यागी और तपोधन महात्माओं के देखते ही त्याग वैराग्य की उर्मियां देखनेवालों के

हृदय में उछलने लगती ऋद्धि और रूप गुणवती रमणी को छोड़ घोर कष्ट सहने वाले इन साधु शिरोमणि के दर्शन मात्र से ही बहुत से लखपति और क्रोड़पति के हृदय में दान के गुण तत्व प्रकटते और यथाशक्ति दान पुण्य करने की वृत्ति सहज ही हो जाती।

सचमुच सत्पुरुष सद्गुणों की जीती जागती मूर्ति है, इस अंधकार मय संसार समुद्र में पर्यटन करती हुई अपनी जीवन नौका को चट्टान से टकराकर नाश होने से बचाने वाली ये दीप्त शिखाएं है, उन्नति की दिशा बताने वाले ये ध्रुव के तारे हैं।

Be in the world, not of the world.

निरहंकार वृत्ति।

दूसरे जब कीर्ति के पीछे दौड़ते फिरते हैं और जहां तहां अपनी बड़ाई के फव्वारे छोड़ते हैं वहां पुज्य श्री कीर्ति को उन्नति के पथमें अंतराय सम समझ उस से दूर भागते थे.

पहिले पाठक देख चुके हैं कि पूज्य श्री पूर्ण शास्त्र समर्थ ज्ञानी होने पर भी श्रावकों से चर्चा करते समय कोई गहन प्रश्न का निराकरण करने में उन्हें कठिनता हो उस समय वे विना संकोच कहदेते कि इस समय

को मरना भी पड़ा था पूज्य श्री को भी चारित्र शुद्धि के लिये अपना आत्मभोग देना पड़ा था ।

फांसी की सजा पाए समाज वाद के एक कवि जोहले ने कहा है कि ।

Don't mourn for me;.
Friends ! organise !

दोस्तों ! मेरे लिये शोक न करें समाजको सुव्यवस्थित करें ऐसा ही उपदेश श्रीजी के अवसान समय का था,

त्याग.

" धर्म के प्रत्यक्ष अनुभव का प्रथम सोपान त्याग है जहां तक बने वहां त्याग तक व्रत स्वीकार करें "

स्वामी विवेकानन्द

पूज्यश्री के रक्त के एक २ अणु में त्याग की भावना उछल रही थी दुनियां धन दोलत हाट हवेली स्त्री इत्यादि मिलाकर आनंद पाती है परन्तु पूज्यश्री इन सब के त्याग में परमानन्द अनुभव करते थे. बाह्य और अंतर इन दोनों प्रकार के त्याग से उन्हों ने आत्माको समुज्वल किया था..सर्व संग परित्यागी और तपोधन महात्माओं के देखते ही त्याग वैराग्य की उर्मियां देखनेवालों के

हृदय में उछलने लगती ऋद्धि और रूप गुणवती रमणी को छोड़ घोर कष्ट सहने वाले इन साधु शिरोमणि के दर्शन मात्र से ही बहुत से लखपति और क्रोड़पति के हृदय में दान के गुण तत्व प्रकटते और यथाशक्ति दान पुण्य करने की वृत्ति सहज ही हो जाती।

सचमुच सत्पुरुष सद्गुणों की जीती जागती मूर्ति है, इस अंधकार मय संसार समुद्र में पर्यटन करती हुई अपनी जीवन नौका को चट्टान से टकराकर नाश होने से बचाने वाली ये दीप्ति शिखाएं है, उन्नति की दिशा बताने वाले ये ध्रुव के तारे हैं।

Be in the world, not of the world.

निरहंकार वृत्ति।

दूसरे जब कीर्ति के पीछे दौड़ते फिरते हैं और जहां तहां अपनी बड़ाई के फव्वारे छोड़ते हैं वहां पुज्य श्री कीर्ति को उन्नति के पथमें अंतराय सम समझ उस से दूर भागते थे.

पहिले पाठक देख चुके हैं कि पूज्य श्री पूर्ण शास्त्र विशारद, समर्थ ज्ञानी होने पर भी श्रावकों से चर्चा करते समय क्वचित् कोई गहन प्रश्न का निराकरण करने में उन्हें कठिनता प्रतीतहोती तो उस समय वे विना संकोच कहदेते कि इस समय मेरी बुद्धि

काम नहीं देती एक बड़े आचार्य होने पर सभा में स्पष्ट ऐसा क नेवाले निरभिमानी स्फटिक रत्न जैसे निर्मल हृदय के महापुरु विरले ही होंगे।

लिंबड़ी सम्प्रदाय के विद्वान् मुनि श्री उत्तमचंदजी महारा की प्रशंसा करते हुए पूज्य श्री कहते कि अमुक सिद्धांत वचन क सच्चा रहस्य मुझे उन्होंने समझाया है। इसी तरह गोंडल संघा के आचार्य श्री जसाजी महाराज के ज्ञान की भी वे तारीफ करत थे। पंडित श्री रतनचंदजी महाराज के पास से विनय पूर्वक चंद्रप्र ज्ञप्ति सूत्रकी बांचना लेते थे, यह कितनी अधिक लघुता।

पूज्य श्री किसी ग्राम पधारते या कहीं से विहार करते उसकी खबर श्रावकों को न होने देते थे, एक समय छतरपुरे से व्यावर पधारते थे तब रास्ते में खबर मिली कि सैंकड़ों श्रावक श्राविकाएं आप के सन्मुख आरहे हैं महाराज श्री ने यह सुन दूसरी राह ली और विकट रास्ते चल एक छोटे से ग्राम में पधारे वहां ओसवाल का एक भी घर न था। उसने कहाकि हमारी पीढियां बीतगई परंतु कोई साधूजी यहां पधारे ऐसा मैंने नहीं सुना।

पूर्ण योग्यता न होने पर भी आचार्यपद प्राप्त करने के लिये कितने ही साधु तनतोड़ परिश्रम और व्यर्थ के दावे रचते हैं।

परन्तु पुज्य श्री को आचार्यपद प्राप्त होते भी उन्हों ने सं० १९७१ में अपने बहुत से अधिकार अपनी सम्प्रदाय के सुयोग्य मुनिवरों को सुपुर्द कर स्वतः ने अपने सिर का भार हलका किया था।

अखिल भारतवर्ष के साधु मार्गी जैन सम्प्रदाय में सब से अधिक साधुओं पर आधिपत्य धरानेवाले ये पूज्य श्री थे और उन के सदुपदेश से अनेक भव्यात्मओं ने वैराग्य पा दिक्षा ली थी तौभी आश्चर्य यह था कि उन्होंने अपनी नेश्राय में एक भी शिष्य न किया। उन्होंने तो दिक्षा न लेने के पहिले शिष्य न करने का निश्चय कर लिया था।

शिष्य के लिये संयम लुटानेवाले, चाहे जिसे मूंड़ अपने परिवार या नाम बढ़ाने की आकांक्षा वाले साधु पूज्य श्री का अनुकरण करें तो क्या ही अच्छा हो? करोड़ो तारों से जो अंधकार दूर नहीं होता वह सिर्फ एक चंद्र से दूर हो सकता है। जैन समाज में अभी श्री लालजी जैसे चंद्र की आवश्यकता है। वेषधारी या जैनाभावी, प्रमादी, या पासत्थे के झुंड के झुंड मूंड़ कर इकट्टे करने से उसका उद्धार नहीं हो सकता। वे जो जैन शासन की सूर्य को राहू रूप और जगत के केवल भाररूप हैं।

परमत सहिष्णुता।

एकांत में या व्याख्यान में पर धर्म की निंदा का एक शब्द

भी पूज्य श्री के मुंह से न निकलता था। इतना ही नहीं परन्तु अन्य दर्शी पूज्य श्री की वाणी सुन सन्तुष्ट होते थे।

जोधपुर के चातुर्मास में एक समय एक रामस्नेही सम्प्रदाय के अनुयायी गुलाबदासजी अग्रवाल जो अभी पक्के जैनी हैं पूज्य श्री के पास आ प्रश्न किया कि महाराज मुझे कोई ऐसा सीधा सरल उपाय बताइये कि जिससे मेरा मन शांत और स्थिर रहे।

महाराज श्री ने कहा कि भाई, तुम रामको जपते हो, उसीतरह चित्त को विशेष एकाग्र कर निरंतर रामनाम जपते रहो भक्ति से तुम्हारा मन पवित्र और शांत हो जायगा। यह सुनकर तथा महाराज श्री की सब धर्म पर ऐसी उदार भावना देखकर वे महाशय अत्यन्त आनंदित हुए और पूज्य श्री के सत्संग से जैन धर्म का रहस्य समझ जैन धर्म उन्होंने प्रेम पूर्वक स्वीकार किया।

कई उपदेशक अन्यधर्म की निंदा कर उस धर्म को जैन-धर्म के अनुयायी बनाने की आशा रखते हैं परन्तु इसका परिणाम उलटा होता है लोग ऐसे निंदकों से हमेशा भड़क कर दूर भागते हैं ज्ञानी पुरुष शुद्ध आत्मिक प्रेम की श्रृंखला से दुनिया को मुक्ति मार्ग की ओर लगाते हैं अन्य सम्प्रदाय या धर्म की निंदा करने से सम्प्रदाय की सेवा बजाने का भ्रम कइयों के हृदय से उन्होंने निकाल दिया है।

परनिंदा परिहार।

पूज्य श्री कदापि किसी की निंदा न करते और न सुनते थे और अपने भक्तों को भी निंदा से सर्वथा दूर रहने का आग्रह पूर्वक उपदेश देते थे इसके लिए सिर्फ एक ही दृष्टांत बस है।

सं० १९७८ के पौष माह में पूज्य श्री जावद में विराजते थे तब रतलाम के श्रावक धूलचंदजी श्रीमाल पौषध कर पूज्य श्री की सेवा में बैठे थे उस समय जावद के एक श्रावक ने आकर तेज-सिंहजी महाराज की सम्प्रदाय के साधु प्यारचंदजी तथा इंदरमलजी से संभोग प्रारंभ करने के लिए पूज्य श्री से अर्ज की और विशेषता में कहा कि अभी ऐसा ही मौका है जो आप विचार न करेंगे तो दूसरे पक्ष वाले दुश्मन इन्हें मदद देंगे। यह वाक्य सुनकर आचार्य श्री बोले कि भाई तुम दुश्मन किसे कहते हो? वे तो हमारे परम मित्र हैं उनकी प्रवृत्ति से हमें अपना चारित्र विशेष विशुद्ध करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

उस समय वहां वे दोही श्रावक थे। और दोनों पूज्य श्री के परम भक्त थे, तोभी एकांत में भी पूज्य श्री दूसरे पक्षवाले को परम मित्र समझ बातचीत करते थे।

उपरोक्त घटना घटी उसी दिन पूज्य श्री ने बातचीत में पा

चंदजी श्रीमाल से कहा कि मेरे सम्बन्ध में इस मामले में कुछ भी लेख निंदा या स्तुति रूप तुम्हें नहीं छपाने चाहिए।

इसके सौगंध लेलो, परन्तु उन्हों ने कुछ उत्तर न दिया, तब पूज्यश्री ने फिर फरमाया कि जो तुम सौगन न लेओगे तो मैं तुमसे बोलनाभी बंद कर दूंगा, तब उन्होंने उसी समय सौगन लेलिये।

दूसरे उनकी निंदा करते हैं ऐसे शब्द कभी वे सुनते तो उस मौके पर पूज्यश्री की गंभीर मुखमुद्रा पर उसका अणुमात्र भी असर नहीं होता था, तथा एक भी शब्द उनके मुंह से निंदा या अप्रसन्नता का इसके प्रतिकूल कभीनहीं निकलता था।

किसी भी धर्म वाले के साथ लड़ाई के कारण शास्त्रार्थ करने वितण्डावाद में उतरने के लिये पूज्यश्री बिलकुल खुश न थे. जिसका मुख्य कारण अपनी वाणी विवेक बचाये रखना ही था।

सं० १९७५ के चातुर्मास में एक समय उदयपुर में पूज्यश्री के व्याख्यान में एक वक्ता ने अपने भाषण में अमुक पक्ष के साधुओं की प्रवृत्ति के लिये सत्य परन्तु कटु टीका की, इस टीका के मंगलाचरण में ही पूज्यश्री पाटपर से उठकर चलेगए।

उदयपुर में तीन आचार्यों के चातुर्मास संवत् १९७१ में एक साथ हुए थे. उस समय तेरहपंथी एवम् मूर्तिपूजक भाइयों

निंदा ट्रेक्टबाजी इत्यादि कई क्लेशवर्धक प्रवृत्तियां की। परन्तु पूज्यश्री ने अनुपम क्षमा और शांति धारण कर निंदकों को प्रशंसक बना लिये थे, उनके साथ पूज्यश्री का प्रेममय वर्ताव "द्वेष का नाश द्वेष से नहीं परन्तु प्रेम से ही होता है" इस आप्तवाक्य को चरितार्थ करता था। पूज्यश्री का प्रेममय व्यवहार जावरे वाले मुनि० राजों के निम्नांकित काव्यों से स्पष्ट समझा जायेगा।

राग आसावरी।

पूजजी के चरनों में धोक हमारी, जाऊं क्रोड़ २ बलीहारी
पूजजी के चरनों में धोक हमारी।
टोंक नगर में रेनो थो मुनि को, मात पिता परिवारी।
गुरु मुख उपदेश सुनीने, लीनो संजम भारी ॥ पूज० ॥ १ ॥
आतम वश कर इंद्री जीती, विषय विकार विडारी।
वैराग्य माहे जली रया हो, धन २ हो ब्रह्मचारी ॥ पूज० ॥ २ ॥
हुकम मुनि की संप्रदाय में, प्रगट भये दिनकारी।
आचारज गुण करने दीपो, महिमा फैली चउदिशकारी ॥ पू० ३ ॥
नाम आपको श्रीलालजी, गुण आपका है भारी।
चारों संग है मिल पदवी दीनी रत्नपुरी पुजारी ॥ पूज० ॥ ४ ॥
बीजचंद्र ज्यूं कला बढ़त है, पूरण छो उपकारी।
निरखत नैना तृप्त न होवे, सूरत मोहनगारी ॥ पूज० ॥ ५ ॥

क्या तारीफ करू में आपकी, वाणी अमृतधारी ।
मुझ ऊपर किरपा झट कीजे, पूरण होत विचारी ॥ पूज० ॥ ६ ॥
उगणीसे इकसठ साल में रतनपुरी सुजारी ।
चौथमल की याही विनती, कदमों में धोक हमारी ॥ पूज० ॥ ७ ॥

पूज्य श्री हुकमीचंद्रजी महाराज की पाटावली ।

इस भरत खण्ड में तरण तारण की जहाजें
हुआ हुकमीचंद्रजी महाराज सुधारे काजे ॥ टेर ॥

इकवीस वर्ष लग वेले तप ठाया,
इक वस्तर ओढ़त, ओढ़त अंग जीर लगाया ।
करी आचार विचार को शुद्ध सिंघ जिम गाजे ॥ हु ॥ १ ॥

पीछे पूज्य श्री सीवलालजी महा यश लीनो,
तेतीस वर्ष तक तप एकांतर कीनो ।
बहुविधि सम्प्रदा साधु साध्वी आजे ॥ हु ॥ २ ॥

श्री उदयचंदजी महाराज आचरज भारी,
केई राजा को समझाय आतमा तारी ।
ये तो हुआ जगत विख्यात सिंघ जिम गाजे ॥ हु ॥ ३ ॥

चौथे पाट हुआ चौथमलजी महा गुणवंता,
हुआ पंडितों में परमाण आचार्य दीपंता।
केई जण को दियो ज्ञान ध्यान और साजे ॥ हु ॥ ४ ॥

अब पंचम पाटे आप हुआ बड़ भागी,
श्रीलालजी महा गुणवंत छती के त्यागी,
कियो धर्म अधिक उद्योत मिथ्यात्वी लाजे ॥ हु ॥ ५ ॥

ये मुनी माल रसाल ध्यान नित धरना,
हीरालाल कहे इस धर्म उन्नति करना।
जीवागंज कियो चौमासो मोक्ष के काजे ॥ हु ॥ ६ ॥

अथ स्तवन।

यजी सीतल चंद्र समान, देखलो गुणरतनो की खान ॥ टेर
न मारग में दीपतासरे, तीजे पद महाराज।
ही कालमें प्रगट भये हो, दया धर्म की जहाज ॥ पु ॥ १ ॥
पुण्य में आप पूज्यजी पूरा पुण्य कमाया।
न्य है माता आपकी, सरे ऐसा नंदन जाया ॥ पु ॥ २ ॥
ीठी वाणी सुणी आपकी, खुशी हुए नर नार;
ागण सुद पूनम के ऊपर कियो घणो उपकार ॥ पु ॥ ३

हाथ जोड़ कर करूं वीनती, अरजी पर चित दीजे।
वनी रहे सुनजर आपकी, चरणोंमें रख लीजे ॥ पु ॥ ४ ॥
भव्यजीवां ने तारतासरे, किरपा करी दयाल,
रामपुरे महाराज विराजे, रह्या कल्पतो काल ॥ पु ॥ ५ ॥
उगणी से त्रेसठ पुज्यजी, ठाणा एक सहस्र आठ
रामपुरा में खूब लगाया, दया धर्मका ठाठ ॥ पु ॥ ६ ॥
महामुनि नंदलाल तणा शिष्य, कहे सुणो गुरुदेवा।
दो दिन भलो ऊगसी सरे, मिले आपकी सेवा ॥ पु ॥ ७ ॥
(मुनि खूबचंदजी कृत

तपश्चर्या।

एकांतरः--पूज्य श्री के ३३ चातुर्मासों में एक भी चातुर्मास ऐसा शायद ही गया होगा कि जिस में आषाढ़ चौमासे से संवत्सरी तक उन्होंने एकांतर उपवास न किये हों। कई वक्त वे कार्तिक पूर्णिमा तक उपवास प्रारंभ रखते थे।

बेला, तेला, चोला, पचेला, तो उन्होंने इतने किये हैं कि उन की पूरी २ गिनती देना भी अशक्य है। पूज्य पदवी प्राप्त होने के पश्चात् ६ वर्ष तक तो हर महिने वे एक २ तेला विना नागा करते थे। फिर भी कोई एकही ऐसा मास गया होगा कि जिस में पूज्य श्री ने तेला न किया हो।

छः सात और आठ उपवास के भी उन्होंने कई स्तोक किये
त २ आठ २ उपवास के दिन भी पूज्य श्री स्वयं ही
याान फरमाते थे।

तेरह उपवास का भी एक स्तोक पूज्य श्री ने किया था।

वैयावृत्यः—स्वयं आचार्य होने पर और शिष्य समुदाय भी
त विनीत होने पर भी आप स्वयं आहार पानी लाते और
ष्यों के लिये भी ला देते थे। इतना ही नहीं परन्तु पात्र, झोली,
ड़े, इत्यादि धोने या पानी छानने इत्यादि के कार्य में भी वे
शिष्यों की पूरी मदद करते थे। उनके विनयवंत शिष्य ये काम
न करने के लिये पूज्य श्री से बार २ निवेदन करते परन्तु वे अपने
स्वभाव के कारण प्रमाद न कर कोई न कोई धर्म कार्य या वैया-
वृत्य में लगे रहते थे।

अल्पनिद्रा और स्वाध्यायः—पूज्य श्री रात को १० या
११ और कभी २ एक बजे तक निंद्राधीन न होते थे और एक
दो या तीन बजे जागृत हो जाते थे। एक प्रहर से अधिक निद्रा
वे क्वचित ही लेते थे। नित्य प्रति रात को दो से तीन बजे तक
निंद्रा से जागृत हो सूत्र की स्वाध्याय करते थे। बहुत से सूत्र
उन्होंने कंठस्थ कर लिये थे। उसमें से दशवैकालिक सूत्र का
पाठ तो वे सबसे पहिले कर लेते थे। फिर उत्तराध्ययन

ही अध्ययनों का पाठ करते थे। इसके पश्चात् आचारांग सूत्र-कृतांग, नंदी, सुखविपाक इत्यादि जो सूत्र कंठस्थ थे उनमें से किसी सूत्र का स्वाध्याय करते थे। फिर अर्थ का चिंतवन और तत्वविचार में लीन हो अप्रमादपन से रात निर्गमन करते थे, संख्याबद्ध स्तोक उन्हें कंठस्थ थे, उनकी पर्यटना वे हमेशा करते थे, उनमें भी २४ तीर्थंकरों का लेखा ज्ञानलब्धि इत्यादि कई थोकड़ों की पर्यटना तो वे नित्य प्रति करते थे।

कभी २ एक आध घंटे की निद्रा ले वे जागृत हो जाते और स्वाध्यायादि में प्रवृत्त रहते थे। फिर निद्रा आने लगती तो स्वाध्याय किये पश्चात् एक आध घंटा निद्रा लेलेते और प्रतिक्रमण के पहिले जागृत हो जाते थे. सूत्रों की स्वाध्याय कई समय वे अपने शिष्यों के साथ करते, शिष्य भी जल्द उठ पूज्यश्री के साथ स्वाध्याय करने लग जाते थे.

धीमे २ परन्तु गंभीर और सुमधुर स्वर से इस स्वाध्याय सुनने का जिन २ भाग्यशाली साधु श्रावकों को सुअवसर प्राप्त हुआ है वे कहते हैं कि हमारे जीवन की वे सफल घटिकाएं थी. उस समय का दृश्य कितना रम्य, बोधप्रद और आकर्षक था कि सिर्फ अनुभव से ही ज्ञात हो सक्ता है। सूत्र की अलौकिक वाणी का प्रवाह रात्रि की नीरव शांति में पूज्यश्री जैसे पवित्र पुरुष के मुख कमल में से बहता तब उसका प्रभाव कुछ भिन्न ही पड़ता था।

बालकों के शिक्षादेने का शौक।

लघुवय से ही बालकों को सत्पुरुषों के संसर्ग का लाभ
ता रहे तो उनके चारित्र का बंध उच्चतम हो जाता है। उत्तम
उनमें स्वयं प्रकट हो जाते हैं। इसीलिये प्राचीन समय के
क अपने बालकों को व्यवहारिक शिक्षा देने के पश्चात् धार्मिक
ा प्राप्त करने के लिये सद्गुरुओं के पास भेजते थे।

मोरबी में जब पूज्यश्री का चातुर्मास था तब जैन शाला के
ार्थी महाराज श्री के सत्संग का लाभ लेते. पूज्यश्री के दर्शन
र वाणी श्रवण का लाभ लेने के लिये अत्यंत आतुरता के साथ
मल वयस्क बालक हमेशा पूज्यश्री के पास आते. भक्ति के
से रंगा हुआ उनका कोमल हृदय कमल वहां प्रफुल्लित होजाता
और विनय से झुककर उनके शीष कमल पूज्यश्री के पदकमल
स्पर्श करते थे. इस विधि के पश्चात् वे सब सुमधुर ध्वनि से
उपदेश मधुर्बिंदु " का गायन [illegible] थे, उस समय का
[illegible] रहता था. गायन के पश्चात् वे पूज्यश्री के
सन्मुख बैठ जाते थे. फिर पूज्यश्री बालकों के योग्य कर्तव्य
समझाने के लिये [illegible]
[illegible]
[illegible]

" कम खाना और गम खाना, पढ़ना ज्ञान, देखना अपना दोष, मानना गुरु बचन, सुनना शास्त्र, ग्रहण करना हित-शिक्षा, देना हितोपदेश, लेना परायागुण, सहना परिषह, चलना न्यायमार्ग, खानागम, मारनामन, दमना इंद्रिय, तजना लोभ, भजना भगवंत, करना जीवाजीव का जतन, जपना जाप, तपना तप, खपाना कर्म, हरना पाप, मरना पंडित मरण, तरना भवसागर, करना सबका भला, धरना ध्यान, बढ़ाना क्रिया, रटना प्रभुनाम, हटाना कर्म, मांगना मुक्ति, लगाना उपयोग, करना जीवोंका उपकार, रोकना गुस्सा, छोडना अभिमान, तजना झूंठ, त्यागना चोरी, छोडना पर स्त्री, रखना मर्यादा "

ऐसे २ छोटे वाक्य बालकों को कंठस्थ याद करवाकर उसका रहस्य वे ऐसी खूबी से तथा मनोरम दृष्टांतों से समझाते कि बालकों के हृदय पर उनकी गहन छाप पड़जाती कि जो कभी न हट सके और एक रुढ़ी शिक्षा का अमल उस दिन से ही प्रायः प्रारंभ हो जाता था।

पाठक! स्कूल में नीति पाठ रटा २ बालकों के मस्तिष्क में ठूंस २ कर भरते हैं परन्तु उनका बहुत प्रभाव नहीं पड़ता। घरमें माता पिता बार २ जो शिक्षा देते हैं वे भी उनके गले नहीं बैठती, परंतु ऐसे सच्चारित्री और प्रभावशाली महात्माओं के बोध से तत्काल प्रभाव पड़ता है यह उनके चारित्र का ही प्रभाव समझना चाहिए।

मोरवी के जैसी शुभ प्रवृत्ति राजकोट के चातुर्मास में भी पूज्य श्री की ओरसे प्रचालित रही।

अवकाश मिलने पर बालकों को अपने समीप बिठाकर पंच-परमेष्ठी मंत्र सिखाते थे, उसकी अपार महिमा समझाते, सोते उठते बैठते, प्रभु के नाम को गुणों की याद करने की सुचाते थे, नवकार मंत्र का उच्चारण करते समय चंचल मन अन्य विषयों में गति न करें इसलिये आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी की उपयोगिता समझाते, इतना ही नहीं, परन्तु बालकों को अनुपूर्वी की पुस्तक की मदद लिए बिना ही अंगुली के इशारे द्वारा गिनने की रीति समझाते थे, ऐसी २ रीतियां सीखना बड़े मनुष्यों को भी कठिन और झंटाले जैसा मालूम होती है, परन्तु पूज्य श्री की प्रशंसनीय शिक्षा पद्धति से बालकों को ये रीतियां सरल और आनंद प्रदायक मालूम होती थीं।

अन्य मुनिवरों का ध्यान इस ओर खींचना लेखक अपना कर्तव्य समझ विनयपूर्वक प्रार्थना करता है। बालक ये भविष्य का संघ है थोड़े वर्ष पश्चात् वीर शासन के रक्षा की धुरी इनही के स्कंध पर रखी जायगी इसलिए उन्हें अभी से ऐसी शिक्षा देना आवश्यक है कि जिससे उनके हृदय में धर्म पर प्रेम जगे। वे धर्म के रहस्य को समझ सद्वर्ताव शाली और सुखी हो। एवं थोड़ा ... में हो। ये धर्म को दिपाने वाले शासन के शृंगार रूप बन जावें नहीं

तो ज्ञान के बिना धर्म सिर्फ अंग्रेजी शिक्षा का जो परिणाम हो
आरहा है वह सब दृष्टिगत होता ही है ।

निश्चय पर अटलता ।

पूज्यश्री स्वशक्ति और परिस्थिति का पूर्णता से विचार क
प्रबल बुद्धिमत्ता से जीवन के उद्देश निश्चित करते थे। फलां का
करना है और फलां नहीं करना है । वह मार्ग जाने योग्य है औ
वह अयोग्य है । ऐसी २ प्रतिज्ञाएं लेते, फिर प्राण की परवाह
कर उन्हें बराबर पालते थे ।

देहं पातयामि वा कार्यं साधयामि ।

यह उनका मुद्रा लेख था । छोटी उम्र ही से वे दृढ़निश्च
थे । छोटे या बड़े प्रत्येक निश्चय में वे मेरू की तरह अटल रहते थे

दीक्षा लेने का उनका निश्चय फिराने वास्ते कुटुम्बी जनों
आकाश पाताल एक करडाला, अनेक परिषह आये, कैद में भ
रहे, परन्तु ये नेक सत्याग्रही महापुरुष अपने निश्चय से तनिक भ
न डिगे । साध्य प्राप्त करने की दृढभावना वाले महापुरुष अप
मार्ग में चाहे जैसे आवरण आवें उन्हें प्रबल पुरुषार्थ द्वारा किस
तरह हटा देते हैं इसकी शिक्षा पूज्यश्री के जीवन में पद २ प

मिलती है। मन वश करने के लिये निश्चय की निश्चलता एक उत्कृष्ट साधन है और जिन्होंने मन जीता, उन्होंने सब जीत लिया। मन और इंद्रियों पर विजय प्राप्त करना यही सच्चा जैन धर्म है। जगत् की सब सिद्धियां मन बल से मन की दृढ़ता से सिद्ध हो सकती हैं। पूज्यश्री आशातीत उन्नति साध सके यह उनके मनोनिग्रह का ही आभार है उनके जैसे निश्चल निश्चयवान, पवित्र चारित्रवान प्रभाविक महापुरुष की भावनाएं हृदय में उतारकर उनसा पुरुषार्थ कर स्व परहित साधना यही कर्तव्य है यही प्राप्तव्य है और यही परम साध्य है। यह कर्तव्य और प्राप्त व्यक्तिना समीप पासके उतनी ही जीवनयात्रा की सफलता है।

अपने आर्य धर्मग्रन्थों का प्रधान आशय एकयता से भरा हुआ है परन्तु मताग्रह के कारण ऐक्य की कड़िया ढीली होती जाती हैं और अवनति को अवकाश मिलता जाता है। स्वयं जानबूझकर जहर खाते हैं जानबूझ कर अपना अकल्याण अपने हाथ से ही करते हैं. स्वार्थपूर्णता के कारण प्रकृति ने न्याय न किया. कुदरत की प्रणाली पलटजाय, निश्चयनय खूंटी पर रक्खाजाय, वहां उदय की आशा व्यर्थ है। मीठे तरवरों की जड़ें काट फिर पत्तों के गिरने से उनकी पूजा करना हास्यजनक गिना जाता है. संदेह के बदले सत्यका आदर होना चाहिये। संदेह में पड़े रहने से भलाई किसमें है यह दृष्टिगत नहीं होती तो फिर भला कैसे हो?

एक अनुभवी महाशय सलाह देते हैं कि संसार में सत्य और मिथ्या का मिश्रण सबतरफ फैला हुआ दृष्टिगत होता है उसमें सत्य को ग्रहण कर झूठ को त्याग देना यही मनुष्य कर्तव्य है। इस मनुष्य के देव और देवत्व प्राप्त करने में अधिक भोग देना पड़ता है। उस समय दृढ़ता से आगे बढ़ा जाय और असत्य के आकर्षणों से बचता जाय यही सच्ची कसौटी है।

अंतःकरण में उठते असंख्य विचारों—विकारों को वश करने का बल यही हृदयबल, यही सर्वोत्कृष्ट बल 'साधयति आत्मकार्यं मिति साधुः।'

परिशिष्ट.

पण्डित प्रवर पूज्य श्री १००८ श्री जवाहीरलालजी महाराजानां
सुशिष्येण श्रीघासीलालजी मुनिना विरचितम् ।

स्वर्गवासि—

पूज्यप्रवर श्री १००८ श्रीलालजी महाराजस्य

पूज्यगुणादर्शकाव्यम् ।

श्रीसन्दोहलसत्स्वरूपविभया यो मोदयन्मेदिनिं
लावंलावमलीलवल्लवमपि क्रोधादिकर्मोद्भवम् ।
लङ्कानिर्दहनोपमं च मदनं योऽधाक् त्रिदुःखच्छिदे
मुक्तं पादचतुष्टयादिचरमैर्वर्णैरमुं स्तौम्यहम् ॥ १ ॥

जिन्होंने शोभा समूह से देदीप्यमान आकृति की प्रभा द्वारा संसार को प्रसन्न किया, क्रोधादि कर्मों के कारणों को एक २ कर के काट दिया एवं जिस प्रकार हनुमान् ने लङ्का का दहन किया था ठीक वैसे ही जरा—जन्म-मरण रूप दुःखों को मिटाने के लिये जिन्होंने काम को नष्ट करदिया, शरीर से मुक्त-उन पूज्य श्रीला

मुनि की इस पद्य के*चारों चरणों के आद्यन्त अक्षरों से वन्दना पूर्वक मैं स्तुति करता हूं। लंका दहन की उपमा लोकोक्ति है ॥ १ ॥

कल्याणमन्दिरनिभात्सुरमन्दिरस्थात्
श्रीलालपूज्यकरुणावरुणालयाच्च ।
कल्याणमन्दिरमवाप्तुमना विनौमि
कल्याणमन्दिरपदान्तसमस्यया तम् ॥ २ ॥

कल्याणागार, स्वर्गस्थ, करुणानिधि पूज्य श्रीलालजी से अधिक कल्याण प्राप्त करने की इच्छा से ही कल्याणमन्दिरस्तोत्र के पद को×अन्तिम समस्या के रूपमें लेकर उक्त श्री चरणों की स्तुति करताहूं ॥२॥

जन्मान्तरीयदुरितात्तविपत्तिरद्य
सावद्यहृद्यमभिपद्य विपद्यमानः ।
पूज्य ! त्वदीयपदपद्ममहं श्रयाणि
कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि ॥ ३ ॥

हे पूज्य ! जन्मान्तर में किये पापों से पीड़ित, सम्प्रति भी कुकर्मों को ही ध्येय—ग्राह्य समझ कर अपनाने से उद्विग्न मैं आपके चरणकमलों का आश्रय लेताहूं। क्यों कि, आप के चरणकमल ही सुख निकेतन, अत्यन्त उदार, एवं पापों के नाशक हैं ॥ ३ ॥

---

* श्रीलाल मुनिं वन्देऽहम्

× इस काव्य के प्रत्येक श्लोक का अन्तिम पद कल्याणमंदिर स्तोत्र से पूरा किया गया

दुःखी स्वदुःखशमनाय सुखी सुखाय
धीमान् धियेऽघरदरं सुकृती शमाय ।
यत्ते सुपूज्य ! शुभसद्म तदा स्मरामि
भीताऽभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रियुग्मम् ॥ ४ ॥

हे सुपूज्य ! आपके जिन चरणों को दुःखी सुख की काम- लिए, सुखी एकान्त सुख के निमित्त, बुद्धिमान्-प्रज्ञावृद्धि के तथा धार्मिक जन शान्तिके लिए आत्मसात् करते थे, उन्हीं का मैं स्मरण करता हूं—कारण कि, संसारभयोद्विग्न मनु- को वही प्रशस्तचरण अभयदान दे सकते हैं ॥ ४ ॥

लोकेषु भूर्भुवि नरो नृषु मानतन्तु-
स्तेनापि चेन्न हि भवेदणुजीवमन्तुः ।
तेनाप्यमेति भवतेति तरिं व्यबोधि
संसारसागरनिमज्जदशेषजन्तुः ॥ ५ ॥

तीनों लोकों में पृथ्वी बड़ी है, पृथ्वी में मनुष्य श्रेष्ठ गिना है, मनुष्यों में विवेक की पूजा होती है और विवेक में भी आत्मिक ज्ञान को आराध्य समझा जाता है कारण कि, उसीसे अपने ध्येय को प्राप्त करता है आपने भी वही सर्वोत्तम ज्ञान था जो अपार संसार सागर में डूबते हुए मनुष्यों को साधन ता है ॥ ५ ॥

तं त्वां स्मरामि सततं य इह प्रपञ्च-
पञ्चाननाश्रितकलावमलोमलेऽपि ।
ग्राहेऽगृहीत उदगा दिवमङ्घ्रियुग्मम्
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ॥ ६ ॥

महाप्रपञ्चरूपी सिंह से युक्त, महामलिन, ग्राह समान से ही पकड़ने वाले इस विकराल कलिकाल में भी भाव वीर प्रभु चरणों को ही नमस्कार कर आप स्फटिक तुल्य निर्मल विषयों में अनासक्त रहकर देव लोक में पहुंच गये वैसे ही भी आपका स्मरण करता हूं कारण कि, स्वर्गारोहण की पद्धति भी बता ही गये हैं ॥ ६ ॥

दुर्दान्तदम्भिमदनोदनिदानमोद
पाथः पयोदवचनस्य तव स्तुतिं काम् ।
कुर्यामहं न गदितुं स हि यां समीष्टे
यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः ॥ ७ ॥

दुर्दान्त दम्भियों के मद को चूर करने का कारण, तथा मृत जल वर्षी मेघ के समान वीर-वचन वाले आप की स्तुति (क्षुद्र) तो क्या ही कर सकता हूं किन्तु प्रसिद्ध वक्ता बृहस्पति भी नहीं कर सकता क्योंकि आप गरिमा के सागर हैं ॥ ७ ॥

वाचा धनेन करणेन कृतेश्वयेन
प्रीणन्तु सन्तमसुमन्तमथो कियन्तः ।
स्तन्वन्तु तान् तव दृशाऽऽदिशताऽतिमोदं
स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम् ॥ ८ ॥

मन वचन और काया से एवं अन्यान्य साधनों से जो मनुष्य पुरुषों को अथवा जीव मात्र को प्रसन्न कर सकते हैं उनकी स्तुति साधारण भी कर सकते हैं किन्तु दृष्टिमात्र से एकान्तात्यन्त आनन्द देने वाले आपकी स्तुति तो प्रगल्भ तथा विस्तृत बुद्धि मनुष्य नहीं कर सकता ॥ ८ ॥

आसाद्य भासुरधनानि वसुन्धरां च
सम्राट् पदं भजतु कोऽपि नृपासनस्थः ।
त्वन्तून्नतः प्रतिनिधिर्हृदयंगतोऽभू-
स्तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतोः ॥९॥

देदीप्यमान धन, विशालवसुंधरा और सम्राट पद को कोई (साधारण) मनुष्य प्राप्त कर सकता है किन्तु कमठ नामक के मदको चूर करने वाले तीर्थंकर के प्रतिनिधि तथा प्रिय होकर सब से उच्च आसन पर आपही बैठते थे ॥ ९ ॥

यो मत्सरं समपनीय दधार हार्दं
हित्वैव स्वार्थमपरार्थविधिं व्यभक्त ।

शक्तिं विनापि बहुभक्तिवशोऽधिकाश-
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ॥ १० ॥

हे पूज्य ! जो आपने द्वेष छोड़कर विश्वव्यापी प्रेम धारण किया था और अपना स्वार्थ छोड़ कर परमार्थ का ही विधान किया था उन आपकी स्तुति केवल भक्तिवश होकरही शक्तिके बिना भी मैं करुंगा ॥ १० ॥

ब्रूमः कथं हृदयहैमगिरेः प्रभूतां,
शान्तिक्षमासुजनताकरुणानदीं ते ।
यत्कारुकर्मकरतोऽहमनीश एतत्
सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूपम् ॥ ११ ॥

आपके हृदयरूप हिमालय से निकली हुई शान्ति, क्षान्ति सुजनता, तथा दया रूप नदी की तो मैं क्या महिमा कर सकता हूं किन्तु जिसको चित्रकार लोग हाथों से लिख सकते हैं उस आपके स्वरूप को मैं सामान्यतः भी नहीं कह सकता ॥ ११ ॥

यत्कर्मवीरमतिधीरचरित्रलेखे
वाणी विचिन्तयति नीतललाटपाणी ।
शेषो न चेश इह मन्दधियोऽपि तस्मा-
दस्मादृशाः कथमधीश ! भवन्त्वधीशाः ॥१२ ॥

अ० जिस अत्यन्त बुद्धिमान् कर्मवीर का चरित्र लिखने के लिये
सरस्वती भी मस्तक पर हाथ रख कर चिन्ता में पड़ती है, शेष भी
सहस्र मुख से नहीं कह सकता हे नाथ! फिर हमारे सरीखे मन्दबुद्धि
समर्थ कैसे हो सकते हैं। (शेष का नाम लोकोक्ति है)॥१२॥

कुर्मो वयं बहुविधां द्रुमवर्णनां तु
किन्तावता सुरतरु-प्रभव-प्रभावः।
वाच्यस्तथैव तव वर्णनहीनसन्धो
धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धः॥ १३ ॥

हम लोग साधारण वृक्षों का वर्णन अनेक प्रकार से कर सकते
हैं किन्तु कल्पवृक्ष का प्रभाव नहीं कह सकते जैसे उल्लू का बच्चा
अपनी जाति में कदाचित् ढीठ भी हो तो क्या सूर्य को देख सकता है?
इसी प्रकार हम आपके वर्णन में कृतप्रतिज्ञ नहीं हो सकते॥१३॥

मल्लं हयं गजमजं धनिनं वदान्यं
संवर्णयेयमिति किं भवतोऽपि नूयाम्।
घूकोऽवलोकयति वस्तु विहायसीति
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः॥ १४ ॥

जिस प्रकार मल्ल, (पहलवान) घोड़ा, हाथी, बकरा, धनी
और दानी का वर्णन हम अच्छी तरह से कर सकते हैं क्या? इसी

प्रकार आपका भी वर्णन कर सकते हैं? नहीं नहीं उल्लू अपनी आवश्यक्ता की वस्तुएं देखता और आकाश में भी गमन करता है तो क्या सूर्य का स्वरूप भी कभी देख सकता है ॥ १४॥

गुर्वाश्रम श्रमकृदस्तसमस्तदोष-
स्तोषान्वितोऽपि विबुधोऽपि कुशाग्रबुद्धिः।
शक्तो न वक्तुममितां भवदीयकीर्तिं
मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ ! मर्त्यः ॥ १५ ॥

गुरु के आश्रममें श्रम करने वाला, समस्त पापों को नाश करने वाला, प्रसन्न चित्त, विद्वान्, तथा तीक्ष्णबुद्धि मनुष्य मोह के क्षय से (मोहनीयकर्म के क्षयोपशम से) सांसारिक पदार्थों का अनुभव करता हुआ भी हे नाथ ! आपकी विशाल कीर्तिको नहीं कह सकता ।१५।

पारे परार्द्धमभिते गणिते गरिष्ठो
रात्रिंदिवा यदि भवेद्गणनैकनिष्ठः ।
गीर्वाणजीवनशतं निरुगत्र जीवे-
न्नूनगुणान्गणयितुं न तव क्षमेत ॥ १६ ॥

सब संख्याओं में बड़ी संख्या को परार्द्ध (अन्त संख्या) कहते हैं उक्त संख्या में निपुणभी नीरोग मनुष्य देवताओं की आयुष्य प्राप्त कर के आपके गुणों की गणना करने में कृतकार्य नहीं हो सकता ॥ १६ ॥

अत्यन्तशान्तमनसो वचसोपनीता
भावा न भव्यभविभिः परिभाविताास्ते ।
किं गण्यते मणिगुणो जलधेर्नृणिगृभिः
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मात् ॥ १७ ॥

आपके सुतरां शांत मन से वाणी द्वारा प्रकटित भी भाव (अभिप्राय) सांसारिक प्राणी नहीं गिन सकते जैसे कि, जल काल डालने से प्रकटित, समुद्र के रत्न बड़े से बड़ा हिसाबी ज्यो-ती भी गिन नहीं सकता ॥१७॥

निर्गण्यगुण्यशुभपुण्यसुपूर्णकाय-
कारुण्यपूर्णकरणस्य विभोर्गुणौघः ।
गण्यो न ते गुणनिधेर्जगदार्तिहर्त्तु
र्मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः ॥ १८ ॥

असंख्य गुणों से युक्त एवं मांगलिक पुण्य से पूर्ण है शरीर जिनका और करुणा रस से भरी हुई हैं इन्द्रियां जिनकी ऐसे गुणाकर तथा संसार के त्रिविध दुःखों को दूर करने वाले आपके गुण गणों की गणना नहीं हो सकती कारण कि, समुद्र के रत्नों की गणना अद्याव-धि नहीं हो सकी ॥ १८ ॥

नाहं कविर्न च सुकर्कशतर्कशीलो
यद्गौरवात्कृतमतिस्तव वर्णनेऽस्याम् ।

वाचालयत्यतिमहात्मगुणो हि मूक-
मभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि ॥ १९ ॥

हे नाथ ! मैं कवि नहीं हूं शब्द शब्द में तर्क करने वाला तार्किक भी नहीं हूं जिससे आपकी स्तुति करने का विचार करूं किन्तु यह बात प्रसिद्ध है कि, महात्माओं के गुण मूक को भी वाचाल बना देते हैं इसी आशा से मन्दबुद्धि भी मैं आपके गुण-गायन में प्रवृत्त हुआ हूं ॥ १९ ॥

मन्त्रप्रभाव इव सज्जनशक्तिरात्म-
सेवापरं निजगुणेन गुणीकरोति ।
स्यां सिद्ध एवमिह ते स्तवने प्रवृत्त
कर्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य ॥ २० ॥

महात्माओं के समीप रहने से मन्त्र के प्रभाव समान महात्माओं के गुण भी मनुष्य को गुणी बना देते हैं ठीक इसी तरह आपकी स्तुति करने में मुझको आपके प्रभाव से सिद्धि अवश्य मिल सकेगी इसी आशा से जाज्वल्यमान अनेक गुणों के निधान आपकी स्तुति करने के लिये मैं उद्यत हुआ हूं ॥ २० ॥

हास्यं श्रमे सफलयेदिह मे विपश्चित्
कामं ततो नहि मनागपि मे विषादः ।

हास्यास्पदं गुणवतां वियतः प्रमाणे
बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य ॥ २१ ॥

आपकी स्तुति करने में मैं जो श्रम करताहूं इस श्रम को देख कर यदि विद्वान् लोग हंसे तो यथेष्ट हंसलें मुझे इस में कुछ विषाद न होगा क्योंकि आकाश के प्रमाण को बतलाने के लिये हाथ फैलाने वाला बालक विशेषज्ञों का हास्यपात्र अवश्य होता है॥ २१ ॥

श्रीमद्गुणाब्धिरहमल्पपदार्थलब्धि-
भेदे महत्यपि गुणान् कथये तथा ते ।
कूपस्थितोऽप्यनवलोकितलोकभेको
विस्तीर्णतां कथयति स्वाधियाम्बुराशेः ॥ २२ ॥

आपके गुण तो अगाध सागर हैं तथा मेरी बुद्धि अल्पज्ञ है इस प्रकार का महान् भेद (दिन रात का फर्क) रहने पर भी जो मैं आपके गुणों को कहने की धृष्टता करता हूं सो उस कूप मंडूक के समान है जो संसार और सागर को न जानता हुआ भी उक्त दोनों की विस्तारता कूप में ही अपने पांव फैलाकर दिखलाता है ॥ २२ ॥

सन्तः कियन्त इह सन्ति वदन्ति धर्मं
पञ्चव्रतान्यपि धरन्ति महीमटन्ति ।
त्वय्येव ते तु निजदर्शकदर्पणोन्त-
र्ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश ! ॥ २३ ॥

हे नाथ ! इस अपार संसार में कितने ही साधु महात्मा हैं जो सदा धर्मोपदेश देते पांच महाव्रतों को पालते एवं दूसरों से पलवाते पृथ्वी में फिरते हैं किन्तु अदृष्टपूर्व दर्शकों को आनंद देने वाले गुण आप ही में थे जो अन्यान्य मुनियों में नहीं मिल सकते थे इसका साक्षी वही हो सकता है जिसने कदाचित् आपके दर्शनों का लाभ उठाया होगा ॥२३॥

ये सद्गुणास्तव हृदाद्रिदरीनिलीना-
स्त्वत्कण्ठमार्गमसदन्न हि जातु कुत्र ।
साकं त्वयैव विधिना दिवि संप्रयाता
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः ॥ २४ ॥

जो सद्गुण आपकी हृदय रूपी गुफा में छिपकर बैठे थे कभी भी आप के कंठ मार्ग द्वारा बाहिर नहीं आये थे (अपनी प्रशंसा आप कभी नहीं करते थे, वे गुण दैवयोग से स्वर्ग तक आप के साथ ही पहुंचे इसीसे उनको यथावत् कहने का अवकाश मुझे प्राप्त नहीं हो सका ॥ २४ ॥

आत्मप्रबोधविरहात्कलहायमानान्
जाग्रत्प्रपञ्चकलिकालविवञ्चितांश्च ।
अस्मान् विहाय दिवसंगमनं तवैत-
ज्जाता तदत्रमसमीक्षितकारितेयम् ॥ २५ ॥

आत्मज्ञान के अभाव से परस्पर कलह करते हुये तथा महाप्रपंची इस विकराल कलिकाल से छले हुए हमको छोड़ कर आप स्वर्ग को सिधारे कदाचित् आप ने अविचारित कार्य किया है तो यही किया है ॥ २५ ॥

श्रीमत्कृपाकृतिचयोपकृता वयं स्मो
नो शक्नुमोऽत्र भवतां प्रविकर्त्तुमेव ।
कुर्मः स्तवं परमिहोपकृता यथात्र-
ज्जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥ २६ ॥

हे पूज्यवर ! आपकी कृपा और क्रिया से हम अधिक उपकृत हुए हैं किन्तु प्रत्युपकार करने कि शक्ति न होने से मात्र आपका गुण गायन ही करते हैं कारण कि उपकृत पक्षी भी अपने उपकारी की गद्गदवाणी से स्तुति करता हूं ॥ २६ ॥

यस्मान्न्यवर्त्तत भवान् विषयोपभोगाद्
रोगादिव प्रतिदिनं व्यलिखत्तमेव ।
श्रोतुर्हृदाकृतिपटे भयदं हि चित्र-
मास्तामचिन्त्यमहिमा जिनसंस्तवस्ते ॥ २७ ॥

हे पूज्य जिन विषयोपभोगों को रोग समान [illegible]
दूर हटाते थे प्रस्तुत श्रावकों के भी हृदय [illegible] प[illegible]

लिखते थे और स्वरचित, अचिन्त्य महिमा, जिनेन्द्र संस्तव करने में जो आपकी अलौकिक शक्ति का प्रत्यय मिलता था इत्यादि का वर्णन कैसे कर सकूं॥ २७॥

यस्ते पवित्रितजगत्त्रितयं विचित्रं
चित्ते चरित्रमतुलं सततं दिदध्यात्।
तस्योन्नतिस्त्विह परत्र किमत्र चित्रं
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति॥ २८॥

त्रिलोकी को पावन करने वाले जो आप के विचित्र तथा अनुपम चरित्र को हृदयङ्गम करेगा उसकी उभय लोक की अवश्य उन्नति होगी। इस में आश्चर्य ही क्या है? कारण कि आपका नाम ही असार संसार से रक्षा कर ने वाला है॥२८॥

श्रीमद्वियोग इह साधुसमाजनिष्ठान्
दुःखाकरोति नितरां सुजनान् तथैव।
पित्सून् यथा जलमलं पयसामभाव-
स्तीव्रातपोपहतपान्थजनान्निदाघे॥ २९॥

हे पूज्य! श्री चरणों का वियोग साधुमार्गी जैन समाज को तथा सत्पुरुषों को वैसेही अत्यन्त दुःखी बना रहा है जैसेकि, आषाढ़मास की कड़ी धूपसे व्याकुल तथा प्यासे पथिक को जल का अभाव॥२९॥

द्यामुद्गतेऽत्रभवति प्रगतोऽभिलाषो
नः श्रोतुमत्र भवतो वचनं सुचारु।
दृष्टिं दयार्द्रविपुलां भवतः समीहे
प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि॥ ३० ॥

आप के स्वर्ग में निवास करने से आपका वचनामृत तो हम पान कर नहीं सकते मात्र आपकी दयार्द्रदृष्टि की चाहना है कारण कि, पद्मसरोवर का पावन पवन भी संसार को पवित्र तथा प्रसन्न करता है ॥ ३० ॥

यादृक् प्रमोदजलसान्द्रपयोद आसीद्
दृग्वर्त्तिनि त्वयि मुने! व्यतरन् सुधौघम्।
तादृक्कुतस्तदपि विघ्नविषादयूथा
हृद्वर्त्तिनि त्वयि विभो! शिथिलीभवन्ति ॥ ३१ ॥

हे विभो! आपकी उपस्थिति में सर्वत्र अमृतमय वृष्टि होती थी अर्थात् बाह्य एवं आन्तरिक दुःख या पाप छू तक नहीं सकते थे, अब आपके न रहने पर वे उच्च आनन्द तो खपुष्प होगया है तो भी आपको आत्मसात् करने पर विघ्न और विषाद अवश्य शिथिल होते हैं ॥ ३१ ॥

ध्यानप्रभावविधिना मधुलिट्स्वरूपं
कीटा भजन्त इति सन्त इहामनन्ति ।
तद्वद् गुणांस्तव विभावयतो विभिन्ना
जन्तोः क्षणेन निविडा अपि कर्मबन्धाः ॥ ३२ ॥

ध्यान एक ऐसी वस्तु है जिसके प्रभाव से साधारण, विजातीय कीट भी भ्रमर बन जाता है ऐसा सत्पुरुषों (विज्ञानवेत्ताओं) का कहना है वैसे ही आप के गुणों का ध्यान करने पर मनुष्य के अनेक जन्मोपार्जित कर्म बन्धन भी सुतरां क्षण मात्र में दूर हो सकते हैं क्योंकि—जब आप अशुभ कर्मों के बन्धन से मुक्त हैं तब आप को आत्मसात् करने वाला भी अवश्य वैसाही होना चाहिये ॥ ३२ ॥

अस्मिन् द्विजिह्वजनजिह्ममये नृलोके
प्राप्ता वयं हि मुनिजाङ्गुलिकं भवन्तम् ।
इच्छन्ति खं त्वयि गते ग्रसितुं खला नः
सद्यो भुजङ्गमया इव मध्यभागम् ॥ ३३ ॥

सर्पतुल्य द्विजिह्व तथा कुटिल लोगों से ठूंस ठूंस कर भरे हुए इस संसार में विष के वैद्य एक आपही थे, अब आपके स्वर्ग चले जाने पर सर्प रूप वे दुर्जन हमें हृदय में काटना चाहते हैं ॥ ३३ ॥

जाते दिवं त्वयि विभो ! सुषमां सुधर्मा
भेजे यथा सुरतरौ सति नन्दनस्य ।

देवैर्युतापि हि यथा शुकसङ्कुलस्य
सत्यागते वनशिखण्डिनि चन्दनस्य ॥ ३४ ॥

हे पूज्य ! देवताओं से भरी हुई भी इन्द्र की सभा आपके पधारने से खूब सुशोभित हुई होगी—कारण कि, शुकादि पक्षिओं से युक्त चन्दन वृक्ष की शोभा मोर के आने तथा अनेक वृक्षों से युक्त नन्दन वन की शोभा कल्पवृक्ष के होने से ही होती है (यह कवि की उत्प्रेक्षा है) ॥ ३४ ॥

वीर ! त्वदीयदयया मिलितः सुपूज्यः
कालेन संहृत इतो न जनोऽस्त्यनीशः ।
तस्यानुकम्पनतयाऽऽसुपूज्यवर्या
मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा मुनीन्द्र ! ॥ ३५ ॥

हे वीर प्रभो ! आपकी कृपा से प्राप्त हुए पूज्य श्रीजी को यो काल उठाकर स्वर्ग में लेगया किन्तु इस से (यह) जन नायक रहित नहीं होसका कारण कि, उक्त पूज्यश्री एक ऐसे पूज्य आचार्य को स्वस्थानापन्न कर गये हैं कि, जिनके कृपाकटाक्ष से ही सब प्राणी बन्धनमुक्त हो रहे हैं ॥ ३५ ॥

श्रीलालपूज्य ! महिमा तव किं नि[illegible]
[illegible]भान्तलाभनकालोभिविधानिनीनाः

धैर्यं मुदं नहि जहुर्बहुहन्यमाना
रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि ॥ ३६ ॥

हे श्रीलालजी पूज्य! अवर्णनीय आपकी महिमा का वर्णन क्या करें क्योंकि, आपके दर्शनमात्र से ही अविश्रान्तसंचित पाप कारणों से आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक इन तीनों प्रकार के दुखों में तल्लीन भी मनुष्यों ने धीरता और प्रसन्नता न छोड़ी इससे बढ़कर और प्रभाव ही क्या हो सकता है ॥ ३६ ॥

जागर्ति नृत्यति जने वृजिनं च तावद्
यावद्भ्ययौ दुरितपूरितचेतसापि ।
सूर्येऽन्धकार इव पापमपैति नूनं
गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टिमात्रे ॥ ३७ ॥

इस संसार में पाप जीताजागता तब तक ही प्रचंड तांडव करता है जब तक उसे पीठमर्दक पापी मनुष्य मिलते रहते हैं, लेकिन जब इन्द्रियों को वश करने वाले एवं देदीप्यमान कांति वाले आप जैसे महात्मा दृष्टिगोचर होते हैं तब पाप की वही दशा होती है जोकि, सूर्योदय में अंधकार की ॥ ३७ ॥

दृष्टे भवत्यभिभवान् बहु पापमाप
विष्वक् ययौ हि बहुशो भयभीतभीतम् ।

धैर्यं मुदं नहि जहुर्बहुहन्यमाना
रौद्रैरुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि ॥ ३६ ॥

हे श्रीलालजी पुज्य ! अवर्णनीय आपकी महिमा का वर्णन क्या करें क्योंकि, आपके दर्शनमात्र से ही अविश्रान्तसंचित पाप कारणों से आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक इन तीनों प्रकार के दुखों में तल्लीन भी मनुष्यों ने धीरता और प्रसन्नता न छोड़ी इससे बढ़कर और प्रभाव ही क्या हो सकता है ॥ ३६ ॥

जागर्ति नृत्यति जने ह्यजिनं च तावद्
यावद्भ्ययौ दुरितपूरितचेतसापि ।
सूर्येऽन्धकार इव पापमपैति नूनं
गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टिमात्रे ॥ ३७ ॥

इस संसार में पाप जीताजागता तब तक ही प्रचंड तांडव करता है जब तक वैसे पीठमर्दक पापी मनुष्य मिलते रहते हैं. लेकिन जब इन्द्रियों को वश करने वाले एवं देदीप्यमान कांति वाले आप जैसे महात्मा दृष्टिगोचर होते हैं तब पाप की वही दशा होती है जोकि, सूर्योदय में अंधकार की ॥ ३७ ॥

दृष्टे भवत्यभिभवान् बहु पापमाप
विष्वक् ययौ हि बहुशो भयभीतभीतम् ।

ग्रस्ता जना हि खलु तेन भयान्निरस्ता
श्चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः ॥ ३८ ॥

आपके दृष्टिगोचर होते ही पाप के होश हवाश उड़गये और वह चारों ओर भागने लगा जिससे पापग्रस्त (पाप से पकड़े हुए) लोग भी वैसे ही छूट गये जैसे कि, डरसे भागते हुए चोर के हाथ से पशु छूट जाते हैं ३८ ॥

ये संसृतेः कृतिपरानुपदेशदानै
र्धर्माऽदरान् व्यधिषतेह नरान्मुनीशाः ।
शान्तिं क्षमामपि ददुः सततं भविभ्य
स्त्वं तारको जिन! कथं भविनां त एव ॥ ३९ ॥

हे जिन! सांसारिक जीवों को भवसागर से पार लगाने वाले वो ही मुनिश्रेष्ठ, पुज्यप्रवर हो सकते हैं अर्थात् जीवों के मोक्ष दाता पूज्यवर ही हैं आप नहीं होसकते, कारण कि, सांसारिक कृत्यों में लवलीन मनुष्यों को दिन रात उपदेश देकर धर्मशील, शांति प्रिय एवं क्षमादि गुणयुक्त उक्त पूज्यवरों ने ही किया है ॥ ३९ ॥

तात्स्थ्यात्स धर्म इति सत्यवचो मुनीश!
धृत्वा जिनं हृदि जना दिवमुत्प्लवन्ति ।
दृग्भ्यो गतान् जिनपरान् भवतो जनाश्च
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः ॥ ४० ॥

कामादयः समभवन् जगदाश्रयासाः
पाशा इवेह सततं नृपशून् बबन्धुः ।
कीलालमेव हि भवान् भविभिः सुलब्धो
विध्यापिता हुतभुजः पयसाऽथ येन ॥ ४५ ॥

काम वगैरह संसाररूपी आश्रय को हड़प जाने वाली अग्नियें इन्हों ने पाश के समान अपनी देदीप्यमान ज्वालाओं से नर शुओं (अज्ञानियों) को लिपटा रक्खा था, लेकिन आपको ीतलजल के समान पाकर मनुष्यों ने उन कामाग्निओं को बुझा ाला ॥ ४५ ॥

कामं जलं वदतु काममपीह कामी
त्वां वाऽनलं वदतु नैव तथापि हानिः ।
निर्वापयत्यनलमेव जलं न वेत्तु ।
पीतं न किं तदपि दुर्धरवाडवेन ॥ ४६ ॥

विषयी लोग भले ही काम को जल और आपको अग्नि समझें ा भी इसमें हानि नहीं, सर्वत्र जल ही आग को बुझाता है ऐसा नका मानना भ्रम मात्र है, कारण कि, वडवा नाम की अग्नि भी लको भस्म करदेती है ॥ ४६ ॥

उड्डीयतेऽनिलरयेण रजस्तदेव
नाऽऽसादितेह रजसा गुरुता च येन ।

सत्प्राणरेणव इहाऽऽश्रयतस्त्वदीयात्
स्वामिन्ननल्पगरिमाणमपि प्रपन्नाः ॥ ४७ ॥

वायु के वेग से वही धूलि उड़ सकती है जिसमें भारीपन न आया हो किन्तु हमारी प्राणरूपी धूलि आपको आत्मसात् करने से भारी हो चुकी है इसीसे हे स्वामिन् ! इन काम क्रोधादि रूप वायु से वह धूलि उड़ नहीं सकती ॥ ४७ ॥

ये शीर्णपर्णनिभसूक्ष्मतरा नरास्ते
धूता भवन्तु मदकामसमीरणैश्च ।
नीता भवन्तु गुणगौरवमादधानं
त्वां जन्तवः कथमहो ? हृदये दधानाः ॥ ४८ ॥

अहंकार व कामरूपी वायु उन्हीं को उड़ा सकती है, जो मनुष्य सूखे हुए पत्ते के समान एक दम हलके हैं लेकिन गुणों की गुरुता को धारण करने वाले पूज्य चरणों को जो मनुष्य हृदय में धारण करते हैं उन्हें उक्त वायु उड़ा नहीं सकती ॥ ४८ ॥

पूज्याऽनुराग इह भक्तिरतो विमुक्ति-
रेवं हि कार्यकरणं सुधियो वदन्ति ।
विद्युत्प्रशक्तिमिति युक्तिमवेत्य भक्ता
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन ॥ ४९ ॥

पूज्य के चरणों का अनुराग ही भक्ति कहलाता है एवं भक्ति से ही मुक्ति होती है इस प्रकार का कार्यकारण भाव विद्वान् लोग कहते हैं, इसीसे बिजलीकीसी शक्ति वाली उक्त युक्ति को जान कर अविलंब से ही भक्त जन जन्मरूपी महासागर को पार करते हैं ॥ ४६ ॥

सन्तो भवन्त इह नो विषयानभिन्दन्
संखेदयन्ति हृदयानि परासवोऽपि ।
ते चैव सम्प्रति न नो हृदयात्प्रयान्ति,
चिन्त्यो न हन्त ! यदि वा महतां प्रभावः ॥ ५० ॥

इस संसार में रहते हुए आपने हमारे प्रिय विषयों को हमसे छुड़ाया और स्वर्ग में जाकर वियोगरूपि दुःख खड़ा करदिया, इस तरह भारी विरोध करने पर भी हमारा हृदय आपको छोड़-ता नहीं, इसीसे सिद्ध होता है कि, महान् आत्माओं का (सत्पुरुषों का) प्रभाव अचिंतनीय है ॥ ५० ॥

संवीक्ष्य दिक्षु जनतापदपापलीना
नस्मान्दुरुद्धरतरान् रूपया गतोऽसि ।
त्वं क्रोधनःकथमभूरिति विस्मयो नः
क्रोधस्त्वया ननु विभो ! प्रथमं निरस्तः ॥ ५१ ॥

[illegible]
[illegible] दिखलाकर [illegible] किन्तु आप
[illegible] आश्चर्य होता है कारण
[illegible] को तो आप स्वयम ही जीत चुके थे ॥ ५१ ॥

आचार्यवर्य ! भवताऽपि बताऽपि रोषोऽ
ऽनो न चेत्तदपि सत्यममुष्य लेशः ।
नो चेद्वयं विरहिता रहिता हितौघै
र्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौरा ॥ ५२ ॥

हे आचार्यवर ! खेद की बात है कि, पूर्ण रूप से तो नहीं
कुछ अंश से आप भी क्रोध की धमकी में आ गये [illegible]
तो हितविमुख एवं दीनहीन हम लोगों को छोड़कर [illegible]
में न चले जाते और अशुभ कर्मरूप चोरों का सर्व [illegible]
[illegible]लते इसका उत्तर आप ही दें ॥५२॥

आस्तां वितर्कविधिरेष न रोषलेशः
श्रीमत्सु शान्तिसहिताऽस्त निरीहतैव ।
सैवाऽजहाद्द्रुमततीर्हिमसंहतिर्हि
प्लोषत्यमुत्र यदिवा शिशिराऽपि लोके ॥ ५३ ॥

अथवा इस तर्क वितर्क को कल्पना मात्र ही रहने दो, आपमें तो
[illegible] का लेश मात्र भी न था, सिर्फ शान्ति के साथ [illegible]

(तमाम आशाओं का अभाव) थी वही बेगर्जी हम लोगों को छोड़ कर स्वर्ग चले जाने में कारण हुई क्योंकि, शीतल भी हिम वृक्षसमूह को जला कर खाक कर डालता है ॥ ५३ ॥

दुर्दान्तषड्रिपुपुरातनकर्मचौरा
श्चूर्णीकृतास्तव सुशान्तिनिरीहिताभ्याम् ।
दाह्यानि दावदहनैर्दहतीह तानि
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ॥ ५४ ॥

अदम्य क्रोधादि छः शत्रुओं और पुराने चोर कर्म को आपकी अटल शान्ति और निरभिलाषिता ने चूर २ कर दिया, कदाचित् संदेह हो कि, अत्यन्त मृदु तथा शीतल शान्ति ने वज्र का काम कैसे किया तो इसका निवारण यों है कि, बन के भयंकर अग्नि से (दावाग्नि) भस्म होने योग्य उन हरे भरे वृक्षोंको हिमसंहति (हिम की अधिकता) भी जला देती है ॥ ५४ ॥

यस्योपदेशमवसाय विहाय मोहं
सोऽहं विदन्ति च वदन्ति जगन्ति तत्त्वम् ।
यस्य प्रभावमधिगन्तुमचिन्तयँश्च
त्वां योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूपम् ॥ ५५ ॥

हे जिनेन्द्र ! जिस पूज्यवर के उपदेश से योगी लोग मोहमाया

ो छोड़ कर 'सोऽहं सोऽहं (मैं वही हूं) तत्व को समझते और
हैं उस पूज्यवर के आत्मप्रभाव को जानने के लिये परमात्म-
ल आपका ध्यान करते हैं ॥ ५५ ॥

तं पूज्यवर्यमविचार्य गतं द्युलोकं,
सद्योऽनवद्यमतिहृद्यमनाप्य भक्ताः ।
त्वां त्वत्पदे जिन! निरस्य तमेवलोकाः
अन्वेषयन्ति हृदयाम्बुजकोशदेशे ॥ ५६ ॥

विना विचारे स्वर्ग में सिधारे हुए, दूषण रहित, गुण रूप
ण सहित उस पूज्यवर को न पाकर हे जिनेन्द्र! आपको ध्यान
(हृदय) से निकाल कर भक्त अब उन्हीं पूज्य चरणों की खोज
॥ ५६ ॥

आसादयेप्सितपदं शिवमस्तु वर्त्म
सुस्वागतं समुचितं दिवि ते विभातु ।
पूज्य! स्वपुण्यकिरणैरवलोकयास्मान्
पूतस्य निर्मलरूचेर्यदि वा किमन्यत् ॥ ५७ ॥

हे पूज्य! आप अपना अभिष्ट पद प्राप्त करें, आपके लिये मार्ग
लमय हो, स्वर्ग में आपका समुचित स्वागत खूब धूमधाम से हो,
ने पुण्य प्रकाश से हम लोगों को भी कर्तव्य मार्ग बतलावें
ए कि, पवित्र एवं निर्मल कान्ति से इतना मांगना पर्याप्त है ॥ ५७ ॥

करते हैं, जैसे लोहा वगैरह धातु पारस के संयोग से सोना बन जाते हैं ॥ ६२ ॥

योऽन्यं सदोपकुरुते दययाऽनृतं नो
ब्रूते कदापि समतां न हि सञ्जहाति ।
तादृक्तवानुकृदिहास्मदीयपूज्यः
अन्तःसदैव जिन ! यस्य विभाव्यसे त्वम् ॥ ६३ ॥

हे जिन ! परोपकारी, हित तथा मनोहर भाषी एवं दया पूर्ण हृदयसम्पन्न जैसे आप हैं वैसेही आपका अनुकरण करने वाले हमारे भी पूज्य थे क्योंकि, इसीसे हमारे पूज्य के अन्तःकरण में आप हमेशा विराजते थे ॥ ६३ ॥

यद्रूपमाप्तमसुमाद्धिरसोविशेषं
चिन्तामणिप्रतिकृतं परिपूजितं च ।
त्वं पूज्यरूपमधुना परिगृध्नुभिः स्म
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम् ॥ ६४ ॥

सांसारिक जीवों ने जिस मधुररूप को प्राणों से कई गुणे अधिक प्रिय समझ कर अपनाया था एवं चिन्तामणि के समान जिस रूप की पूजा करते थे व भव्यजीव जिस स्वरूप को देखना चाहते थे उस पूज्यरूप को आपने कैसे नष्ट कर दिया ॥ ६४ ॥

सन्त्वत्र सुन्दरतराणि मुखानि भूरि
सर्वाणि किन्तु निजकृत्यपराङ्मुखानि ।
तत्पूज्यकृत्यसुमुखं सुजनाः स्मरन्ति
एतत्स्वरूपमथ मर्त्यविवर्तिनोऽपि ॥ ६५ ॥

इस संसार में सुन्दर मुख क्रोड़ों की तादाद में हैं, किन्तु सब के सब अपने कर्त्तव्य से विमुख हैं मात्र कर्त्तव्य में तत्पर हे पूज्य ! आपका ही स्वरूप था जिसका भूलोकवासी सज्जन सदा स्मरण करते हैं ॥ ६५ ॥

सम्प्रत्यसाम्प्रतमितो ह्यभवत्सुपूज्य
प्रस्थानमत्रभवतो विबुधा वदन्ति ।
स्वस्वाऽग्रहग्रहगृहीतसुविग्रहे के
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥ ६६ ॥

वर्त्तमान समय में इस लोक से स्वर्ग को सिधारना यह आपने च मुच उचित नहीं किया ऐसा ही सभी विचारशील मनुष्य हते हैं क्योंकि, अपने २ आग्रह (हठ) रूप ग्रह से मचे हुए ड़ाई झगड़ों को कौन मिटा सकेगा कारण कि, आपके समान हानुभाव ही उसका शमन कर सकेत हैं ॥ ६६ ॥

जाते दिवं त्वयि विभो ! सकला जनाशा
जाता विनाशमभितोऽस्तपदावकाशाः ।

आशास्ति ते गुणगणेन गुणीकृतश्चे
दात्मा मनीषिभिरयं त्वदभेदबुद्ध्या ॥ ६७ ॥

आप के स्वर्ग चले जाने पर हम लोगों की तमाम आशायें निराशा के रूपमें मिलकर नष्ट भ्रष्ट होगयीं हैं सिर्फ एक ऐसी आशा शेष रही है जिससे आपकी अभेदबुद्धि द्वारा आपके ही गुणों से अपनी आत्मा को विद्वान् गुणसंपन्न बना सकेंगे ॥ ६७ ॥

पूज्य त्वदीयकृपया प्रतिमास्तवैव
लब्धा विभान्ति मतिशान्तिधनाः सुपूज्याः ।
तद्ध्यानतद्गुणकरं प्रवदन्ति यस्माद्
ध्यातो जिनेन्द्र! भवतीह भवत्प्रभावः ॥ ६८ ॥

हे पूज्य ! आपकी परमकृपा से आपके समान ही शान्त दान्त तथा अगाध मतिवैभव वाले पूज्य मिलगये हैं, ध्येय (जिसका ध्यान किया जाय) के गुण, ध्याता (ध्यान करने वाले) में आजाते हैं ऐसी लोकोक्ति है, इसीसे हे पूज्य ! आपका ध्यान करने से आपका प्रभाव होना ही चाहिये था ॥ ६८ ॥

ध्यानं धरातलजुषां विदितप्रभावं
ध्येयानुकूलफलमालभतेऽत्र योगी ।
स्वस्यामरत्वमभिकांक्षिगदातुराणां
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानम् ॥ ६९ ॥

सांसारिक जीव ध्यान के प्रभाव को खूब समझते हैं कि, ध्यान-शील योगी ध्येय के अनुकूल (जिसका ध्यान किया जाय उसीके अनुसार) अभीष्टफल को प्राप्त करते हैं, इसीसे ही आपने अमरत्व (सदा नीरोगिता) को चाहने वाले रोगियों के लिये जलभी अमृतमय होजाता है ॥ ६९ ॥

यो मासपूर्वमवदो बहु नो हितार्थं
स त्वं स्मृतोऽपि शुभदो भव भव्यमूर्ते ! ।
तिष्ठन्स्मृतोऽपि गरुडोऽहिरदष्टतानां
किं नाम नो विषविकारमपाकरोति ॥ ७० ॥

मास दो मास पहिले आप अनेक प्रकार के हितोपदेश दिया करते थे, अतः अब स्मरण किये गये भी आप शुभदायी हो कारण कि, जो गरुड़ सर्प के काटे हुए का विष प्रत्यक्ष होकर उतारता है तो क्या वह स्मरण करने से विष विकार को दूर नहीं कर सकता ? ॥७०॥

निन्द्यो निरक्षर इति प्रथमं त्वनिन्दन्
त्वच्छान्तिशीलविधिना विगतप्रभावाः ।
निन्दन्ति तच्चरितमात्मगतं स्तुवन्ति
त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि ॥ ७१ ॥

जो झूठे प्रतिवादी प्रथम आपकी निन्दा किया करते थे वे ही अब आपकी अटल शान्ति के प्रताप से प्रभावहीन हो[illegible]

निन्द्य एवं व्यर्थ जीवन की निन्दा करते, आत्मा को कोसते और अतीत पर पश्चात्ताप करते हुए अज्ञान को दूर करने वाले आपकी मुक्तकंठ से प्रशंसा करते हैं ॥ ७१ ॥

येऽपि त्वदीरितपथाऽन्यपथप्रवृत्ता
स्त्वद्देवदेवनमपोह्य परं भजन्ते ।
तेऽपि त्वदीरितगुणाकृतिमन्तमेव
नूनं विभो ! हरिहरादिधिया प्रपन्नाः ॥ ७२ ॥

जो मनुष्य आपके बतलाये हुए मार्ग को छोड़कर दूसरे मार्ग में प्रवृत्त हैं एवं आपके आराध्य देव की वन्दना न कर दूसरे को हृदयङ्गम करते हैं; हे विभो ! वे भी मनुष्य केवल हरिहर आदि की बुद्धि से आपके ही बतलाये हुए गुण तथा आकार को प्राप्त करते हैं ॥७२॥

येषां मतावतिविपर्यय एव जातो
येषां न वा मतिरभूत्तव ते प्रतीपाः ।
पीतोऽथ सन्नपि जनैर्विदितोऽस्ति नान्यैः
किं काचकामलिभिरीश ! शितोऽपि शंखः ॥ ७३ ॥

जिनकी बुद्धि उलटे रास्ते बह गई थी या जो ज्ञानसे ही शून्य थे वे ही आपके विरुद्ध चलते थे; क्योंकि, अंधे के लिये मौजूद भी

शंख का अस्तित्व नहीं है और जिनकी आखों में कामला रोग हुआ है उन्हें सफेद भी शंख सदा पीला ही दीखता है ॥ ७३ ॥

यस्ते निदेशमधरद्धृदये न जन्तु
र्मन्तुर्न तस्य यदसौ श्रवणेन हीनः ।
दृष्टं न किं नु भवता बधिरैर्हितोऽपि
नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ॥ ७४ ॥

जिस मनुष्य ने आपके उपदेश को हृदय में अंकित नहीं किया उसका कुछ भी अपराध नहीं है कारण कि, उसके कान ही नहीं थे, बधिर (कानों से बहरा) मनुष्य अपने हित की बात को भी नहीं समझता, कदाचित् समझ भी ले तो उलट पलट समझता है ॥७४॥

वर्षर्तुवारिदनिभेऽब्ज्वसृतं वचस्तद्
वर्षत्यरं त्वयि मयूरनिभा जनौघाः ।
हर्षप्रकर्षमविदन् मुदमाप धर्मो
धर्मोपदेशसमये सविधानुभावात् ॥ ७५ ॥

वर्षा ऋतु का मेघ जिस प्रकार जल बरसाता है ठीक उसी तरह जब आप वचनामृत की झड़ी लगा देते थे, तब जनता मयूरों के समान अनिर्वचनीय आनंद को प्राप्त होती थी और अपनी समीपता देखकर धर्म भी फूला नहीं समाता था ॥ ७५ ॥

संयोगमप्रियमवाप्य प्रियाद्वियोगं
चेखिद्यते यदि भवद्धृदयं त्वया तत् ।
माऽसञ्जि जीव निकरेऽतिनिदेशतोऽस्मा
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः ॥ ७६ ॥

"तुम्हारा हृदय यदि अप्रिय के संयोग से और प्रिय के वियोग से दुखी होता हो तो तुम भी किसी जीव को कष्ट मत दो, प्राणी मात्र को आत्म भाव से देखो और बन पड़े वहां तक दया देवी का हृदय में आह्वान करो ,, इस प्रकार का आपका उपदेश सुनकर मनुष्य ही नहीं किन्तु वृक्ष भी वीतशोक हो जाया करते थे ॥ ७६ ॥

श्रीमद्वचोदिनकरे सदसि द्युलोके
सिंहासनोदयगिरेरुदिते जनानाम् ।
चेतोरविन्दमभिनन्दति किं विचित्र-
मभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि ॥ ७७ ॥

सिंहासन रूपी उदयाचल–पर्वत से सभा रूपी विशाल आकाश में आपके वचन रूपी सूर्य का जब उदय होता था, तब चारों तीर्थों के हृदय कमल एक दम खिल उठते थे, इसमें आश्चर्य ही क्या है, कारण कि, सूर्योदय में समस्त संसार ही जग जाता है ॥ ७७ ॥

श्रीमत्सुशान्तिमतिभानुविधुप्रकाशे
आसीत्प्रकाश इह जीवहृदोऽवकाशे ।

किं चित्रमत्र तपनं तपति प्रशोकः
किं वा विबोधमुपयाति न जीवलोकः ॥ ७८ ॥

आपके शांति रूप चंद्र तथा ज्ञानरूप सूर्य के प्रकाश से चारों तीर्थों के हृदयाकाश में प्रकाश हुआ है, इसमें आश्चर्य की कौनसी बात है; एक ही सूर्य के उदय होने से क्या वह समस्त संसार बोध को प्राप्त नहीं होता ? ॥ ७८ ॥

जाते तव प्रवचने तपनेऽत्र लोके
हर्षन्ति सर्वसुमनांसि विनिस्तमांसि ।
सूर्याख्यपुष्पमिव दुर्जनचित्तमेकं
चित्रं विभो ! कथमवाङ्मुखवृन्तमेव ॥ ७९ ॥

आपके वचन रूपी सूर्य के उदय होने पर कमलों के समान सज्जनों के हृदयों में प्रसन्नता छागई, लेकिन सूर्यपुष्प (सूरजमुखिया) के समान सिर्फ दुर्जनों का मन अधोमुख ही रहा यही आश्चर्य है । ७९॥

हित्वा भुवं दिवमुपेतुमितः प्रयाते
श्रीमत्यवर्णनगुणाः सुरसंभ्रमोऽभूत्
दध्वान दुन्दुभिरगायत मञ्जु हाहा
विष्वक् पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टिः ॥ ८० ॥

इस लोक को छोड़कर जब स्वर्ग के लिये आपका प्रयाण हुआ
ा, तब देवों का संभ्रम (अतिथिसत्कार में कुतूहल) अवर्णनीय
ा, जैसे कि, देवदुंदुभियों से स्वर्ग गूंज रहा था, गंधर्वों का मधुर
ायन मोहित कर रहा था तथा चारों ओर निरंतर मंदार के पुष्पों
ी वृष्टि होरही थी इत्यादि २ (उत्प्रेक्षा) ॥८०॥

पूज्य ! त्वदीयगुण अर्पितदृष्टिपातः
पातोऽप्यतप्यततदैव हृदो वियोगे ।
धर्तुं गुणांस्तव लसन्ति मनांसि नूनं
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश ! ॥ ८१ ॥

हे पूज्य ! आपके गुणों को देखते ही राहु हृदयशून्य होकर
अत्यन्त दुखी हुआ, कारण कि, आपके दर्शन होते ही देवताओं
का हृदय गुण ग्रहण करने में अपूर्व उत्साह दिखलाता है (राहुका
नाम लोकोक्ति है)॥८१॥

वन्हिप्रभे भवति दृष्टिपथे प्रयाते
एनांसि पापिनि भवन्ति समिन्धनानि ।
भस्मीभवन्त्यसुमतां भुवि तत्कृतानि
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥ ८२ ॥

अग्नि के समान जाज्वल्य मान प्रभा वाले आपके दृष्टिमार्गमें आवे

हुए पापियों के पाप सूखी लकड़ी के समान भस्म होजाते हैं, इसीसे उन पापों द्वारा प्राप्त बंधन भी छिन्न भिन्न होजाते हैं ॥८२॥

जाते दिवं त्वयि निराश्रयतां गताया
निर्व्याजशान्तिधृतिबुद्धिदयाक्षमायाः ।
हृत्कम्पतापकरुणार्द्रविलाप आस्ते
स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भवायाः ॥ ८३ ॥

आपके गंभीर हृदय-समुद्र से उत्पन्न स्वाभाविक शांति, धृति, बुद्धि दया तथा क्षमा के हृदय में कंपन; संताप और सकरुण-क्रंदन होरहा है; सो युक्त है, क्योंकि, वे सब की सब आपके स्वर्ग पधारने से आश्रय हीन होचुकी हैं ॥ ८३ ॥

जाने जनो भुवि सदाल्पगुणाभिधानो
ब्रूते हरिं गिरिधरं मुरलीधरं हि ।
पीयूषयूषमिव सद्वचनं ततोऽमी
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति ॥ ८४ ॥

ऐसा मालूम होता है कि, संसार में मनुष्यमात्र का यह स्वभा सा होगया है कि, बड़े से बड़े को छोटे से छोटा पुकारना, जैसेकि गोवर्धन पर्वत को धारण करने वाले हरि को मुरलीधर कहते हैं ऐ ही आपकी वाणी यद्यपि अमृत का मावा (सार) है तोभी उसे अमृ समान ही बोलते हैं ॥८४॥

पूज्य ! त्वदीयवचनारचना विचित्रा
पीयूषयूषमिव नः श्रवसोरसिञ्चत् ।
तां चाधरीकृतसुधामधुमाधुरीं स्मः
पीत्वा यतः परमसंमदसंगभाजः ॥ ८५ ॥

हे पूज्य ! आपकी वचन रचना मनोहर एवं अलौकिक थी, हमारे कानों में मानो सदा अमृत का मावा (सार) बरसाया करती थी, इसीसे सुधा तथा मधु की माधुरी की अवहेलना करने वाली उस आपकी वाणी को श्रवण पुटों से पीकर हम अब तक भी आनंद में हैं ॥८५॥

केचिद्व्रजन्ति यशसा स्तुतिपात्रतान्तु
केचिद्रणे जयरमां महसा लभन्ते ।
युष्मादृशं हि सहसा समुपास्य धीरं
भव्या व्रजन्ति तरसाऽप्यजरामरत्वम् ॥ ८६ ॥

हे विभो ! कई एक यश से स्तुति पात्र बन बैठते हैं और कई एक बल प्रयोग से युद्ध में जय को प्राप्त करते हैं, किन्तु आप जैसे धीर की उपासना करने वाले सब से उच्च अजरामरत्व–पद पर पहुंचते हैं ॥ ८६ ॥

नम्रास्त्वदीयचरणे सुरसुन्दरीणां
कम्राः प्रयान्ति सुरसद्म तथैव जीवाः ।

लङ्कां गता इह यथा पवनात्मजाता:
स्वामिन् ! सुदूरभवनस्य समुत्पतन्तः ॥ ८७ ॥

हे स्वामिन् ! आपके चरणों में जो मनुष्य नम्र होते हैं वे
क वैसे ही देवाङ्गनाओं को मोहित करने वाला रूप प्राप्त कर
ण भर में स्वर्ग जाते हैं जैसे कि, रामचन्द्रजी के चरणों में नम्र
कर तुरन्त मारुति (हनुमान्) लंका में पहुंचा था ॥ ८७ ॥

स्वः संगते त्वयि विभो ! दिविषत्प्रसादाः
अस्मादृशा ककुभि ते बहुलीभवन्ति ।
एवं हि वालनिकरान्मुहुरा किरन्तो
मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः ॥ ८८ ॥

हे विभो ! आपके स्वर्ग जानेपर देवताओं की प्रसन्नता हमारे
समान दसों दिशाओं में पर्याप्त फैल रही है, मानो यही संदेश देते
देवताओं के चामर अपने शुभ्रबालों को आकाश में इतस्ततः
र रहे हैं ॥ ८८ ॥

तेऽस्मिन् जनेऽमरपुरे मुदमाप्नुवन्ति
लप्स्यन्त आपुरभितः समयत्रये च ।
संमोहयन्ति जनतां परिमोदयन्ति
येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुङ्गवाय ॥ ८९ ॥

वे ही मनुष्य इस लोक में तथा परलोक में तीनों काल आनंद पाते हैं, संसार को अपने अधीन कर सकते हैं तथा प्राणीमात्र को प्रसन्न बना सकते हैं जो मनुष्य मुनिपुंगव–आपको नमस्कार करते हैं ॥ ८९ ॥

पूज्याङ्घ्रिपद्मजपरागसुरागितान्तः
स्वान्ता भवन्ति मनुजा हि नितान्तशान्ताः ।
तस्माद्व्रजन्ति वृजिनं परिवर्ज्य जीवा
स्ते नूनमूर्द्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥ ९० ॥

पूज्यश्री के चरण कमलों के पराग से जिन मनुष्यों का अंतःकरण रंगा गया है, वे ही मनुष्य एकांतशांत मनोवृत्ति वाले होते हैं इसीसे तमाम पापों का क्षयोपशम कर एवं शुद्धात्मा होकर स्वर्ग सिधारते हैं ॥ ९० ॥

धर्मानुरक्तदुरितादिविरक्तभक्त
भूषामणीनिव गुणान् परिवर्धयन्तम् ।
पूज्यं परासुमपि हग्स्थितमेव मन्ये
श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्नम् ॥ ९१ ॥

धर्मानुरागी तथा पापादियों में विरागी ऐसे भक्तरूप भूषण मणिरूप गुणों की वृद्धि करने वाले शांत एवं गंभीर वाणी बोलने

ाले और स्वर्ण के नगीने सरीखे श्याम वर्ण-पूज्यश्रीजी को अपने
ों के सामने उपस्थित ही देखता हूं ॥ ६१ ॥

कारुण्यनीरधरमुत्तममात्मविज्ञं
चारित्र्यभूमिगुणसस्यविशेषशेकम् ।
हर्षन्ति सर्वसुजनाः शरणं विलोक्य
सिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम् ॥ ६२ ॥

करुणारूप जल से भरे हुए तथा चरित्र रूपी भूमि में गुणरूपी
न्य को उचित रीतिसे सींचने वाले ऐसे आत्म ज्ञानी, उत्तम
नक तथा सिंहासन पर बैठे आपको निहार कर समस्त सज्जन रूपी
यूर हर्षित होते हैं ॥ ६२ ॥

ज्ञानासिमेत्य शुभकर्म तनुत्रितं च
पाखण्डखण्डनपरं सुकृताजिशूरम् ।
अर्हद्‌गिरं भुवि भवन्नमतान्द्रियार्था
मालोकयन्ति रभसेन नदन्नमुच्चैः ॥ ६३ ॥

धर्म युद्ध में ज्ञान तलवार को पकड़ कर शुभकर्मों का कवच
हेन कर पाखंड मत खंडन शूर, अतिन्द्रिय अर्थ युक्त—अर्हद्
णी को वीरवचनों में बोलते हुए आपको सभी प्रसन्न हो होकर
ते हैं ॥ ६३ ॥

दुर्नीतिरीतिगिरिराजिषु सेकशीला
अर्थोदका जनघनाः प्रतिवारिता यैः ।
वायुर्विवाहयति वारिमुचं समन्ता
चामीकराद्रिसिरसीव नवाम्बुवाहम् ॥ ६४ ॥

दुर्नीति तथा कुरीति रूपी पर्वत पर जल बरसाते हुए जन रूपी मेघ को पूज्यश्रीजी ने इस तरह उडाया कि, जिस तरह सुमेरु पर बरसते हुए नवजलधर को प्रकुपित वायु उडादेता है अर्थात् दुर्नीति और कुरीति रूपी मेघ के लिये आप प्रलयकालीन वायु थे ॥६४॥

तापत्रयं जनमनोजनि येन नष्टं
निस्तन्द्रशारदशशाङ्कमनोहरेण ।
अत्यन्तशान्तमनसस्तव का कथास्ते
उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेन ॥ ६५ ॥

जब शरत्पूर्णिमा के चन्द्रसमान आल्हाद जनक तथा मनोहर आपके दर्शन से ही मनुष्यों के तीनों प्रकार के दुःख दूर होजाते थे फिर यदि उसमें सुतरां शान्त मन वाले आप के अन्तःकरण से निकली हुई आशिर्वाद भी हो तो क्या नहीं होसकता ॥ ६५ ॥

धर्मस्तरुः कलिनिदाघगतो विशुष्कः
पाखण्डिचण्डवचनैर्मिहिरैः कठोरैः ।

श्रीमद्वचोऽमृतझरैरभितोऽपि सिक्तो
लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव ॥ ९६ ॥

इस प्रचण्ड कलिकाल निदाघ-समय में पाखण्डियों के मुख
रूपी उदयाचल से निकले हुए कठोर सूर्य से धर्मतरु पतझड़ हो
कर झुलस रहा था, परन्तु आपके वचनामृत झरने से फिर हरा
हो गया ॥ ९६ ॥

उत्पत्तिमूलबहुकामदलार्तिपुष्प
सौख्यालिसंसृतितरुर्विशदो जटालः ।
नश्यत्यवश्यमिह तत्र भवत्प्रसादा
त्सांनिध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग ! ॥ ९७ ॥

जन्म ही जिसका मूल (जड़) है, मनोरथ ही जिसके पत्र
तीनों प्रकार के दुःख ही जिसके फल फूल हैं और सुख जिसके
र हैं ऐसे संसार रूपी विशाल वृक्ष का आपकी कृपा तथा
नेध्य से ही विध्वंस होता है ॥ ९७ ॥

भोगोचितेन वयसा कमलादयाभिः
सम्पन्न एव हि भवान् जगदत्यजयत् ।
वैराग्यमेतदयतो धनतो विहीनो
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥ ९८ ॥

अगाधलक्ष्मी सम्पन्न आपने भोगोचित अवस्था (जुवानी) में जो संसार का त्याग किया सो ही वास्तविक त्याग कहलाता है, अन्यथा धन के नष्ट होजाने तथा इन्द्रियों के शिथिल पड़जाने पर तो बुद्धिमान् से बुद्धिमान् को भी वैराग्य होजाता है ॥ ६८ ॥

उन्मादवातममताविपदादिचिन्ता
सन्तानशामकनिदानमतिं सुपूज्यम् ।
यद्यात्मचिन्तनरसे रसिकाः स्थ यूयं
भो ! भो !! प्रमादमवधूय भजध्वमेनम् ॥ ६९ ॥

हे संसार के उपासको ! यदि आत्मचिन्तन रूपी रसके रसिक बनना चाहते हो तो प्रमाद की जड़ उखाड़ो और उन्माद, ममता, तथा अनेक विपत्तियों के दूर करने में कृतहस्त बुद्धि वाले पूज्य की आराधना करो ॥ ६९ ॥

ध्यानादिसम्बलयुता शिवमार्गगा भो !
आधेःकदम्बबहुजर्जरिता गुणाज्ञाः ।
सज्जीभवन्तु कुरुते ह्यनुहूतिमेतु
मागत्य निर्वृतिपुरीं प्रति सार्थवाहम् ॥ १०० ॥

हे ध्यानादि पाथेय (रास्ते में खाने के लिये बनाई हुई वस्तु वालो मोक्षमार्ग के पथिको ! तथा मानसिक दुःखों से दुखियो गु

हे मनुष्यो ! आपको मोक्षपुरी में लेजाने को पूज्यश्री बुलारहे हैं अतः शीघ्र ही मोक्षगामी संघ में सम्मिलित हो जाओ ॥ १०० ॥

नो प्राणिपीडनमथो न च दुष्टवाक्यं
नो चौर्यमाचरत चारु समाचरध्वम् ।
संश्रूयते दिवि गतोऽपि भवान् यथाऽपा-
गेतान्निवेदयति देव ! जगत्त्रयाय ॥ १०१ ॥

तुम सब किसी भी जीव को कष्ट मत दो, असंस्कृत (दुष्ट) को व्यवहार में मत आने दो, चोरी का आचरण मत करो सदा अपने आचार विचार को शुद्ध बनाओ इत्यादि जैसा कहा करते थे ज्यों का त्यों अब भी सुन पड़ता है । (यदि मनुष्य नाटक आदि की सीन सीनरी को दत्तचित्त तथा एक- होकर देखता है तो बहुत दिनों तक उसके सामने वही नजारा य) उपस्थित रहता है) ॥ १०१ ॥

प्रस्थानसाविरभवच्च तवेदमेत
दाकस्मिकं तु मुनिनाथ ! पयोदकाले ।
गर्जन्ति मेघनिवहाः सुजना विदन्ति
दंध्वन्यते तव मुदे सुरदुन्दुभिर्हि ॥ १०२ ॥

हे मुनिराज ! जब भी बादल गर्जता है तभी लोग समझते

हैं कि, आपके स्वागत में देवगण दुन्दुभि ही बजा रहे हैं, कारण कि, आपका आकस्मिक प्रस्थान ही इस वर्षा ऋतु में हुआ है, इससे आपके स्वर्गारोहण का दिवस वर्षाऋतु भर उभय लोक में खूब धूमधाम से प्रति वर्ष हुआ करेगा ॥ १०२ ॥

शास्त्रैर्विकाशनपरैर्मिहिरैः सदा हि
लुप्तप्रतत्त्वनिचयाः परवाद्यलूकाः ।
नश्यन्ति दूरमथवा स्वधियं त्यजन्ति
उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ ! ॥ १०३ ॥

जैसे द्योतमान सूर्य के समान शास्त्रों से परवादी उल्लू अ
२ तत्त्व को भूल कर लुप्त प्राय हो जाते हैं, वैसे ही आपके प्रख
प्रताप से भी यही घटना घट रही है ॥ १०३ ॥

शिष्यौघतारकयुतं भवदिन्दुमद्य
शीतैः प्रतीग्मरुचिभिश्च निदेशनाभिः
शश्वत्प्रकाशमवलोक्य विशादयुक्त
स्तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः ॥ १०४ ॥

शिष्यरूपी तारागणों से सुशोभित एवं शीतल तथा देदीप्यमा
धर्मदेशनारूप चंद्रिका से सुतरां प्रकाशमान आज आपको देखक
नक्षत्रों सहित चंद्रमा अपने अधिकार को भूल रहा है ॥ १०४॥

अभ्यागते त्वयि गते दिवि देवतानां
स्वस्वामिभावमपनीय बभूव वार्ता ।
चष्टेऽमरोऽमरपतिं त्यज शीघ्रमिन्द्र !
मुक्ताकलापकलितोल्लसितातपत्रम् ॥ १०५ ॥

हे पूज्य ! आपके स्वर्ग चले जाने पर स्वामीसेवक भाव को एक ओर रखकर देवता इन्द्र से इस प्रकार कहने लगे हैं कि, हे इन्द्र ! झूमती हुई मोतियों की लड़ियों वाले अपने छत्र को यहां दूर करदो ॥ १०५ ॥

यस्त्वां जहार कुटिलः समयः स नून
मस्माकमाविरभवत्परमार्थशत्रुः ।
यामीं कृतिं सकललोककृते सुपूज्य
व्याजत्रिधाधृततनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥ १०६ ॥

जो कुटिल काल ने आपको हर लिया (चुरा लिया) सो वह श्य ही हमारा परमार्थ शत्रु है, कारण कि, छल से भूत, भाविष्य ौर वर्त्तमान इन तीनों रूपों से उस काल ने सब के लिये यमराज । कार्य स्वीकार किया है ॥ १०६ ॥

धर्मस्वरूपसमुदर्कसुरद्रुमेण
प्रद्योतितं हि भवता वचसा समन्तात् ।

उद्गीयमानयशसा दिवमद्य भाति
स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन ॥ १०७ ॥

धर्म स्वरूप तथा रमणीय फल वाले कल्पवृक्ष द्वारा प्रकाशि स्वर्ग भी गाया जाता है यश जिन्हों का और पूर्ण करदिये हैं तीनों लोक जिन्होंने ऐसे आपके वचनों से ही शोभित होता है ॥१०७॥

मानी धनी स्वमतिमन्थितशास्त्रराशि
र्दासीकृतेतरजनोऽपि विधर्षितस्ते ।
प्रोद्यन्मरीचिनिचयेन भवन्मुखेन
कान्तिप्रतापयशसामिव सञ्चयेन ॥ १०८ ॥

धनी, अभिमानी, निज बुद्धि द्वारा शास्त्रों को विलोडन क वाले तथा दूसरे जीवों को दास बना लेने वाले मनुष्य कान्ति, प्रताप और यश इन तीनों के समूह के समान देदी मान है तेजः पुंज जिसमें ऐसे आपके मुख को देख कर प्रसन्न जाते थे अर्थात् उन मनुष्यों में उक्त दोष नहीं रहते थे ॥ १०८

त्वत्पादसेवनसुधा प्रददाति सौख्यं
तत्रैव नैव लभते गुणिनां प्रमुख्य ! ।
एवं वदन्ति कवयो नृपमन्दिरेण
माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन ॥ १०९ ॥

हे गुणिगणाग्रगण्य ! आपके चरणों की सेवा मनुष्यों को जितना सुख देती थी उतना सुख मणि, सुवर्ण और चांदी से बना हुआ राजभवन भी नहीं देता है. इस प्रकार कविलोग कहते हैं ।। १०६ ।।

त्रैलोक्यपूत ! समितौ समये तु तस्मिन्
त्वत्तुल्यकान्तिसुषमां न कदाऽऽप कोऽपि ।
अद्याऽपिकोऽपि गणनाथ ! यथा त्वमेव
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभाति ।। ११० ।।

हे भगवन् ! त्रिलोकपावन–पार्श्वनाथ ! उस त्रिदुर्ग से उस समय में जो शोभा आपने प्राप्त की थी उसे कोई भी जीव प्राप्त न कर सका तथा वैसे ही हे गणनाथ ! आप जैसे आपही शोभते हैं अर्थात् आप आप ही हैं, आपकी समता सिवा आपके दूसरों से नहीं हो सकती ।। ११० ।।

देवेन्द्रभक्तिविभवार्चितपादपीठ !
संस्पृश्य पादयुगलं तव पूर्णपूताः ।
पूज्यस्य संश्रितदिवो बहुशोभमाना
दिव्यस्रजो जिन ! नमत्त्रिदशाधिपानाम् ।। १११।।

हे देवेन्द्र की भक्ति से पूजित चरणों वाले–सुपूज्य ! स्वर्ग में

पसारे हुए आपके चरणों के स्पर्श से अत्यन्त पवित्र एवं सुशोभित मंदारमाला नमस्कार करते हुए इन्द्र की और भी अधिक सुशोभित होती है ॥ १११ ॥

स्वर्गापवर्गसुखरत्नचयैं वदान्यं
सम्पन्नभूपनिवहाश्चरणौ पतन्ति ।
त्वच्छुद्धबोधमधिचित्तमभीप्सवस्त्वद्
उत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान् ॥ ११२ ॥

स्वर्गापवर्ग सुखरूपी रत्न समूह के देने वाले आपके अनंत-ज्ञान को हार्दिक सन्मान देते हुए तथा मन में आपके शुद्ध–बोध को लेने की इच्छा वाले राजालोग रत्नजड़ित मुकुटों को अलग कर आपके चरणों पर पड़ते हैं ॥ ११२ ॥

संसारतापपरितप्तचितो जना हि
मिथ्यात्वमोहगदजर्जरिता मुनीन्द्र ! ।
आप्तुं सुखानि भुवनेऽभयदावुदारौ
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र ॥ ११३ ॥

हे मुनिन्द्र ! संसार के त्रिविध तापों से संतप्त एवं मिथ्यात्व रोग से पीडित मनुष्य उभयलोक में सुख की कामना से उदार तथा अभयप्रद आपके चरणों का आश्रय लेते हैं ॥ ११३ ॥

हस्त्यश्वयानमणिजातसुखाङ्गमन्यद्
वाराङ्गनादिकृतगीतमभिप्रपन्नाः ।
ये चैहलौकिकसुखे निरतास्त एव
त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ॥ ११४ ॥

जो मनुष्य हाथी, घोड़े, रथ और रत्नादिक सम्पत्ति के सुख
में मग्न होकर तथा वेश्या आदि के विलास और गीतों में आशक्त
हो केवल ऐहिलौकिक सुख को ही जानते एवं मानते हैं हे नाथ !
वे ही मनुष्य आपके संगसे प्रसन्न नहीं हैं ॥ ११४ ॥

वीरप्रभोर्वचनमानसमस्ति शस्तं
नीरं सदक्षरतरङ्गसुभक्तिरत्र ।
तीर्थारविन्दमिह तत्र निवासिहंसः
त्वं नाथ ! जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽसि ॥ ११५ ॥

हे नाथ ! अक्षररूपी जल वाले एवं भक्तिरूप तरङ्गों से
रङ्गित तथा साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका इन चारों तीर्थकमलों
मण्डित, भगवान् वीरप्रभु के वचनरूपी मानस-सरोवर में
र्वदा विहार करने वाले राजहंसरूपी आप जन्म-समुद्र से विरुद्ध
. मानस-सरोवर में रहने वाला राजहंस खारी जन्म-समुद्र से
कोसों दूर रहता है, यह स्वभावसिद्ध है ॥ ११५ ॥

ज्ञानक्रियातरणिरूपमतिर्मतोऽसि
जन्मादिशम्बरविपत्तितरङ्गरूपात् ।
संसारसागरनिभादुचितं त्वमेव
यत्तारयस्यसुमतो निजपृष्ठलग्नान् ॥ ११६ ॥

जन्मरूपी गहरे जल वाले तथा विपत्तिरूपी कुटिल तरङ्ग वाले भयंकर संसार-सागर से शरणागत जीवों को आप पार करते सो उचित ही है, क्योंकि, ज्ञानक्रियारूपी नौका के सदृश बुद्धि वाले आप ही प्रसिद्ध हैं ॥ ११६ ॥

अस्मद्गुरोर्गुणनिधेश्च दयैकसिन्धो
र्नित्यं परार्थनि वहार्पितजीवितस्य ।
सर्वातिशायिजिनतन्त्र उदारधी त्वं
युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तवैव ॥ ११७ ॥

गुणनिधि, करुणा-सागर तथा परोपकार में समर्पित जीवन वाले हमारे पूज्य गुरुजी का उदार बुद्धि होना समुचित ही है क्योंकि, विशाल, सर्वजीव हितकारी तथा सर्वोत्तम जैनतन्त्रों में श्रीजी की ही मति परिपक्व थी ॥ ११७ ॥

सामान्यधीर्भवतु कर्म विपाकरिक्तो
जानाति नो य इह कर्म विपाकमेव ।

विज्ञाततत्त्वनिकुरम्बमुनीन्द्रचन्द्र !
चित्रं विभो! यदसि कर्मविपाकशून्यः ॥ ११८ ॥

जो जीव इस संसार में कर्म क्या वस्तु है और उसका विपाक क्या है ऐसा नहीं जानते हैं वे ही कदाचित् कर्म विपाक से (क्रियाजन्य फलेच्छा से) शून्य हो सकते हैं, किन्तु तत्व को जानने ले आप भी कर्मविपाक से रहित हैं यही आश्चर्य है ॥ ११८ ॥

सत्प्रातिहार्यमपि यस्य सुरश्चिकीर्षुः
शेतेऽष्टसिद्धिरनिशं शयशायिनीव ।
नाथोच्यसे तदपि मन्दधिया जनेन
विश्वेश्वरोऽपि जनपालक दुर्गतस्त्वम् ॥ ११९ ॥

हे नाथ ! हे जनपालक ! जब आपकी नौकरी देवताभी बजाना ाहते हैं और आपके हाथों में आठों सिद्धियां सदा नृत्य सी करती हती हैं. तब भी मन्दबुद्धि लोग आपको आकिञ्चन कहा करते हैं ाह कितना आश्चर्य है ॥ ११९ ॥

आस्यं वशेऽस्ति रसनाऽपि वशंवदैव
लेखन्यखेदशिलिग्वुर्मसिपात्रमत्र ।
त्वामस्म्यहं लिखितुमुद्यत एव मूढः
किंवाऽक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश ! ॥ १२० ॥

हे नाथ ! मुख भी मेरे अधीन है, जिह्वा वश वदा में है, लेखिनी आलस्य छोड़कर लिखना चाहती है मसी (स्याही) आदि साधन भी आधिक्य से मौजूद हैं और मैं भी लिखने को लालायित हूं तो भी आपको वर्णन नहीं कर सकता और न लिख सकता हूं इससे स्पष्ट जाना जाता है कि, आप अक्षरप्रकृति होकर भी उल्लेख में नहीं आ सकते ॥ १२० ॥

तन्त्रार्णवे विविधधर्ममणिव्रजस्य
निःशारणे कुशलसंविदलं न मूढः ।
अस्यां स्थितौ तव कृपानिकरैः सुशक्ति
रज्ञानवत्यपि सदैव कथं चिदेव ॥ १२१ ॥

शास्त्ररूपी अगाधसागर से अनेक प्रकार के धर्म-रत्नों को निकालने के लिये विचारशील मनुष्य ही समर्थ एवं कटिबद्ध होते हैं. मंदबुद्धि कोसों दूर भागते हैं. ऐसी विकट स्थिति में आपकी अतुल कृपा से वह शक्ति अज्ञानी जीवों में भी आवसी जिससे सर्व साधारण भी उक्त समुद्र से धर्मरूपी रत्नों को लूट रहे हैं ॥ १२१ ॥

अत्यन्तदुष्कृतिनिलीनमनाश्च साधु
द्रोही जिघांसुरपि जीवचयं त्वदीयम् ।

सान्निध्यसन्निधिमवाप्य जहौ स्वभावं
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकाशहेतु ॥ १२२ ॥

अत्यन्त पापमें मन देने वाले, साधु से द्वेष करने वाले, जीवों को घात करने की इच्छा वाले, महापातकी मनुष्य आपके सन्निधि (समीपता) रूपी सन्निधि (शाश्वत खजाना) प्राप्त कर अपने क्रूर स्वभाव का त्याग करते हैं. अतः विदित होता है आपका ज्ञान जगत् के विकाश करने में देदीप्यमान तथा कृतहस्त था ॥१२२॥

मिथ्यात्वमोहकलुषाऽविलचेतनाजुट्
जन्तोर्यथा जलधरः पयसा निजेन ।
प्रक्षालये दिवलमस्तव नाथ ! नाम
प्राग्भारसंभृतनभांसि तमांसि रोषात् ॥ १२३ ॥

जिस प्रकार धूलि से मलिन आकाश को गर्जना करता हुआ नवीन जलधर (बादल) अपने जल से साफ कर देता है ठीक उसी प्रकार आपका नाम भी मिथ्यात्व और मोह से मलिन बुद्धि वाले जीवों के हृदयाकाश को शुद्ध और साफ कर देता है ॥ १२३ ॥

मृत्योरहेःखगपतिः स्मरदन्तिसिंहो
लोभैनराजिमृगयुः शुचरात्रिभानुः ।
हन्तीह नाथ ! दुरितानि तवाऽभिधान
मुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि ॥ १२४ ॥

मृत्युरूपी सर्प के लिये गरुड़, कामरूपी उन्मत्त हाथी के लिये सिंह, लोभरूप मृग के लिये व्याध और शोकरूपी अंधारी रात्रि के लिये प्रचंड भानु के समान जो आपका नाम है वह नितरां कमठ नामक शठ तापस से उठाये गये पापों को निस्सन्देह नाश करने की शक्ति रखता है ॥ १२४ ॥

पाखण्डमण्डनपरैर्निजशक्तिसारै
रिच्छानुसारकृतिमेव विकाशयद्भिः ।
तीर्थादिसस्य उदवग्रहसाग्रहश्च
छायाऽपि तैस्तव न नाथ! हता हताशैः ॥ १२५ ॥

अपनी प्रौढ शक्ति से पाखंड मत का मण्डन करने वाले, स्वेच्छाचार का विस्तार करने में कुशल एवं चारों तीर्थरूपी सस्यों में वृष्टि को रोकने वाले दुर्जन हताश होकर आपकी छाया को भी इधर उधर न कर सके ॥ १२५ ॥

कुड्येऽश्मराजिरचिते सविधास्थितास्तै
र्लोष्टैर्विघट्य सहसा प्रतिवर्तितैश्च ।
क्षेप्ता हतो भवति तत्कपटैस्तथैव
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ॥ १२६ ॥

जिस प्रकार पत्थर की दृढ़ बनी हुई दीवार पर कोई जोर से

पत्थर पटके तो वह पत्थर दीवार से टकरा कर उलट पटकने वाले के मुँह पर ना लगता है उसी तरह दुर्जनों के किये हुये उत्पातों से दुर्जन ही नष्ट हुए ॥ १२६ ॥

साभ्रेऽह्नि संभ्रमविहीनधियैव धीमन् !
धर्म्यं वचस्तव मुखाद्बहिराजगाम ।
गर्जद्गुरु प्रतिभटं च तिरश्चकार
यद्गर्जदूर्जितघनौघमदभ्रभीमम् ॥ १२७ ॥

वर्षा ऋतुमें संभ्रमके बिना ही आपके मुख से निकले हुए धर्मरूपी मधुर वचन जोर से गर्जने वाली काली घटाको तिरस्कार करते थे अर्थात् मेघकी मंद एवम् मधुर ध्वनि से भी आपकी वाणी विशेष मधुर थी ॥ १२७ ॥

स्वान्तप्रशान्तरसिका वशिका सभासु
तारापथे च तव गीः प्रणिनाद मेघम् ।
गम्भीरतारगुणजाततया जिगाय
प्रस्यत्तडिन्मुसलमांसलघोरनादम् ॥ १२८ ॥

अत्यन्त शान्तमन वाले रसिकों को वशमें करने वाली आपकी मधुर वाणी जब सभा मंडप में घूमती हुई आकाश को प्रतिध्वनित करती थी तब चकमकाती हुई बिजली वाली, मुसल-धार जल वर्षाने वाली नील घन-घटा भी शर्माती थी ॥ १२८ ॥

गर्वार्जितात्ममकरध्वजनाशदक्षः
सत्पक्षमाक्षिपति पक्ष इनो विपक्षः ।
पार्श्वप्रभुर्व रिपुणोक्तमसौ सुसोढा
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारिदधे ॥ १२६ ॥

अहंकार से जिसकी आत्मा उन्नत है ऐसे काम को नष्ट करने में कृतहस्त, सत् पक्ष में झूठे आक्षेप करने वालों के प्रबल विरोधी पूज्य श्री ठीक वैसे ही दुर्जनोंकी दुष्ट वाणीरूपी वर्षा को एक चित्त से सहते थे जैसे कि, दैत्यों द्वारा वर्षाये हुए जल को श्री पार्श्वप्रभु बड़ी शान्ति से सहते थे ॥ १२६ ॥

वाग्वारि योऽत्र विततार मलीमसात्मा
मालिन्ययुक्तमधिसाधुमुदैव सेहे ।
दाताऽऽप तापमभितोऽभिहितेन वक्तु
स्तेनैव तस्य जिन ! दुस्तरवारिकृत्यम् ॥ १३० ॥

हमारे पूज्य श्री पर मलिन आत्मा दुष्टों ने जो वाणीरूपी जल को वर्षाया उस कठोर वाणी-वर्षा को पूज्य श्री ने बड़ी खुशी से सह लिया, किन्तु वर्षा करने वाले बाद में संतप्त हुए और बोलने वाले को उन दुष्ट वचनों से निकले हुए विषयुक्त जल को पीने का फल भी मिला ॥ १३० ॥

प्राग्जन्मसञ्चितसुपुण्यविभावतश्चेत्
साधानवद्यमभिगद्य न खिद्यतेऽसौ ।
मृत्वा व्रजिष्यति यमालयमाविषीदन्
ध्वस्तोर्ध्वकेशविकृताकृतिमर्त्यमुण्डः ॥ १३१ ॥

अगर साधुओं की निन्दा करने वाला पूर्वजन्म के इकट्ठे किये हुए पुण्योदय से दुःखी न हुआ तो भी केशों के उखाड़ने से विकृताकार तथा दुःखी होता हुआ वह मनुष्य अवश्य ही नरक में पड़ेगा ॥ १३१ ॥

निन्दाऽभिनन्दितधियां दुरितक्षयाय
कालिन्ददिष्टपुरुषैः परुषैः समिद्धः ।
जिह्वेन्धनो धमतिनो विकलं करोति
आलम्बभृद्भयदवक्त्रविनिर्यदग्निः ॥ १३२ ॥

जो मनुष्य सदा दूसरों की निन्दा करना ही अपना कर्तव्य समझते हैं उन्हें पापों से मुक्त करने के लिये धर्मराज की आज्ञा से भयानक यमदूत उक्त मनुष्यों की जिह्वा में आग लगा देते हैं जिससे वह आग उनके मुखों से बड़ी २ ज्वाला रूप से निकलती है और उन्हें भस्मसात् करती जाती है ॥ १३२ ॥

नाथ ! त्वदीयहितदेशनतः सनाथ
तिष्ठन् तिरोहिततनुस्तरुमौलिलीनः ।
तत्याज्य तूर्णमपिसोथ परेतयोनिं
प्रेतव्रजः प्रतिभवन्तमपीरितो यः ॥ १३३ ॥

हे नाथ ! आपके हितोपदेश से सनाथ-वृक्ष की सघन शाखाओं में शरीर को छिपा कर बैठे हुए प्रेत भी आप के प्रति भक्ति प्रेरित होकर तथा आपको आत्मसात् करके प्रेतयोनी से मुक्त होते हैं ॥ १३३ ॥

यैः प्राज्ञमानिनिवहैर्भवतोपदेशः
प्रत्तः कृतो न निजकर्णगतोऽभिमानात् ।
तस्माद्विरुद्धविधिमाविदधे विरोधात्
सोऽस्याऽभवत्प्रतिभवं भवदुःखहेतुः ॥ १३४ ॥

अपने को ही पण्डित मानने वाले जो लोग आपके दिये गये अमृतमय उपदेश को कानों द्वारा नहीं पीते थे प्रत्युत विरोधी होकर उपदेश से विपरीत आचरण करते थे उनके जन्म २ के लिये वह विरोध दुःख का कारण बन बैठा है ॥ १३४ ॥

सद्वाक्यरत्ननिचयं व्यतरन् जनेभ्यो
ज्ञानप्रभावगुणगौरवगुम्फिताश्च ।

ध्यायन्ति धीरधिषणास्त्वामिव प्रभुं चेत्
धन्यास्त एव भुवनाधिप ! ये त्रिसन्ध्यम् ॥ १३५ ॥

सुन्दर वाणी रुपी रत्न समूह को लेकर सारी जनता को देने वाले, ज्ञान एवम् प्रताप से सुशोभित जो विद्वान् आपके समान तीनों कालों में परमेश्वर का ध्यान करते हैं वे भी धन्य हैं ॥ १३५ ॥

सुज्ञानदर्शनचरित्रपवित्रचित्तं
यत्सर्वजन्मितरणिं शरणं प्रपद्य ।
दुष्टाष्टकर्मरिपुमोचनसिद्धहेतु
आराधयन्ति सततं विधुतान्यकृत्याः ॥ १३६ ॥

सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन तथा सम्यक् चारित्र से जिन्होंने हृदय को पवित्र किया है और प्रतिपक्षी (शत्रु) आठों कर्मों के मिटाने के प्रधान कारण तथा प्राणीमात्र को भवसागर से पार करने कीनौका के समान परमेश्वर को तल्लीनता से जो भजते हैं वे धन्य हैं (इतना पूर्व श्लोक से जानना) ॥ १३६ ॥

आबालवृद्धयुवकायधराऽविशेषाः
प्राप्तत्वदीयवचनार्थमुदाद्यशेषाः ।
न्यस्ताक्षजीवसुलभत्रिविधार्त्तिलेशा
भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशाः ॥ १३७ ॥

बालक, वृद्ध, युवा एवम् समस्त प्राणधारी जीव आपके सारगर्भित वचन-जन्य अर्थज्ञान से हर्षित हुए तीनों प्रकार के दुःखों को त्याग कर भक्ति से रोमाञ्चित देह वाले हो रहे हैं ॥ १३७ ॥

शास्त्राब्धिगूढहृदयार्थविदः समन्ता
ज्जीवादितत्त्वनिकरे परमार्थविन्दाः ।
तेऽप्यालपन्ति भवदुःखविनाशहेतु
पादद्वयं तव विभो ! भुवि जन्मभाजः ॥ १३८ ॥

शास्त्ररूपी समुद्र के छिपे हुए हृदयरूप अर्थ को जानने वाले, जीवादि तत्वों को प्राप्त करने वाले, प्राणी भी आपके चरणों को सांसारिक दुःखों के दूर करने का कारण ही कहते हैं ॥ १३८ ॥

जन्मान्ततावविषयपङ्कवितर्षगर्ते
गर्वोर्मिजन्ममकरस्वभ्रूषाष्टकर्म ।
पाषाणदम्भविशदेऽवनिमज्जतोऽस्मान्
अस्मिन्नपारभववारिनिधौ मुनीश ! ॥ १३६ ॥

हे मुनिराज ! जन्म तथा मरणरूपी जल वाले, विषयरूपी भयंकर तृष्णा ही है भंवर जिसमें, अहंकार की तरंगों से युक्त, जीव ग्राहों से भरे हुए वन्धुवर्ग है मीन जिसमें, आठों कर्म रूपी

चट्टानों से विषम तथा दम्भ से वृद्धि प्राप्त ऐसे दुस्तर भवसागर में डूबते हुए हम लोगों की रक्षा करो ॥ १३९ ॥

विश्राणने विमलवैश्रवणेन तुल्यो
धर्मादितत्त्वनिचयस्य वदान्यकस्त्वम् ।
शाणायमानधिषणः सकले प्रतीतो
मन्ये न मे श्रवणगोचरतां गतोऽसि ॥ १४० ॥

दान में कुबेर सदृश, धर्म्मादि तत्त्व प्रदान में शाण समान बुद्धि वाले तथा जगत्प्रसिद्ध भी आपको मैं नहीं जान सका (यही मेरी वज्रमयी अज्ञता का नमूना है) ॥ १४० ॥

संग्रामवह्निभुजगार्णवतिग्मशस्त्रो
न्मत्तेभसिंहकिटिकोटिविषाक्तबाणाः ।
दुष्टारिसंकटगदाः प्रलयं प्रयान्ति
आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे ॥ १४१ ॥

युद्ध, अग्नि, विकराल सर्प, दुस्तर समुद्र, तीखे शस्त्र, उन्मत्त हाथी, भयंवह सिंह, उद्धत सूअर, विषालिप्त बाण, दुष्टात्मा शत्रु, संकट और रोग ये सब उसी क्षण में नष्टप्राय हो जाते हैं, हे नाथ! जब आपका नाम रूपी पवित्र मन्त्र सुनलेते हैं ॥ १४१ ॥

चिन्तावितानजननान्तविनाशहेतौ
कल्पद्रुमे त्वयि सुसिद्धिसमानरूपे ।

हृत्पद्मसद्मवासिते भविनां मुनीन्द्र !
किंवा विपद्विषधरी सविधे समेति ॥ १४२ ॥

चिन्ता समूह को तथा जन्म मरण को नाश करने वाले कल्पवृक्ष के समान अष्टसिद्धि स्वरूप आप जब जनता के हृ सरोज में निवास करते हैं, हे नाथ ! तब क्या विपत्तिरूपी म विषधरी—नागिन पास आसकती है ? ॥ १४२ ॥

पीयूषयूषसमशान्तिनितान्तपुष्टो
हृष्टः सदा धनगणैश्चरणप्रभावात् ।
नो विस्मरामि शुभतत्वगृहीतकोऽहं
जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं मुनीश ! ॥ १४३ ॥

अमृत के मावा समान सरस शान्ति से पुष्ट तथा आपके चर के प्रताप से धन ध्यानादि से संतुष्ट एवं तत्त्वग्राही हम आपके चरणयुगलों को जन्मान्तर में भी नहीं भूल सकेंगे ॥ १४३ ॥

त्रिश्राणनश्रमितशीलतपोव्रतस्य
सुध्यानयोगशमसंयमसिद्धशुद्धेः ।
कस्यापि शुद्धचरणं तव चाप्यसद्यो
मन्ये मया महितमाहितदानदक्षम् ॥ १४४ ॥

अभयदान तथा सत्पात्र दान में तत्पर, शील एवं तप

धारक, शुक्ल ध्यान तथा संयमादि से युक्त ऐसे किसी महापुरुष के पवित्र चरणों को जन्मान्तर में आत्मसात् करके ही अभीष्टप्रद, समर्थ एवं जगत्पूजित आपके चरणकमलों को प्राप्त किया है ऐसी हमारी प्रबल धारणा है ॥ १४४ ॥

श्रीमत्सु सत्सु न हि दुःखमवाप चास्मान्
यातेषु खं प्रतिनिधीन् समयज्ञसुज्ञान् ।
ज्वाहीरलालशमिनः प्रददत्सु नाणु
स्तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानाम् ॥ १४५ ॥

हे मुनिराज ! आपके रहते हुए हमें दुःख का अनुभव नहीं हुआ तथा आपके स्वर्ग सिधारने पर अवश्य देश, काल, क्षेत्र एवं भाव के जानकार प्रबल पण्डित श्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज को आप अपने स्थानापन्न कर गये हैं, इससे वर्तमानभव में तो हम पराभूत नहीं हो सकते ॥ १४५ ॥

काव्यप्रणीतिजनितानवकीर्त्तिदूत्या
आहूतिनीतमतिरद्य भवद्विभूतेः ।
प्राप्तोऽपवादपदभागभिसारिकाया
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ॥ १४६ ॥

काव्य बनाने से पैदा हुई नवीन कीर्तिरूपी दूती के बुलाने पर सम्मत होकर पूज्यप्रवर श्रीजी की विभूतिरूप अ...

के आदेश से हमने मलिन आशय वालों के अपवाद से युक्त वर को प्राप्त किया है ॥ १४६ ॥

यो भाव आविरभवत्तव चिद्वियत्तौ
भास्वत्प्रभाव इव तेन तमो निरस्तम् ।
त्वद्भावभावितजनैरिह ते प्रतीपै
र्नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन ॥ १४७ ॥

हे नाथ ! जो भाव आपके मनोव्योम में प्रचण्ड भास्कर के समान प्रकट हुआ उस तेजोमय भाव के प्रताप से आपके अनुयायी मनुष्यों के हृदयपटल पर जो मोहमय अन्धकार था सो एका एक नष्ट होगया परन्तु आपके विपक्षचारियों की आंखें मोह से चकाचौंध गयीं जिससे उनके हृदयाकाश का मोहान्धकार दूर न होसका ॥ १४७ ॥

जातः सतोऽमितहितोऽत्र भवान् महीतो
दृष्टिं गतो नहि भवेदिति नैव कष्टम् ।
ख्यातो भविष्यसि यतो हि जनैर्वियुक्तः
पूर्वं विभो ! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ॥ १४८ ॥

सुतरां सज्जनों के हितकारी, परमपूज्य आप इस संसार से पधार गये अतः अब आपका साक्षात्कार दुर्लभ होगया है, तोभी इस बात की विशेष चिन्ता नहीं; कारण कि, आपका प्रथम दर्शन

किया हुआ है जिससे अब ध्यान से आपका साक्षात्कार होजाया करेगा ॥ १४८ ॥

युष्मत्पदानुगमने भविनां मनीषा
उत्कन्ठयन्ति रमयन्ति सदादिशन्ति ।
कृत्वाऽखिलं परिकरं गमनोत्सुकञ्च
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः ॥ १४६ ॥

आपका अनुसरण करने की इच्छा भव्य जीवों को उत्कण्ठित करती है, प्रसन्न करती है एवं सब प्रकार से आज्ञा देती है इसीसे मैंने भी आपका अनुसरण करने की सब तरह की तैयारियें करली हैं परन्तु मर्मभेदी अनर्थ (पाप) ही मुझे बारंबार रोक रहा है ॥ १४६ ॥

स्युस्त्वाद्विधा बहुविधा विबुधाः सुशान्ता
स्त्वां वीक्ष्य मानवशिरोऽर्चितपादपीठम् ! ।
आहेयभोगनिभभोगभुजा निरस्ताः
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ १५० ॥

अनेकों विद्वानों ने आपको समस्त जनमस्तकों से पूजित पादपीठ देखा, ये सब आपके समान शान्तात्मा बनना चाहते थे किन्तु बन न सके वे सांसारिक भोगों को भोग कर सर्प के समान मूर्च्छित हो चुके थे, जिससे उन्हें पछाड़ खानी

अन्यथा कुल तैयारीयां करने पर भी वे वैसे (आपके समान) क्यों न बने ॥ १५० ॥

भावाऽवबोधविधुराय निरक्षराय
द्रव्याधिपाय च समृद्धिविवर्जिताय ।
सर्वेभ्य एव समबोधमदाः सुपूज्य !
आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि ॥१५१॥

आप श्रुत—श्रवणगोचर थे, पूजित-समस्तलोकमान्य थे एवं दृष्ट—देखे गये थे इसीसे आपने भेदभाव को एक ओर छोड़कर विद्वानों, मूर्खों, धनियों तथा निर्धनों को समान ज्ञान दिया जिससे आप पूर्ण समदर्शी थे ॥ १५१ ॥

दीने दयार्द्रहृदयः परमस्त्वमासी
हृद्यो दरिद्रनिवहः परमस्तवासीत् ।
यातो यतो दिवमवैमि च निर्धनेन
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ॥ १५२ ॥

हे पूज्य ! दीन दुःखियों के लिये आपका हृदय सदा दयार्द्र रहता था और दरिद्रियों ने आपको आत्मसात्कर लिया था, इतना होनेपर भी आप स्वर्ग में चले गये इससे स्पष्ट विदित होता है कि, परमदरिद्री मैं आपको हृदय में स्थान न दे सका—अपना न सका पश्चात्ताप !!! ॥ १५२ ॥

दैवेन मे हि विमुखेन भवन्तमद्य
हृत्वा हृतं मम हृदो वद किं न सद्यः ।
किं वाऽधिकेन मम शर्मविभिन्नमर्म
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव! दुःखपात्रम् ॥ १५३ ॥

हमारे प्रतिकूलवर्ती दैवने आपको हरकर हमारा क्या नहीं हर लिया यह आपही कहें, अधिक क्या कहें, हमारा शर्म—कल्याण (शुभ) भिन्नमर्म हो चुका है जिससे हे प्राणिमात्र के बन्धो ! आज हम दुःख के भाजन बन बैठे हैं ॥ १५३ ॥

सम्प्रत्यसाम्प्रतबहुच्छलदम्भयुक्त
स्तद्दीनसाधुपथवर्त्तिनमाक्षिपन्ति ।
रक्ष प्रभो! बहुदुरक्षरवर्षतोऽस्मात्
त्वं नाथ! दुःखिजनवत्सल! हे शरण्य! ॥१५४॥

हे प्रभो ! इस समय कपट पटु अनेकों दंभी लोग निष्कपटी साधुमार्गी जैन समाज की हंसी उड़ाते हैं अतः हे नाथ ! हे दीन बन्धो ! हे भक्तवत्सल ! हे शरणागतप्रतिपालक ! उन दुष्टाक्षरों के बरसाने वालों से रक्षा करो ॥ १५४ ॥

नाथ! त्वदीयचरणे विनयेन युक्ता
मत्प्रार्थनेयमधुना सफलैव कार्या ।

स्यादस्मदादिहृदयं शुभभावलिप्तं
यस्मात्क्रियाःप्रतिफलन्ति न भावशून्याः ॥ १५५ ॥

हे नाथ ! आपके चरणों में हमारी यह सविनय प्रार्थना अब युक्त है-उचित है अब इसे आप सफल करें और हमारे अन्तःकरणों को शुभ भावों से भावित—संस्कारित बनावें कारण कि, भावशून्य (श्रद्धाविहीन) क्रियाएं फलतीं नहीं; वे व्यर्थ होती हैं ॥ १५५ ॥

स्वस्मिन्निवाशु बहु पूरय शान्तिपूण्य
कारुण्यशास्त्रनिवहैर्मम मानसानि ।
सन्मानसाऽस्मदमाशु विवर्त्तयेश !
कारुण्यपुण्यवसते ! वशिनां वरेण्य ! ॥ १५६ ॥

हे ईश ! हे संयमियों में श्रेष्ठ ! हे करुणा और पुण्य के निवास भवन ! अपनी आत्मा के समान हमारी आत्मा को भी उन्नत बनादो अर्थात् हमारे हृदयों में भी शान्ति, पुण्य, दया एवं शास्त्र समूह को कूट २ कर भरदो और हमारे अन्तःकरण में जो मद है उसे उलटदो अर्थात् दम (बाह्यवृत्तियों से मन को रोकना) करदो अथवा मद की उन्नति को रोक कर उसका ह्रास करदो ॥ १५६ ॥

सन्तु प्रपूर्णमनसो वचसा विनाऽपि
स्यात्केवलेन मनसाऽपि समेष्टसिद्धिः ।
भारो न ते यदि सचेत्तदपीह सार्थो
भक्त्या नते मयि महेश ! दयां विधाय ॥ १५७ ॥

" तुम सब पूर्ण मनोरथ होवो " यदि आप ऐसा कहने का कष्ट न भी उठाकर केवल हमारे अभ्युदय को आप मनमें ही विचार दिया करें तोभी हमारी अभिलषित सिद्धि हो सक्ती है, भक्ति से नम्र हमारे जैसे भक्तों से दया करना आपका कर्तव्य है कोई बोझा नहीं मानलो यदि बोझा भी है तो निष्प्रयोजन नहीं सप्रयोजन है ॥१५७॥

चेखिद्यते जनमनः कलिखेदतश्च
श्रीमद्वियोगप्रभवात्परिभावतश्च ।
हित्वाऽधुना सुखनिदानसमाधिमाशु
दुःखाङ्कुरोद्दलनतत्परतां विधेहि ॥ १५८ ॥

विकराल कलिकाल जन्य दुःख से तथा श्री चरणों के वियोग से आविर्भूत परिभव द्वारा इस समय समस्त मनुष्यों के अन्तःकरण पूर्ण दुःखमय हो रहे हैं अतः आत्मा का सुख साधन करने वा समाधी छोड़कर हमारे दुःखांकुरों के दलन में कटिबद्ध हो ॥ १५८ ॥

जन्मान्तरीयकलुषार्तजनार्तिहारि
भावत्कभव्यभवनं दुरितप्रहारि ।
आसाद्य प्रीतिनिकरं समुपैति भोगी
निःसख्यसारशरणं शरणं शरण्यम् ॥ १५६॥

भवान्तर में किये हुए पापों से दुःखी जनों के दुःख दूर करने वाले, कल्याण–मंगल के उच्च भवन, दुरित विदारक एवं असहाय के सहाय आपके चरणों को पाकर सांसारिक जीव प्रसन्न होते हैं ॥ १५६ ॥

मन्ये स पापपरिपूरितचित्त आसीद्
दुर्दैवदेवनविलासनिवास एव ।
नाऽसादि येन सुखमङ्घ्रियुगं त्वदीय
मासाद्य सादितरिपुप्रथिताऽवदात्तम् ॥ १६० ॥

निःसन्देह यह मनुष्य घोर पापी एवं दुर्दैव का क्रीडास्थल ही था जो आपके सर्व सुखकारी चरणों को पाकर भी सुखी न बन सका ॥ १६० ॥

अन्यत्कृतिप्रतिहितात्मतया न दृष्टो
दिष्टेन नष्टशुभकर्मचयेन दीनः ।
ध्यातोऽपि नैव नियतं च विवञ्चितोऽस्मि
त्वत्पादपंकजमपि प्रणिधानवन्ध्यः ॥ १६१ ॥

और और कार्यों में व्यग्र होने से तथा दुर्दैव से बाधित होने से मैं दीन हीन आपके पदारविन्दों का दर्शन न कर सका अथवा ध्यान न करने पाया, अतः हे जगत्पावन ! मैं अवश्य ही छला गया ॥ १६१ ॥

त्वत्पादचिन्तनपरं प्रविहाय सर्वं
सम्प्रस्थितो यदि भवान्नहि मामवादीत्।
सम्प्रत्यपि प्रतिपलं भवता न गुप्तो
वन्ध्योऽस्मि तद्भुवनपावन! हा हतोऽस्मि ॥१६२॥

सर्वस्व का बलिदान कर मात्र आपके ही शरणागत था परन्तु आपने भी मुझे निराधार छोड़ बिना कहे बूझे परलोक सिधार गये अब इस समय में यदि रक्षा न करोगे तो इस अनाथ का सर्वनाश अवश्यंभावी है ॥ १६२ ॥

सर्वे भवन्तु सुखिनो गददैन्यमुक्ताः
सक्ताः परोपकृतिकार्यचये भवन्तु ।
जह्युःपरस्परविरोधमवाप्य मोदं
देवेन्द्रवन्द्य ! विदिताऽखिलवस्तुसार ! ॥ १६३ ॥

हे देवेन्द्रवन्द्य ! हे सकल पदार्थ तत्त्वज्ञ ! आपकी अतुल कृपा से आधिव्याधि एवं शोक से मुक्त होकर प्राणीमात्र सुखी हों सदा परोपकार में लगें और प्रसन्न रहकर पारस्परिक विरोध को ~~
॥ १६३ ॥

विद्याऽनवद्यकृतिधर्मधनोन्नतीना
मास्ते निदानमिति तां परिवर्धयस्व ।
त्वत्सेवकान् कुरु सुशास्त्ररसे रसज्ञान्
संसारतारक ! विभो ! भुवनाधिनाथ ! ॥ १६४ ॥

चारुक्रिया, धर्म, एवं धन आदि की उन्नति का मूल कारण सद्विद्या ही है, अतः विद्या को बढ़ाइये और सेवकों को शास्त्ररस के रसिक बनाइये ॥ १६४ ॥

संसारसागरसुसेतुमतिं विवेक
प्राग्भारपूरितकृतिहृदनीहिमाद्रिं ।
पूज्यं नवीनमतिदीनजने दयालुं
त्रायस्व देव ! करुणाहृद ! मां पुनीहि ॥ १६५ ॥

दुस्तर भवसागर में सेतु समान है बुद्धि जिनकी, विवेक संसार से पूर्ण क्रियारूप नदी के लिये हिमालय (नदी हिमालय से ही निकलती है) दुःखी जीवों में परमदयालु ऐसे हमारे नवीन पूज्य श्री जी की रक्षा आप करें ॥ १६५ ॥

ध्वान्तार्त्तजीवमिव भानुमुदन्ययार्त्तं
वारीव पन्नगगणार्त्तमिवाहिभोजी ।
यो मां जुगोप बहु गोप्स्यति पाति नित्यं
सीदन्तमघ भयदव्यसनाम्बुराशेः ॥ १६६ ॥

आप हमारे उन नवीन पूज्य श्री की रक्षा करें जो अन्धकार से पीड़ितों के लिये प्रचण्ड मार्तण्ड हैं, पिपासाकुलों के लिये शीतल जल हैं, विषधरों से काटे हुओं के लिये गरुड़ हैं एवं जिन्होंने भय मद व्यसनरूपी जल से भरे हुए इस अपार संसारसागर से रक्षा की, करते हैं और करेंगे ॥ १६६ ॥

शत्रुः प्रशाम्यति पराङ्मुखतां प्रयाति
सिंहाहिदन्तिमहिदारचयाश्च हिंस्राः ।
ध्यानं नितान्तसुखदं हृदये नराणां
यद्यस्ति नाथ ! भवदङ्घ्रिसरोरुहाणाम् ॥ १६७ ॥

हे नाथ ! यदि आपके चरणकमलों का ध्यान मनुष्यों के हृदय में है तो निस्सन्देह शत्रु स्वयं नष्ट होंगे अथवा भग जायेंगे सिंह, सर्प, हाथी आदि हिंसक जीव भी प्रसन्न पा सकेंगे ॥ १६७ ॥

वक्तुं बृहस्पतिरसक्त इनोऽपि दीनः
शक्नोति नो बहुविशारदशारदाऽपि ।
अस्मादृशोऽल्पविषयस्तव किं गदामि
भक्तेः फलं किमपि सन्ततसञ्चितायाः ॥ १६८ ॥

एकान्त संचित की हुई जिस भक्ति के फल को समर्थ बृह[illegible] भी नहीं कह सकता बहुत जानने वाली सरस्वती भी क[illegible]

समर्थ नहीं हो सकती उस भक्ति के फल को बहुत थोड़ा जानने वाला मेरे जैसा दीन क्या कह सकता है ? ॥ १६८ ॥

सातार नामनगरे वसतोऽब्दकालं
षट् सिन्धुसागर सुनेत्र मिते शुभाऽब्दे ।
वीरस्य मासि नभसि स्तुवतोऽयकारी
तस्मै त्वदेकशरणस्य शरण्यभूयाः ॥ १६९ ॥

का ते स्तुतिः स्तुतिपथादतिरिक्तवृत्तेः
सर्वानुकूलकरणाप्तविशेषशक्तेः ।
किन्त्वर्थयेऽहमिदमेव भवान् विभूयात्
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ॥१७०॥

समस्त अनुकूल करणों की प्राप्ति से असाधारण शक्ति वाले तथा स्तुतिमार्ग में न आने वाले आपकी स्तुति क्या हो सकती है, किन्तु मेरी यही एक प्रार्थना है कि, इस भव में और भवान्तर में भी एक आप ही मेरे स्वामी हों ॥ १७० ॥

ध्यात्वाऽभिनुत्य निजकृत्यमथो वितत्य
पूज्यो गतोऽस्ति च भवान् नियतं यथैव ।
एवं वयं जितहृषीकचया व्रजाम
इत्थं समाहितधियो विभिवज्जिनेन्द्र ! ॥ १७१ ॥

विधिवत् शुक्लादि ध्यान करके, जिनचरणों मे [illegible]
तथा अपने चारु कृत्यों को विस्तारित करके और इस [illegible]
जिस प्रकार स्वर्ग को सिधारे उसी प्रकार जितेन्द्रिय [illegible]
बुद्धि वाले होकर हम भी आपका अनुगमन करें ॥ १७१ ॥

हित्वा यदापि गतवानिह नस्तथाऽपि
स्वीयेषु नो गणय नाथ! सदैव सौम्य! ।
ध्यानं विदेहि तव येन सदा भवेम
सान्द्रोल्लसत्पुलककञ्चुकिताङ्गभागाः ॥१७२॥

यद्यपि हमें छोड़कर आप इस संसार से स्वर्ग चले गये हैं [illegible]
भव्यमूर्ते! अपनों में आत्मीयों में हमारी गणना अवश्य करें [illegible]
[illegible] अपनायें आपकी दृष्टि मात्र से ही हम सघन एवं [illegible]
[illegible] रोमांच से वस्त्रधारी बन सकते हैं अर्थात् अनिर्वचनीय आनन्द
भागी बन सकते हैं ॥ १७२ ॥

कामं विभातु भुवने सदृशस्तवेश!
शान्ति विना न तत्र कान्तिरमुष्य चास्ति ।
यत्राऽस्महे सुसुखिनः समवीक्ष्यमाणा
स्त्वद्बिम्बनिर्मलमुखाम्बुजवद्धलक्ष्याः ॥१७३॥

अर्थैर्जनैर्हयगजैश्च समेधमानाः
भव्यैः सुधीभिरतितश्च विवर्द्धमानाः
अन्ते समीप्सितपदं सततं ह्ययन्ते
ये संस्तवं तव विभो ! रचयन्ति भव्याः ॥ १७४ ॥

हे विभो ! जो भव्य जीव आपके इस प्रकार संस्तव (स्तुति) की रचना करते हैं वे निः सन्देह इस संसार में धनसे बन्धुओंसे, सुन्दर घोड़ों से, उन्मत्त हाथियों से युक्त बुद्धिमान् भव्य जीवों से वृद्धि गत अन्त में निश्चय से अभिलषित पद(मोक्ष) को प्राप्त करते हैं ॥ १७४॥

परिशिष्ट २ रा.

जीवदया का पट्टा परवाना

बोहोतसा छोटा मोटा जागीरदारो व ठाकरो की तरफ से
ज्य श्री को जीवदया का पट्टा परवाना मिला था, वो सब
ल नहि शकने से जो थोड़ा सा मिला वो असल भाषा में
क्षरसः ऊन दीया है ।

॥ श्रीरामजी ॥

ंबर ३८२

महोरछाप छे

हुकम कचेरी राजस्थान बान्सी बनास समसी पंचां जैन मार्गी
ाकीन सादड़ी वाला अभी अठे आये मालुम कराई के मार श्री
्यजी महाराज मारवाड़ सुं पधारे है और अठे सादड़ी में चतुर्मास
रेगा सो महाराज को फरमान उपकार के बारे में है बंदोबस्त के
ास्ते फरमायो है जीसुं और ठिकाना में चाहे जसो जसो बंदोबस्त
राबे ।

और अबे अठे भी अरज है सो उपकार को बंदोवस्त का
वस्से जीसुं थाने जरिये हुकमनामा हाजा लीखो जावे है के अटे
सटीक, कसाई वगेरे की दुकान श्रावण, कार्तिक, वैशाख मासमें
बिलकुल बंद रहेगा इंके अलावा हमेशा मुजब इग्यारस व

वास्या को तो थादर सीं दुकान बंद रहेगा खटीक, कसाई लोग बिना समजसुं दुकानं करेगा तो धीने सजा देदी जावेगी संवत १९६५ के जेठ सुद १

श्री एकलिंगजी श्रीरामजी

(सही)

सिधश्री कुंतवास राजश्री ओंकारसिंहजी इस कसबे हाजा का समस्त पंचों आपने थांकेणी करीके श्रीपूजजी महाराज सा. को पधारवो हुओ और धरम चरचा वगेरे उपकार हुओ और उपकार हमेशा के वास्ते वेणो चाले छे वास्ते यो पटो मठा के वास्ते तथा पटा की रियासत के लिये लीख देवणो सो ई माफिक बन्दोबस्त रहेगा।

वैशाख, श्रावण, कार्तिक, या तीन महीना में जीवने नहीं मारेगा, मारेगा जीने सजावेगा।

बारा महीना में पांच अमरिया अठा की तरफ से होता रहगा सालीसाल ई माफिक और ई सिवाय पेलां सुं बन्दोबस्त अगियारस अमावस पजुसण, समाइ वगेरा की है ई जेम मजबुत रहेगा सं० १९६६ का पोस सुदी १४

श्री

नक़ल रोबकार महकमें खास ब इजलास मुन्शी सुजानमल बांठिया कामदार कुशलगढ ता. २१—९—९ ईस्वी

सिक्का

B. SUJANMUL
Kamdar of Kushalgarh

चुंके मोसम बारिश खतम होने आया और जंगलमें घासभी पका होकर सुखने आगया है भील लोक अपनी कम फहमी से इलाके हाज़ा के जंगल में आग याने (दवाड़) वे अहती बातों से लगादेते हैं जिस से की तमाम घास व सब किस्म की लकड़ी जलजाती है जो उन्ही गरीब लोगों के गुजारे की बडी आधारकी चीज है और एसा होने से राजाको भी नुकसान होता है अवल भी इस अमर में माकुल इन्तजाम रखनेलिये हुकम जारी हुवा है मगर इतमिनान लायक इन्तजाम हुवा नहीं लिहाजा कबल आज गुजर जाने मोके वाका के इस साल इन्तजाम होना मुनासिब लिहाजा

हुकम हुवा के

एक एक नकल रोबकार हाजा महकमे मालमें भेजकर लिख जावे के इस वक्त जमाबन्दी का काम शरू है और हर देहात के भील वास्ते टकवाने के जमाबन्दी महकमे रूबरू में आते हैं इस वास्ते हर मुखिया गांव से इस बातकी काफी समजायसकर मुचलके तावानी रुपे पंदरा का लिया जावे के जो अपने म

गांव की हद के जंगल की पुरी निगरानी रखकर दावड़ न ला
बन लगने देवे अगर दवाड़ ऊपर से आई तो फौरन तमाम ग
के लोग जमा हो बुझावे और जंगल या रास्तेमें तमाकु पीने व
या दीगर अशखास न आग न डालदे जिस से के अलोफैल
जंगलमें नुकशान पहोंचानेका अहतमाल हो अगर इसमें किसी
जानीब से कसूर होगा तो उस से रुपे सदर तावान के वसूल कि
जावेंगे और एक नकल रोबकार ताजा पुलिस में भेजी जावे औ
लिखा जावे के हर मुलिजमान पुलिसमें हिदायत की जावे के
इस बातकी पुरी निगरानी रखे याने दवाड़ के अजीनान चुड़ाशा
व मोहकमपुरा व छोटा शरवा कारकून तावे शराके तरफ भेज
जावे और यह असल फाईल महकमे दाना में वास्ते दाखला के रख
जाय फक्त

सिक्का

श्रीएकलिंगजी

श्रीरामजी

नकल

राजश्री भालोदा ठाकोर साहेब श्री दोलतसिंहजी
इन मुजब आंकडा मासी मोम मांडी

आरी सीम में हरण व पंखेरू कोई मारे नहीं ना खाय तो उमर पीछें से भी कोई मारे नहीं ।

द० प्यारचंद मालु का श्री रावलां हुकमसुं
लिखा सं० १९६५ जेठ बुदी ३

श्रीरामजी ।

सावत

ठिकाना साठोला में ई मुजब नहीं वेगा । रावतजी साहब श्री दलपतसिंहजी सादड़ी का पंच अरज करवा आया जीं पर छोड़ा।

तालाब में मछली नहीं मारागां गजा पशु तलावठेपर तीतर आतो परगणामें कोई नहीं मारेगा और खास रावले का जानवरां के सिवाय हिरण रोज नहीं मारेगा और उपर लिख्या मुजब परगणा में कोई मारेगा तो सजादी जावेगी सं० १९६५ जेठ वुद १० द० नरसिंही राजा हुजुररा हुकमसुं श्रावण कातीक वैशाख तीन महीना में जानवर मात्र नहीं मारेगा सदावरे छीवे नरसिंही राजी हुजुर रा केणासुं ।

नकल रोबकार महकमे खास व इजलास मुंशी सुजानमल बांठीया कामदार कुशलगढ़ ता० २१-९-९ ई०

महोर छाप

B. SUJANMAL
KAMDAR OF KUSHALGARH.

चुके ऐसा वजह हुआ के इलाके हाजा के हर देहात में भील लोग दशहरा पर पाडा मारा करते हैं और वो पाडे ऐसे जानवर हैं के जो खेती के काम में बजाय बैलों के मदद देते हैं तो ऐसे सैकडों जानवर के एक दिन में हलाक होने से और हर साल पर नौबत पहोंचने से बेसुमार जानवरों के नाबुद होने में बहुत भारी नुकसान उन्हीं लोगों को मालुम होता है पस मुनासिब कि ऐसे ना दुरुस्त और बेरहम तरीकेके जरिये जो सैकडो जानवरों का नाश करनें में बद्दस्त कोम कमहमी करते हैं उसके निस्बत उन को ऐसी समजुत दीजाय के वो अपनी इस भुत भरी हुई चाल का तरक कर ऐसे पाप के काम को हरगीज न करे बल्के पाडो की जान का बचाव करने में अपना फायदा समझे और शायद है के उनके उन खाम खयालीकों के जो पाडा एक देवी के भोगकी खातर हलका करते हैं वे वेसा होने से उनके जान माल की खैरहै मगर देवी को यो और तरीके से भोग दे सक्त हैं। लेकिन इस रिवाज को कत्तइ नाबुद करे ताके उन काम की बहुतही हो लीहाजा

हुकम हुवा के

नकल इसकी मांल आफीसर की तरफ भेजकर लिखा जावे के दशहरे के दिन पाडा हरगीज नहीं मारे अगर जिस किसी के जागीर से ऐसा होगा उस से रु० १५) तावान लिया जावेगा ऐसे

पर पुरा असर इस बात का कर दिया जावे के वो पाड़े के मारने के रिवाज को व खुवी छोड़कर उसमें अपने फायदे का एतकार कर लेवे बनकल सारी पुलीस सुपरीन्टेन्डेन्ट की तरफ भेजकर तहरीर हो के इस बात के निगरार होके ऐसा वाकात गुजरे क्योंकि यह एक सवाब का काम है इस में इसमें हर मुलामजीम ने बादीली कोशीश करने में इसी साल इस बात का नतीजा जहुर में आयेगा कि इस हुकम की तामील व पायबंदी रीयाया इलाके हाज़ा के जानीव से बा इतमीनान हुई तो निहायत दर्जे खुशी का बायस होगा और एक एक नकल इसका बइत्ताय तामील मसन्दूरे मोहकम पुराव छोटी सरवा को भेजी जाकर बजी नहीं फाईल में रहे। फक्त

सिका

ल० कामदार कुशलगढ़

हजुरी चेनाजी साकिन अमावली ई मुजब सोगन कर्या मौरां हाथ सुं जनावर बिलकुल मारुं नहीं और घरे खाऊं नहीं माने चारभुजारा सोगन है।

द० जालमसिंह चेनाजी का कहवासुं

ठाकरां रुगनाथसिंहजी बगेली साकीन अमावली जागीरदार को भाई हरण, हुलो, तीतर मारुं नहीं खाऊं नहीं माने चारभुजारा सोगन है। द० जालमसिंह रुगनाथसिंहजी रा कहवासुं

गाम ननाणे पेटे

ठाकरां देवीसिंहजी गोड़ इण मुजब सोगन कर्या मारा हाथसुं जानवर मातर नहीं मारुं माने चारभुजारा सोगन है कसाई लोगाने बेचणे नहीं देऊं ।

द० ठाकरां देवीसिंहजी द० जीतमल का

ठाकरां दलेसिंहजी जोड़ भोमिया इण मुजब सोगन कर्या मारा हाथसुं जानवर मात्र खाबा के वास्ते नहीं मारुं दाव मारा हाथसुं नहीं लगावणो मवेशी बिना खेंधा आदमी ने नहीं बेचुं

द० उमेसिंह

ठाकरां जालिमसिंहजी जागीरदार अमावली ईं मुजब सोगन कर्या जींरी विगत मारा गाम में सुं गाय बिना आलखाणने बेचवा देवुं नहीं मारी सीम गाम अमावली में कोई जानवर मारी जाण में मारवा देवुं नहीं और मैं मारुं नहीं हरण खरगोश मारुं नहीं खाऊं नहीं और पंखेरु जानवर मारुं खाऊं नहीं माने चारभुजारा सोगन है ।

द० जालमसिंह का हाथरा छै

॥ श्रीरामजी ॥

सावत

श्री पूजजी महाराज चांदड़ी पधारवा पर पंच सादड़ी का ठिकाणा सुंदा अरज होवा पर निचे लिख्या मुजब छोड्या और

सरदार वगैरे से भी छोड़ाया गया सो साबित है जानवर वगैरा ई मुजब सं १६६५ का जेठ बदी बुधवार ।

श्री रावली तरफ से

वेशाख कार्तीक में कसाई अमावस ग्यारस बकरा खज नहीं करेगा आगे भी बंदोबस्त हो परन्तु अब भी पुख्ता राखा जावेगा बारा ही महिनारी अमावास ग्यारस भी माफ है कार्तीक वैशाख दो महिना माफ और बाराही महिना की अग्यारस माफ ईं साल में चेत्र मास में राज गन देवगन बारे है कसाई दुकान नहीं करेगा हिरण सीलरा रोज ग्यारस अमावास लुंदा में शिकार नहीं करेगा ।

द० पन्नालाल रांका श्री हजुर का हुक्म से

श्रीपरमेश्वरजी

सिक्को छे

सदरुप श्री ठाकरां राज श्री १०५ श्री मोतीसिंहजी लाखावतंग जैनरा साधु पूजजी महाराज श्री श्री १००८ श्री श्री श्रीलालजी महाराज मोटा उत्तम पुरुषारो पधारणों कावरे हुओ तरे मैं वादणने गया तरे इणा मुजब सोगन किया है सो जावजीव पाला जावसुं

१—शीकार में सूर वो नार सिवाय दुजो कोई जानवर मारा हाथसुं नहीं मारसुं

२—अमावस अगियारस महिना में तिन आवे है सो नास-बारारी छतीस तिथी हुए सो मारा राज में जावजीव हलांरो (हल) अगतो रेसी

३—बारसरी तिथीरे दिन कुंभार, लवार तेली न्याव, निभाड़ो, घाणी, एरणारो अगतो पालसी ने कसाई खटीकरो भी अगतो रेसी

४—मारा राज में गाय वगैरे कसाई व परदेशी मुसलमान ने नहीं बेचसी

५—सुइ कोकड़ रा खेतारो मारा राज में वारे नाम देषी बालण देसी नहीं बालसी सो राजरो कसुरवार होसी

६—आसोज सुद १० ने सालो साल नव जीव बकरा ११ रे कुकड़क गलाया जावसी

इणां मुजब पाला जावसी ए कलमां पीढ़ी दर पीढ़ी पालां जावसी सं० १६६४ पोश सुद १५ द० कामदार महेताब चंदरा छे श्री ठाकोर साहबरा हुकम सुं लिख दिनो छे

श्रीभेरुनाथजी श्रीरामजी

महोरछाप

सीधश्री महाराज महारावतजी श्री भोपालसिंहजी रा. भेंसर बचनात बड़ी सादड़ी का समस्त ओसवाल माननारा पंचा सुं प०

दावेग अपरंच थां अरज कीवी के मारवाड़ सुं मां के श्री पूज्य चतुरमासो करवाने आवे है सो वठांसुं केवाई हैं के मारो ावों वे है ईं निमित्त कुछ उपकार वणो चावे ईं वास्ते अठे हुकम के सावन कातिक बैशाख तीनों महिना कसाई दुकान सदैव वंद ंगा और इगियारस अमावस तो आगे सदैव सुं पाले है जो ले ही है।

सिको छै

सं० १९६५ का जेठ सुद १२

द० गीरधारी सिंह

श्रीएकलिंगजी श्रीरामजी

राजस्थान गोगुन्दा मेवाड़ नंबर की ८५९

महोरछाप छे

स्वामीजी महाराज श्री पूज्यजी महाराज श्री श्रीलालजी को ालमें गोगुन्दे पधारणो हुओ आपका उपदेश की तारीफ सुण ारो भी सभा में जाणो हुओ. जो उपदेश श्रीमान् को मैं सुणां ारो मन बहुत प्रसन्न हुओ और आप जैसा महात्मा का उपदेश ं मैं हमेशा के वास्ते पंखेरू जानवरां की व हरण की शिकार छोड़

दी है। और अठै राजस्थान में आसोज सुदी ८ हमेशा सुं वे
पाड़ा रो बलदान होवे है वी में सुं १ हमेशा के लिये बंध किधे
सो मारी पुस्त हर पुस्त बंध रहेगी ई के पहले सं० १९६५ में स्वा
मिजी महाराज चोथमलजी को पधारवो हुओ जद श्री बड़ा हजुर
२ बकरा हर साल अमरा करवा को प्रण कीधो वा अब तक चले
जावे है वीरो हमेशा अमल रहेगा मैं श्री पूजजी महाराज क
उपकार के लिये जतरो धन्यवाद करुं थोड़ो है सं० १९७१ का
जेठ बुदी ७ सोम०

द० राजराणा दलपतसिं

——

नामदार महीयर नरेश.

राजा साहेव ब्रीजनाथसिहजी वहादूर.

परिचय—परिशिष्ट २. प्रकरण ५२.

परिच्य–परिशिष्ठ २. प्रकरण ४५.

महीयर राज्यना दयाळु दीवान

श्री शारदा देवी पासे धर्म निमित्ते थती जीव हिंसानो बहिष्कार.

सेठ मेघजीभाई थोभणभाई.

मुंबइ श्री श्वे. स्था. सकळ श्री संघना प्रमुख.

महीयर राज्यमां देवीजीनो वध बंध करावनार परमार्थी

परिचय—परिशिष्ट २ [illegible]

शेठ शांतीदास आसकरण जे. पी. मुंबाई.
महीयर राज्यमां वध बंध करावनार परमार्थी.
परिचय—परिशिष्ट २. प्रकरण ५२.

श्रीमान् महाराणा साहेबना ज्येष्ट भ्राता
बावाजी सुरतसिंहजी साहेब—उदयपुर.
परिचय—प्रकरण ४४.

सहीयर स्टेटमां धर्म निमित्ते थती हिंसा केम अटकी ?

सहीयर राज्यमां एक हील उपर श्री शारदा देवीनुंमंदिर आवेलुं छे तेमां देवी निमित्ते अनेक प्रसंगे देवी भक्तो तरफथी बकरा, पाडा, विगेरे हजारो प्राणिओनो लांबा कालथी दर वर्षे भोग अपातो हतो के जे वात त्यांना दिवान साहेब रा, रा. हिरालाल गणेशजी अंजारीयाने रूचिकर नहि लागवाथी तेओ आवा प्रकारनी करीपण हिंसा हमेशाने माटे बंध थाय तेवुं इच्छता हता अने ते माटे तेओ श्रीए मी० भगवानलाल तथा मी० दुलभजी त्रीभुवनदास झवेरीने वात करतां ते उपरथी जो कांइपण सारे रस्ते लोकोने दोरवी ते हिंसा अटकावाय तो ते बाबत पोतानो विचार जणाव्यो हतो. आ उपरथी मी. दुलभजीए शेठ मेघजीभाई थोभण भाईने पत्र लखी आ हिंसा बंध करवा माटे कंईक इलाज लेवानी भलामण करी हती, ते उपरथी अमे तेमने खास आ कार्यमाटे सहीयरना मे० दिवान साहेबनी मुलाकात लेवा मोकल्या हता के ज्यां तेओए नजरोजर आ करपीण हिंसायुक्त कार्यो जोयां हतां बाद दीवान साहेबे जणाव्युं के जो आ राज्यमां कोइ सखी गृहस्थ तरफथी एक सार्वजनिक लाभ माटे एक इस्पितालनुं मकान बंधावी देवामां आवे तो तेना बदलामां नामदार सहीयरना महाराजा साहेबनी संमति मेलवी ते घातकी कार्य सदाने माटे हुं बंध करावी शकुं. आ उपरथी मी, दुलभजीए हमने ए

कत जणावतां, अमे नीचेनी शरते तेवी एक इस्पीताल बंधावी आपवा ठराव कर्यो हतो

शरतो.

१ महीयर राज्यमां तमाम जाहेर देवलोमां हिंसा सदंतर बंध करवी.
२ ते बाबतना लेखीत हुकमो अमने त्यांना सत्तावालाओए आपवा.
३ आवी जातनी हिंसा बंध करीने ते बाबत श्री शारदा देवीना देवालय आगल ते बाबतनो राज्य तरफथी बे पीलर लगावी हिंदी तथा अंग्रजी भाषामां शिला लेख लगाडवा.

४ अमे ते इस्पीताल बंधाववा माटे रू० १५००१ अंके पंदर हजार अने एकनी रकम स्टेटने एवी शरते सोंपीए के ते इस्पीताल तथा आबाबतनो शिलालेख पण हमेश माटे कायम राखवामां आवे अने पंदर हजारथी ओछी रकम खर्चवी नहि पण जो विशेष रकम जोइए तो स्टेट तरफथी ते आपवामां आवे अने इस्पीताल निरंतर निभाववानो सघलो खर्च राज्ये आपवो.

उपरना शरतो प्रमाणे ते राज्यना नामदार राजा साहेब श्रीज नाथ सींहजी बहादुरे पोताना राज्यमां तेमना दीवान साहेबनी नेक सलाहथी धार्मिक पशुवध हमेशने माटे बंध करवाना परमार्थि ठराव करेला छे, अने आ ठराव विरुद्ध जो कोइपण शख्स वर्तन करे तो तेने छ मासनी सख्त केदनी सजा तथा रू० ५० पचास दंड

करवाना ठराव ता. २ सप्टेम्बर १६२० ना रोज राज्य तरफथी प्रसिद्ध थयां छे. अने ते माटे अमे ते नामदारनो मानपूर्वक आभार मानीए छीए. दीवान साहेबनी असल सही सीकावाला सदरहु ठरावोना फोटोग्राफोनी नकलो अमे जाहेर प्रजानी जाण माटे प्रसिद्ध करीए छीए, के जे जेथी भविष्यमां ते राज्यमां तेवो बनाव कदि दैवयोगे बनवा पामे तो अमारा आ दस्तावेजोनी साक्षी अने आधार द्वारा जाहेर प्रजा ते अटकावी शके.

वलभ टेरस
सन्डहर्स्ट रोड
बम्बई नं ; ४.

मेघजी थोभण
शांतिदास आशकरण.

अक्षरक्ष अनुवाद

(१)

मिस्टर हीरालाल गणेशजी अंजारिया साहेब; बी. ए. दीवान रियासत मईहर तारीख -२–६–१६२०

नम्बर १२६७.

(सही) हीरालालजी अंजारिया

सहीयर राज्यना मंदिरमां घणुं करीने बकरां तथा बीजा प्राणिओनां बलीदान आपवामां आवे छे. आ रूढी पसंद नहीं होवाथी हुकम करवामां आवे छे के श्री देवी शारदाजीना मंदिरमां अथवा

राज्यना कोई पण जाहर मदीरोमां कोईपण माणस कोईपण देवी अथवा देवताओना नाम उपर बकरां अथवा तो बीजां जनावरानो वध करवानी के बलीदान देवानी सखत मनाई करवामां आवे छे. अने जे माणस आ हुकमनो भंग करशे अथवा कोई माणसने आ हुकम कोईए भंग कर्यानी खबर हशे अने ते दरबारमां ते बाबत नहीं रजु करशे, तो ते हुकमनो भंग करवा वालानो, अथवा तेवी खबर जाणवावालाने दरेकने ६–६ मास सुधी सखत केदनी सजा अने ५०–५० पचास रुपया सुधी दंड करवामां आवशे अने जे माणस आ हुकमनो अनादर करवावालाने पकडी दरबारमां हाजर करशे तेने १०दश रुपिआ दंडनी रकममांथी पेस्तर कापी दरबारमांथी आपवामां आवशे, अने ते माणसने राज्यनुं हितेच्छु गणवामां आवशे. आ हुकमनो अमल आजनी तारीखथी करवामां आवशे. लख्यूं

(२)

हु०

आ हुकमनी एक नकल रवीन्यु ओफीसरने मोकलवी अने एवुं लखवुं के तेओ जलदीथी सर्व पुजारिओ तथा मानता लेनारा-ला माणसने आ बाबत खबर दे अने सुपरिंटेन्डेन्ट सा० पोलीस-ने मोकली एवुं लखवामां आवे के राज्यना दरेक गामोमां हुकम छपावी चोटाडवामां आवे अने दांडीद्वारा तेमां खबर देवामां आवे

The kil[illegible] public temple in the Maihar State [illegible] Sharda Devi or any God or Goddess [illegible] the Maihar State on humanitarian principles, [illegible] instance of Messrs Megh jibhai Thoban and [illegible] Ashkaran J.P. of Cutch.Mandvi who have, in memory of the prohibition arranged to dedicate Rs 15,000/- to Devi Shardaji with a request that the same money be spent in charitable purposes. The state is pleased to accede to their request and, in consultation with them, has decided to erect a hospital at a cost of not less than the sum provided.

The hospital building shall be equipped, maintained and kept in repairs and all expenses borne by the state.

Two pillars shall be erected at the foot of the Sharda Devi Hill bearing inscriptions in English and in Hindi notifying to the public that killing of goats and other animals is prohibited, and that defaulters shall be punished.

If any animals or goats are dedicated to Sharda Devi or any other God or Goddess in any public temple in the state, they shall be taken charge of by the state and their maintenance provided for.

Maihar C.I.

The 2nd September, 1920.

Hira Lal [signature]

Dewan, Maihar State, C.I.

Maihar, 2nd September, 1920.

Marble Slabs bearing the undermentioned notice in English and Hindi will be fixed in two pillars to be erected at the foot of the Sharda Devi hill at Maihar.

Notice

Sacrifice of animals in the Maihar State before or in the name of Sharda Devi or any god or goddess in all public temples in the State is strictly prohibited by the State. No one shall, therefore, slaughter or sacrifice any animal in the name of any god or goddess. Defaulters will be punished with rigorous imprisonment which may extend to six months and to pay a fine up to Rs50/- .

अने महीअर तलपदमां हुकमनी नकल छपावी चोटाडवामां अने
ढंढेरो पिटावी जाहेर करवामां आवे अने दश २ पांच--पांच नकलो
मजकुर राज्यनी आसपास जाण वास्ते मोकलवामां आवे अने
एक नकल मजिस्ट्रेटने अने एक नकल बाजार मास्तर ने खबर
माटे मोकलावंवी असल नकल फाइलमां हाजर राखवी

(सही) फतेसिंहजी,
(सही) हीरालालजी. अंझारिया.
दीवान महीयर.

नकल मा, शेठ मेघजी भाई
अने शान्तिदास भाईने मोकलवी.

Sd. H. G. A.

10-9-20.

जीवदयाना सिद्धांतोने अनुसरीने महीयर राज्यना जाहेर देव-
लोमां देवी, शारदा देवी अथवा तो कोई देवदेवीओना शामे अगर
तेमना नामे थती बकराओ अथवा प्राणिओनो वध करवानी मही-
यर राज्ये सख्त मनाई करेली छे अने एना दाखला लइने कच्छ
मांडवीना रहीश शेठ मेघजीभाई थोभण भाइ तथा शेठ शांतिदास
आसकरण, जे. पी. जेओए रु. १५०००) नी रकम आ मट-

आवनी यादगीरीमां शारदा देवीने ते रकम जीवदयाना कार्यमां वापरवा माटे अर्पण करवा विनंती करी छे. राज्य तेमनी विनंतीनो खुशीथी स्वीकार करे छे अने तेमनी साथे मसलत चाल्या पछी तेमना तरफथी अर्पण करवामां आवेली रकमथी ओछी नहीं तेटला खर्चथी एक होसपीटल बांधवाना निर्णय उपर आव्युं छे.

आ हस्पीटलनुं मकान सज्ज करवानो, नीभाववानो, दुरस्त करवानो तथा तेने लगतो तमाम खर्च राज्य तरफथी उपाडवामां आवशे.

शारदा देवीना डुंगरनी तळेटीमां बे स्थंभो उभा करवामां आवशे अने तेमां इंग्रेजी तथा हिन्दुस्थानी भाषामां बकराओ तथा बीजां प्राणीओना धर्मार्थ वध अथवा बळीदान अटकाववानी अने कसुर करनारने सजा करवानी जाहेर खबरोना शीलालेख लगाडवामां आवशे.

जो कोईपण प्राणी अथवा बकराने श्री शारदा देवीने अथवा तो कोई देव अगर देवीने जाहेर देवलोमां अर्पण करवामां आवशे तो तेनो कबजो राज्य तरफ थी संभाळी तेमनो खर्च राज्य तरफथी नीभाववामां आवशे.

मईयर, सी. आइ.	(सही) हीरालाल गणेशजी अंजारीया
ता० २७मी सप्टेंबर १९२०	दीवान, मईयर स्टेट.

म्होर

मद्दीयर, ता० २ जी अक्टोबर १९२०

(४) मद्दीयर राज्यमां आवेला शारदादेवीना डुंगरनी तळे-
टीमां उभा करवामां आवता बे स्थंभो उपर अंग्रेजी तथा हिन्दुस्थानी
बन्ने भाषामां नीचे दर्शावेली जाहेर खबरनी बे आरसनी तकतीओ
जडाववामां आवशे.

जाहेर खबर.

मद्दीयर राज्यमां आवेला शारदा देवी अगर कोई देव अथवा
देवीना आगे अथवा तेमनी नाममां जाहेर देवलोमां तथा प्राणी वध
माटे राज्य तरफथी सख्त मनाई करवामां आवे छे, जेथी करीने
कोईपण मनुष्य कोईपण जातना प्राणीना कोईपण देव अथवा देवीना
नामे वध थाशे तो बलीदान करी अथवा तो दई शकशे नहीं.

कसुर करनारने छ मास सुधीनी सख्त मजुरी साथेनी जेलनी
अने रु० ५० पचासना दंडनी सजा करवामां आवशे.

(सही) हीरालाल जी. अंजारीया, दीवान, मद्दीयर स्टेट.

म्होर

नीचे दर्शाव्या मुजबनो शीलालेख बांधवामां आवती होस्पीटालना मकानमां (प्रसिध्ध) सुदृश्य जगाए लगाडवामां आवशे.

"आ होस्पीटल कच्छ मांडवीना रहीश शेठ मेघजीभाइ थोभणशाह तथा शेठ शांतिदास आसकरण, जे. पी. जेओए, महीयरराज्यनां सर्व जाहेर देवलोमां थता प्राणीवधनी अटकायतना माटे तेओना महाराजा साहेब श्री अजितनाथसिंहजी बहादुरना आभारनी यादगीरीमां तेनां बांधकामना खर्च बदल रु० १५००१) अंके पंदर हजार एक अनायत करतां तेमना प्रेरणाथी बांधवामां आवेल."

दीवान हिरालाल गणेशजी अजारीआना वखतमां

महीयर,
२ जी सप्टेंबर, १९२०

(सही) हीरालाल गणेशजी अंजारीया.
दीवान, महीयर स्टेट,

म्होर

परिशिष्ट ३

पूज्य श्री का, मुसलमीन भक्त सैयद असद्अली M. R. A. S. F. T. S. जोधपुर।

सैयद असदअली लिखते हैं कि, जब श्री १००८ श्री पूज्य श्रीलालजी महाराज का चौमासा जोधपुर में हुआ था, मुझको श्रीपूज्य महाराज के उपदेश से फैजरुहानी (आत्मज्ञान) बहुत पहुंचा। मुझको श्रीपूज्य महाराज ने अत्यन्त कृपा करके नौकार मंत्र की कृपा करी और खुद श्रीपूज्य महाराज ने अपनी जुबान फैजतर जुबान (खास श्रीमुख)से जुबानी नौकार मंत्र याद कराया जो अबतक जपता हूं और बड़ा काम देता है—जैनधर्म का उपदेश लेने के बाद उन्हीं दिनों में मूढ लोगों से बड़ा कष्ट उठाना पड़ा, यहां तक कि मूढ लोगों ने मुझे जान से मरवा डालने के उपाय किये थे। और दो तीन जगह दुष्ट लोगों ने मेरे बदन पर चोट भी पहुंचाई थी, इस वजह से कि, मेरे भाई अमीरहुसैन जिले गुड़गांव (देश-रियाना) में डाक्टर थे। सो मैंने अपने भाई डाक्टर मजकूर से कहकर तमाम जिले में करीब ३००० तीन हजार के गौओं को वध होने से बचाया। जब कि, प्लेग उस तरफ फैला हुआ था और मेरे भाई डाक्टर मजकूर को हर तरह के अख्तियारात हासिल थे। इस कारखाई से रियासत जोधपुर में इस दया के काम के बाबत

खुशी के जलसे हुए थे और उन जलसों में तीन २ चार २ हजा
आदमियों ने इकट्ठे होकर मानपत्र अर्पण किये थे ।

दांता जिले गुजरात के राजा साहिब मेरे मेहरबान थे । वे राज
साहिब मौसूफ अम्बे भवानी के मन्दिर में तशरीफ लेगये थे मैं भी
साथ में था वहां अम्बे भवानी के भेंट चढ़ाने को बकरे पचास २
के करीब आते थे याने जितने आदमी उतने ही बकरे अम्बे भवानी
को बगरज सुख शान्ति चढ़ाने लाते थे और यह बात राजा साहिब
को भी बड़ी खुशी और मरजी की होती थी । मैंने राजा साहिब को
और हाजरीन को 'अहिंसा परमो धर्म्मः' का मसला समझाकर और
सुख शान्ति बराबर रहने का अपना जिम्मा लिया । चुनांचे राजा
साहिब से बकरे छुड़ाने के बदले नकद रुपया अर्पण अम्बे भवानी
जी के कराना मुकरर करा दिया जाता था और उन सब बकरों के
कान में कड़ियां डलवा कर अमरे करादिये गये । इस तरह से सुख
शान्ति रही किसी की आंख भी वहां नहीं दुखी । इस बाबत कई
द्वेषी लोगों की तरफ से मुझपर बड़े २ जोर पड़े परन्तु मैंने धर्म
मार्ग में किसी तरह तकलीफ पहुंचने की परवाह नहीं की, और
राजा साहिब ने वहां सबको सरोपाव दिये थे वह भी मैंने वहां
नहीं लिया । इस तरह पंजाब की तरफ एक रियासत में एक
रईस को हजार २ कागले रोज मारने का शौक होगया था, और

मार २ कर बगिंग करते थे. जो कि, वहां पर उस रईस ने मुझको खास उनकी मुशकिल के वक्त बुलाया था। मैंने वहां पहुंचते ही उन रईस साहब से अर्ज करादी कि, मैं अब वापिस जोधपुर जाता हूं। आपका मुझसे जो खास काम है वह धरा रहेगा, लेकिन उन रईस साहिब का मुझसे खास तौर से मतलब और गरज थी उन्होंने जल्दी से मुलाकात की और मुझसे पूछा कि, बिगर मुलाकात किये वापिस क्यों जाते थे। मैंने कहा कि, मैं सुनता हूं कि, आप हजार हजार कागलों का रोज मरोह फक्त मसखराजी के शकल में शिकार करते हैं। इससे आपकी बड़ी बदनामी हो रही है और लोग गालियां देते हैं और फक्त आपकी दिललगी के लिये हजारों जानों का मुफ्त में नाश होता है। इस तरह उनको कई तरह समझाया तो रईस ने आयन्दा के वास्ते ऐसी हिंसा करने की सौगन्द लेली। इसी तरह एक रईस साहब जो जोधपुर में बड़े मुअज्जिज हैं। उनको उनकी इस किस्म की नामवरी जाहिर कराने का बहुत शौक हुआ तो उन्होंने बच्चे वाली कुतिया जंगल वगैरह से तलाश कराकर मंगाना शुरू किया और उनके शरीर पर चिथड़े लिपटा, लिपटा कर लैम्प के तेल के पीपों में उन कुतियों को डलवा देते खूब तर करवाते पीछे दिया सलाई बतला देते जब वह बच्चे वाली कुतिया जलती कूदती उछलती वह रईस साहिब मय जनाना के बहुत हंसते खुश होते और इनाम तकसीम फरमाते इसी तरह सैकड़ों जानें कुतियों

और गधों की उन रईस साहिब ने ले डाली. जब मुझको मालूम हुआ मैं खुद उन रईस साहिब की खिदमत में गया और अपनी जान तक देना मंजूर किया और हर तरह समझा कर उनसे आइन्दा के वास्ते सोगन करा दी। लेकिन इस मौके पर यह जाहिर कर देने काबिल है कि, उन रईस साहिब को इस पाप के अशुभ फल हाथों हाथ मिल गये। जिसको मारवाड़ के छोटे बड़े। जानते हैं। मुसलमानों में एक महात्मा मौलाना रूम हुए हैं। उन्हों ने भी उन की वाणी में लिखा है कि:-

तो मशोले खौफ़ अर हल्म खुदा।
देरगिरों सख्त गिरो मर तरा॥

जनाबेमन हमारे कलेजे कांपते हैं। हमारा दिल दुखता है, हमारी कलम में ज़रा ताकत नहीं कि, हम एक शिम्मा बराबर भी औसाफ हमारे परम दयालु, परम कृपालु, सत्य धर्म की नाव, ज्ञान के समुद्र, दया धर्मकी होली गाईड, श्री श्री १००८ श्री श्री पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज का क्या लिख सकें, आपने हज़ारों पापियों को सत्य मार्गी और हज़ारों हिंसाकारों को "अहिंसा परमो धर्मः" पर आमिल बना दिया था। सैकड़ों चोरोंने चोरी और हिंसा के पेशे छोड़ दिए थे. मीने बावरियों तक ने तीर कमठे फैंक दिये थे और खेती बाड़ी पर गुज़रान करने लगे थे।

Indeed, I will never find such a prop-kari Guru on this world, like shri pujjya Shrilalji Maharaj again. His fatherly love & sympathy bring me into force, to weep for him once a day at least.

My Jiwan is usless now without his superium satsung, what I can write you, Sir, more than this?

परिशिष्ट ४.

वर्तमान आचार्यश्री

चरित्रनायक सद्गत पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के पश्चात् भारतवर्ष की जैन साधुमार्गी सम्प्रदाय में सब से अधिक मुनि व आर्याजी वाली इस सम्प्रदाय का समस्त भार पूज्य श्री जवाहिर-लालजी महाराज के सुपुर्द हुआ, आप इस पट्ट पर आरूढ होकर जैनधर्म को देदीप्यमान कर पूज्य पदवी दिपा रहे हैं। आपका संक्षिप्त परिचय पाठकों को करादेना आवश्यक है।

मालवा देशकी पवित्र उर्वरा भूमि में सं० १९३२ कार्तिक शुक्ला ४ को श्रीमती नाथीबाई के उदर से आपका जन्म थांदला ग्राम में हुआ। आपके पिता श्रीका नाम सेठ जीवराजजी था। आप वीसा ओसवाल कुंवार गोत्र में उत्पन्न हुए आपको बालवय से ही अनेक संकटों का सामना करना पड़ा। जब आप दो वर्ष के थे तब आपकी माता श्री एवम् चार वर्ष की अवस्था में आपके पिता श्री का देहान्त होगया। अतएव आप मोसार में रह पढ़ने लगे, मामा मूलचंदजी को व्यौपार कार्य में मदद भी देते और विद्याभ्यास भी करते थे. दैवात् मामाजी का आपकी चौदह वर्ष की अवस्थामें स्वर्गवास होगया, अत एव आप पर उनके समस्त कुटुम्ब भाल मकान

वम् व्यौपारका समस्त भार आपड़ा आपने तीव्र बुद्धि से सबको
थोचित संभाला परंतु सांसारिक कई अनुभवों ने आपको वैराग्य
तल्लीन बनादिया आप संसार को असार समझ वैराग्यवंत
दीक्षित होनेको तैयार हुए, परंतु आपके बड़े बाप (पिताके बड़ेभाई)
आपको आज्ञा न दी। अतएव आप स्वयं भिक्षा लाकर गुजर
रने लगे. वर्ष सवा वर्ष यों व्यतीत होने पर आपने सबकी आज्ञा
महाराज श्री घासीलालजी महाराज श्री मगनलालजी
पास झाबुआ के समीप लीमड़ी ग्राम में सं० १९४८ में मृगसर
दी १ को दीक्षा अंगीकार की. परंतु दीक्षित होने के १॥ माह
ाद ही आपके गुरुजी का परलोकवास होगया इतने अल्प
मय में गुरुजी ने आपको अत्यंत शिक्षित बना दिया था उस
ुरुतर मोह के कारण आपका मन उचट गया और आप पागल
होगए, पौने पांच माह पागलावस्था में रहे। दरम्यान तपस्वीजी
ी मोतीलालजी महाराज ने आपकी खूब सेवा सुश्रूषा की। आपके
स समय के पागलपनेके घावोंके निशान अभी तक मौजूद हैं। आप-
ो भले चंगे किये और सब चातुर्मास प्रायः अपने साथ ही कराये,
सी कृतज्ञता के कारण पूज्य जवाहिरलालजी महाराज तपस्वीजी
की आज तक सेवा कर रहे हैं और इस उपकार के स्मरणार्थ आप
के पूर्ण अहसानमंद हैं। दीक्षा लिये पश्चात् आजतक आपके
निम्नोक्त ३१ चातुर्मास हुए हैं।

१ धार, २ रामपुरा, ३ जावरा, ४ थांदला, ५ परतापग
६ सेलाना, ७-८ खाचरोद, ६ महिंदपुर, १० उदयपुर, ११ जोधपु
१२ ब्यावर, १३ बीकानेर, १४ उदयपुर, १५ गंगापुर, १६ रतलाम
१७ थांदला, १८ जावरा, १६ इंदोर, २० अहमदनगर, २१ जुनेर
२२ घोड़नदी, २३ जामनगर, २४ अहमदनगर, २५ घोड़नदी, २
मीरी, २७ दीवड़ा, २८ उदयपुर, २६ बीकानेर, ३० रतलाम, ३
सतारा।

आप शुरू से ही विद्या के अत्यंत प्रेमी थे। आप संस्कृत पढ़े न थे परन्तु संस्कृत के काव्यादि आप बहुत प्रेमसे सीखेत और मनन करते थे. जब आप दक्षिण की तरफ पधारे तब आपको सब अनुकूलता मिली और आप संस्कृतके धुरंधर विद्वान् होगए। आपका व्याख्यान आज अत्यंत प्रभावोत्पादक ढंग का वर्तमान शैली से होता है। आपके व्याख्यान से विद्वान् जन भी अत्यंत संतुष्ट हैं। आपने अत्यंत परिश्रम कर बहुत अधिक ज्ञान सम्पादन किया। कई ग्रंथ देखे उनमें से स्याद्वादमंजरी ' लघुसिद्धांतकौमुदी, मालापद्धति, न्यायदीपिका, परिश्रामण, विशेपावश्यक, रघुवंश, माघकाव्य, कादंबरी, वंशकुमार, किरातार्जुनीय, नेमिनिर्वाण, हितोपदेश इत्यादिका तो अभ्यास किया और तत्वार्थसूत्र, गोमटसार, महाराष्ट्रग्रंथज्ञानेश्वरी, रामदासका दास-बोध, लो. तिलक की गीता, कर्मयोग तुकारामजी की पुस्तकें, मनु-स्मृति, महाभारत, गीता, पुराण, उपनिषाद् इत्यादि जैन सूत्रोंके सिवाय

अन्य ग्रंथों का अवलोकन किया है। आप संस्कृत के पारंगत विद्वान् होकर हिन्दी, गुजराती, मराठी आदि भाषाएं बोल सकते हैं। श्रीमान् लोकमान्य तिलक आपसे अहमदनगर में मिले थे। आपने जैन धर्म के सम्बन्ध में अपनी गीता में कई सुधार करना चाहे थे और लोक-मान्य ने मंजूर भी किये थे। जैनधर्म के सम्बन्ध में जगत् प्रसिद्ध लोकमान्य तिलक महाराज के सुवर्णांकित शब्द ये हैं—

"जैन और वैदिक ये दोनों प्राचीन धर्म हैं। परन्तु अहिंसाधर्म का प्रणेता जैनधर्म ही है। जैनधर्म ने अपनी प्रबलता के कारण वैदिक धर्म पर कभी न मिटने वाली ऐसी उत्तम छाप बिठाई है"

वैदिक धर्म में अहिंसा को जो स्थान प्राप्त हुआ है वह जैनों के कारण ही है। अहिंसा धर्म के पूर्ण वारिस जैन ही हैं। अढ़ाई हज़ार वर्ष पूर्व वेद विधायक यज्ञों में हज़ारों पशुओं का वध होता था. परन्तु चौवीस सौ वर्ष पहिले जैनियों के चरम तिर्थंकर श्री महा-वीर स्वामी ने जब इस धर्म का पुनरोद्धार किया तब जैनियों के उपदेश से लोगों के चित्त अघोर निर्दय कर्म से विरक्त होने लगे और धीरे २ लोगों के चित्त में अहिंसा दृढ जम गई। उस समय के विचारशील वैदिक विद्वानों ने धर्म के रक्षार्थ पशुहिंसा बिल्कुल बंद करदी और अपने धर्म में अहिंसा को आदर पूर्वक स्थान दिया और अहिंसा मंडन कर अपने धर्म को बचाया, यह सब अहिंसा

धर्म के प्रणेता जैन धर्म का ही प्रभाव है। (प्रो० आनंद शंकर बापुभाई ध्रुव के लेख का कुछ अनुवाद). आप के चातुर्मास जहां २ हुए वहां २ अत्यन्त उपकार हुए। उदयपुर के चातुर्मास में तपस्या के पूर पर किसना नाम के खटीक ने यावज्जीवन पर्यंत अपना क्रूरधन्धा बंद किया और उसने दूसरे नौ जनों को सुधारा, तेराहपंथी साधु फौजमलजी के साथ जेतारण में एक माह तक आपने लिखित चर्चा की, उस समय मंदिरमार्गी व वैष्णव मध्यस्थ थे। इस के फल स्वरूप सद्गत मंदिरमार्गी महाराज श्री सीवजीरामजी का लेख मौजूद है।

आपने कई ठाकुरों का मांसाहार छुड़ाया तथा शिकार का त्याग कराया। कई मुसलमान श्रावक बनाये। कई जगहों के संघ के दो भाग दूर कराये व कुव्यवहार बंद कराये हैं। प्रोफेसर राममूर्ति ने शांतता से आपका व्याख्यान सुनकर फरमाया था कि, अगर ऐसे भारतवर्ष में दस व्याख्याता भी हो जाँय तो संसार का बड़ा भारी कल्याण हो जाय।

आपका शिष्य समुदाय विद्वान् और श्रद्धालु है। पूज्य पदवी प्राप्त हुए बाद आप श्री संघ एवम् साधु समाज में सिंह समान गर्ज रहे हैं। विशाल भाल, दिव्य चक्षु उज्ज्वल कांति, देदीप्यमान शरीर रचना इत्यादि इतने आकर्षक हैं और व्याख्यान शैली इतनी उत्कृष्ट शास्त्रीय, एवम् सरल है कि, श्रोता वंशीपर नागके सदृश डोलते रहते हैं।

शिष्य समुदाय और श्री कोटापुर महाराजा साहिब-

सं० १९७७ मार्गशीर्ष वद ५ मंगलवार के दिन मिरिजम श्री १००८ घासीरामजी महाराज को लेकर हम आये। उसी दिन गोरे डाक्टर साहिब ने महाराज साहिब को देखकर निश्चय कर दिया कि, मार्गशीर्ष वद ३ गुरुवार को सफा खाना में आकर डेरा करो, और मिगसर वद ८ को शुक्रवार को आपरेशन किया जायगा।

हम इस बात के विचार में थे कि, अस्पताल में रहनें से ४ बात साधुओंके कल्प से विरुद्ध पड़ेंगी। उसका बन्दोबस्त डाक्टर साहिब से करना चाहिये जैसा कि, १ अस्पताल में नर्स वगैरह स्त्रीजाति सब काम करती है। और श्री महाराज साहिब स्त्रीजाति को छूते नहीं इसलिये स्त्री मात्र महाराज साहिब से स्पर्श न करे।

(२) पानी वगैरह कोई भी चीज अस्पताल के काम में नहीं आना चाहिये।

(३) अस्पताल के सब कमरों में रोशनी जलती है परंतु महाराज साहिब के कमरे में रोशनी नहीं होनी चाहिये।

(४) दूसरे कोई रोगी महाराज साहिब के कमरों में दोने

साथ वाले साधु महाराज के सिवा नहीं रहने चाहिये। इसी विचार में थे कि, इतने में ही श्री गुरु देवों के प्रतापसे कोल्हापुर के सेठ फतहचंदजी श्रीमालजी जिन्होंने सातारा में श्री १००८ काशीरामजी से सम्यक्त्व ली थी आन मिले। और फतहचंदजी डाक्टर साहिब के पहिले से मुलाकाती होने के सिवा कोल्हापुर के महाराज साहिब के मर्जीदानों में हैं। इस वास्ते फतहचंदजी ने कहा कि, मैं कोल्हापुर से महाराज साहिब की शिफारस डाक्टर साहिब के नाम लिखा लाऊंगा। जिसमें महाराज साहिब का कल्प के मुजब सब बन्दोबस्त हो जायगा। यह बात मार्गशीर्ष वद बुद्धवार की है।

उसके दूसरे दिन ७ गुरुवार को महाराज साहिब कोल्हापुर गुरुदेवों के प्रताप से अकस्मात् उनके किसी हजूरी का ओपेशन कराने के लिये अस्पताल मिरिजम में आगये उसी दिन श्री १००८ वालीलालजी महाराज साहिब भी डाक्टर साहिब के कथनानुसार अस्पताल में पहुंचे। सो सेठ फतहचंदजी ने महाराज साहिब से इन्ट्रोडयूस (Introduse) श्री महाराज साहबको कराया और पीछे गोरे डाक्टर साहिबके रूबरूही कोल्हापुरके महाराजने श्री महाराज साहिबसे धर्म सम्बन्धी वार्तालाप किया। उस समय श्रीमहाराज साहिबने संस्कृत के अनेक गीता आदि ग्रंथों के श्लोकों से जैनधर्म का महत्व सिद्ध कर सुनाया जिन पर डाक्टर साहिब ने भी बहुत प्रसन्न होकर कहा